ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

डिण्डौरी जिले भौगोलिक एवं सांस्कृतिक पर्यावरण एवं रूपांतरण

डॉ. (श्रीमती) प्रीती पाण्डे
अतिथि विद्वान, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर

देश के विभिन्न प्रदेशों में बहुत सी जातियां रहती हैं जो विभिन्न प्रकार के भौगोलिक वातावरणों में रहते हुये अपनी–अपनी सामाजिक व्यवस्था और संस्कृतियों को बनाये हुये हैं। मध्यप्रदेश का डिण्डौरी जिला विंध्याचल और सतपुड़ा पर्वत की गोद में बसा हैं। समुद्र सतह से डिण्डौरी जिला 885 फुट से 1100 फुट की उंचाई पर स्थित हैं। यह $22^{0}17$ से $23^{0}22$ उत्तरी अक्षांश $80^{0}85$ पूर्वी देशांतर के बीच में स्थित है। भौगोलिक क्षेत्रफल की दृष्टि से 6128 वर्ग किलोमीटर तक फैला हुआ है। जिसकी अधिकतम लम्बाई पूर्व से पश्चिम की और है। डिण्डौरी जिले के कुल क्षेत्रफल 258935 हेक्टेयर में से 11577 हेक्टेयर कृषि योग्य एवं 26992 हेक्टेयर भूमि वनाच्छादित है। मौसम विज्ञान केन्द्र, नागपुर के अनुसार यहां का अधिकतम तापमान 45 सेल्सियस और न्यूनतम 2.5 सेल्सियस है और यहां वर्षा अधिकतम 1466 मि.मी. और न्यूनतम 882.2 मि.मी. होती है।

डिण्डौरी जिले के अनुसूचित जाति एवं जनजाति की परम्परागत संस्कृति और जीवन शैली में परिवर्तन की निरंतरता को रेखांकित किया जा सकता हैं। इस परिवर्तन के कई कारण हैं। जिसमें शिक्षा का प्रचार प्रसार प्रमुख है। शिक्षा ने यहां के लोगों के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को कुछ हद तक सकारात्मक रूप से प्रभावित किया है। खान–पान, रहन–सहन पहनावा और आवास का स्तर बदला है, उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ी है, शिक्षा के प्रसार का व्यापक क्षेत्र बढ़ा हैं।

जिले की भौगोलिक स्थिति :– किसी क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति एवं जलवायु वहां के जनजीवन को प्रभावित करती है। जलवायु सम्पूर्ण मानसूनी व्यवस्था का अंग है तथा जलवायु के सभो तत्व मानसून को निर्देशित करते है। डिण्डौरी जिले के विगत पांच वर्ष एवं वर्ष 2009 के माहवार का विवरण निम्न तालिकाओं में दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक 1
डिण्डौरी जिले का वर्षवार तापमान (2005–2009)

वर्ष (तापमान)	अधिकतम (डिग्री से)	न्यूनतम (डिग्री)
2005	45.7	4.4
2006	47.8	5.7
2007	43.8	4.0
2008	42.9	2.3
2009	44.7	6.1

उक्त तालिका में डिण्डौरी जिले के विगत 5 वर्षो के तापमान की अधिकतम एवं न्यूनतम स्थिति को दर्शाया गया है। वर्ष 2005 में अधिकतम तानमान 45.7^{0} से.तथा न्यूनतम तापमान 4.4^{0} से दर्ज किया गया है। वर्ष 2006 में अधिकतम तापमान 47.8^{0} से. तथा न्यूनतम तापमान 5.7^{0} से दर्ज किया गया है। वर्ष 2007 में अधिकतम तापमान 43.8^{0} से तथा न्यूनतम तापमान 4.0^{0} से दर्ज किया गया है। वर्ष 2008 में अधिकतम तापमान 42.9^{0} से. तथा न्यूनतम तापमान 2.3^{0} से दर्ज किया गया है। वर्ष 2009 में

अधिकतम तापमान 44.7^0 से तथा न्यूनतम तापमान 6.1^0 से दर्ज किया गया है।

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि सबसे अधिक वर्ष 2006 में अधिकतम तापमान 47.8^0 से. तथा सबसे कम तापमान वर्ष 2008 में 2.3^0 दर्ज है।

तालिका क्रमांक 2
डिण्डौरी जिले के विकासखण्ड अक्षांश एवं देशांतर का विवरण

तहसील / विकासखण्ड	अक्षांश	देशांश	समुद्र तल से ऊँचाई (मीटर)	
			अधिकतम	न्यूनतम
1. डिंडौरी तहसील	22.00^0 से 23.22^0	81.50^0 से 80.55^0	अप्राप्त	अप्राप्त
2. डिंडारी विकासखण्ड	22.56^0 से 31.68^0	81.40^0 से 81.45^0	अप्राप्त	अप्राप्त
3. अमरपुर विकासखण्ड	22.47^0 से 23.22^0	80.58^0 से 80.12^0	अप्राप्त	अप्राप्त
4. समनापुर विकासखण्ड	22.00^0 से 23.22^0	81.50^0 से 80.55^0	अप्राप्त	अप्राप्त
5. बजाग विकासखण्ड	22.00^0 से 23.22^0	81.21^0 से 80.20^0	अप्राप्त	अप्राप्त
6. करंजिया विकासखण्ड	22.00^0 से 23.22^0	81.35^0 से 80.45^0	अप्राप्त	अप्राप्त
7. शहपुरा तहसील	22.00^0 से 23.22^0	80.41^0 से 80.58^0	840	650
8. शहपुरा विकासखण्ड	22.00^0 से 23.22^0	80.41^0 से 80.58^0	840	650
9. मेहंदवानी विकासखण्ड	22.00^0 से 23.22^0	80.37^0 से 80.45^0	अप्राप्त	अप्राप्त
महायोग	22.47^0 से 80.58^0	80.85^0 से 80.58^0	1100	885

उक्त तालिका में डिण्डौरी जिले के विकासखण्ड अक्षांश एवं देशांश को दर्शाया गया है। डिण्डौरी जिला 22.47^0 से 23.22^0 अक्षांश तथा 81.50^0 से 80.55^0 देशांश पर स्थित है। जिले में दो तहसील है। डिण्डौरी तहसील के अंतर्गत 5 विकासखण्ड है और शहपुरा तहसील के अंतर्गत 2 विकासखण्ड है। डिण्डौरी तहसील 22.00^0 से 23. 22^0 अक्षांश तथा 81.50^0 80.55^0 देशांश पर स्थित है। शहपुरा तहसील 22.00^0 अक्षांश तथा 81.41^0 से 81.58^0 पर स्थित है।

डिण्डौरी जिले का जनांकिकीय परिचय :– डिण्डौरी जिले की 95.37 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र में निवास करती है। मात्र 4.63 प्रतिशत जनसंख्या शहरी क्षेत्र में निवास करती है। डिण्डौरी जिला आदिवासी बाहुमूल्य क्षेत्र है। यहां की कुल जनसंख्या का 63.48 प्रतिशत आबादी अनुसूचित जनजाति की है तथा कुल जनसंख्या का 7.59 प्रतिशत आबादी अनुसूचित जाति की है। साक्षरता की दृष्टि से यह क्षेत्र अत्यंत पिछड़ा हुआ है। जिले की विकासखण्ड जानकारियां निम्न तालिका में दी गई है।

तालिका क्रमांक 3
डिण्डौरी जिले में जनसंख्या घनत्व (2001)

जिला / तहसील / वि.ख.	कुल जनसंख्या (2001)	भौगोलिक क्षेत्रफल वर्ग कि.मी.	जनसंख्या घनत्व (प्रति वर्ग कि.मी.)
जिला / तहसील / वि.ख.	कुल जनसंख्या (2001)	भौगोलिक क्षेत्रफल वर्ग कि.मी.	जनसंख्या घनत्व (प्रतिवर्ग कि.मी.)
जिला डिण्डौरी	580730	6128	95
तहसील डिण्डौरी	401637	4227	95
1. डिण्डौरी विकासखण्ड	124430	1259	99
2. अमरपुर विकासखण्ड	60704	623	97
3. समनापुर विकासखण्ड	69891	806	87
4. बजाग विकासखण्ड	71611	865	83
5. करंजिया विकासखण्ड	75001	674	111
6. तहसील शहपुरा	179093	1901	94
7. शहपुरा विकासखण्ड	112297	1137	99
8. मेंहदवानी विकासखण्ड	66796	764	87

उपरोक्त सारणी क्र. 3.4 में डिण्डौरी जिले की जनसंख्या के घनत्व को दर्शाया गया है। सन् 2001 में डिण्डौरी जिले में प्रति वर्ग किलोमीटर जनसंख्या का घनत्व

डिण्डौरी जिले की जनसंख्या :– जनसंख्या सांस्कृतिक पर्यावरण का महत्वपूर्ण अंग है। इसके द्वारा ही सांस्कृतिक पर्यावरण के अन्य कारणों का निर्माण होता है। मानवीय जनसंख्या प्राकृतिक सामाजिक जनांकिकीय, आर्थिक, राजनीतिक, तथा ऐतिहासिक कारकों द्वारा नियोजित होती है। ये कारक स्थान और काल के संदर्भ में परिवर्तनशील है।

तालिका क्रमांक 4
डिण्डौरी जिले की जनसंख्या 2001

जिला / तहसील / विकासखण्ड	कुल जनसंख्या	कुल जनसंख्या से प्रतिशत	कुल पुरूष	%	कुल स्त्री	%
जिला डिण्डौरी	580750	100	291716	50.2	289014	49.8
तहसील डिण्डौरी	401630	69.2	201986	50.3	199651	49.7
1. डिण्डौरी विकासखण्ड	124430	21.4	62557	50.3	61873	49.7
2. अमरपुर विकासखण्ड	60704	10.5	30308	49.9	30396	50.1
3. समनापुर विकासखण्ड	69891	12.0	35221	50.4	34670	49.6

4.	बजाग विकासखण्ड	71611	12.3	36224	50.6	35387	49ण्4
5.	करंजिया विकासखण्ड	75001	12.9	37676	50.2	37325	49ण्8
	तहसील शहपुरा	179093	30.8	89730	50.1	89363	49ण्9
6.	शहपुरा विकासखण्ड	179093	30.8	89730	50.1	89363	49ण्9
7.	मेहदवानी विकासखण्ड	66796	11.5	33399	50.0	33397	50.0

उपरोक्त तालिका में डिण्डौरी जिले की जनसंख्या सन् 2001 को प्रदर्शित किया गया है। विभिन्न विकासखण्डों में कुल स्त्री एवं पुरूष जनसंख्या को भी दर्शाया गया है। उक्त तालिका के अनुसार डिण्डौरी जिले की कुल जनसंख्या 5. 80750 है, जिसमें कुल 2,91,716 पुरूष और 2,89,014 महिला जनसंख्या हैं। तहसील शहपुरा और डिण्डौरी में कुल जनसंख्या क्रमशः 1,97,093 और 4,01,637 है तथा शहपुरा तहसील में 89,730 पुरूष और 89,363 स्त्री जनसंख्या एवं डिण्डौरी तहसील में 2,01986 पुरूष और 199561 स्त्री निवास करती है। विकासखण्ड के स्तर पर डिण्डौरी जिले की कुल जनसंख्या का सर्वाधिक भाग डिण्डौरी विकासखण्ड 1,24,430 तथा न्यूनतम जनसंख्या अमरपुर विकासखण्ड अमरपुर विकासखण्ड में 60,704 निवास करती है। अन्य विकासखण्डों समनापुर 69,891 करंजिया 75,001 शहपुरा 1,12,297 और मेंहदवानी 66,796 जनसंख्या निहित है। विकासखण्डों में लिंगानुपात जनसंख्या में डिण्डौरी में 62,557 पुरूष और 61,873 स्त्री अमरपुर में 30,308 पुरूष और 30,396 स्त्री समनापुर में 35,221 पुरूष ओर 34,670 स्त्री बजाग में 36,224 पुरूष और 35,387 स्त्री करंजिया में 37,676 पुरूष और 37,325 स्त्री शहपुरा में 56,966 स्त्रो एवं मेंहदवानी में 33,399 पुरूष तथा 33,397 स्त्री जनसंख्या का भाग निवास करता है। (डिण्डौरी जिले के विकासखण्डवार अनुसूचित जाति की जनसंख्या का मानचित्र क्र. 15)

तालिका क्रमांक 5
डिण्डौरी जिले की जनसंख्या एवं जनसंख्या वृद्धि (1991–2001)

जिला	कुल जनसंख्या (1911)	कुल जनसंख्या (2001)	दस वर्षीय जनसंख्या वृद्धि
जिला डिण्डौरी	511849	580730	88.14
तहसील डिण्डौरी	354081	401637	88.16
1. डिण्डौरी विकासखण्ड	109617	124430	88.14
2. अमरपुर विकासखण्ड	54197	60704	89.28
3. समनापुर विकासखण्ड	60526	69891	86.60

4.	बजाग विकासखण्ड	63572	71611	88.77
5.	करंजिया विकासखण्ड	66117	75001	88.15
6.	तहसील शहपुरा	157768	179093	88.09
7.	शहपुरा विकासखण्ड	98065	112297	87.33
8.	मेंहदवानी विकासखण्ड	59703	66796	89.38

तालिका क्र. 3.8 में 1991 से 2001 के मध्य डिण्डौरी जिले में जनसंख्या वृद्धि की दर को समर्पित किया गया है डिण्डौरी जिले की कुल जनसंख्या 1991 में 5,11,849 थी, जो 2001 में बढ़ कर 5,80,730 हो गई है। इस जनसंख्या की वृद्धि की दर दस वर्ष में 88.14 प्रतिशत रही है। तहसील डिण्डौरी में जनसंख्या वृद्धि 1991 की जनसंख्या 3,54,081 और वर्ष 2001 की जनसंख्या 4,01,637 के आधार पर इस वर्ष में वृद्धि दर 88. 16 प्रतिशत हे। उपरोक्त विवरण के अनुसार वृद्धि डिण्डौरी और शहपुरा विकासखण्ड की जनसंख्या में हुई है और सबसे कम वृद्धि की दर अमरपुर विकासखण्ड में 88.09 प्रतिशत रही है।

विद्यतु पेयजल एवं संचार व्यवस्था :–

तालिका क्रमांक 6
डिण्डौरी जिले में पेयजल एवं स्वास्थ्य केन्द्र (2002–03)

जिला	आबाद ग्राम	पेयजल सुविधा युक्त ग्राम	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	परिवार कल्याण केन्द्र
जिला डिण्डौरी	902	896	21	7
तहसील डिण्डौरी	600	597	13	5
1. डिण्डौरी विकासखण्ड	188	188	5	1
2. अमरपुर विकासखण्ड	101	100	2	1
3. समनापुर विकासखण्ड	115	114	1	192
4. बजाग विकासखण्ड	92	91	3	1
5. करंजिया विकासखण्ड	104	104	2	1
6. तहसील शहपुरा	302	299	8	2
7. शहपुरा विकासखण्ड	191	191	6	1
8. मेंहदवानी विकासखण्ड	111	108	2	1

उपरोक्त तालिका में डिण्डौरी जिले की आधारभूत उपलब्ध सुविधा व्यवस्था का वर्णन है। डिण्डौरी जिले में कुल 902 ग्राम में से 896 ग्राम में पेयजल सुविधायुक्त ग्राम है। 21 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र 7 परिवार कल्याण केन्द्र है। तहसील स्तर पर डिण्डौरी में कुल 600 ग्राम में से 597 ग्राम में पेयजल सुविधा उपलब्ध है। 13 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, 5 परिवार कल्याण केन्द्र है। शहपुरा तहसील में कुल 302 ग्राम में से 299 ग्राम में पेयजल सुविधायुक्त ग्राम है। 8 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र 2 परिवार कल्याण केन्द्र है।

अनुसूचित जाति का सामाजिक संगठन :– अनुसूचित जातियों में सामूहिक रूप से संगठित रहने की परंपरा है। इनका सामाजिक संगठन आंतरिक रूप से सुव्यवस्थित होता है। इसके साथ ही संगठन की अपनी एक इकाई होती है। समाज में परिवार इकाई का महत्वपूर्ण स्थान है। कुंवारे रहने तक पुत्र पिता के परिवार के साथ ही रहता है। ऐसी स्थिति में पिता का संयुक्त परिवार होता है। शादी हो जाने के बाद लड़के और बहु के रहने के लिए समीप ही एक अलग मकान बना दिया जाता है। परिवार में सबसे बड़ा व्यक्ति मुखिया होता है। परिवार में बड़े–बूढ़े एवं सयानों का अत्यधिक सम्मान होता है। अनुसूचित जातियों में पुरूष प्रधान समाज होता है। पुरूषों के ही बनाए गए नियम–कायदें इनके समाज में प्रचलित हैं। सामाजिक रीति–रिवाज के प्रचलन में पुरूष वर्ग की इच्छा सर्वोपरी होती है। किसी भी प्रकार के झंझट –झगड़े एवं पारिवारिक विवादों की स्थिति में सारे निर्णय पुरूष वर्ग के हाथों में होते है।

अन्य समाज की भांति झारिया में भी बाँझ स्त्री को हेयदृष्टि से देखा जाता है। यह बड़े ही बिडम्बना का विषय है। यहां मां, बहन, बुआ, दादी, नानी, इत्यादि को वही सम्मान प्राप्त है, जो अन्य जाति, वर्ग एवं समाज के लोगों द्वारा दिया जाता है। झारिया समुदाय की स्त्रियां खेती–किसानी के साथ साथ सभी कामों में पुरूषों का हाथ बंटाती है। कुल मिलाकर परिवार में सभी मिल–जुलकर काम करते है। एवं साथ ही स्त्रियों को समाज के सभी सदस्यों को भरपूर एवं सहयोग प्राप्त होता हे।

समाज की पंचायत व्यवस्था :– समाज की पंचायत इनके जीवन के विकास की धुरी होती है। सम्पूर्ण समाज व्यवस्था उसी पर टिकी होती है। पंच के फैसले के विरूद्ध कोई भी विरोध नहीं होता है। गांव का समस्त प्रबंध मुखिया करते है। यह मुखिया का नैतिक दायित्व होता है। झारिया समुदाय की पंचायत में पंचों की संख्या पांच होती है, यथा (1) मुकद्दम, (2) दीवान, (3) समरथ, (4) कोटवार (5) दरवार इत्यादि।

(1) मुकद्दम :– यह गांव का मुखिया होता है। गांव के मुखिया की नियुक्ति परम्परा के अनुसार वंशानुगत होती है। अर्थात मुखिया के बाद मुखिया के बड़े लड़के को ही मुकद्दम का कार्य भार सौंपा जाता है। अर्थात इनके रीतिरिवाज को सरकार भी अपनी मान्यता प्रदान करती है। गांव का प्रत्येक कार्य छोटा हो या बड़ा वह मुकद्दम की अनुमति व आज्ञा सभी को मान्य होती है। सभी सामाजिक कार्य मुकद्दम की अगुवाई या नेतृत्व में सम्पन्न होते ह। होली में अग्नि आदि कार्य मुकद्दम के हाथ से ही सम्पन्न होते ह। प्रत्येक सरकारी कार्य में यह शासन की मदद करता है। गांव के राजस्व लगान की वसूली भी मुकद्दम के माध्यम से की जाती है। यदि मुकद्दम योग्य न हो एवं दायित्व निर्वहन में असफल हो तो समाज की सलाह से उसे हटाकर नए मुकद्दम की नियुक्ति की जाती है।

(2) यह मुकद्दम के कार्यो में उसकी सहायता करता है। उसकी गैर–हाजिरी में उसके समस्त दायित्वों का निर्वहन करता है। यह परम्परागत प्रथा के द्वारा चुना जाता है। पंचायत की बैठकों का आयोजन अतिथि सत्कार एवं शादी में न्यौता तथा गांव मं चंदा एकत्रित करना इसका कार्य होता है।

(3) समरथ :– जैसा कि नाम से पता चलता है, समरथ गांव के समस्त सामाजिक कार्यो सहित मेहमानों के आगमन पर उनके खाने–पीने का प्रबंध करता है। वह गांव से एक दो कूड़े अनाज एकत्रित करके रखता है। नगद पैसे, मुर्गी, अंडे, घी, तेल, मसाला, बकरा इत्यादि खरीदता है। सरकारी अफसरों के गांव में ठहरने पर उनकी सम्पूर्ण व्यवस्था करता है। इसका चुनाव भी वंश परम्परा के अनुसार हो हाता है।

(4) कोटवार :– समस्त ग्रामीण स्तर के कार्यो में यह पुलिस और प्रशासन की मदद करता है। यह एक शासकीय सेवक होता है। एवं समाज में उसका दायित्व एवं स्थान महत्वपूर्ण होता है। यहं गांव की रखवाली करता है। क्योंकि गांव की सुरक्षा का दायित्व उसी पर होता है। यह किसी भी जाति–समाज का व्यक्ति हो सकता है। वह गांव के प्रगति कार्यो में सदैव तत्पर रहता है। दंगा, फसाद, चोरी, इत्यादि की रिपोर्ट वह संबंधित थाने में दर्ज कराता है। इस प्रकार कोटवार ग्रामीण विकास की धुरी होता है।

(5) दवार :– यह पृथ्वी माता का भक्त होता है। इसे गांव में पण्डा या पुरोहित का स्थान प्राप्त होता है। धार्मिक अनुष्ठान दवार द्वारा ही सम्पन्न कराए जाते है। दवार एक अच्छा वैद्य भी होता है। दवार गांव में भरपूर अन्न पैदा हो, किसी को रोग–व्याधि इत्यादि न हो इसका ध्यान में रखकर अपनी तंत्र–मंत्र विद्या का उपयोग करता है। यह विदरी पूजा भी करता है।

झारिया समुदाय में छुआछूत का अरुसरण नहीं करते है। लेकिन वे खान–पान के संदर्भ में बहुत ही सावधान रहते है। किसी भी जाति या उपजाति के हाथ का खाना नहीं खाते। सामाजिक नियमों का उल्लंघन करने पर कड़े दंड का प्रावधान है।

सामाजिक रहन सहन व्यवहार :– अनुसूचित जाति का सामाजिक व्यवहार अत्यधिक सम्पृष्ट एवं एकता की मिशाल है। यह सभी कार्य मिल–जुलकर करते है। सभी एक दूसरे का यथायोग्य सम्मान करते है। विशेष अवसरों पर सभी एकजुट होकर सहभोज का भी आयोजन करते है। इससे इनमें आपसी मेल–जोल एकता की भावना और सद्भावना का पता लगता है। पर्व त्यौहारों पर यह साथ–साथ नाचते–गाते एवं खाते–पीते है। इनके रहन सहन एवं इनका सामाजिक व्यवहार अत्यंत सादगीपूर्ण है। यह अपनी अल्प आवश्यकताओं की पूर्ति से ही संतृष्ट रहते ह। इन्हें पीने के लिए मद्य और पेट भरने के लिए एक लंगोटी और ओढ़ने क लिए एक कमरी बहुत है। ये लोग शहरों की ओर बहुत कम जाते है। जंगलों में रहना, जैसे उनका स्वायत्त जीवन है। इसका सबसे बड़ा कारण इनकी समाजगत परंपराओं रूढ़ियों और मान्यताओं से बेहद प्यार है। ये लोग स्वभाव से भोले, ईमानदार और सच्चे होते है। अपनो रूढ़ियों एवं रीति–रिवाजों के टूटने से वे डरते है। आपस में बहुत कम लड़ाई–झगड़ा करते है। वह ऊपर से नीचे देखने दब्बू और भावशून्य होते है। किंतु भीतर से सहिष्णु एवं उदार होते है। समाज देखने में तो अवश्य ही रूढ़ियों से ग्रसित हैं किंतु अंदर से समाज म घटिया वाक्यों के प्रति सदैव उदारतापूर्वक निर्णय लेते है।

झारिया परिवार का अभावग्रस्त जीवन ही इनकी प्रमुख विशेषता है। कोदो, कुटकी, मक्का, इत्यादि ही इनका भोजन है। इनके भोजन में पौष्टिकता का प्रायः अभाव रहता है। ''अन्सर्ड वाय फ्लयूट्स'' में डाम मारिस ने लिखा है कि ''इनके भोजन में कार्बोहाइड्रेट्स की कमी है। चावल, कोदो, कुटकी, धान उनके शरीर को पर्याप्त पोषण नही देते। उन्हें अभी कई विटामिन्स, प्रोटीन, मिनरल्स, खनिज युक्त भोजन की आवश्यकता है। इसके बावजूद भी वे उसी पुरानी व्यवस्था एवं रिवाज में जी रहे है। अपने मेहमानों का स्वागत एवं सत्कार अपने परंपरागत तरीके से करते है। किसी भी अतिथि के आने पर उसे बैठने के लिए चारपाई या मचिया या मोढ़ा या पीतल या कांसे के लोटे में पानी भरकर पीने के लिए देते है। अजनबी मेहमानें से भी रिश्तेदार के समान ही व्यवहार करते है।

धर्म :– झारिया समुदाय (मेहरा जाति) उनके रीति रिवाज को देखकर लगता है कि वह हिन्दु या सनातन धर्म की तरह है। हिन्दुओं की परंपरा के अनुसार ही अपने झारिया समुदाय (मेहरा जाति) के लोग धार्मिक रीति–रिवाज को मानते हैं। त्योंहारों को विशेष महत्व देते है। शहरी सम्पर्क से कुछ परिवर्तन स्पष्ट दृष्टिगोचर हुआ है।

हमारी वैदिक मान्यता के अनुसार वैसे तो धर्म की परिभाषा बहुत व्यापक रूप से बताई गई है। ऐसा कहा गया है। कि जिसे धारणा किया जा सके वह धर्म है''अर्थात् धर्म धारण किए जाने याग्य है। धर्म हमें धर्म हमें नास्तिक से आस्तिक बनाता है। और मानव मात्र के कल्याण की सीख देता है। जियो और जीने दो की भावना को आगे बढ़ाता है। झारिया समुदाय मेहरा जाति की

दिनचर्या एवं धार्मिक रीति–रिवाज को देखकर ऐसा माना जा सकता है कि वे सचमुच में धार्मिक हैं। धर्म के प्रति उनकी आस्था अटूट है।

अन्य समाज की तरह झारिया (मेहरा जाति) के लोगों के भी अपने देवी देवता पर उनकी आस्था और विश्वास होता है। बहुधा वह माना जाता है कि देवता समुदाय के रक्षक होते है। इसलिए उन पर आस्था रखते हुये समय समय पर उनका पूजन करते हुये चढ़ावा इत्यादि की पम्परा है। लगभग सभी समुदायों में अधिकांशतः यह प्रथा प्रचलन में है।

झारिया समुदाय (मेहरा जाति) की सार (गौशाला) में चरवाहा चरवाहिन गाय खूंटा, दूधिया, खूंट देवी, देवताओं की पूंजा शाम ही दूधियां खूंट की पूजा से गाय दूध अधिक देती है प्राचीनकाल से ही लोग सनातनी या हिन्दुओं धर्म से जुड़े रहे है। इस कारण ये सहज ही हिन्दु देवी देवताओं पर भी श्रद्धा ओर विश्वास करने जगे है शिव (महादेव), पार्वती, ब्रम्हा, विष्णु, तथा राम और कृष्ण, को भी यह मानते व पूजते हैं। इसी प्रकार नवरात्र पर्व में दुर्गा की भी पूजा–उपासना करते हैं। लक्ष्मी देवी इनकी धन देवी है। तांत्रिक क्रिया तथा गाने बजाने मे मां सरस्वती का सुमिरन व आव्हान करने का भी इनमें प्रचलन है।

तालिका क्रमांक 7
डिण्डौरी जिले में धर्म (1981)

धर्म	कुल जनसंख्या	प्रतिशत
हिन्दु	917746	88.46
मुस्लिम	12745	1.23
सिक्ख	5652	0.54
ईसाई	455	0.04
जैन	1992	0.19
बौद्ध	89	0.01
जिन्होनें धर्म सूचित नहीं किया	98787	9.52
योग	1037466	100.0

उपरोक्त तालिका क्रमांक 3.12 में डिण्डौरी जिले में विभिन्न धर्मो को मानने वाले अनुयायियों की संख्या प्रतिशत में व्यक्त की गई है। 1981 के आंकड़े के अनुसार डिण्डौरी जिले की कुल जनसंख्या में हिन्दु धर्म को मानने वालों का प्रतिशत 86.47 है मुस्लिम धर्म का 1.23 प्रतिशत अनुयायी हैं सिक्ख, ईसाई, जैन, बोद्ध धर्म, को मानने वालों का प्रतिशत 88.47 है मुस्लिम धर्म को 1.23 प्रतिशत अनुयायी है सिक्ख, ईसाई, जैन, बौद्ध, धर्म को मानने वालों का प्रतिशत क्रमशः 0.54, 0.04, 0.19 और 0.01 है। 9. 52 प्रतिशत ऐसे है जिन्होनें धर्म सूचित नहीं किया।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि डिण्डौरी जिले में सर्वाधिक हिन्दु धर्म को माना जाता है क्यों कि इसके मतावलम्बियों का प्रतिशत सबसे अधिक है 11 प्रतिशत मुस्लिम धर्म के और कुल जनसंख्या में 1 प्रतिशत से कम भाग सिक्ख, इसाई, जैन और बौद्ध धर्म को मानने वालों का हे।

महिलाएं होती है। बाजार में नमक परचून, कपड़े धान, चावल, गेहूं, दाल के अलावा कांच तथा लाख की चूड़ियां, मोती की मालाएं, प्लास्टिक के चप्पल–जूते कंघी, आदि बिकते है। गुड. शक्कर, नमक तथा किराना सामान एवं बतन एवं मनिहारि का समान भी इन इन हाट बाजारों

में बिकता है। स्त्रियां अपनी जरूरत का समान खरीदकर शाम तक वापस घर आती है।

शैक्षणिक संस्थाएं साक्षरता तथा शैक्षणिक मूल्यांकन :– डिण्डौरी जिले में वर्ष 2004–05 के अनुसार जिले की कुल प्राथमिक शाला 1390 माध्यमिक शाला 282 हाईस्कूल, 33 एवं उच्चर माध्यमिक शाला 26 है इसी प्रकार डिण्डौरी तहसील में कुल प्राथमिक शाला 1005, माध्यमिक शालाख 185 हाईस्कूल 25 एवं उच्चतर माध्यमिक शाला 19 हे तथा शहपुरा तहसील में कुल प्राथमिक शाला 385, माध्यमिक शाला, 97, हाईस्कूल 8, एवं उच्चतर माध्यमिक शाला 7 है जिले में सबसे अधिक प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालय डिण्डौरी तथा शहपुरा विकासखण्ड में है तथा सबसे कम बजाग विकासखण्ड में है इस प्रकार जिले में उच्च शिक्षा संस्थानों की संख्या अत्यंत कम है, जो जिले की भौगोलिक एवं साक्षरता के लक्ष्य प्राप्ति की दृष्टि से सर्वथा अनुचित है।

डिण्डौरी जिले में वर्ष 2001 में जिले की कुल साक्षरता 45.07 प्रतिशत दर्शाया गया है। डिण्डौरी तहसील में कुल साक्षरता 45.5 प्रतिशत है तथा शहपुरा तहसील में कुल साक्षरता 44.13 प्रतिशत है। जिले में सबसे कम साक्षरता मेंहदवानी विकासखण्ड (40.16) प्रतिशत हे जिले में सबसे कम साक्षरता मेंहदवानी विकासखण्ड (40. 16) प्रतिशत) हैं। जिले में सबसे अधिक साक्षरता करंजिया एवं डिण्डौरी विकासखण्ड (47.54 प्रतिशत एवं 47.27 प्रतिशत) इस प्रकार जिले की आधे से अधिक जनसंख्या शिक्षा से वंचित है।

संदर्भ गंथ सूची :–

1. Desai, I.P. (1976) “Unsociablity in Rural Gujarat” Bombey: Popular Pakistan.
2. Singh. L.P. (1977) “Caste in Sikh Village” in H Singh (ed) Caste among Non-Hindus in india, New Delhi: National Publishing House.
3. Kumar Mani, K.A. (1977) “Caste Clashes in South Tamil Nadu” Economics and Political Weekly sep. o6
4. Ram, Jagivan (1980) “cast Challenge in india’” New Delhi: Vision Books.
5. Mishra P.K. and J. Parthsarthy (1981
6. Jha, Hetukar (2000) : “Promises and Lapses : Understanding the Experiences of Scheduled Castes in bihar in Historical Perspective” Journal of Indian School of Politocal Economy, Vol 12 No.3 and 4, PP. 423-444

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

THE CONTRIBUTION OF T.S NAGABHARANA TO KANNADA FILM INDUSTRY – A STUDY

MAHESHA D, Research scholar and Assistant professor, Department of journalism, Government arts college, Dr.B.R. Ambedkar Veedhi, Bangalore
Dr. B.K RAVI, Professor, Department of Communication, Bangalore University, J.B Campus, Bangalore

Abstract :- The success stories of such endeavors have not reached many people. These are published as newspaper articles that are not read by the masses. If the industry can institutionalize crowd funding by streamlining all the activities related to it, it will gain more popularity and credibility. The success of such a system can ensure improvement in the quality of movies and more experimentation in Kannada cinema. Kannada film industry has carved a niche for itself in the national and international film avenues. Kannada film industry has also integrated advanced film production technologies and strategies in terms of recording, background music, film song, film editing, special effects, DTS, digital development, use of advanced cameras and so on. The latest Kannada films have also excelled in technological applications.

Key words :- cinema, theatre, movie, awards, message

Milestones of Kannada Film Industry :- The Cinema of Karnataka, sometimes colloquially referred to as 'Chandanavana' or the Sandalwood, is a part of Indian cinema, where motion pictures are produced in the Kannada language, and based in Bengaluru. Today more than 100 films are made every year. In terms of the size, Kannada cinema falls in the 2nd cluster along with Bengali and Marathi movies with 100 – 150 movies being made every year. The top cluster is represented by Hindi, Tamil and Telugu cinema, each of which make more than 150 movies per year. Bhojpuri and Gujarati cinema which produce between 50-100 movies a year fall in the 2nd cluster. However in terms of revenues, Kannada cinema is ahead of Marathi and Bengali movies. However as far as to south Indian movies are concerned, Kannada movies contribute just 2% of the revenues. Telugu and Tamil movies have 45% share each.

Kannada films are released in a total of 950 single screen theatres in Karnataka and a handful of the movies are also released in the United States, Australia, Germany, the United Kingdom and other countries. The first government institute in India to start technical courses related to films was established in 1941 named as occupational institute then named as S. J. Polytechnic in Bengaluru. In September 1996, two specialized courses, Cinematography and Sound & Television were separated, and a new Institute Government Film and Television Institute was started at Hesaraghatta, under the World Bank Assisted Project for Technician Development in India.

Objectives of the Study :-

- To know the contribution of T.S. Nagabharana to film industry
- To understand the movie watching habits of Kannada speaking people
- To understand the perceptions among Kannada speaking movie watchers on Kannada movies
- To device the preference of Kannada speaking movie watchers movies in terms of genres of movies
- To assess the non- Kannada movie watching habits of Kannada speaking movie watchers

Film directors from the Kannada film industry like Girish Kasaravalli, P.Sheshadri have garnered national recognition. Other noted directors include Puttanna Kanagal, G. V. Iyer,

Girish Karnad, T. S. Nagabharana, Kesari Harvoo, Upendra, Yograj Bhat, and Soori. In the arena of music direction G.K. Venkatesh, Vijaya Bhaskar, Rajan-Nagendra, Hamsalekha, Gurukiran, Anoop Seelin and V. Harikrishna are some of the noted music directors.

Film directors from the Kannada film industry like Girish Kasaravalli, M.S.Sathyu have garnered international recognition. Other noted directors include Puttanna Kanagal, G. V. Iyer, T. S. Nagabharana, P. Sheshadri, Girish Karnad, V. Ravichandran Yogaraj Bhat, Soori, Guruprasad and Upendra who has earned 14th place in world popular director list Whopopular.com

Issues of Kannada Film Industry :- Certain issues such as dominance of non-Kannada movies in the state, financing & distribution problems, that that plagued the industry 80 years ago, continue to plague the industry even now. In addition there are newer issues. Firstly, the revenue windows for movies have shortened drastically and the fate of any movie is decided in the first 3 days. This puts tremendous challenge on the producers on leveraging on multiple source of revenues in a short time. Secondly, with more than 800 television channels offering a variety of content to more than 100 million pay – TV households, the industry has the challenge of luring consumers to theatres from their cozy living rooms. Thirdly, the cost of movie making itself has skyrocketed with high star remunerations and high input costs in all other aspects of movie making. Fourth, with technology accessible to everyone cheaply, the issue of piracy is a challenge that the industry is struggling with. Fifth, the movie makers are faced with the challenge of adapting to the ever changing consumer tastes and preferences. Sixth, Kannada cinema still depends on the shrinking number of single screens and has not exploited the potential of the new distribution channel called multiplexes.

The following section highlights the issues currently being faced by the Kannada movie industry.

- Lack of Movie Making Ecosystem
- The Issue of Kannada Identity
- The Issue of Limited Market
- Shortage of Theatres in Karnataka
- Poor Condition of Theatres
- Issue of Legislation on Multiplexes
- High Cost of Making Movies
- Issue of Dubbing Movies into Kannada
- Issue of the Star System
- Unethical Practices at Theatres

Role of T.S. Nagabharana in Kannada Film Industry :- Talakadu Srinivasaiah Nagabharana (born 1953) is an Indian film director, in the Kannada film industry and a pioneer of the parallel cinema. He is one of the few film directors to have straddled the mainstream and parallel cinema worlds. He achieved success both in television and cinema. He has been the recipient of international, national, state and other awards for 20 of his 35 Kannada movies in the last 40 years. He was nominated as the chairman of Karnataka Chalanachitra Academy (KCA), Bangalore. Talakadu Srinivasaiah Nagabharana was born in 1953. He is an ardent and avid reader of Indian English literature. He holds a degree in Science and Law.

Nagabharana was interested in filmmaking since his college days; he acted and directed many stage plays. In his teens, he came under the indelible influence of the great playwright Adya Rangacharya. When in college he directed the plays Evam Indrajit and Shoka Chakra. He worked as a backstage worker, actor, singer and director. He associated with leading theatre personalities like B. V. Karanth, Chandrashekhara Kambara and Girish Karnad. Plays that Nagabharana has acted in and directed are Sangya Balya, Kathale Belaku, Shakarana Sarotu, Jokumaraswamy, Oedipus, Sattavara Neralu, Krishna Parijata, Tingara Buddanna, Mundena Sakhi Mundena,

Hayavadana, Neegikonda Samsa, Baka and Blood Wedding.

He received a gold medal from the Government of India for his achievement in theatre. He is the founder of a theatre organisation called "Benaka". He also started Shruthalaya, an organisation for organising, writing, composing, camera work, lighting, art, acting, editing and directing.

- Worked with Padmashri B V Karanth, Former Director Of NSD and Chairman of Ranga Mandala Bhopal, Rangayana Mysore.
- Working as President of Benaka Children Theatre since 30 years.
- Organising and Directing 3 Children plays every year continuously since from start.
- Directed more than 35 Plays of which Jnaanapeeth Sri Grisish Karnad, Chandrashekhar Kambar, Sri Shivarama Karanath and Badal Sarkar etc.
- Acted in more than 100 plays, which played more than 10,000 shows.
- Performed on National and International stages for several times
- Conducted theatre workshops for the last 35 years regularly both National and International level.
- Worked as an Administrator for several theatre repertories, specially Rangayana Mysore, Benaka Bengaluru
- 40 years founder-actor, Benaka Amateur Troupe founded by B.V. Karanth
- 30 years President, Benaka Children Theatre founded by Prema Karanth.
- Rajyotsava Awardees for Theatre
- Represented Government of India Cultural Committees several times.
- Serials for Doordarshan since its inception.
- Tele serial Shasraphan was written by former Prime Minister P.V. Narasimha Rao
- Indo-Mauritius co-production Stone Boy
- Samsmaran travalogue by Goruru Ramaswamy Iyengar extensively shot in the United States of America
- Tenali Rama, Aradhana, Ganayogi Panchakshari
- Bangalore Doordarshan and other Networks
- A variety of serials and other programs for Doordarshan, Udaya TV, SUN TV and others

Major Achievements of T.S Nagabharana :-

- 1st BRICS Film Festival Chairperson of Jury.
- Jury member of Dadasaheb phalke Award at 64th National Film Award
- Executive Committee Member, Karnataka Film Chamber of Commerce - 3 years
- Chairman of Subsidy Committee for Films, Government of Karnataka
- President of Karnataka Film Directors' Association
- CIFEJ ('Centre International de Film pour l'enfance et La Jeunesse' meaning 'International Centre of Films for Children and Youth') Board Member for 13 years.
- Adarsh Film Institute Principal and Faculty
- Chairman, Karnataka Chalanachitra Academy 2008-2012
- Member of the Central Censor Board since 2015
- Mean time done Light & Sound for Tourism Department of Govt. of India and Govt. of Created perKarnataka at Mysore, Hampi, Kiuttur, and Srirangapattana.

Major Findings of the Study :- Following are the major findings from the study presented in points 1. Movies seem to attract younger crowd than the aged group. About 43% of the movie watchers fall in the age group of 16 – 25 years. And another 40% is between the age of 25 – 40 years. 2. More and more people are shifting to multiplexes for watching movies. 3. A majority of the movie watching population of Karnataka seems to like watching movies and there is no difference about this between single screen viewers and multiplex viewers. About 90% of the viewers liked or really liked watching movies. 4. Two thirds of movie watchers watch movies at least once in a month. This shows that movie watching is a regular activity in their life style. 5. Among the genres,

action and comedy are most preferred by the audience followed by family drama and suspense. Single screen audience prefers romance much more than multiplex going crowd. Kannada audience also like science fiction. 6. Whether it is multiplex or single screen, people like watching movies in company and the most preferred company is friends followed by family members. Part 4: Consumer Study 85 7. Kannada film watchers have a perception that the Kannada movies made in 1970s and 80s were much better in quality than movies being made currently. 8. The major problem with Kannada movies as per the audience is lack of originality and lack of good story. This opinion is shared alike by both single screen and multiplex audience. 9. The Kannada cinema watchers are concerned about Kannada movies not getting enough screen time in multiplexes. 10. Kannada cinema watchers wish that the Government provided more facilities to the industry to produce quality films 11. Kannada speaking people watch less Kannada movies compared to Tamil, Telugu and Malayalam people watching movies in their respective languages.

Conclusion :- It is often said, "There is no business like show business". It has glamour, money, excitement, creativity and what not. However, this business is also one of the most risky businesses. Each movie released is a brand new product and the rate of introduction of new products (a new movie) is very high in this industry as compared to other industries. When we consider each new movie as a new product, Indian cinema is the only industry that introduces more than 1000 new products in a year. These movies vie with each other for the attention of viewers who accept or reject the movies in one week's time. Kannada film industry has grown as a million dollar industry. It has grown confidently both in terms of number and quality. It has the capacity for the attainment of greater progress in future. The stakeholders of Kannada film industry are required to work together for the realization of the goal of integrated development of Kannada film industry.

Suggestions :-

- The Government stand on permitting outdoor shooting should be less bureaucratic because out-door locations shown in movies promotes tourism.
- The Government gives Rs.10 lakhs subsidy per movie for Kannada movies. There is a committee set up by the Government to look into the quality of movies and certify them for subsidy. Apparently this process takes a long time and the producers have to wait inordinately for subsidy. Some producers have even questioned the sanctity of this committee. The Government must take steps to smoothen out the process
- The Government of Karnataka recognizes good work in cinema and gives annual awards in various categories
- The process can be given to agencies that are Associated with movies on a continuous basis and are perceived as Credible and fair in awarding work.
- At present the Government levies a Re.1 per ticket surcharge on non-Kannada Movies in Karnataka. Karnataka can also think of levying a higher surcharge per ticket, even to the tune of Rs.5 – Rs.7 with a clear mandate of spending this Money exclusively on Kannada cinema.
- Kannada movies get a subsidy of Rs.10 lakhs per movie. Karnataka should also act along these lines and think at least of fixing the subsidy as a percentage of the average cost of movie making.
- The film festival in Karnataka therefore, is not able to make an impact due to lack of adequate resources. The money raised through surcharge can also be utilized for this.
- The Government could think of raising this amount so as to be a motivator for making movies based on Kannada Stories and novels
- It has become rather difficult for Kannada moviemakers to find theatres outside Karnataka due to high theatre rentals. If the Government can take a share of this financial

burden, then it would be possible for Kannada movies to reach out.

- ❖ Establish Ministry for Cinematography for promotion of kannada movies
- ❖ Stopping Malpractices to reduce the burden of the producers and industry
- ❖ Building a Sustainable Investor Class
- ❖ Position Identification & Creation
- ❖ Periodic Audience Survey
- ❖ Smart Marketing
- ❖ Trending of Kannada trailers on YouTube

References :-

1. Modaliyar, Gangadhara (1998) Kannada Films in the Pages of History, Kannada Book Authority, Bangalore.
2. Modaliyar, Gangadhara (2009) A.N.Krishnarao, Golden Jubilee Publications, Karnataka Film Chamber of Commerce, Bangalore.
3. Modaliyar, Gangadhara (2009) Shankar Sing, Golden Jubilee Publications, Karnataka Film Chamber of Commerce, Bangalore.
4. Prakasha, Jagannath and Puttaswamy (1995) Jnanapeetha Awardees and Kannada Film World, Information and Publicity Department, Government of Karnataka, Bangalore, pp.30-31.
5. Rao, Narahari, H.N (1996) Kannada Film World, Sahithya Samskruti Patha, Golden Karnataka, Vol.2, Kannada and Culture Department, Bangalore, p.690.
6. Seetaramaiah, H.V (1984) A Brief History of Kannada Films, Kannada Vakchitra Golden Jubilee Celebrations 1934-1984, Karnataka Film Chamber of Commerce, Bangalore, p.33.
7. Siddaramaiah (2014) Inaugural Speech, Film Festival Inauguration, Report, Prajavani, Mysore, p.3b.
8. Yaddyurappa, B.S (2011) Speech Report, Prajavani, Bangalore, March 2, p.11.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

A SYSTEMATIC STUDY OF INFLATION IN INDIA

SHACHI GUPTA, Astt. Prof., Maharashtra Institute of Higher Education Jabalpur (M.P.)
DR. DILIP SINGH HAZARI, Principal, Maharashtra Institute of Higher Education Jabalpur (M.P.)

Abstract :- Inflation is burning issue which hinders the economic growth of the country. This article briefly explains different types of inflation. Inflation can have both positive and negative impact on economy. Negative effects of inflation include an increase in the opportunity cost of holding money, uncertainty over future price which may discourage investment and savings, and if inflation is rapid enough, shortages of goods as consumers starts hoarding of goods. It becomes a serious issue for economists, politicians and for common man. It is a dangerous phenomenon because it has a direct impact on standard of living. Positive effects include ensuring that central banks can adjust real interest rates (to mitigate recessions), and encouraging investment in non-monetary capital projects. It is the responsibility of government, politicians and economists to protect/safe guard common man from inflation. According to statistical data the inflation in India is higher specifically in food items.

Keywords :- Inflation Rates, Trends, WPI, CPI in India

Introduction :- Inflation is a rise in the general level of prices of goods and services in an economy over a period of time. When the general price level rises, each unit of currency buys fewer goods and services. Consequently, inflation reflects a reduction in the purchasing power per unit of money – a loss of real value in the medium of exchange and unit of account within the economy. A chief measure of price inflation is the inflation rate, the annualized percentage change in a general price index (normally the consumer price index) over time.

Today, most economists favor a low and steady rate of inflation. Low (as opposed to zero or negative) inflation reduces the severity of economic recessions by enabling the labor market to adjust more quickly in a downturn, and reduces the risk that a liquidity trap prevents monetary policy from stabilizing the economy. The task of keeping the rate of inflation low and stable is usually given to monetary authorities. Generally, these monetary authorities are the central bank that control monetary policy through the setting of interest rates, through open market operations, and through the setting of banking reserve requirements.

Review of Literature :- According to some analytical study, inflation becomes major issue for both academics and policymakers. They explained about how it hinders the growth of the nation. They did clear analysis over the past years, particularly on food inflation, demand and supply side factors behind surging food prices. Pointing out that how the policies are impacting on raising and falling of food articles and its prices.

According to Assocham Eco Pulse (aep) study FY 2009-2010 the inflation is averaged near 5%. According to AEP study titled inflation concerns for the Indian economy stated the surge in international commodity markets led by energy (crude oil, natural gas and coal), metals (copper, aluminum and iron ore) and food (cereal and meat) is likely to push the domestic prices up once the heavy fiscal and monetary measures taken as the crisis response starts to firm up the economic activity.

According to same school of thought, they explained about what is the best measure for inflation. Which is the suitable measure and relevant for monetary policy. In the present conditions of the economy, Consumer price index for industrial workers (CPI-IW) is preferable to

either the wholesale price index or the GDP deflator.

Objectives :-

1. To study the Meaning and Definition of Inflation.
2. To study the features of Inflation.
3. To study the types of Inflation and Inflation rates in India.
4. To study the WPI and CPI of India.

Research Methodology :- Secondary Data is used for this Article.

What is Inflation? Meaning Inflation :- refers to a continuous rise in general price level which reduces the value of money or purchasing power over a period of time. Statistically speaking, inflation is measured in terms of a percentage rise in the price index usually for an annum (a year) or for 30-31 days (a month).

Definition of Inflation :- According to **Crowther**, "Inflation is a state in which the value of money is failing i.e. the prices are rising" According to **Tim Colbourn**, "Inflation is too much of money chasing too few goods"

Features of Inflation :-

The characteristics or features of inflation are as follows :-

1. Inflation involves a process of the persistent rise in prices. It involves rising trend in price level.
2. Inflation is a state of disequilibrium.
3. Inflation is scarcity oriented.
4. Inflation is dynamic in nature.
5. Inflationary price rise is persistent and irreversible.
6. Inflation is caused by excess demand in relation to supply of all types of goods and services.
7. Inflation is a purely monetary phenomenon.
8. Inflation is a post full employment phenomenon.
9. Inflation is a long-term process.

Types of Inflation in Economics :-

1. **Types of Inflation on the basis coverage**
   1) Comprehensive Inflation
   2) Sporadic Inflation
2. **Types of Inflation on the basis of Time (Period) of Occurrence**
   1) War-Time Inflation, Post-War Inflation
   2) Peace-Time Inflation
3. **Types of inflation on basis of Government's reaction or its degree of control**
   1) Open Inflation
   2) Suppressed Inflation.
4. **Types of Inflation on the basis of Rising Prices**
   1) Creeping or mild Inflation
   2) Walking or trotting Inflation
   3) Running Inflation
   4) Galloping Inflation
   5) Hyper-Inflation
5. **Types of Inflation on the basis Cause**

Deficit Inflation, Credit Inflation, Scarcity Inflation, Profit Inflation, Pricing Power Tax Inflation**,** Wage Inflation, Build-In Inflation, Development Inflation, Fiscal Inflation**,** Population Inflation, Foreign Trade Induced Inflation, Export-Boom Inflation, Import Price-Hike Inflation.

6. **Sectoral Inflation**
   1) Demand pull Inflation
   2) Cost Push Inflation
7. **Types of Inflation on the basis of Expectation**
   1) Anticipated Inflation
   2) Unanticipated Inflation

How Inflation is Measured in India :- Measurement of inflation is usually based on certain indices. Broadly, there are two categories of indices for measuring inflation i.e. Wholesale

Price Index and Consumer Price Index. There are certain sub-categories for these indices

What is an Index Number :- An Index number is a single figure that shows how the whole set of related variables has changed over time or from one place to another. In particular, a price index reflects the overall change in a set of prices paid by a consumer or a producer, and is conventionally known as a Cost-of-Living index or Producer's Price Index as the case may be.

Price Indexes / Indices used in India :- The Wholesale Price Index (base 1993-94) is usually considered as the headline inflation indicator in India.

In addition to Whole Price Index (WPI), there are four different consumer price indices which are used to assess the inflation for different sections of the labour force. In addition to above five indices, the GDP deflator as an indicator of inflation is available for the economy as a whole and its different sectors, on a quarterly basis. Now let us discuss the above indices used in India to measure inflation in detail to understand these better.

Wholesale Price Index (WPI) :- This index is the most widely used inflation indicator in India. This is published by the Office of Economic Adviser, Ministry of Commerce and Industry. WPI captures price movements in a most comprehensive way. It is widely used by Government, banks, industry and business circles. Important monetary and fiscal policy changes are linked to WPI movements. It is in use since 1939 and is being published since 1947 regularly. We are well aware that with the changing times, the economies too undergo structural changes. Thus, there is a need for revisiting such indices from time to time and new set of articles / commodities are required to be included based on current economic scenarios. Thus, since 1939, the base year of WPI has been revised on number of occasions. Latest revision of WPI has been done by shifting base year from 1993-94 to 2004-05 on the recommendations of the Working Group set up with Prof Abhijit Sen,, Member, Planning Commission as Chairman for revision of WPI series.

This new series with base year 2004-05 has been launched on 14th September, 2010. WPI does not give the actual feeling of the amount of pressure borne by the general public. However, the increase in wholesale prices does affect the retail prices and as such give some feel of the consumer prices.

Consumer Price Index (CPI) :- The CPI measures price change from the perspective of the retail buyer. It is the real index for the common people. It reflects the actual inflation that is borne by the individual. CPI is designed to measure changes over time in the level of retail prices of selected goods and services on which consumers of a defined group spend their incomes. Till January 2012, in India there were only following four CPIs compiled and released on national level. (In some countries like UK, Malaysia, Poland it is also known as Retail Price Index).

(1) Industrial Workers (IW) (base 2001),
(2) Agricultural Labourer (AL) (base 1986-87) and
(3) Rural Labourer (RL) (base 1986-87)
(4) Urban Non-Manual Employees (UNME) (base 1984-85),

The first three are compiled by the Labour Bureau in the Ministry of Labour and Employment, and the fourth is compiled by Central Statistical Organisation (CSO) in the Ministry of Statistics and Programme Implementation. These four CPIs reflect the effect of price fluctuations of various goods and services consumed by specific segments of population in the country. These indices did not encompass all the segments of the population and thus, did not reflect the true picture of the price behaviour in the country as a whole.

New Series of CPI Started in 2012 :- There was a strong feeling that there is a need for compiling CPI for entire urban and rural population of the

country to measure the inflation in Indian economy based on CPI. Thus, now Central Statistics Office (CSO) of the Ministry of Statistics and Programme Implementation has started compiling a new series of CPI for the

(a) CPI for the entire urban population viz CPI (Urban);
(b) CPI for the entire rural population viz CPI (Rural)
(c) Consolidated CPI for Urban + Rural will also be compiled based on above two CPIs.

These would reflect the changes in the price level of various goods and services consumed by the Urban and rural population. These new indices are now compiled at State / UT and all India levels. The CPI inflation series is wider in scope than the one based on the wholesale price index (WPI), as it has both rural and urban figures, besides state-wise data. The new series, with 2010 as the base year, also includes services, which is not the case with the WPI series.

A comparison of this new series with WPI is given below

Particulars	WPI	CPI - New Series w.e.f Feb 2012
Base Year	2004-05	2010
Elemenetary Items	676	200 (Weighted items)
Weightage o Food products (%)	243	49.71
Weightage of Energy products (%)	14..91	9.49
Weightage of Miscellaneous Items (%)	Services not included	26.31

Source- http://business.mapsofindia.com/inflation/

Will Demonetization Impact India's Inflation?

Measures of inflation in India :- The RBI (Reserve Bank of India) considers the CPI (consumer price index) as its primary gauge of measuring inflation. Prior to the RBI adopting the CPI in India (PIN) (FINGX), another measure of inflation—the WPI (wholesale price index)—was the key gauge of inflation and it's still considered for reference.

The RBI has CPI growth targets to adhere to while deciding its monetary policy stance. By January 2016, it was supposed to keep inflation below a target of 6%, which it was able to do. Its next target is to keep inflation at or below the 5% mark by March 2017.

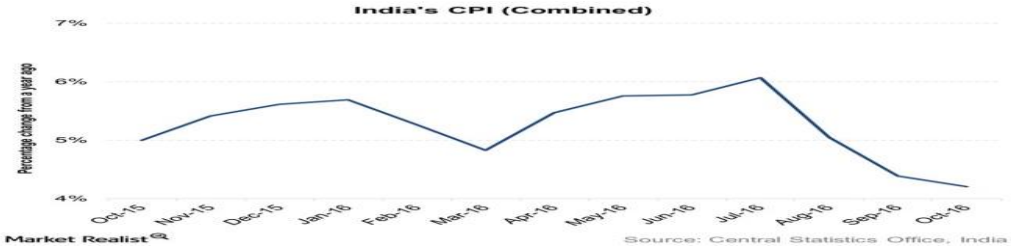

SOURCE – CENTRAL STATISTICS OFFICE, INDIA

Impact of demonetization :- The demonetization that has been in effect since November 9 is expected to have a negative impact on inflation. Consumer spending activity fell to a near halt. Consumers are refraining from making any purchases except essential items from the consumer staples, healthcare, and energy segments. Activity in the real estate sector, which includes a lot of cash and undocumented transactions, slowed down significantly, Metropolitan and Tier 1 cities reported up to a 30% fall in house prices.

Food item inflation, measured by changes in the Consumer Food Price Index, accounts for 47.3% of the overall CPI. Due to 86.4% of the value of the currency notes in circulation going out of the financial system and re-monetization being slow, the supply and demand of food items fell. It will exert more downward pressure on inflation.

Investors in India-focused funds (EPI) (WAINX) should continue to monitor CPI inflation. It will determine future rate cuts by the RBI. A change in the repo rate will impact interest rate–sensitive sectors and industries like financials (HDB) (IBN) and automobiles (TTM), among other sectors like the tech (WIT) (INFY) sector.

Conclusions :-

1) Inflation's effects on an economy are various and can be simultaneously positive and negative
2) In economics, inflation is a rise in the general level of prices of goods and services in an economy over a period of time
3) Some economists maintain that high rates of inflation and hyperinflation are caused by an excessive growth of the money supply.
4) According to Crowther, "Inflation is a state in which the value of money is failing i.e. the prices is rising."
5) Inflation is a purely monetary phenomenon is one of the feature of inflation.
6) The consumer price index has been decreasing from 9.36 to4.86 in the year 2012 to 2013.
7) There are various types of Inflation and each have various sub types of Inflation.
8) India Interest Rate averaged 6.57 Percent from 2000 until 2013, reaching an all time high of 14.50 Percent in August of 2000 and a record low of 4.25 Percent in April of 2009.
9) Broadly, there are two categories of indices for measuring inflation i.e. Wholesale Prices and Consumer Prices
10) Latest revision of WPI has been done by shifting base year from 1993-94 to 2004-05 on the recommendations of the Working Group set up with Prof Abhijit Sen, Member, Planning Commission as Chairman for revision of WPI series.
11) New series with base year 2004-05 has been launched on 14th September, 2010.
12) Demonitization is expected to have a negative impact on inflation.

References :-

1. Abel, Andrew; Bernanke, Ben (2005). Macroeconomics (5th ed.). Pearson. 2. Barro, Robert J. (1997). Macroeconomics. Cambridge, Mass: MIT Press. p. 895. ISBN 0-262-02436-5 3. Blanchard, Olivier (2000). Macroeconomics (2nd ed.). Englewood Cliffs, N.J: Prentice Hall. ISBN 0-13-013306-X 4. Mankiw, N. Gregory (2002). Macroeconomics (5th ed.). Worth 5. Hall, Robert E.; Taylor, John B. (1993). Macroeconomics. New York: W.W. Norton. p. 637. ISBN 0-393-96307-1 6. Burda, Michael C.; Wyplosz, Charles (1997). Macroeconomics: a European text. Oxford [Oxfordshire]: Oxford University Press. ISBN 0-19-877468-07.http://kalian city.blogspot.com/2011/07/types-of-inflation-in-economics-with.htm. 8. http://business. mapsofindia.com/inflation/ 9. http://www.inflation.eu/inflation rates/india/ historic-inflation/cpi-inflation-india-2013.aspx.CSO India.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

SEVENTEENTH CENTURY THE CHANGES & THE REVOLUTION IN ENGLISH LITERATURE

DR. AJIT KUMAR MOHAPATRA
H.O.D. DEPTT. OF ENGLISH, R.D.S. Degree Mahavidyalaya, Kundabai, Mayurbhanj

English Literature of the Seventeenth Century can broadly be divided into Seventeenth Century 1 and Seventeenth Century 2. The first half of Seventeenth Century can be assigned a period from 1603, from the reign of James I to 1658, the death of Oliver Cromwell and the Seventeenth Century 2 can be assigned a period from 1660, the Restoration of Charles II to 1700. So chronologically, there is a gap of two years, politically called The Interregnum. This was a period of fervid social and political turmoil, which actually continued from 1649, when Charles I was assassinated and the subsequent rule of Oliver Cromwell and that of his son Richard.

THE SEVENTEENTH CENTURY 1 :- English literature in the first half of the Seventeenth Century produced a district atmosphere, but no less brilliant than the works of Elizabethan era. It was marked by the decline of the Renaissance spirit and the emergence of new modern spirit, in the fullest sense of the term, came into being. This spirit may be defined as the spirit of observation and of pre-occupation with details, and a systematic analysis of facts, feelings and ideas. The Seventeenth Century up to 1660 was dominated by **Puritanism** (Puritans advocated certain changes in the form of worship of the reformed English Church under Elizabeth). As such the period from 1600 to 1660 is also called **The Puritian Age or The Age of Milton**, which is further divided into Jacobean (Named after the Rule of James I, 1603-1625) and **The Cavalier or Caroline** (Named after Charles I, 1625-1649)

Jacobean Prose-writing, in the multiplicity of the genres, exhibits the quest for knowledge and the curiosity of spirit engendered by the Renaissance. With travelogue, biography, autobiography, pamphlets, geography, scientific and religious writings- prose writings, for the first time in the history of English Literature, became a powerful medium of expression in hands of James I, Bacon, Robert Burton, Thomas Hobbes, Izaac Walton, Thomas Browne, Thomas Fuller and many more.

Jacobean Drama was characterized by several departures from the Elizabethan mould. This theatre was gradually losing its hold on the middle and lower classes of society, as dramatics like Ben Jonson, Beaumont and Fletcher wrote for an exclusive audience. The most common themes include lust, adultery, incest, death, sickness, exploitation of the weak, hypocrisy and dishonesty. But a special mention must be made of a unique feature of Jacobean drama-the **Masque**. To mention a few of the dramatists were Thomas Heywood, Thomas Dekker, Benjamin Jonson, Fletcher & Beaumont, Thomas Middleton, John Webster, Phillip Massinger.

Jacobean Poetry in the period of James I did generate a subtle shift in the spirit of poetry, with became analytical and disruptive. This tilt is marked in the growing popularity of satire and epigram as the preferred poetic forms. The poetry of the first half of the seventeenth century can be broadly grouped under three different heads- **Ben Jonson and the lesser poets, Metaphysical Poetry** (John Donne, 1573-1631, George Herbert, 1593-1633, Richard Crashaw, 1613-49, Andrew Marvell, 1621-78, and Henry Vaughan, 1622-95) and the **Cavalier Poets** (Robert Herrick, 1591-74, Thomas Carew, 1595-1640, Edmund Waller, 1606-87, John Suckling, 1609-41, Richard Lovelace, 1618-58, Abraham Cowley, 1618-67 and above all John Milton, 1608-74).

THE SEVENTEENTH CENTURY-2 :- The Puritan Government under Oliver Cromwell did not survive long after his death in 1958, and less than two years later in 1960, Charles II returned from exile in France amidst tremendous popular acclaim. With the collapse of the puritan Government, activities that had been so long suppressed surfaced again, and the English as a whole, indulged in violent excesses. The Restoration replaced the intellectual values of the Renaissance, and relied mainly on reason and speculation. So, in the decades between 1660 and 1700, the foundation was laid for the growth of a new kind of society which was Protestant, middle class with hugely traumatic upheavals like, licentiousness-resulting as a reaction against the joylessness of life under the Puritan Commonwealth.

Theatres in England were closed since 1642, reopened with the Restoration. Two parallel trends can be witnessed in **Restoration Drama-the Heroic Tragedy**, which appealed to the aristocratic sentiments on the subjects of love and honour- with the dramatists like, William Davement (1606-68), Roger Boyle (1621-79), John Dryden (1631-1700), Nathaniel Lee (1649-92), Thomas Otway (1632-85) and Thomas Southern (1660-1746) and the **Restoration Comedy of Manners**, which reflected the morally debauched, but intellectually brilliant atmosphere of the salons and the coffee houses, chocolate houses and alehouses with the dramatists like John Dryden, George Etherege (1635-91), William Wycherley (1640-1716), Thomas Shadwell (1642-92), John Vanbrugh (1644-1726), William Congreve (1670-1729) and few more.

The Restoration Prose reveals the effects of the new scientific thought, and it is characterized by clarity, balance and a wit that is not flamboyant, and the prose fiction of the time evolved into the novel proper. The writers like, John Evelyn (1620-1706), Samuel Pepys (1633-1703), John Bunyan (1628-88) and John Dryden made the period richer.

The Restoration Poetry is one of departures- in the sense that a marked change of mood was reflected in the poetry of the time. The intellectual quirkiness of the metaphysical poetry was replaced by a new ethos. The poetry of the period was stimulated by the tenets of poetic Satire, a genre which was fed on the contradictions, the ironies and the double standards of the contemporary society. In the hands of the poets like Samuel Butler (1612-80), John Dryden, Charles Sackville the period witnessed English literature being infused with new trends and perceptions. The writings of the time were characterized on the one hand by wit and control and on the other by extreme licentiousness. However the polish and precision introduced by the writers of this age would find its full flowering in the neoclassical age that followed.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

A Study of Woman characters in R.K. Narayan's Novel; The dark Room

Dr. Manoj kumar tembhre

R.K. Narayan enjoys a unique identity among the greatest Indian writers in English. In his novels Narayan depicts Indian life and sensibility in its perfection. He is a writer of middle class characters of malgudi,an imaginary place in south India.He has drawn a wide gallery of male and female characters in his writings. There is at least one female character in his novels, who occupies an important place in the story. The social realistic setting of malgudi offers the novelist a matrix rich enough to portray all types of characters with ease.

Because of his realistic touch he feels equal pleasure in sketching worldly wise people and ascetics. Narayan portrays with equal ease both the genders: if verities of men delight him with their peculiarities, his women characters are never inferior to any.

The most interesting point in this concern is the fact that the notion of woman in his novels underlines an evolutionary growth pattern ending in the emancipation of woman. The concepts of womanhood in R.K. Narayan's novels can be read as a movement involving tradition versus individual talent.

R.K.Narayan is a feministic novelist but in hidden manners. His status as a feminist novelist is just like a thing hiding in the light. It is quite apparent but somehow we have missed it. His female character heightens the interest of his novels. People gets attracted towards them because of their importance in the story. Sometimes it seems that it is a woman who is the centre figure in the development of the story. He often narrates situations in a disinterested manner. However, it woule be unwise to say that narayan was not interested in women issues or that he was more interested in particular individual woman character. In his early novels like 'The Dark Room' (1938) and 'The English Teacher' (1945) which were written before the independence of India (1947) portray women as mere orthodox and god believing entities engaged in house hold responsibilities and deeply rooted in traditional belifs. His middle novels create a women who dare to pursue their own happiness accordingly. In his later novels we see the portrayal of stronger and firmer female protagonist, influenced by the western philosophy and cutture. Thesr female express their resistance to male dominance, cruely against the fair sex, denial of identity and freedom of expression.

R.K. Narayan belongs to an orthodox Brahmin Family, he does not heristatle to depict the problem playing woman in and out of the family circle. His sympathy for woman is an apolitical observation on the plight of woman in general and the traditional Hindu woman, chained to tradition and societal norms.The novelist examines the condition of woman prevailing at that particular period of history: the pre-Independent period and the post Independent period. His major novels can be discussed to see how the novelist reats women. The Dark Room (1938) and The English Teacher (1945) are works of pre-Independence period. Novels like Mr. sampath (1948) The Financial expert (1952), Waiting for the Mahatma (1955), The guide (1958), The Man Eater of Malgudi (1961), The Vendor of Sweets (1967), The Painter of Sings (1977), A Tiger for Malgudi (1983), and The World of Nagraj (1990) all under the category of post-Independence novels. A literary analysis of the major novels of R.K. Narayan retrospectively marks the position as well as the evolution of the concept of Indian woman.

Literaure, especially novel is intimately bound to life. People react and respond to the actions of other people, or to the situations in

their lives. In Narayan's novels characters are clearly more important than the situations. Savitri (The Dark Room) is an urban upper middile class woman, wife of a well to-do company executive Ramani, She is a mother of three children. She begins as a traditional figure, a dutiful, an obedient wife, a devoted mother and an efficient housekeeper. With the development of the narrative we find her gradually develop too. When she discovers the infidelity of her husband, she reacts sharply to the experience, feels the tensions inherent in her situation. She grows and changes in the process. She becomes an effective instrument to explore the darkness of her life symbolized by 'The dark Room' of her house to which she is used to retiring on gloomy occasions. Gradually this Dark Room comes to assume a menacing proportion in her psyche, causing emotional upheavals and finally culminating in the decision to abandon her husband and children.

Narayan's Savitri is certainly a tragic figure. In the opening of the novel itclearly indicates that she has a servile role and has condemned to play in the house. Here she appears to be only a weak, whispering, timid and spineless creature, she, no doubt, has her good points, she is an expert housewife, who knows how to deal with sudden guests. After a number of such incidents, she poignantly realizes self-evaluation.

"We are responsible for our position. We accept food, shelter and comforts that you give,and are what we are… I don't possess anything in this world" (112-113)

In the novels 'The Dark Room" Savitri is shown to be a bundle of changing moods and conflicting responses. She is made to talk and act in turn like an orthodox Hindu wife. With the development of the plot her mood changes and appear to defy even feminine logic, which is supposed to be class by itself. The meek, traditional Hindu wife of the opening episode states making fiery speeches. She resorts to dramatic gestures of defiance half way through the narrative: **"I' am a human being",** she said**……"you men will never grant that. For you we are playthings when you feel like hugging and slaves at other times" (113) "What possession can a woman call her own except her boby ? Every thing else that she has is her father's her husband's or her son's ?" (117).**

Shanta Bai, the other woman's is also an important female character of the novel. Shanta Bai is a part of the love-triangle, who is herself a socially liberated one. Narayan has shown her as a bold, self possessed and educated woman, who has left her husband because he ill treated her. She was over-smart and has literary tastes. For instance, she tells Ramani that she couldn't exist without a copy of "The Rubaiyat of khayyam" is the only person who would have under-stood the secret of her soul. There is also a Ponni the rustic wife of Mari who supports Savitri when she left her husband. Novelist has drawn a frank and ironic picture of a marriage in which it is the Wife, who wears the pants in the house. Ponni has a clear cut philosxophy of husband management which she reveals to savitri. **'Keep the men under the rod, and they will be all right' show them that you care for them and they will tie you and treat you like a dog" (140).**

In the end of the novel we see that, earlier enraged Savitri returns meekly to her home and hearth. There is a tacit acceptance of the situation, a mute submission to her filial obligalions. Savitri returns back to her habitual routine day to day family life. There is no promise of reform on the point of the husband. Savitri admits her defeat: **"I am like a bamboo pole which cannot stand without a wall to support it…." (189).**

On the basis of the above description We can come to the conclusion that, R.K. Narayan has dealt with both the gender seriously. He has given the voice to the plight of women locked up with-in the confires of an orthodox society, which has nothing to offer to women except matiral refuge. Women are confined ot the home and hearth with

all sorts of taboos and tradition clamped on them. Narayan in his autobiography My Days says:

"I was somehow obsessed with a philosophy of woman as opposed to men, her, constant oppressor. This must have been an early testament of the Women's Lib movement, man assigned her a secondary place and kept her here with such subtlety and cunning that she herself began to lose all notion of her independence, her individuality, stature and strength. A wife in an orthodox milieu of Indian society was an ideal victim of such circumstances" (119).

Thus, this study of R.K. Narayan's novels takes notes of his portrayal of women in his writings. He has drawn the condition of women and the social scince in the perspectives of the age old traditions and beliefs. As a true artist, he does not stand between the reader and the story. He carries no messages, no doctrines thoughc he is a writer with a philosophy. He dose not allow the philosophy to overshadow the story or the characters.

Works cited :-

01. Narayan, R.K.: The Dark Room, Macmillian and Co. Ltd, London, 1938.
02. Narayan R.K.: My Days; Indian Thought Publication, Mysore, 1974.
03. Sharan, Nagendra Nath: A Critical Study of the Novels of R.K. Narayan. New Delli: Classical Publisting Company, 1993.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

बौद्ध साहित्य में आर्थिक पर्यावरण : ऐतिहासिक अध्ययन

डॉ. रामकुमार अहिरवार
विभागाध्यक्ष, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन म.प्र

पर्यावरण और पारिस्थितिकी मानव–समाज का सदैव अभिन्न अंग रहा है, जिसकी सीमाएँ विस्तृत है। भारतीय मनीशियों ने प्रकृति के संरक्षण तथा पेड़–पौधों एवं जीव–जन्तुओं में सामंजस्य हेतू विभिन्न प्रकार के नियमों तथा वर्जनाओं को दैविक शक्तियों के रूप में मान्यता प्रदान कर पर्यावरण चेतना में अपना आमूल्य योगदान दिया है। सांस्कृतिक पर्यावरण के दो मुख्य भाग है–पहला सामाजिक पर्यावरण और दूसरा आर्थिक पर्यावरण। सामाजिक पर्यावरण के अन्तर्गत जहाँ सामाजिक एकता, सौहार्द, कुरूतियों इत्यादि का अध्ययन किया जाता है। वहीं आर्थिक पर्यावरण के अन्तर्गत कृषिकर्म, अन्न–उत्पादन, साग–भाजी, पादप–पुष्प आदि का अध्ययन किया जाता है। इस दृष्टि से बुद्ध के पर्यावरण और परिस्थितिकी का क्षेत्र कृषि, पशु–पक्षियों और पेड़–पौधों के प्रति सहानुभूति तक ही सीमित नहीं है बल्कि वे सम्पूर्ण मानव समाज को एक परिवार के रूप में देखते हैं, जिसकी अवधारणा बौद्ध ग्रन्थों में उल्लिखित है, जिसमें भौगोलिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक पर्यावरण का चिन्तन विद्मान है। बुद्ध कहते है कि मानव समस्त जीवों का केन्द्र बिन्दु है, मानवीयता की दृष्टि से जिसे उक्त सभी पर्यावरण की आवश्यकता है। इन सभी में जीवों का पार्जन प्रभाव है, जिससे मानव सभ्यता के विकास में महत्वपूर्ण है। प्राचीन भारत में मानव का प्रथम उद्देश्य प्राकृतिक व्यवस्था के साथ तालमेल बनाए रखना था। प्रकृति के अनुकूल चलते हुए जीवन–यापन करना उसका धर्म था। सभी मनुष्य धर्म का पालन करते हुए अपना जीवनयापन करते थे। उनके जीवन का सार धर्म ही था। पर्यावरण के अन्तर्गत केवल प्रकृति ही नहीं, अपितु समाज व संस्कृति सभी कुछ निहित है। इनके उन्नयन के बिना राष्ट्र विकसित नहीं हो सकता।

पर्यावरण का अर्थ विस्तृत ह लेकिन शाब्दिक अर्थ में तो 'परि' अर्थात् चारों ओर का आवरण अर्थात् जो ढके हुए है, आच्छादित किए या घेरे हुए है, वह सब पर्यावरण ही है। पर्यावरण के अन्तर्गत सम्पूर्ण सृष्टि ही अन्तनिर्हित दिखाई देती है। जिसमें हमारे विचार, समाज, संस्कृति आर्थिक नीतियाँ तथा कर्म समाए हुए है। मनुष्य के सम्पूर्ण क्रिया–कलाप व भौतिक वस्तुएँ तथा समस्त विचारणाएँ जिसके द्वारा आच्छादित है उन परिस्थितियों तथा वातावरण को पर्यावरण कहते हैं। भारतीय अवधारणा में पर्यावरण के सभी प्रमुख पक्षोंपर पुरातन काल से ही विचार किया जाता रहा है तथा पर्यावरण के प्रति अपनी चेतना और जाग्रति को सम्पूर्ण विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया गया हैं। प्रस्तुत शोधपत्र में ''बौद्ध साहित्य में आर्थिक पर्यावरण का ऐतिहासिक अध्ययन'' विनयपिटक के सन्दर्भ में ही अभिप्रेत है।

ई.पू. छठी शताब्दी में महात्मा बुद्ध द्वारा एक नवीन बौद्धिक क्रांति का सूत्रपात हुआ। परिणाम स्वरूप जहाँ एक और सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन में संशोधन और परिवर्तन हुआ, वहीं दूसरी और पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी के क्षेत्र में भी नवीन दृष्टिकोण अपनाया गया। बुद्ध ने तो पर्यावरण और पारिस्थितिकी से अपना अभिन्न सम्बन्ध ही स्थापित कर लिया था। बौद्ध साहित्य में मनुष्य के जीवन में जीविकोपार्जन का महत्वपूर्ण स्थान होता है। जब वह संसार में आता है तथा एक नयी दुनिया का सृजन करता है, तब उसके सामने यह भी कर्त्तव्य हो जाता है कि वह सुख–पूर्वक रहे। उसका अपना तथा अपने परिवार का भरण–पोषण सम्यक् रूप से होता रहे, इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वह किसी न किसी प्रकार की जीविका अपनाता है। इसे अपनाये बिना वस्तुतः वह रह भी नहीं सकता है। कारण स्पष्ट है कि –''सभी प्राणी आहार पर स्थित है।'' बुद्ध ने भी कहा है कि– '' सब्बे सत्ता आहार ट्ठितिका।'' यहां आहार शब्द से केवल भोजन ही अभिप्रेत नहीं है, वरन् उसके साथ वस्त्र, आवास, औषधि तथा अन्य पर्यावरणीय जीवन भी

सम्मिलित हैं। ऐसी बात आज प्रासांगिक है कि व्यक्ति स्वास्थ्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कुछ–न–कुछ सेवा, कृषि, वृक्षारोपण, मन को आकर्षित करने वाले पुष्प इत्यादि का काम करता है। उनके माध्यम से इस लोक में अपने भरण–पोषण करते हुए जीवन–यापन करता है। उनके प्रकार, कार्यविधा, रूप तथा प्रतिबिम्बित विविधता समाकुल हैं।

उक्त आार्थिक पर्यावरणीय का उल्लेख बौद्ध ग्रन्थों विशेषकर त्रिपिटक के विनय पिटक ग्रन्थों में मिलता है कि मनुष्य विविध प्रकार के उपयोगी साधनों द्वारा अपने जीविकोपार्जन में रत था। वे साधन अनेक प्रकार के देखे जाते है, जो इस प्रकार हैं–

जीव कृषि कर्म– बौद्ध साहित्य में मानव जीवन में कृषि कर्म को प्राथमिकता से देखा गया है जिसे बौद्ध साहित्य में 'कशि' कहा गया है। भारतवर्ष कृषि प्रधान देश है, प्राचीन काल से ही भारत में खेती करने की परम्परा चली आ रही है। खेती करने वालों को कृषक कहा जाता है। ब्राह्मण भी कृषि कार्य करते थे।[1] कृषि में अन्न के साथ–साथ औषधियाँ (वनस्पति) भी पैदा की जाती थी। खेत को प्रवेश तथा क्षेत्र कहते थे।[2] खेतों में हरी–भरी फसल उसके रंग–बिरंगें फूलों का मानव के शरीर पर जो अमिट प्रभाव पड़ता है, वही उसकी पर्यावरणीय देन है। नेत्र ज्योति व चित्त की एकाग्रता के लिए हरितिमा का महत्व देशज व आयुर्वेद शास्त्र में स्वीकार किया गया है। वप्पमुंग्ल के प्रसंग से प्रकट होता है कि राजा शुद्धोधन भी यथा समय कृषि कर्म प्रारंभ करते हुए अपने हाथ से हल चलाया करते थे। उनके द्वारा शुभ प्रारंभ करने के उपरान्त ही कृषि का कर्म प्रारंभ होते देखा जाता है। इसकी अलावा अनेक छोटे–बड़े किसानों की चर्चा है जो कृषि का कार्य करते थे। तिहोकुटसुत्त में प्रसंगवश जीविकोपार्जन की बात आयी है।[3] कृषि नदियों के किनारे की जाती थी। इस प्रकार का उदाहरण खुद्दकनिकाय (1.27–3) से स्पष्ट होता है कि धनिय गोपाल महानदी के तट पर घास–फूस से बनी हुई एक छोटी सी कुटी थी जिसमें निवास करता था और आवश्यकतानुसार खेतों से धन उपार्जित करता था।

कृषि कर्म में धान उपार्जन के भी उल्लेख मिलता है जो पर्यावरण की दृष्टि से उपयुक्त कहा जा सकता है। खेतों को सींचने की व्यवस्था थो। वर्षाकाल में जल का संग्रह कर लिया जाता था और नालियों को माध्यम से जल खेतों तक पहुँचाया जाता था। इस प्रकार की चतुरता के लिए कुछ व्यक्तियों के प्रमाण मिलते है। जिन्हें नैतिक कहा जाता है।[4]

मिट्टी के प्रकार :– प्राकृतिक पर्यावरण के अन्तर्गत हम भौगोलिक पर्यावरण के उन अंगों का अध्ययन करते है, जो पृथ्वी और भूमंडल से संबंधित है। भौगोलिक पर्यावरण मानव समाज का ही नहीं, अपितु प्राणिमात्र का भी अभिन्न जीवनांग है। विनय पिटक में पृथ्वी को, धन–धान्य से सम्पन्न (सुमिक्ष) और फसलों से परिपूर्ण (सुसस्स) बतलाया गया है।[5] इसी पृथ्वी पर कुछ भूभाग बालुकासे परिपूर्ण, मानो बालू के समुद्र ही हो (बालुकार्णव) थे। कुछ भूभाग बहुत उपजाऊ (सस्य संपन्न) और कुछ ऐसे भी थे जहां तिनका भी नहीं उगता था। जहां हरियाली का नाम न था। ऐसे भू–भाग को हरियाली रहित (अपहरित)[6] कहा जाता था। मिट्टी (मत्तिका)[7] का प्रयोग और उपयोग विविध प्रकार से किया जाता था। अच्छी चिकनी मिट्टी के बर्तन (भांड) बनाए जाते थे। अवंति दक्षिणापथ[8] (यह मालवा का भूभाग था) की मिट्टी काली थी (कण्हुत्तरा)[9] और बहुत कड़ी (खरा) थी। गोखुरू (गोकण्टक) बहुत होते थे। यहां जूते पहनना जरूरी था। लोग नित्य स्नान करना अच्छा मानते थे। हिरण, भेड़, बकरी, ज्यादा होते थे। अज चर्म, मृग चर्म और मेष चर्म का

[1] अवदान, शतक जिल्दवन 282/11, 295/6, दिव्यावदान 47/32, राहुलराज, बौद्ध पर्यावरण एवं सामाजिक जीवन, दिल्ली 2003, पृश्ठ– 90–94
[2] अंगने लाल– संस्कृत बौद्ध साहित्य में भारतीय जीवन, लखनऊ 1972, पृश्ठ– 194
[3] खुद्दकनिकाय– 1, अनुवादक– राहुल सांस्कृत्यायन एवं आनन्द कौशल्यायन, कलकत्ता
[4] विजयलक्ष्मी पाण्डेय, बौद्ध धर्म का स्वरूप एवं विकास, दिल्ली, पृष्ठ 106
[5] महावग्ग, पृ. 388 सम्पादन, मिक्कु, जे कश्यप, 1937 विहार, 1958.
[6] महावग्ग पृ. 370
[7] चुल्लवग्ग पृ. 209/26 सम्पादक– मिक्कु जे कश्यप विहार, 1956
[8] महावग्ग पृ. 214/10
[9] महावग्ग पृ. 214/20, 21, 22

लोग प्रयोग करते थे।[10] बौद्ध साहित्य में दो प्रकार की मिट्टी का उल्लेख मिलता है जिन पर एक उपजाऊ और दूसरा अनउपजाऊ। उपजाऊ मिट्टी कृषि के योग्य होती है, जो मुलायम, चिकनी, और कंकड़ पत्थर रहित होती है। इसमें बालु भी नहीं होता।[11] जबकि अनउपजाऊ भूमि मे कंकड़, पत्थर बालू होती ह। जो कृषि के लिए उपयुक्त नहीं होती है कारण कि पथरीली होने के कारण फसल की जड़े गहराई तक नहीं पहुँच पाती है। जिससे बीज ही नष्ट हो जाता है।[12] खेतीहर भूमि को उद्यान भूमि भी कहा गया है। खेत भी अनेक प्रकार के हुआ करते थे जिसमें छोटे चौकोर, आयताकार, लम्बाकार, कतारबद्ध होते थे। इनको सीमाओं में बाँधा जाता था। जिन्हें मेढ़ कहा जाता था जिसे मेढ़ को मर्यादा कहा गया है। चौकोर खेत को अक्षीबन्द कहा गया है। ऊँची मेढ़ को सिंघाटनबन्द कहा जाता था।[13] इसमें ऊँची मेढ़ वाले खेत धान के लिए उपयुक्त कहे गये है।

खेत में बीज डालने के पूर्व अच्छी तरह से जोता जाता था। हल में लोहे का फाल लगाया जाता था। जिसे षिर कहते है। शिर के बने कुण्ड को सीता कहते थे। महावग्ग से ज्ञात होता है कि एक–एक साथ–साथ हल हुआ करते थे। जिसे सप्त, शिरा कहा गया है। सोने की नसी या शिर या फॉल का भी उल्लेख मिलता है।[14] समय पर बीज बोने से फसल अच्छी होती थी। इस प्रकार के विस्तृत वर्णन चुलवग्ग से प्राप्त होता है।[15]

सिंचाई–निराई– अच्छी फसल के लिए सिंचाई अी आवश्यकता होती है। मात्र प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर नहीं रहते थे। समय–समय पर निराई भी की जाती थी। इससे खेत साफ रहने से फसल में भी मिलावट की संभावना खत्म हो जाती थी। कृषि के लिए अच्छे बीज होने के साथ–साथ सिंचाई और निराई की भी आवश्यकता होती है। समय पर सिंचाई न होने से फसल सूख जाती है। विनय पिटक में पुष्करिणी, सरोवर, तड़ाग, नदियों और कुओं का उल्लेख प्राप्त होता है। ये सिंचाई के प्राकृतिक साधन थे। मानव–निर्मित सिंचाई साधनों में चुल्लवग्ग तीन साधनों का उल्लेख करता है। ये तीन साधन हैं– ढेकुली (तुरंग), पुर या चरस (करकटक) और रहट (अरहट्ट चक्कवाट्टक)[16]।

बोवाई के बाद सिंचाई की जाती थी (उदकं अभिनेतब्ब)। कभी–कभी खेत में आवश्यकता से अधिक पानी भर जाता था, तब उसे निकाला जाता था (निन्नेतब्बं)।[17] सिंचाई के साधनों पर पुरातात्विक खोजों से भी प्रकाश पड़ता है। उल्लेखनीय है कि जूनागढ़ में गिरनार पर्वत पर सुदर्शन झील का निर्माण चंद्रगुप्त मौर्य ने अपने राष्ट्रीय अधिकारी पुष्यगुप्त द्वारा करवाया था, जिसे सम्राट अशोक ने यवनराज तुशास्फ द्वारा जीर्णोद्धार करवाया था। रूद्रदामन प्रथम के समय इसका तटबंध टूट गया था, जिसे उसने अपने निजी कोष से खर्च करके पुनः बनवाया[18] और कालांतर में गुप्त सम्राट् स्कंदगुप्त ने इसका सौंदर्यीकरण करवाया था।[19] इस झील से सिंचाई के लिए नहरें निकाली गई थी। खारवेल के हाथीगुफा अभिलेख में नहर का उल्लेख प्राप्त होता है। इस प्रकार कृषि–सिंचन के लिए प्राकृतिक और मानवीय दोनों प्रकार के साधनों का प्रयोग विनय पिटक में प्राप्त होता है। फसल में खर–पतवार तथा दूसरे पौधे जम जाते थे, जो फसल हो हानि पहुंचाते थे, इसलिए निराई (निद्धापेतब्बं)[20] की जाती थी। कसी भारद्वाज सुत्तं में निराई को 'निद्धांन' कहा गया हैं फसल पकने पर कटाई की जाती थी (लवापेतब्बं)[21]। उसे सुरक्षित स्थान पर रखकर गठ्ठे में बांधा जाता था (पुंजंकारा पेतब्बं)[22]। फिर बैलगाड़ियों व कृषकों द्वारा खलियान (गल्ले) में अनाज को लाया था। जहां बैलों द्वारा मड़ाई की जाती थी। अच्छी तरह मड़ाई कर बारीक भूषा के साथ अन्न बना

[10] महावग्ग, पृ. 214/21–24
[11] पाचित्तिय 53/12–13 मिक्कु जे कश्यप बिहार, 1958
[12] दिव्यावदान, पृ. 362/ 29–30, सम्पादक– वैद्य मिथिला विद्यापती, दरभंगा 1959
[13] महावग्ग 303/21
[14] महावस्तु जिल्द 3 पृष्ठ 50/15 अनुवादक– जे.जे. जोन्स, लंदन 1949
[15] चुल्लवग्ग 279/14 सम्पादक– मिक्कु जे.कश्यप, बिहार, 1956
[16] चुल्लवग्ग, पृ. 212/1
[17] चुल्लवग्ग पृ. 279/15
[18] रूद्रदामन प्रथम का जूनागढ़ शिलाभिलेख (दृष्टव्य–सेलेक्ट इंस्क्रिप्शंस, वा. 1, डी.सी. सरकार, पृ. 176–177)
[19] स्कंदगुप्त का जूनागढ़ शिलाभिलेख, पंक्ति 21–24 (दृष्टव्य सेलेक्ट इंस्क्रिप्शंस, वा. 1, पृ. 214–215)
[20] चुल्लवग्ग, पृ. 279/16
[21] चुल्लवग्ग, पृ. 279/16
[22] चुल्लवग्ग, पृ. 279/16–17

लिया जाता था। फिर हवा द्वारा सूफ से भूषा की उड़ाई की जाती थी(मद्दापेतब्बं)[23] । जिससे अन्न का वजन से सीधा गिरता था और हवा के द्वारा भूषा उड़ जाता था। इस प्रकार अन्न को साफ करके घर पूजन किया जाता था। फिर उपयोग में लाया जाता था। यह क्रम परम्परागत आज से पचास वर्ष पूर्व यही प्रचलन में चला आ रहा है। अब मशीनी युग होने से यह कर्म शीघ्र ही घण्टों में किया जाने लगा। ''इस कृषि कार्य का कोई अंत नहीं था। यही कार्य करके पिता और पितामह समाप्त हो गए है।'' (अखीणेव कम्मे पितरो च पितामहा च कालंकता ति)।[24] चुल्लवग्ग के 'कसी भारद्वाज सुत्तं' में वर्णित कृषिकर्म की पुष्टि से भी होती है। जिसमें बुद्ध ने अपने को कृषिकर्मा बताया है। (अहम्पि खो ब्राह्म्ण कसामि च वपासि च।)[25]

बौद्ध साहित्य में कृषि कार्य के उपकरणों की जानकारी भी प्राप्त होती है। कृषि करने के लिए अनेक प्रकार के उपकरणो की आवश्यकता हेाती थी। जिसमें विशेषकर– हल (नांगल),[26] कुसी (फाल),[27] बैल (बलिवद्द, धुरधार),[28] बैलगाड़ी (शकट, वाहन),[29] खन्ती (खणित्ति),[30] फावड़ा (कुदाल),[31] खोदने का यंत्र (निखादन),[32] बांका (परसु),[33] कुल्हाड़ी (कुठार)[34] आदि प्रयुक्त होते थे।

बौद्ध ग्रन्थों में अनेक प्रकार के उत्पादों का उल्लेख आया है–जैसे अन्न, दलहन और तेलहन– दलहन, दाल वाले अन्न थे और तेलहन तेल वाले अन्न होते थे। कृषि से विभिन्न अन्नों की उपज होती थी–इक्षु[35] (ईख), कापसि[36] (कपास), कादव[37] (कोदों), कुल्माश[38], या कुलत्था[39] (कुलथी), कुरबिन्द[40] (उड़द या मोथा),। चणक[41] (चना), तण्डदुल[42] (चावल), मसूर[43] (मसूर या मसुरी), माशक[44] या माश[45] (उर्द), मुद्ग[46], बड़[47] (एक प्रकार का चावल), ब्रीहि[48] एक प्रकार का चावल, शण[49] (सन), शलि[50] (जड़हन चावल), सर्षप[51] (सरसों)। कृषि कार्य में अन्न, दलहन और तेलहन उत्पन्न होता था।

अन्नों में कणाजक :– जिसे मोटा अन्न माना गया है।[52], ज्वार (विलंगक)[53] : राहुल जी के अनुसार यह विडंग[54] अनाज है। भदंत आनंद कोसल्यायन इसे सिरका[55] मानते हैं जिसके साथ मोटे अनाज की रोटी खाई जाती थी। विडंग वस्तुतः ज्वार अन्न ही प्रतीत होता हैं। मूंग (इसे मुग्ग कहा गया है।)[56] मुंग की दाल लोकप्रिय थी। अलसी– इसे क्षौम[57] कहते थे। यह भी तेलहन था। कंगु–: बाजरे को कंगु कहा जाता था, वनोपज अनाज है, खाने में हल्का होता था। इससे पेजा बनता था। पाचन क्रियाओं में आसानी से पचता था। यव : इसे जौ[58] कहते है, इसकी रोटियाँ भी बनाई जाती थी। गोधूम– यह गेहूँ[59] के नाम से जाना जाता है। आटे से इसकी रोटियाँ बनाई जाती थी। कद्दुसक[60]– यद्यपि महोदय जी.एस.पी. मिश्र ने इसे जौ का एक प्रकार माना है, लेकिन डॉ.सी.

[23] चुल्लवग्ग पृ. 279–17
[24] चुल्लवग्ग, पृ. 279/23
[25] कसी भारद्वाज सुत्तं उपर्युक्त
[26] महावग्ग पृ. 392
[27] कसी भारद्वाज सुत्त
[28] कसी भारद्वाज सुत्तं
[29] महावग्ग, पृ. 253/22, 25
[30] महावग्ग, पृ. 288/6, 8
[31] चुल्लवग्ग, पृ. 266/20
[32] चुल्लवग्ग, पृ. 266/20
[33] चुल्लवग्ग, पृ. 266/19
[34] चुल्लवग्ग, पृ. 266/19
[35] करूणा 93/27
[36] महावस्तु, जि. 3/53/16, सम्पादन– आर.सी. बासका कलकत्ता दिव्यावदान 131/28, 170/32, 184/11–सम्पादन, पी.एल.मिथिला, दरभंगा 1959
[37] दिव्यावदान 420/12
[38] दिव्यावदान 54/32, 55/4, 24, 32, 56/2.
[39] चरक0 13/25, 27–28
[40] वही, 27–14
[41] चरक संहिता, अनुवादक, अत्रीदेवा गुप्ता, अजमेर सामवेत– 1954. 27/28
[42] दिव्यावदान 184/10 मित्रा ललित 312/18
[43] वही, 184/10, चरक 27/28
[44] दिव्यावदान 415/14
[45] वही, 184/10
[46] वही, 154/10, 415/14
[47] करूणा 93/27
[48] चरक 27/15, दिव्यावदान 415/14
[49] दिव्यावदान 52/32
[50] वही, 184/11, 473/30 करूणा 93/28
[51] करूणा 7/3/4 दिव्यावदान 43/20
[52] विनय, पृ. 397
[53] चुल्लवग्ग, पृ. 155/12, 26
[54] विनय पिटक,– अनुवादक राहुल सांस्कृत्यायन, सारनाथ (बनारस)– 1935 पृ. 397
[55] पालि (हिंदी कोश पृ. 235)
[56], महावग्ग, पृ. 51, 350, 398
[57] विनयपिटक, अनुवादक– राहुल सांस्कृत्यायन, वाराणसी– 1994, पृ. 247
[58] पाचित्तिय, पृ. 71/20, 262/12
[59] दिव्यावदान, पृ. 144/11, पृ. 415/14
[60] ए.आ.वि.पृ. 269

एस. उपासक के अनुसार यह कोदों है जो सही जान पड़ता है, कोदों हल्का भोज्य पदार्थ था।

फल, पुष्प और पादप – विनयपिटक में फल, पुष्प, और पादपों का महत्व दर्शाया गया है। फूलों के लिए बाग लगाए जाते थे। (पुष्पराम)। इसी तरह फलों के भी बाग (फलाराम) होते थे।[61] इन पुष्प, फल और पादपों में कुछ महत्वपूर्ण इस प्रकार है।–जामुन (जम्बू)[62], तोंबी लौकी (तुम्ब)[63], कैथा (कपत्थिन)[64], केला (कदली)[65], श्वेत कमल (पुंडरीक)[66], नरकुल (नल)[67], कटहल(पनस)[68], फालसा (फारूसक), बड़ा केला (मोच या मोचपान)[69], अंगूर (मुंद्दिका)[70], आम (अम्ब)[71], आंवला (आमलक)[72], गूलर (उदुंबर)[73], नीलकमल (उप्पल)[74], रक्तकमल (पद्म)[75], चंदन[76], भीसा (एक प्रचार का यह भी कमल था, जिसकी जड़ को भसीड़ कहा जाता है, जिसकी सब्जी आज भी बनाई जाती हैं)[77], वच[78], तुलसी (हुलसी)[79] आदि।

इस प्रकार विनय पिटक से सामाजिक पर्यावरण और आर्थिक पर्यावरण पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालता है। निःसन्देह विनय पिटक में उद्धृत आर्थिक पर्यावरण की जिन कमियों और अव्यवस्थाओं की ओर इस ग्रंथ ने ध्यानाकृष्ट किया है, उनको भली प्रकार दूर करके आर्थिक और सामाजिक क्षेत्र में दिन दूने रात चौगने फैल रहे दूषित पर्यावरण को स्वस्थ पर्यावरण में बदला जा सकता है।

स्पष्ट है भारतीय बौद्ध साहित्य में मानव का प्रथम उद्देश्य प्राकृतिक व्यवस्था के साथ तालमेल बनाए रखना था। प्रकृति के अनुकूल चलते हुए जीवन–यापन करना उसका धर्म था। सभी मनुष्य धर्म का पालन करते हुए जी अपना जीवनयापन करते थे। उनके जीवन का सार धर्म ही था। पर्यावरण के अन्तर्गत केवल प्रकृति ही नहीं, अपितु समाज व संस्कृति सभी कुछ निहित है। स्पष्ट है कि बौद्ध साहित्य में आर्थिक पर्यावरण का ऐतिहासिक अध्ययन करना शोध की दृष्टि में तथाकथित अंधयुगीन पृष्ठों को प्रकाश में लाना है। उन्नयन के बिना राष्ट्र विकसित नहीं हो सकता।

[61] पाराजिक पृ. 60,76– सम्पादन, मिक्कु जे.कश्यप बिहार–1958
[62] महावग्ग पृ. 400
[63] चुल्लवग्ग, पृ. 203, महावग्ग, पृ. 223
[64] पाचित्तिय पृ. 55
[65] चुल्लवग्ग पृ. 287/12
[66] चुल्लवग्ग पृ. 287/12
[67] चुल्लवग्ग, पृ. 287/21–22
[68] पाराजिक,पृ. 74
[69] महावग्ग, पृ. 400
[70] शास्त्री, महावग्ग, पृ. 400
[71] चुल्लवग्ग, पृ. 154
[72] महावग्ग पृ. 220
[73] चुल्लवग्ग पृ. 421–422
[74] महावग्ग पृ. 9/14
[75] महावग्ग पृ. 9/24, विनय पृ. 78
[76] चुल्लवग्ग पृ. 199, 234
[77] महावग्ग, पृ. 232
[78] पाचित्तिय, पृ. 55
[79] महावग्ग, पृ. 220

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

नागपुरी करमा लोक गीतों में जनजीवन

सुमन कुमार कनीय – शोधार्थी, जनजाति एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची

करमा आदिवासी एवं सदानो द्वारा मनाये जाने वाला एक महापर्व है जो भादो महिना शुक्ल पक्ष के एकादशी तिथि को मनाया जाता है। प्रकृ ति के परम तत्व से साहचर्य स्थापित करने वाला पर्व है। सदान युवतियां अपनी मनोकामना तथा भाई की ऋद्धि–सिद्धि के लिए तथा आदिवासी भाग्य वधन परम बंधुत्व में वृद्धि के लिए व्रत रखती हैं। करमा पर्व की पृष्ठभूमि को गहराई से देखा जाए तो यह सांस्कृतिक चेतना, जीवन दर्शन, लोक–विश्वास, धर्म और प्रकृति के प्रति आदिम संवेदनाएं का प्रतीक है। निराकार ईश्वर सत्ता के समक्ष मानव का श्रद्धा भाव अर्पण कर मानव सभ्यता विकास का प्रतीक है। करमा के अवसर पर जो पारंपरिक गीत गाया जाता है उसे करमा लोकगीत कहते हैं तथा गायन, वादन के साथ जो नृत्य किया जाता है उसे करमा नृत्य झुमर कहते हैं।

करम शब्द के बारे में शब्दकोश कारे ने कई अर्थ बताए हैं– सदानी नागपुरी हिंदी शब्दकोष के अनुसार ''कर्म, किस्मत, एक त्योहार'' '1 तथा मानक हिंदी शब्दकोश के अनुसार–कर्म, काम, कर्मफल, भाग्य, कर्मफलस्वरुप दुःख, कृपा, क्षमा, अनुग्रह'' '2 शब्दों से विभूषित किया गया है। जो करमा कथा में पात्रअनुकूल दिखाई पड़ता है। करमा का जवा की तैयारी से लेकर विसजन तक कई चरणों में पूजन क्रिया विधि के अनुसार नागपुरी लोकगीत क्रामिक रूप से गाए जाते हैं।

जावा/जवा फूल :– करम त्योहार में जवाफूल का विशेष महत्व है नागपुरी हिन्दी शब्दकोशके अनुसार जवा शब्द का शाब्दीक अर्थ– '' गमला, पते के बडे दोना (खाला) आदि में आए हुए धान, जौ, आदि के पीले पौधे जो करमा जीतीया आदि की पूजा में प्रयोग किये जाते है।'3

करमा पूजा पांच दिन, सात दिन या नौ दिन पूर्व जावा रखने की परम्परा है। कुवाँरी युवतियाँ जिस दिन जवा फूल रखती है उस दिन नहा कर पूर्ण रूप से शुद्ध होकर सूर्योदय समय नदी, घाटी या पवित्र टाड आदि पूर्व में चयनित स्थान के बालू को बांस की डलिया या सखुआ पत्ते के बड़े दोना में उठाकर लाती है। जिस आखडे या घर में जवाफूल उठाना होता है उस घर को साफ सुथरा लिपाई पोताई किया जाता है। उस स्थान पर बालू को रखा जाता है। युवतियों द्वारा विभिन्न प्रकार के अन्न के दाने–जौ, धान, मकई, उड़त, सुरगुजा, कुलथी, तील आदि के दानों को बालू में मिलाकर डालिया या खला में रखा जाता है। जवा जितने दिनों का रखा जाता है। उतने ही किस्म के अन्न दाने को मिलाया जाता है। प्रति दिन सुबह में धूप दिखाया जाता है। शाम युवतियाँ जवा को पवित्र स्थान पर लीपाई करने के उपरान्त रखती है धुवन–धूप जलाकर हल्दी की पवित्र पानी से सीचकर सेवा करती है। इस जवा रखने से करम विदाई तक पूरे पवित्र मन से मांस–मछली, मद आदि का सेवन नही करती है, जो परम्परा से वर्णित है। शुद्ध मन से जवा फूल की सेवा करती है।

करम संजोत के दिन जवा जितने दिनो की रखती है उतने ही बार जगाती है और उपवास रखती है। जवा जगाने के क्रम में युवतियाँ जो परम्पारिक करम लोग गीत गाती है। उसे सम्पूर्ण वतावरण, प्रकृति मानव जनजीवन के अन्तः अनोश्रय सम्बन्ध खील उठता है। नागपुरी लोकगीतो की मधुर स्वर मनमुखरित कर देता है। जवा जगाने के इस गीत की भाव को देखा जा सकता है।

1. जवा मोय जगालो किया किया जवा,
सयो जवा हेराइते डेराइते गेल हो
लागल चंदन केरा गछ हो–2
ना चंदन फुले ना चंदन पारे हो,
ना चंदन पाके, सोझे काडरी चली जाय हो,
सोझे काडरी चली जाय हो।
पावली–पावली जिन्होर केरा मुठ हे।
सयो जिन्होर हेराइते डेराइते जाय हो
पावली जिन्होर केरा मुठ हो–2
ना चन्दन फूलिया हो ना चंदन फलीया

ना चन्दन फरीया फूलया सोझे काड़री चली जाय हो।'4

इसी प्रकार जितने अन्न होते है सभी का बारी–बारी नाम लेकर जगाया जाता है। जवा जगाने के उपरान्त करमीतोन फुलसुन्दरी के समय फुल लोरने/खोजने जाती है। इसी क्रम में नहा धोवकर फूल लोरते हुए आती है। फूल में कादो फूल एवं धान की अग्र नई पतियाँ चुनकर लाती है।

करमा झुरघुसना :– करम के दिन युवक दिन में या शाम में करम लाने के लिए जाते है और करम की डाली को विधी विधान पूर्वक बाजे गाजे के साथ निमंत्रण देकर करम की पेड़ में धगा सिंदूर, घुप अच्छत से चुमाकर पूजन कर करम की तीन डालयों पूर्ण श्रद्धाभाव से नमन करते हुए बलुआ या टाँगी से एक–एक बार में ही काट कर नीचे गिराते है। नीचे के युवक उसे जमीन में गिरने नही देते है लोक कर अपने कन्धे में रखते है। तीन डालियों को युवक लेकर पाहन के घर पहुचते है, जहाँ पहनाईन करम देव को जलाभिषेक कर चुमाती है, धूप–धूवन दिखाने के बाद पाहन करम डाली को आखडा या आंगन में गाड देता है। कोटवार हाकपारता है, कहता है– करम कर झुर धुसथे हो, सुतल हा कि जागल करमीतीन मन'। इस हॉक सुनते ही करमीतीन पूजा स्थल पर पहुंच जाती है। अर्थात–पूजा के लिए जो युवतियाँ व्रत रखती है उसे करमीतीन कहते है। झारखण्ड के आदिवासी एवं सदानो में भेलकरी की परम्परिक व्यवस्था है। विश्वास के अनुसार आने वाले वर्ष की शुभ सगुन संकेत की प्राप्ति चित–पट के माध्यम से देखा जाता है। ग्राम देवी धरती माँ की समीरन किया जाता है। किसानों द्वारा अन्न उपजाने के क्रम में जाने अनजाने जो भी भूल से अन्य जीवो को दुःख पहुचता है उसके लिए पहान क्षमा याचना करता है, नए अन्न के पाकवान, दाने, फूल पत्ते करम देव को समरपन किया जाता है, इस क्रम में पाहन नए अन्न की सोमरस को तापावन के रूप में करमदेव को समर्पण कर करता है। गाँवा की गावाँ देवती के नाम पर रंगुआ मुर्गे की बली दी जाती ह।

इस पूजन के उपरान्त पाहन सभी करमीतीन को अपने पूजन सामाग्री करम देव के सामने रखने को कहते है। करमी तीन पूजन के समग्र समाग्री रख करम डाली के पास मिट्टी का दीपक जलाकर चारो और बैठ जाती है। यदि नई पहली बार पूजा करने वाली करमीतीन हो तो वह गाडा हुआ कर्मडाली को तीन बार परिक्रमा करने के उपरान्त पूजा में बैठती है। कुछ समुदाय में युवक युवतियाँ दोनो करम की पूजा करते है और कुछ समुदाय में सिर्फ युवतियाँ ही व्रत रख कर करमा का पूजन करती है।

पूजा के समय पाहन या गांव के जानकार बुढ़े बुजूर्गो द्वारा करम कथा का आरम्भ किया जाता है। करमा कथा आदिवासी एव सदान समुदाय के अनुसार भिन्न भिन्न है– पर अंतिम सार को देखा जाय तो सबका उत्पति विकास, सुख, दुःख की घटना, पारम्परिक धार्मिक विश्वास, प्रकृति की रक्षा, सत्यकर्म की पाल, आदि भावनाओं से ओत पोत है।

लावागाड़ा बुड़मू राँची के श्रीनाथ महतो के अनुसार – करमा कथा – इस प्रकार है–

बहुत समय पहले की बात है। एक नगर/राज्य में ननका और ननकी नाम के दो प्राणी थे। पुरूष का नाम ननका तथा स्त्री का नाम ननकी थी। वह राज्य काफी सम्पन्न था। किसी प्रकार की कमी नही थी। किन्तु ननका ननकी का कोई संतान नहीं थे। इसे वे हमेशा चिन्तित रहते थे। एक दिन की बात है दोनो प्राणी जंगल में घुमते घुमते थक चुके थे, और करम वृक्ष की छाया में बैठ कर विश्राम करने लगे तभी अचानक आँखों में नींद आ गई और स्वपन में देखा की अद्भुद् दैवी शक्ति उन्हें आग्रह कर रहा है कि यदि भादो एकादशी को अपने आँगन में करम की डाली को गाड़ कर पूरे मन वचन से पूजा करोगे तो तुम्हारे सभी कमी, इच्छित मनोकामनाएँ अवश्य पूरा होगा। जब आँखे खुली तो दोनो आश्चर्य में पड़ गए। स्वपन के अनुसार ही दोनो ने करम की डालो गाड़ कर भादो एकादशी को पूजा किये। इसे प्रसन्न होकर ननका–ननकी के सात पुत्र पैदा हुए। बडे बेटे का नाम करमा था और छोटे का नाम धरमा था। बीच के पाँच बेटो का नाम गौण है। झारखण्डी परम्परा

के अनुसार बड़े या छोटे पुत्र के नाम से माता पिता को (फलना की माँ–बाप) कह कर पुकारते हैं। अब सातो पुत्र बडे होते जा रहे थे। एक दिन सभी भाईयों ने मिलकर धन कमाने की योजना निश्चय किया और छोटे भाई को घर का जिम्मेवारी सौंप कर बाकी सभी भाई प्रदेश निकल गए। पूरे मन से काफी धन कमाने के बाद घर वापस लौटने की इच्छा बनाई। वे सब इतना धन कमा लिया कि उन्हें नौकर और सिपाहीयों कि आवश्यकता पड़ गई वे अपने घर के लिए चल पड़े आते–आते अपनी राज्य की सीमा पर पहुँच गए। अब बड़े भाई करमा का मन काफी बदल चुका था अपने सिपाही से सीमा पहुँच कर बोला जाओं धरमा को कह देना कि अब हमलोग खुब धन कमाकर लौट रहे हैं। इसलिए हमलोगो की स्वागत गाजे–बाजे के साथ आदर पूर्वक राज्य में लाया जाय। करमा जिस दिन को अपने राज्य पहुँचा था उसी दिन भादो एकादशी करम था। धरमा आंगन में करम डाली गाडकर धूम–धाम से पूजा–पाठ नाच–गान कर करम देव को सेवा में लगा हुआ था। इस वजह से समय पर करमा को स्वागत के लिए नही जा सका। करमा ने बारी–बारी से सिपाही, नौकर को भेजता रहा। अन्त में एक एक कर अपने सभी भाईयों को भेजा पर किसी ने वापस नहीं लौटा। इतने में उसका गुस्सा चरम पर पहुँच चुका था। धन का अहंकार से विवेक क्षीण हो गया। वह स्वयं जब अपने घर में आया तो देखा जिसे भी भेजा सभी पूजा मे लीन है। यह देख गुस्सा में करमा ने करम डाली को पूजा स्थान से उखाड़कर फेक दिया जो बह कर सात समुन्द्र पार चला गया। सभी भाईयों के बीच करमा का झगड़ा हो गया। करमा ने करम का अनादर किया इस कारण बाकी भाई उनसे अलग रहने लगे और अपने जीवन यापन करने लगे। कुछ दिनों के बाद बाकी भाई सम्पन्न होते गये लेकिन करमा की स्थिति दिनों–दिन बिगड़ता गया। वह एक–एक दाने के लिए मोहताज हो गया। अपने भाईयों के लगे फसल को देख जलन होता था। एक रात की बात है भाईयों के लगा धान फसल को करमा उखाड़कर फेंक रहा था। वह पीछे मुड़कर देखा तो एक विशालकाय देव लाठी पकड़कर खड़ा है और बोला ये तुम क्या कर रहे हो? तब करमा ने पुछा आप अपना परिचय दें इतने में देव ने परिचय दिया और बोला तुम जो दुखी हो उसका मूल कारण करम देव को अपमानजनक उखाड़कर फेंकना है इससे करम देव काफी नाराज हो गए है। यही तुम्हारा दुख का कारण है तब करमा ने देव का पैर पकड़ कर पूछा कि करम देव कहाँ मिलेंगे तो वे बोले अपने भाई धरमा से जाकर क्षमा मांगो और पूछा अवश्य ही बताएँगें और तुम्हारा साथ भी देंगे। इतने में वह जाकर अपने भाई धरमा से क्षमा मांगा और करम देव के बारे में पूछा तो उन्होंने बताया करम देव सात समुन्द्र पार बहकर चले गए है। करमा फिर पूछ अब कैसे आयेंगे तो धरमा ने बताया की पूरे विधि विधान के साथ भादो एकादशी को लाकर पूजा करना होगा इससे सभी कष्ट दूर हो जाएँगे। करमा ने करम देव को लाने की पूरी विधिविधान से एकादशी के दिन तैयार हो गया और पूजा की समान– अरवा सूता, सिंदूर, अरवा चावल, हल्दी, गुड़ी, धुवन, आदि लेकर करम देव को लाने के लिए चल पड़ा काफी दूर जाते–जाते रास्ते में जोरो की भूख लगी तो उन्होंने रास्ते के किनारे एक विशाल छायादार डुमर/गुलर का पेड़ जो फलो से लदा हुआ मिला। वह पेड़ के पास बैठा और पके फल को खाने के लिए एकत्र किया जैसे ही फल को टुकड़ा किया तो उसमें छोटे–छोटे कोड़े दिखाई पड़े वह अपने माथा को मारते हुए बोला ओह रे कमर, इसने भी किसी जीव को फल नही दिया हो इसी वजह से इनके फल में किड़े पड़ गए हैं। आगे बढ़ता है जाते जाते एक बड़ा नदी मिला दूर से सोचा कि पानी पी कर प्यास बुझा लुंगा, पर नदी में एक बूंद पानी नही था, तो सोचा कि इस नदी ने भी किसी प्यासे को पानी नही दिया हो इसलिए इसका पानी सूख गया। ओह रे करम ! कुछ दूर जाने पर एक बुढ़िया अपने ढेकी से चुड़ा कुट रही थी। करमा दूर से ही मन बना लिया खुब चुड़ा खाऊंगा पर ज्यों हि समीप पहुचा उसकी पैर ढेकी की पूंछ में घुस गयी और जोरो से कराहने लगी तब करमा ने फिर पश्चताप किया और बोला ओह रे करम इस बुढ़िया ने भी अपने ग्राहकों को भूसा मिलाकर दिया है, फिर वह आगे बढ़ने लगा कुछ दूर जाने पर एक गाय मिली जो अपने बछड़े को दूध पीला रही थी ज्यों ही करमा ने थन को ओर हाथ बढ़या खून की धार बहने लगा तब पश्चताप करते हुए ओह रे करम बोल ग्वाले ने दूध में पानी मिलाकर दिया है इसलिए

गाय का थन सूख गया है, और आगे बढ़ा इस प्रकार से वह सात समुन्द्र की छोर में पहुंच गया। वहां उन्हें किसी प्रकार का स्थान दिखाई नही दिया सिर्फ जल ही जल दिखाई पड़ा तो वह किनारे बैठ कर जोरो से रोने लगा। इतने में जल देव द्रवित होकर कछुए के रूप धारण कर जल से बाहर निकले और सामने प्रकट होकर पुछने लगा क्या बात है रे मानवा कुछ तो बताओं? तब करमा ने बड़ा विनम्र भाव से अपनी किए करम की गथा सुनाया एक बार की बात है मैं अपने धन ज्ञान की अहंकार में आकर भादो एकादशी को करम पूजा के दौरान करम देव को उखाड़ कर फेंक दिया जो नाराज होकर सात समुन्द्र पार चले गये है तब से मेरे जीवन दिनों दिन कष्ट से गुजरता जा रहा है। कछुए ने कहा ऐसी बात है तो मैं तुम्हे करम देव के पास ले चलता हूँ। आवो मेरे पीठ पर बैठ जाओ, कछुआ ने उसे तैरते हुए करम देव के पास सात समुन्द्र पार पहुचा दिया। करमा ने करम देव को विनम्र भाव से प्रणाम कर अर्पण, सिंदुर, धुवन, धागा, फुल, अक्षत आदि चढ़ाकर अपनी गलती के लिए क्षमा मांगा। सदा सतकर्म की पालन करने के लिए उसपर पवित्र धागे का बंधन किया और जीवन जनमान्तर तक भक्त बने रहने का वादा कर पूर्व गलत किये गए सभी कर्मो की माफी छमा याचना करने का भाव पूरे मन से मांगा तद् उपरान्त करम देव को पुनः कछुए के पीठ पर बैठ कर साथ सात समन्दर वापस लौटे , समुद्र के पार वापस आते ही करमा ने कछुए को झुकर प्रणाम किया और करम डाली के साथ वापस लौटने लगा आते–आते देखा कि गाय के थन से इतने दूध का अमृत धारा प्रवाह हो रहे बछड़ा भी पी न पा रहा था, करमा ने खूब दूध पिया और कहा आपन करम भाइक धरम ग्वाला से आग्रह किया अब से किसी को भी दूध में पानी मिलाकर न देना, फिर वापस आते–आते उस बुढ़ियासे मुलाकात हो गई, जो ढेकी में फसकर कराह रही थी, वह आंनद पूर्वक बैठ कर मुस्कुरा रही है, इसके यहाँ करमा ने मन भरकर चुड़ा खाया और उस बुढ़िया को प्रणाम कर आगे बढ़ा पुनः बोाला आपन करम भइक धरम, बुढ़िया से बोला अब से किसी को भी भूसा मिलाकर चुड़ा मत देना। आते–आते काफी दूर चलने पर वह सुखी नदी मिला जहाँ पर साफ निर्मल जल बह रहा था। करमा ने नदी का पानी खुब पिया और नदी को प्रणाम कर पुनः बोला– आपन करम भाइयक धरम, नदी से बोला कि हर प्यासे जीव को पानी देना यही धर्म है। आते–आते काफी दूरी तय करने के उपरान्त छायादार वृक्ष गुलर/डुमर मिला उसका फल पुनः उठाया तो देखा फल बिलकुल स्वच्छ है करमा ने इसका फल खाया ओर पेड को प्रणाम कर धन्यवाद दिया, और गुलर से बोला हर भूखे प्राणी को फल देना घमण्ड मत करना, फिर धीरे–धीरे अपने राज्य की ओर बढ़ने लगा। वह जिस दिन अपने राज्य पहुचा उस दिन पुनः भादो एकादशी का करम पर्व का दिन आ गया था।

करम देव को आंगन में गाड कर खूब धूम धाम से पूजा किया सबो ने करम राजा के समक्ष अपनी–अपनी मनौती रखें और कर्म वचन से सदा जीवन में निभाने का वादा किया और कहा केकर करम–आपन करम केकर धरम भाई कर धरम, इसी के साथ सबो ने अपने कर्म देव के समक्ष प्रसाद को चढ़ाया धूमधाम से पूजा अर्चना किया और भादो द्वादशी के दिन करम को नदी तालाब में विसर्जन कर दिया करम अब अन्न धन्न से समापन हो गया और दोनों भाई साथ मिलकर रहने लगे। तब से करम पूजा करने की पौराणिक–सांस्कृतिक, धार्मिक परंपरा चलती आ रहा है। '5

इस कथा के अनुसार जैसे–जैसे दुःख की क्षण खुशी में बदलता है करमीतीन अपने द्वारा लाए लोरे फूल, फल, पकवान आदि समग्र पूजन सामग्री को कर्म डाली के नीचे रखती है पूरे समर्पण भाव से अर्पित कर गीत गाती है। हर भाषा में गाए जाते हैं–नागपुरी के अनुसार कर्म लोकगीत की पंक्ति :–

1. कोन बहिन पूजयॅ अबोध कर डरिया कि कोने भइया–2
रे बजावयॅ बसुरीया कि कोने भइया––2

2. पूनम बहिन पूजय अबोध कर डरिया कि पुनम बहिन...2
पवन भइया बजावयॅ बसुरीया कि पवन भइया..2'6

यह पंक्ति सभी करमीतीन एवं उन के भाई के नाम पकडकर गाया जाता है। पूजा के खत्म

होते ही करमीतीन द्वारा दूसरा गीत आरम्भ किया जाता है:–

(i). के कर लगीनसेवली सिवा–सिवा राइत गोई
केकर लगीन सेवली जय जगर नाच–2

(ii) आपन लगीन सेवली सिवा सिवा राइत गोई
भइया लगीन सेवली जय जगर नाथ – – 2

(iii) अकरी बटरी समे खोयछा में गोई एकादसी करम करम में
एहे खेइल खेलबई नइहर में भाई एकादसी करम में,

(iv) ततले ततले पुआ खोयछा में भाई एका दसी करम में,
रहे खेइल खेलबई नरहर में भाई एकादसी करम में,
(v) अन दिना खीरा बेटा लरे हो फरे हो
आरज खीरा बेटा नाना कर चखना – 2 '7

इस गीत के उपरान्त नागपुरी अंगनई गीत अपने धरम की ओर आगे बढ़ने लाया है। वृन्दा वन रास लीला की करम गीत को देखा जाय तो गोपीन को झूमर खलने मे भोर की सुधी न रखते भोर हो गई अपनी पति को क्या क्या से घर जाऊ। गोवीन फूल लोरे के बाहाने घर जाती है– जोइस प्रकार से

1. श्री वृन्दावन में करम गडावल
गे सजनी, सखिन सब खेलत झुमइए गे सजनो..2
खेलते खूंदते होय गेल बिहान,
गे सजनी, कवन बहाने घर जाब, गे सजनी...1
इहस्कर ओरे लागल फुलवारी
गे सजनी, फुलवा लो रहते घर जाब,गे सजनी...1
एक गोड एहरी एक गोड देहरी,
गे सजनी, मारे लागल प्रभुजी हामर,गे सजनी..1
मतिमाह प्रभुजी मति गरियाऊ,
गे सजनी, आब नही खेलब झूमइर, गे सजनो.1'8

करमा की एकादशी रात्रि समस्त होते ही द्वावदशी के दिन सुबह करम मे धगा, राखी, बांधकर प्रणाम करने की परम्परा है, इसी दिन करमा के तीन पतीयों को तोड़कर करम डाइर जोडने की परम्परा है जो सदा जवन भर करमउईर के नाम से चलता है। करम को उखाड कर घर–घर घुमया जाता है, पूजन कर सुख समृद्धि की कमना किया जाता है, बीच–बीच में कुछ मज किया अंदाज में भी गीत गाया जाता है–

करम उखाडने के गीत :–

एक पइला खरीका देली छीत राम हो,
सब छोड वइन दइख के देलम रिरिमाय हो–1
भुजली हाम चाउर भुंजा देली खरूवाम हो,
सउब छोडवरू दइख के देलम रिरिमाय हो–।।' 9

करम घुमाने का गीत :–

करम से मांगई नइयो तेला सेन्दुरा जुना,
मगई हो तेल सेन्दुरा–2 नई देवे तो करम जीया लेडरे।
कोना में हऊ बुचा हाडी, दिखा में हऊ खेचा रोटी,
देबे तो दे, नीते घसकते घसकते जाबू चुलहा ठन।
हाडी देबे तो छाइन के पिबऊ, दारू देबे तो बुटक चखना। '10

करम बहाने का गीत :–

(i) धसना कर मटीया धसीपरी गेलगोई,
आइज गंगा, गंगा बहल खिदोर गोई आइज गंगा।

(ii) ई करे गंगा ऊकरे जमुना बीचे ठावें,
रे कोरया माला फूल गोइ बीचे ठावें–2

(iii) सई फूला बीछी–बीछी गोइया तो जोराटलरे सइयो गोइया, गोइया बिछूरन भेलरे सयो गोइया–2
(iv) गोइया के पावती नयना भइर देखती,
हिया भरी, सावइर लेती अकगइ गोर हिया भरी–2

(v) जीबू तो करम गोसाई लानबू लियाम रे,
मरबू तो, करम गोसाई संख नदीक तीरे–2 '11

इस प्रकार से करम विर्सजन के बाद हम कारम देव से सालभर के अलग हो जाते है। जीवन सुखी–सुखी रहा तो अगले करम में मिलकर हिरदय से लगाएगें और यदि मर जायेंगे तो शंख नदी की पवित्र किनारा में अवश्य मिलेंगे, पर करम के साथ जो सदा निभाने का वचन दिया

है उसे अवश्य पूरा करूंगी नागपुरी करम लोकगीत में प्रकृति और मानव की बीच घनिष्ट सम्बन्ध की झलक सम्पूर्ण जनजीव की अभिव्यक्ति लोक गीतो का सुन्दर रूपो में सुनने को मिलती हं।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण :– ग्लोबल वैज्ञानिकता की दृष्टि से देखा जाय तो करमा एक ऐसा पर्व है जो पर्यावरण को संरक्षण प्रदान करने का कार्य करता है। इस अवसर पर किसान अपने खेतो में घरों मे– भेलवा, सलया, सिंदूवार, चीरचीटी (केन्दु) आदि की टहनीयों को खेतो में गाड़ते है इससे खेतो में कीड़े मख्खीयाँ भाग एवं मर जाते है। फसलो को एक ओर कीड़ों से सुरक्षा मिलती है तो दूसरी ओर किसान रसायनिक दवाओं से दूर रहते हैं। जिससे फसल भूमि अन्न एवं पशु पक्षी को रसायन का दुष्प्रभाव से बचाता है। करमा पर्यावरण बचाव की ओर लोगों को जोड़ता है। यह पर्व झारखण्ड के आदिवासी एवं सदानों का पारम्पारिक धरोहर है।

सहायक संदर्भ ग्रंथ सूची एवं साक्षात्कार सूची :–

1. डॉ0 उमेश नन्द तिवारी एवं शकुन्तला मिश्र, सदानी–नागपुरी हिन्दी शब्द कोश प्रकाशक–झारखण्ड झरोखा, वर्ष–2011, पृष्ठ सं0–39,

2. K.K.DISHIT, SN Upadhyay अमर मानक हिन्दी शब्द कोश, श्री प्रकाशन पृष्ठ सं0 225

3. डॉ0 उमेश नन्द तिवारी एवं शकुन्तला मिश्र, सदानी–नागपुरी हिन्दी शब्द कोश प्रकाशक–झारखण्ड झरोखा, वर्ष–2011, पृष्ठ सं0–94,

4. किरण देवी ग्राम– सुरभि बुड़मू राँची, शिक्षा–स्नातक, उम्र 28 वर्ष

5. श्रीनाथ महतो, ग्राम लावागडा बुडमू राँची, उम्र 85 वर्ष, शिक्षा–साक्षर

6. नन्दी देवी काँके नगड़ी राँची, उम्र 58 वर्ष मैट्रिक पास

7. जानकी देवीकादो जोड़ा बेड़ो राँची, उम्र 60 वर्ष

8. नागपुरी लोकगीत वृहद् संग्रह, प्रकाशक–नागपुरी संस्थान पिठौरिया राँची, पृष्ठ संख्या–54

9. बालो देवी ग्राम–चैनगडा खुटेर बुड़मू राँची, गृहणी, उम्र 56 वर्ष

10. मुन्नू देवी, ग्राम लावागडा बुडमू राँची, उम्र 40 वर्ष, शिक्षा–पांचवी

11. नन्दी देवी, ग्राम–नगड़ी कांके रांची, उम्र 58 वर्ष शिक्षा–मैट्रिक

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

असहयोग आन्दोलन में डिण्डौरी जिले के जनजातियों का योगदान

डॉ. अमरसिंह उद्दे
सह–प्राध्यापक, इतिहास विभाग, शासकीय चन्द्रविजय महाविद्यालय, डिण्डौरी

सन् 1857 की जन क्रांति को अंग्रेजों ने अपना दमन चक्र चलाकर दबा दिया था, परन्तु जनता का अक्रोश भीतर ही भीतर सुलग रहा था। जनमानस में नवजागरण और नवोन्मेश की लहरें उद्वेलित हो रही थी। 19वीं सदी भारत का पुनर्जागरण का काल था। धार्मिक और सामाजिक आन्दोलनों का भारतीय राष्ट्रवाद के विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। वास्तव में भारतीय जागृति के पथ–प्रदर्शक सामाजिक एवं धार्मिक सुधारक थे। इन्हीं सामाजिक एवं धार्मिक आन्दोलनो के कारण भारतीयों के ह्रदय में देश तथा संस्कृति के प्रति सम्मान की भावना उत्पन्न हुई तथा नवीन चेतना व स्फूर्ति का संचार हुआ।

ब्रिटिश शासकों की दमन नीति से जनता निरुत्साहित सी हो गई थी, किन्तु 19वीं शताब्दी में देश में अनेक धार्मिक एवं सामाजिक आन्दोलन हुए। इनमें कुछ विशुद्ध सुधारवादी तथा कुछ का उद्देश्य भारतीय सभ्यता और संस्कृति की ईसाईयात से रक्षा करना था। रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद, राजाराम मोहन राय, स्वामी दयानंद आदि प्रमुख समाज सुधारक थे, जिन्होंने भारत के प्राचीन गौरव के पुनरुत्थान के लिए भारतीयों को प्रोत्साहित किया। स्वामी विवेकानंद तथा दयानंद ने भारत की महान सांस्कृतिक परम्परा से भारतीयों को अवगत कराया। राजाराम मोहन राय राष्ट्रवाद और भारतीय पुनर्जागरण के प्रवर्तक थे। इन्होंने आधुनिक युग का सूत्रपात किया। दयानंद सरस्वती ने भारतीयों में स्वधर्म और स्वराज्य की भावना जागृत की। स्वामी रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद, एनीवीसेंट आदि ने भारतीयों में नवीन उत्साह उत्पन्न किया।

मुसलमानों, सिक्खों एवं पारसियों में भी धार्मिक एवं सामाजिक सुधार आन्दोलन आरम्भ हुए। राष्ट्रीय विकास में इन आन्दोलनों का महत्वपूर्ण स्थान है।

इन पुनर्जागरण आन्दोलनों के फलस्वरूप भारत के राजनीतिक क्षितिज पर राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना का सूर्योदय होने लगा था। परिणामस्वरूप इन धार्मिक एवं सामाजिक आन्दोलन का प्रभाव मध्यप्रदेश के पूर्वांचल में स्थित डिण्डौरी जिल में पड़ा और यहाँ के जनमानस में नवजागरण और नवोन्मेष की लहरें उद्वेलित होने लगी थीं।

सन् 1885 में ब्रिटिश सरकार द्वारा कोर्ट एक्ट पारित किया गया जिसके अनुसार 8 प्रकार के न्ययालय बनाए गए। कमिश्नर प्रमुख न्यायधीश होता था, मध्यप्रदेश में जिसका केन्द्र नागपुर में था। डिण्डौरी जिले को जबलपुर कमिश्नरी के अन्तर्गत रखा गया था। इस व्यावस्था ने इस क्षेत्र के जनजातीय समाज को झकझोर कर रख दिया। सन् 1887 में यहाँ दीवानी न्यालयों की स्थापना की गई। फलतः यहाँ निवासरत जनजातियों को भी अपनी खेती सम्बन्धी समस्याएँ दीवानी न्यालयों में पेश करना मजबूरी बन गई और शोषण संस्कृति चर्मोत्कर्ष पर आ गई।

सन् 1882 में मालगुजारी संहिता पास किया गया जिससे लगान वसूल करने के लिए मालगुजरों और पटेलों की संख्या बढ़ गई फलतः अब लगान कठोरता के साथ वसूला जाने लगा। मध्य–प्रान्त के क्षेत्रों में, जिसमें डिण्डौरी का क्षेत्र भी सम्मिलित था, लगान व्यवस्था की एक ऐसी पद्धति का सृजन किया गया जिससे बन्दोवस्त अधिकारी अधिक से अधिक जनता को निचोडनें के लिए प्रोत्साहित किया।1 अब इस क्षेत्र में 58 प्रतिशत तक लगान बसूला जाने लगा।

सन् 1914–1918 के बीच हुए महायुद्ध में अपार धन व्यय हुआ था। इसके पूर्ति के लिए अंग्रेजी सरकार द्वारा लगान व अन्य करों में वृद्धि की गई जबकि पूर्व में ही लगान की दर बहुत ऊँची थी। 16.09.1918 को ग्राहम को मण्डला का डिप्टी कमिश्नर बनाकर भेजा गया। ग्राहम ने

कोड़े के बल पर लगान वसूल करना आरम्भ किया। जबकि इस समय क्षेत्र के निवासियों की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं थी कि इन बढ़े हुए लगान और अन्य करों को दिया जा सकता था। वैसे भी यह क्षेत्र जंगली और पहाड़ी होने के कारण यहाँ फसलों का उत्पादन नहीं हो पाता था और प्राकृतिक प्रकापों के कारण भुखमरी फैल जाती थी। यहाँ तो केवल कोदो, कुटकी जैसी फसल ही हो पाते थे। इस दौरान डिण्डौरी जिले में निवासरत गोंड़, बैगा, परधान, अगरिया, कोल, भरिया आदि जनजातियों की प्रमुख शिकायतें थीं– 1. लगान का अधिक होना 2. शिक्षा और जंगल के कठोर कानून 3. करों की अधिकता 4. पुलिस का अत्याचार और 5. न्यायलों में होने वाली असुविधा और खरचीलापन।

डिण्डौरी जिले में 1857 की जन क्रांति को अंग्रेजों ने अपना दमन चक्र चलाकर दबा दिया था। किन्तु यहाँ की जनता का आक्रोश भीतर ही भीतर सुलग रहा था। देश में चल रहे धार्मिक एवं पुनर्जागरण आन्दोलन इनके मन में नयी चेतना उत्पन्न कर रही थी।

इन्हीं दिनों युद्ध जनित आर्थिक संकट, अकालों के प्रति ब्रिटिश सरकार की उपेक्षा पूर्ण नीति, सरकार की दमनकारी रोलेक्ट एक्ट जैसे काला कानून, जालियाँ वाला नरसंहार आदि के विरोध में महात्मा गाँधी द्वारा असहयोग सत्याग्रह का शंखनांद किए जाने के फलस्वरुप समूचे राष्ट्र में जगह–जगह अंग्रेजी सरकार के विरूद्ध विद्रोह होने लगे। विभिन्न नगरों तथा गांवों में हड़तालें और शान्त प्रदर्शन होने लगे। बीच चौराहों पर विदेशी कपड़ां की होली जलायी जाने लगी। बकीलों ने अदालतों का बहिष्कार करने लगे। शराब की दुकानों पर फिकेटिंग की जाने लगी और विद्यार्थियों ने सरकारी स्कूलों में जाना छोड़ दिया। सम्पूर्ण देश स्वतंत्रता के उन्माद में झनझना उठा।2

जब इन आन्दोलनों का प्रभाव डिण्डौरी जिले के जंगली क्षेत्रों पर पड़ा तब यहाँ के जन जनजातियों में राख में दबी हुई चिनगारी दावानल के समान ज्वलंत हो उठा और प्रतिकार स्वरूप उन्होंने अंग्रेजी अदालतों का बहिष्कार करते हुए मुकदमों का फैसला पंचायतों के द्वारा स्वयं किया जाने लगा। अंग्रेजों के घरों में बेगार करना बंद कर दिया गया। इनके द्वारा लगान तथा चरी कर देने से मना किया जाने लगा। गोरखपुर, बजाग, बिछिया, नारायणगंज, शहपुरा, सलहरी, मोरचा आदि क्षेत्रों के आदिवासियों ने अंग्रेजी सत्ता के खिलाफ मोर्चा थाम लिया। फलतः अंग्रेजी नुमाइन्दों के द्वारा तरह–तरह के अत्याचार की शुरूआत हुई। किन्तु यहां के जनजातीय राष्ट्र भक्तों ने अपनी जान की परवाह न करते हुए अपनी मातृ–भूमि की रक्षा के लिए, सत्य और न्याय के लिए, आन की रक्षा के लिए समर्पित भाव से लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्राणों की परवाह न करते हुए स्वतंत्रता आन्दोलन के महासंग्राम में कूद पड़े। उन्हें न लाठियाँ डरा सकीं न गोलियाँ। न जेलों का भय न देश बदर का आतंक ही अपने पथ से डिगा सका। वे स्वतंत्रता के लिए निरंतर जूझते रहे। वे महात्मा गाँधी के बुलंद आवाज के साथ जयघोष करते रहे। वे कांग्रेस की रीति–नीति पर भरोसा रख उसके कार्यक्रमों को सफल बनाने में जी जान से लगे रहे। यही कारण था कि इस जिले में स्वतंत्रता आन्दोलन न कभी रुका, न थमा, न हारा न निराश होकर समझौता करने के लिए ठिठका।

डिण्डौरी जिले में इस आन्दोलन का नेतृत्व गंधू गोंड़ ने किया। अंग्रेजी सरकार की जन विरोधी नीतियाँ एवं देश में चल रहे सत्याग्रह आन्दोलन से प्रभावित होकर गंधू गोंड़ ने अपनी मालगुजारी व खुद काश्त सीर भूमि सन् 1921 में पांच सौ रूपये में बेच दिया तथा स्वतंत्रता आन्दोलन में कूद पड़े और गाँधी जी द्वारा संचालित सत्याग्रह आन्दोलन के प्रचार–प्रसार में लग गए। ये गांव–गांव घूमते और जंगल कानून तोड़ने को कहते। इनका कहना था कि'' जंगल, पशु हमारे हैं, सरकार की नहीं, तो फिर जंगलों में सरकार हमारे पशुओं को क्यों नहीं चराने देती? हमारे पशुओं को कांजी हाऊसों में क्यों बंद कर रही है?'' इस प्रकार के प्रचार से यहाँ के नवयुवकों में ब्रिटिश सरकार की नीति के प्रति उत्तेजना का वातावरण उत्पन्न हुआ।

गंधू गोंड़ सत्याग्रहियों के साथ मीटिंग करके आगामी योजना तैयार करना, पोस्टर लगाना, हाट–बाजारों में जाकर सत्याग्रह का प्रचार करना आदि कार्य करते रहे। परिणामस्वरुप

सरकार द्वारा इन्हें देश द्रोही घोषित किया गया और गिरफतार कर 6 माह की कठोर सजा दी गई। जेल से रिहा होने के पश्चात पुनः स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रिय हो गए। फलतः इन्हें पुनः 9 माह की कठोर कारावास की सजा दी गई। अंग्रेजी अत्याचार एवं शासन के विरूद्ध 22.2.1928 को अमटीटोल3 (बिक्रमपुर) में जनजातीय सत्याग्रहियों द्वारा एक कमेटी रखी गई। यह स्थान जहाँ तीन ओर घने एवं दुर्गम जंगल से घिरा हुआ था वहीं दूसरी ओर नर्मदा नदी से सुरक्षित था। यातायात विहीन क्षेत्र होने के कारण अंग्रेज यहाँ आसानी से नहीं पहुँच सकते थे। इस कमेटी में इस क्षेत्र के लगभग सभी आदिवासी सत्याग्रही उपथित थे। यहाँ पधारे सत्याग्रहियों में तिलक सिंह मौजा खजरी, खुल्लु गोंड़ मौजा देवरा, गंधू गोंड़ मौजा डांड़बिछिया आदि प्रमुख थे।4

इस कमेटी में दो महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए–पहला यह कि जिन सत्याग्रहियों को अंग्रेजों द्वारा डिण्डौरी के कारागार में बंद कर रखा है, उन्हें गंधू गोंड़ के नेतृत्व में लॉकप तोड़कर छुड़ाना। दूसरा जंगल सत्याग्रह का प्रचार करते हुए अपने–अपने क्षेत्रों में जंगल कानून तोड़ना।

इस समय जहां सारा देश असहयाग अंन्दोलन में सराबोर था, वहीं यहां गांव–गांव में सत्याग्रही सर पर कफन बांधकर स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े। यहाँ निवासरत जनजातियों ने लगान देना, मजदूरी करना, बेगारी करना तथा जंगल कर देना बंद कर दिया तथा जंगलों को काटकर बेवर खेती करना फिर से आरम्भ कर दिया। सत्याग्रहियों द्वारा खादी का प्रचार किये जाने के फलस्वरुप डिण्डौरी जिले के पचगाँव, धुर्रा, नयेगांव आदि गांवों में चरखे का प्रचलन हुआ और सूत कातकर खादी के कपड़े बनाने का कार्य आरम्भ किए गए। डिण्डौरी जिले के जनजातियों में उन दिनों चरखा चलाने और खादी पहनने का जुनून सा छा गया था और इनके द्वारा खादी टोपी का खूब प्रचार हुआ। इस समय तक इस क्षेत्र की जनजातियों ने गांधीजी के विचारों और आदर्शों से प्रभावित हो चुकी थी। उनके प्रेरक संदेश के बाद गाँव–गाँव में खादी का खूब प्रचार–प्रसार हुआ और लोगों ने स्वतंत्रता के लिए सर्वस्य अर्पण करने का संकल्प किया। इस जनजातीय क्षेत्र में भी इस समय यह कहावत बन गई थी कि ''राज्य ब्रिट्रिश सरकार का, आदेश गाँधी जी का'' 1920 का वर्ष सम्पूर्ण देश के लिए जहाँ एक नयी चेतना का वर्ष था।5 ऐसे समय में जबकि सत्याग्रह और असहयोग आन्दोलन अपने पूर्ण यौवन पर था, जेलें भरी जा रही थीं, नवयुवक धड़ाधड़ आन्दोलन में कूद रहे थे कि अचानक सारा दृष्य ही बदल गया क्योंकि ठीक ऐसे समय जब यह प्रतीत हो रहा था कि आन्दोलन सफलता का आलिंगन करने ही वाला है, कि तभी गाँधी जी ने उसे स्थगित कर दिया।6 5 फरवरी 1922 को गोरखपुर जिले के चौरा–चौरी नामक स्थान पर दंगा हो गया, अहिंसा जाग उठी, एक भीड़ ने क्रोध से थाने को जला दिया जिसमें एक थानेदार सहित 22 सिपाही भून दिए गए। फलतः गाँधी जी को आन्दोलन स्थगित करना पड़ा। गाँधी जी ने चौरा–चौरी की सभी घटनाओं का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया और 13 मार्च सन् 1922 का गाँधी जी गिरफतार कर लिए गए। उन्हें बगावत के आरोप में छः वर्ष की सजा हो गई।

आन्दोलन के अचानक स्थगन से यहाँ निवासरत जनजातीय समाज स्तब्ध रह गया था। आन्दोलन के बंद हो जाने से उन्हें ऐसे लगा जैसे वे जीती हुई बाजी हार गए। उनकी मनः स्थिति युद्ध में पराजित एक सेना की सी हो गई। गाँधी जी की प्रतिष्ठा को भी बहुत धक्का लगा।7 यद्यपि आन्दोलन असफल हो चुका था, किन्तु गाँधी जी द्वारा निर्देशित इस आन्दोलन का एक वांछित परिणाम देश की सम्पूर्ण राजनैतिकता पर भी पड़ा। इसके असर से अब जनजातीय समाज के छोटे–छोटे गुट भी राजनीति की भाषा का ज्ञान जानकर गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर ब्रिटिश हुकुमत की भारत से समाप्ति की माँग एक बुलंद आवाज में करने लगे।

अभी तक देश भक्ति और राष्ट्रीयता कुछ गिने चुने लोगों की विरासत समझी जाती थी, किन्तु असहयोग अन्दोलन में डिण्डौरी जैसे पिछड़े क्षेत्रों के जन जातियों के सरीख हो जाने से यह राष्ट्रीय आन्दोलन जन आन्दोलन में परिवर्तित हो गया। इस आन्दोलन ने जनजातियों में अपूर्व त्याग और साहस की भावना का संचार किया।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. आर. सी. दत्ता– एकोनामिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया इन दा विक्टोरिया एज
2. द्वारका प्रसाद मिश्र–म. प्र. में स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास पृ. 321
3. स्वतंत्रता संग्राम सेनानी गंधू गोंड़ द्वारा लिखित पत्र 1928
4. क्रांतिकारी खुल्लू गोंड़ से सम्बन्धित सरकारी दस्तावेज
5. बृजभूषण चाँदीवाला–गाँधी की दिल्ली डायरी पृष्ठ 102
6. डॉ. ओम नागपाल–भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन, संवैधानिक विकास और संविधान, पृष्ठ, 86
7. डॉ. ओम नागपाल–वही, पृष्ठ, 90

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Women Empowerment : A brief Analysis

Dr. Sapna Gehlot
Supervisor, Associate Professor, Jyoti Mahila Vidyapeeth, Womens University, Mahla, Jaipur (Raj.)
Vandana Yadav
(Research Scholar), Political Science, Jyoti Mahila Vidhyapeeth Womens University, Mahla, Jaipur (Raj.)

In past time for today also women were not treated equally compare to men in many ways. They were not allowed to any type to have the property, they do have getting the share the property of their parents, they had no voting right, and they had no freedom to choose their work or job and so on. For each And every matter she is dependent on father, mother, brothers' husband etc. Women are not used their mind for their self only. Now we want to come out the oppression of women. There is a strong protest for women also get their rights. They will get equal rights what men are getting a society or a country have to ensure that they get all the rights which men have or in other movement for the empowerment of women.

Before that we understand what empowerment Mean is :-

[1*]The term empowerment means to measure to develop the degree of autonomy and self-determination in the people.

The term empowerment originates from American community psychology and is associates (by whom) whit social scientist Julian rapport 1981. [*1]

The origin of the concept of empowerment goes back to the civil rights movement in the U.S.A in 1960. It has since then been interpreted differently and filled with new meanings and is today used in different sectors as business, social work, development discourse and

women empowerment :- Women empowerment mean that the strengthening to social, political, economic for educational power of women. It means that create an environment where there is no gender bias and equal rights in community, society and workplace. A few number of women have been able to establish their potentialities or to get the chance to develop but each and every one should be careful to promote the women status.

Women in India :- Women constitute almost 50% of the world's population but India has shown disproportionate sex ratio where by female's population has been comparatively lower than males as for as their social status is concerned, they are not treated as equal to men in all places. The status of in India has been subject to many great changes over the past few millennium. In easily Vedic period women enjoy equal status with men. Rigveda for Upanishads mention several names of women sages for sneers notable Gargi maitre. However the later status of women began to deteriorate approximately from 500 B.C. the situation worsened with innovation of Mughals and later on by European invaders.

Some reformatory movements by raja ram Mohan ray, Guru Nanak. Jain son, Vidha sager etc. for give some others relief. It is not that Britishers did not do anything for improving the condition the women. Some laws were enacted such an '' Abolition of practice of sati'', widow remarriage act 1856 etc.

The real change come after independence. The constitution framers were very much conscious of the problem of women empowerment hence the ensured that principal of gender equality is enshrined in Indian constitution in its preamble. Fundamental duties, directive principles and fundamental rights.

Moreover the constitution also empowers the status to adopt measures of positive discrimination in favor of women.

When under the prime minister of Mrs. Indira Gandhi, a scheme known as Indira Mahila Yojana was launched for the empowerment of women. UNDP also incorporated issues of women Upliftment as primary objective. Various scheme were launched for empowerment for women such as Rashtriya mahila kosha, Mahila samridhi yojana, self-help group at panchayat level and many more. The establishment of national women's commission and state women commission were important milestones in direction of women empowerment in India.

The national policy for the empowerment of women (2001) was an important step taken by the government of the time for accelerating the pace of women empowerment.

The policy was aimed at ensuring women empowerment through positive economic and social policies for the full development of women. So that could realize their full potential.

Why women empowerment is important? :- Women empower is must for the society because women population is around 50% of the total population of the universe. Women have every right to be treated equally with men in every sphere of life and society. The development of women is the development of the whole world. The empowerment of the women would be the result in all over development of the society both at the micro and macro level. Active participation of the women is needed for political, social educational, economical activities & decision would contribute to all the fields because of that only women empowerment is important such as:-

- **Globalization :-** Globalization has presented new challenges for the realization of the goal of the women equality, the gender impact of which has not been systematically evaluated. Benefits of the growing global economy have been unevenly distributed leading to wider economic disparity, the feminization of poverty, increased gender in equality through often unsafe working environment because of that strategies will be designed to enhance the capacity of women and empower them to meet the negative social and economic impacts which may flow from the globalization process.
- **Talented :-** Women are equally talented as man. In ancient time women were not allowed to higher education like a man but at present women are allowed to go for higher education which will not only benefit individually but to the whole world at large scale.
- **Equally competent & Intelligent :-** Women are equally competent to men. In present women are the ahead of men in many socio-economic activities.
- **Overall development of society :-** The main profit of women empowerment is that there will be an overall development of the society because when women are earning the money its not only help the family but help to the society also.
- **Economic profit :-** Earlier days women were stayed at home only and do the work only in the kitchen stuff and now a days they are going to outside and also earn the money like men. Women empowerment helps to women to become independent and taking the decision according to their mind and also earning the money for their family and play the role in growing the country's economy.
- **Reduce poverty :-** Women empowerment also reduces poverty. Sometimes, the money earned by the male member of the family is not sufficient to meet the demands of the family. Also earning of women helps the family to come out of the poverty of the family but it reduces the poverty of country also.
- **Reduction in domestic violence :-** Women empowerment leads to decrease the domestic violence. Educated women are less sufferer than uneducated women. Uneducated women are higher risk for domestic violence because they can't do oppose of the family but educated

women can oppose to the family and society also.

- **National development** :- When women are participating in the nation development process. They are making the nation proud by their outstanding performances almost every sphere like medical, science, engineering, social services, teaching profession etc.
- **Social empowerment of women :-** Under the social empowerment of women steps need to be taken to improve the health status of women.

Awareness programs need to be organized for creating awareness among women especially belonging to the weaker sections about their rights. Government has to be vigilant for ensuring that there is no discrimination against the girl child and her rights are protected. The social stigma like child marriage female feticide, child abuse and child prostitution must be eradicated immediately.

Swami Vivekanand, on of the greatest son of India said that "There is no chance for their welfare of the world unless the condition of women is improved, It is not possible for a bird to fly only one wing.

- **Women empowerment principles :-** [2*]The women empowerment principals offer practical guidance to business and the private sector on how to empower the women in work place, business and community etc. for women empowerment principles are :-
- Establish the gender equality.
- Treat all the men and women fairly at the workplace and support the human right.
- To ensure the health, safety and well being of all men and women.
- Promote education, training and professional development for women.
- To public report on progress to achieve gender equality.
- They can take their decision freely.
- To give equal opportunity for education for job.
- To provide safe and comfortable environment for working place.
- [2*]To provide complete control of their life inside the home and outside the workplace.
- Entire nation, business, communities and groups can benefit from the implementation of programs and policies that adopt the nation of women empowerment everywhere we are adopting the view of women empowerment. [*2]

[3*]Empowerment is one of the main procedural concern when addressing the human rights and development. The human development and capabilities approach, the millennium development goals for other crediable approaches ads goals point to empowerment and participation as a necessary steps if a country is overcome the obstacles associated with poverty and development.[*3]

Challenges of women empowerment :- The challenges of women empowerment are the following –

- Because of the inherent superiority complex among the males, they doesn't allow their female counter-part to rise as high as them.
- High level of domestic responsibilities.
- Restrict to participate in social, economic and religious activities.
- In our society, the boy child get preference for education and healthy diet over then the girl child.
- Preference for male still exist among many families in the society.

Solution for women empowerment :-

- The society should be made aware that both girl for boy child are equal and they will get equal opportunity for development
- Education through mass communication is very important. Both man for women should be make awareness of their responsibilities to promote the gender equality.
- Collect the datas and identities of that areas where they are having gender inequality is more

where these data can be used by the Government, NGO's and field workers raise the status of women in different-different areas.

- Women also have to be aware about their rights and use their rights for development.

[4*]Because of that the most famous saying said by **Pandit Jawahar Lal Nehru** is, To awaken the people, It is the women who must be awakened. Once she is on move the family moves, the village moves, the motion moves. [*4]

[5*] "The education and empowerment of women throughout the world cannot fail to result in a more caring, tolerant, just and peaceful life for all. [*5]

Reasons for empowerment of women :- Today we have noticed different Acts and schemes of the central government as well as state government to empower the women of India. But women in India are discriminated at every level of the society whether it is social participation, access to education, political and Economic participation and also reproductive healthcare. Women are found to be economically very poor all over the India. They need economic power to stand on their own legs with men. Other hand it has been observed that women are found to be less literate than men.

Major steps taken for women empowerment in India Government :- Provisions taken by Indian Constitution such as –

1. Right to Equality under the **article 14** of the Indian constitution guarantees to all Indian women equality before law.
2. Equal pay for equal work under the **article 39 (d)**. Guards the economic rights of women by guarantee equal pay for equal work.
3. Maternity relief under the **article 42**, allows the provisions to be made by the state for securing just for human condition of work and maternity relief for women.
4. The dowry prohibition **Act 1961**, prohibits the request, payment or acceptance of a dowry. Asking or giving dowry can be punished by imprisonment as well as fine.
5. Protection of domestic violence **Act 2005**, provides for more effective protection of the right of women who are the victims of domestic violence.
6. Sexual harassment of women at work place **(Prevention, prohibition for Redressal) Act 2013**, helps to create a conductive environment at the workplace for women where they are not subjected to any sort of sexual harassment.

These are the provisions where women will get empower and feel secure because of these provisions they will get the security and will develop more and enjoy the life and deal a good life for that women empowerment is needed for women.

Conclusion :- Women empowerment will be real and effective only when they are endowed income and property so that they may stand on their feet and build up their identity in the society. Government initiatives alone would not be sufficient to achieve this goal.

The empowerment of women has become one of the most important concern of 21st century not only at national level but at the international level and society also must take initiative to create a climate in which there is no gender discrimination and women have full opportunities of self decision making and participating in the social, political and economic life of the country with a sense of equality. Then only the vedic verse यत्र नारी पूज्यन्त रमन्ते तत्र देवता (wherever women is respected, God resides there) would come true.

References :-

1. Rapport Julian in praise of paradox. A policy of empowerment over prevention in: American journal of community psychology vol. 9 (1), 1981, 1- 25 (13)
2. abcd Deneulin Severine, Lila Sahani, eds (2009) An introduction to the human development

and Capability Approach: Fredom and agency. Serling, V.A.: Earthscan.
3. U.N. General Assemble, 55th Session lake berrand feaer)8th sept. 2000) United Nation Millennium.
4. www.wiseoldsayings.com>women empowerment. Deceleration (A/55/L.2) Retrieved Jan. 2nd, 2008.
5. www.wiseoldsayings.com>women empowerment. Deceleration (A/55/L.2) Retrieved Jan. 2nd, 2008

Sources :-

1. http://www.iaspapee.net.
2. Hasnaim, Nadeem – Indian society and culture, Jawahar Publisher and Distributor 2004, New Delhi.
3. Kar. P.K. – Indian society, Kalyani Publishers, 2000, Cuttack.
4. Kidwai. A.R. – (edt) Higher Education issues and challenges, Viva Books, 2010, New Delhi.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Regional Disparity in FDI Inflows In India

Aditi Pandey
Guest Faculty in CMP, Degree College, Department of Economics, University of Allahabad

Abstract :- Abstract: International Economic Integration plays a vital role in Economic Development of any country. Foreign Direct Investment is one and only major instrument of attracting International Economic Integration in any economy. It serves as a link between investment and saving. Many developing countries like India are facing the deficit of savings. This problem can be solved with the help of Foreign Direct Investment. Foreign investment helps in reducing the defect of BOP. Foreign investment flows are supplementing the scare domestic investments in developing countries particularly in India. Further this paper recommends that we should welcome the inflow of foreign investment because it enable us to achieve our cherished goal like making favorable the balance of payment, rapid economic development, removal of poverty, and internal personal disparity in the development and also it is very much convenient and favorable for Indian economy.

Key Words :- Foreign Direct Investment, Foreign indirect investment, Internal Personal Disparity.

India is the largest democracy and is fourth largest economy (in terms of purchasing power parity) in the world. India with its consistent growth performance and abundant high-skilled manpower provides enormous opportunity for investment, both domestic and foreign. The Indian Government boarded upon major economic reforms since 1991 with a view to integrate with the world economy, and to emerge as a significant player in the globalization process. Reforms undertaken include decontrol of industries from the stringent regulatory process; simplification of investment procedures, promotion of foreign direct investment (FDI), liberalisation of exchange control, rationalization of taxes and public sector divestment. The FDI policy was liberalized progressively through review of the policy on an ongoing basis and allowing FDI in more industries under the automatic route. A number of studies in the recent past have highlighted on growing attractiveness of India as an investment destination. According to UNCTAD's World Investment Report 2007, India is the second most attractive investment destination for FDI for 2007-09. Policymakers in India as well as external observers always attached high expectation to FDI. According to the then Minister of Finance, Govt. of India, Mr. P. Chindambaram, "FDI worked wonders in China and can do so in India".

FDI is preferred over all other capital flows in the world. FDI is desired as it is non-debt financial capital. FDI raises the investment in the host economy which by multiplier effect leads to increase in employment, income and savings. It provides latest machinery, technology, skill, managerial know how and boosts exports. It provides wide choices to consumers as companies compete to provide quality goods to consumers. The competition ensures breaking of the domestic monopolies and bringing down the prices. FDI also contributes to the corporate tax revenue of the host economies.

Literature Review :-

Bhattacharyya Jita, Bhattacharyya Mousumi (2012), "Impact of Foreign Direct Investment and Merchandise and Services Trade of the Economic growth in India: an Empirical study" the study revealed that there was a long term relationship between FDI, merchandise, service trade and economic growth of India. Bi-directional causality is observed between merchandise trade and economic growth, services trade and economic growth.

Abdul A., Morris R. (2011), "Ease of doing business and FDI inflow to Sub-Saharan Africa and Asian countries" The study found that two factors, "registering property" and "trading across borders", were found to be related to FDI over all six years of the study (2000-2005) for the combined sample.

Singh S., Singh M. (2011), "Trends and prospects of FDI in India" This study investigates the trend of FDI inflow to India, during 1970–2007 using time series data. This paper aims to study the reasons behind the fluctuations of the FDI inflow in India.

Singh Y., Bhatnagar A. (2011), "FDI in India and China; A comparative analysis" The study found that both enjoys healthy rates of economic growth but FDI inflow in china is higher than India.

Agarwal G., Khan M. A. (2011), "Impact of FDI on GDP: A Comparative Study of China and India", the study found that 1% increase in FDI would result in 0.07% increase in GDP of China and 0.02% increase in GDP of India.

Saini A., Law S. H., Ahmad A. H. (2010), "FDI and economic growth: New evidence on the role of financial markets", it was proved that the positive impact of FDI on growth "kicks in" only after financial market development exceeds a threshold level.

Singh J. (2010), "Economic Reforms and Foreign Direct Investment in India: Policy, Trends and Patterns", in the context of increasing competition among nations and subnational entities to attract Foreign Direct Investment (FDI).

Kumar G. L., Karthika S. (2010) "Sectoral Performance Through Inflows of Foreign Direct Investment (FDI)", the study revealed that Foreign Direct Investment has a major role to play in the economic development of the host country.

FDI flows to India picked up in the 1990s, after the economic reforms and liberalisation of the FDI policies. As per the IMF's Global Financial Stability Report, April 2012, India has emerged as one of the major recipients of FDI flows among the emerging market economies in the last few years. Composition of FDI flows to India reveals that over the years automatic route has emerged as the most important channel of FDI flows to India, followed by reinvested earnings and acquisition of shares. FDI through government approval route, on the other hand, has declined over time, which is in line with the policy reforms. The sectoral composition of FDI to India has undergone significant changes since the 1990s. The bulk of the FDI flows in the pre liberalisation period were directed towards the manufacturing sector. In the recent years, however, much of the FDI flows have moved into the services sector. Mauritius has emerged as the most important source of FDI to India over the last decade.

FDI INFLOWS DURING PRE LIBERALIZATION PERIOD

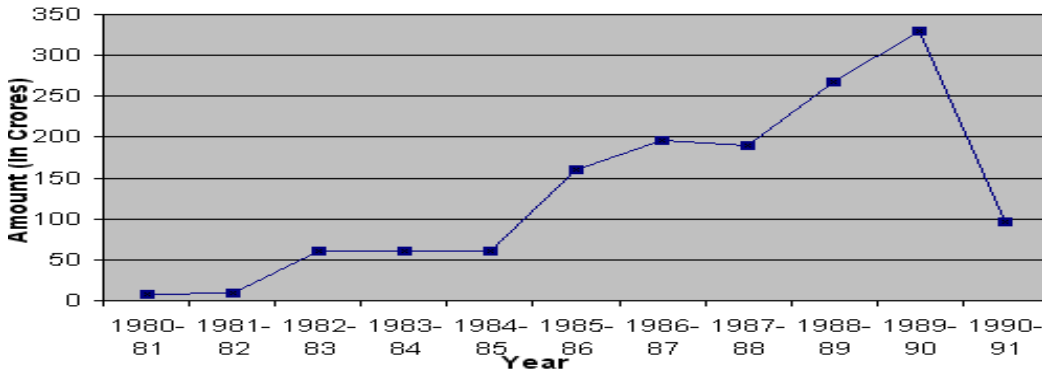

FDI INFLOWS DURING POST LIBERALIZATION PERIOD

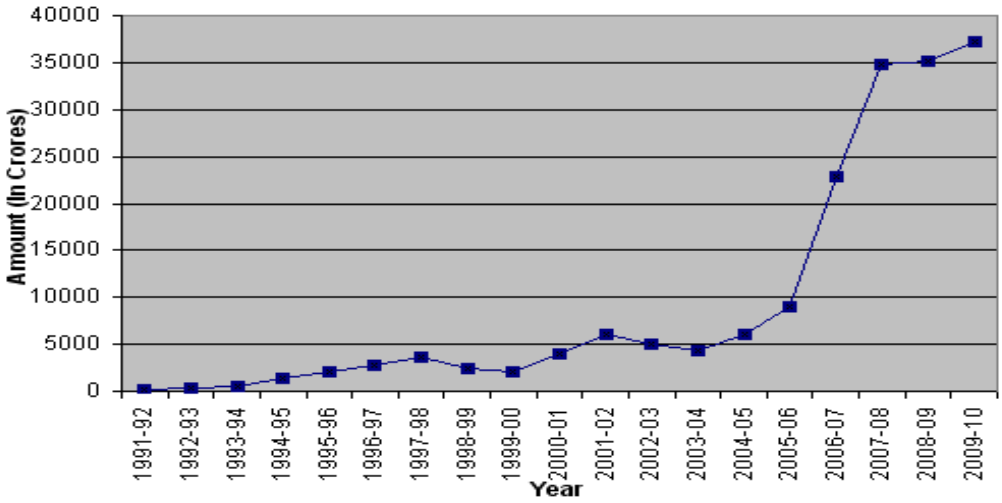

The above table and chart shows that FDI inflow into India before 1991 was minimal with the Compounded Annual Growth Rate showing only 25.46 percent. During this period, foreign investments into India were restricted and allowed moderately in few sectors. This is mainly because of the kind of policies which the government of India has adopted over the years which includes, `inward looking strategy'; and dependence of external borrowings. During the initial phase of post liberalization period i.e., from 1991 to 1998, there was continuous increase in the FDI inflows. The total amount of the FDI inflows during the period 1991-92 to 1997-98 had amounted to US$10,868 million. The increase was largely due to the expanded list of industries or sectors which were opened up for foreign equity participation. The post liberalization period, it is found that the annual compounded growth rate has excavated to 34.73 percent showing the relaxation of regulatory and entry restrictions on FDI inflows in the economy. This shows that the importance of FDI into the country is realized by the Government during the Post liberalization period.

Effect of Agglomeration on FDI Inflows :- The industries prefer to set up their businesses in the areas where physical infrastructure is sufficiently available and subsequently, the related industries would gravitate forming clusters in that region. These industry clusters result in geographical areas or regions specializing in certain activities. This clustering of firms, which is also known as the "agglomeration" effect has emerged as an important determinant in the regional distribution of FDI flows within a country during the last two decades. Similar trend was followed in India, industry clusters were formed from the very beginning of industrialization. In India huge variation can be found across states and territories in regard to physical geography, culture, and economic conditions. Some states have achieved rapid economic growth in recent years, while others are lagging behind. The Indian states have been classified by the author as high FDI inflow states, Moderate FDI inflow states and Low FDI inflow states based on their FDI inflows.

FDI inflows into Indian states

High FDI Inflow City	% of total inflows (April 2000 – June 2014)
Mumbai	30

New Delhi	20
Chennai	6
Bangalore	6
Moderate FDI inflow states	
Kolkata	1
Jaipur	0.6
Chandigarh	0.6
Low FDI inflow states	
Kanpur	0.2
Patna	0
Panaji	0.4
Bhubaneswar	0.2

The FDI inflows in India are concentrated in six states namely Maharashtra, New Delhi, Tamil Nadu, Karnataka, Gujarat and Andhra Pradesh. They have attracted Rs 6,93,641 crore of cumulative FDI inflows during April 2000 to June 2014 which accounts for 70 percent of the total FDI inflows into India. Maharashtra alone accounted for 30 percent of FDI inflows into India during April 2000 to June 2014. Mumbai in Maharashtra alone attracted most of FDI inflows in Maharashtra. The moderate FDI inflow states are West Bangal, Sikkim, Rajasthan, Punjab, Haryana, Himanchal Pradesh, Madhya Pradesh, Kerala. The low FDI inflow states are Goa, Odisha, Assam, Manipur, Bihar etc.

References :-

Bhattacharyya Jita, Bhattacharyya Mousumi (2012), —Impact of Foreign Direct Investment and Merchandise and Services Trade of the Economic growth in India: an Empirical study‖, IIMS Journal of Management Science, Vol. 3(1).

Rosetta Morris, Abdul Aziz, (2011) "Ease of doing business and FDI inflow to Sub-Saharan Africa and Asian countries", Cross Cultural Management: An International Journal, Vol. 18 Issue: 4, pp.400-411, https://doi.org/10.1108/13527601111179483

Singh, K. (2011). Economic reforms, WTO and India's exports: An analysis. Ph.D. Thesis,

Unpublished, Department of Economics, Punjabi University, Patiala.

G. Agrawal and A. Khan, Impact on FDI on GDP: A Comparative Study of China and India, International Journal of Business and Management, 6 (10), 2011, 71-79.

Census of India, (2011). Primary census abstract data tables, 2011. New Delhi: Government of India.

Deaton, A. and J. Dreze. (2002). Poverty and Inequality in India – A Re-Examination. Economic and Political Weekly XXXVII (36): 3729–3746.

Debroy, B. (2012). Gujarat-the growth story. Indicus white paper series. New Delhi: Indicus Analytics.

Dholakia, R. H. (2003). Regional Disparity in Economic and Human Development in India. Economic and Political Weekly XXXVIII(39): 4146-4172.

Government of India. (2015). Indian economic survey, 2014-15. New Delhi: Ministry of Finance, Government of India.

International Monetary Fund. (2015). World economic outlook: uneven growth: short-and-long term factors, april 2015. Washington DC: International Monetary Fund

Jayadev, A., Motiram, S., and Vamsi vaulabharanam (2007). Patterns of Wealth Disparities in India during the Liberalization Era. Economic and Political Weekly XLIII (38): 3853-3863.

Kant, S. (1999). Spatial Implications of India's New Economic Policy. Tijdschrift, Voor Economishe en Sociale Geografie 90(1): 80-96.

Kar, S. and S. Sakthivel. (2007). Reforms and Regional Inequality in India. Economic and Political Weekly XLII(47): 69-77.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Growth and Productivity in India: Trend analysis

Sumedha Pandey
Guest Faculty in Jagat Taran Girls' Degree College Department of Economics, University of Allahabad

Abstract :- This paper reviews India's productivity performance that underlines its growth performance. The primary focus is to analyse trends in India's total factor productivity growth(TFPG) and the reasons for increasing productivity gap.

Keywords :- Total Factor Productivity, Solow Residual, Productivity Gap, Growth.

Introduction :- As Paul Krugman (1994, p. 13) has famously put it: "Productivity isn't everything, but in the long run it is almost everything". Productivity is obviously a fundamental element in economic progress and productivity growth is renowned as a key feature of economic dynamism. It is considered to be important to increase the output, enhance the competitiveness of the industry in the domestic market as well as in the foreign markets, thereby stimulate the export competitiveness of a country. Productivity estimation is useful to assess the performance of the various industries over a period of time. The prosperity of new developed nations has been attributed mainly to the sustained growth of their total factor productivity.

India's economic growth has more or less hovered around 3.5 percent for almost three decades since independence mainly due to the adoption of inward oriented and state-interventionist policies during this period (Poddar and Yi, 2007). It is popularly known as the period of 'Hindu Rate of Growth'. However, with the initiation of internal economic reforms during the mid-eighties there has been considerable step up in the growth rate of Indian economy and further after the introduction of broad based economic reforms Indian economy has moved to the path of high growth trajectory where the economy has been growing at an impressive rate of around 7 to 9 percent per annum. It is well established that an economy can grow mainly through two channels, one is through factor accumulation and the other is through productivity growth. But, there has been no clear agreement among scholars on the fact whether economic growth in India is caused by factor accumulation or productivity growth.

There are different types of productivity measures which are mainly categorized as the single or partial factor productivity such as labour and capital productivity on one hand and total or multi-factor productivity. However, there is no agreement among the economists regarding the best measure of productivity.

Review of Literature :- The rate of technical change is, generally identified with the proportionate amount of shift over time in the aggregate production function. This could be measured empirically as a „residual" between the growth of output and the weighted sum of inputs (Haltmaier, 1984).

This ice breaking revelation provided the theoretical foundation for almost all the subsequent work on productivity measurement (Hall, 1989).

There is a great controversy regarding the methodology used for estimating the total factor productivity (Hulten, 2000; Trivedi et al., 2000).

The supporters of liberalisation reforms claimed that these moves would enhance productivity in domestic industries (Pavcnik, 2002) accompanied with the increase in technical efficiency in production.

Statement of the Problem :- The present paper shows an analytical view of the total factor productivity trends in India and its contribution in growth process.

Total Factor Productivity (TFP): Measures of the TFP Growth :- There are basically two approaches to measure the TFP growth - the frontier and non-frontier approaches. Each of these approaches is further divided into parametric and non-parametric techniques. In frontier approach, the objective is to estimate the best obtainable positions based on the estimation of a bounding function, given inputs and prices levels. This approach is different from the parametric non frontier approaches where an average function is often estimated by the ordinary least square regression as the line of best fit through the sample data (Kathuria et al., 2011). Moreover, the frontier approaches identify the role of technical efficiency in overall firm performances while non-frontier approaches assume that firms are technically efficient (Kathuria, 2011). This difference results in different interpretation of TFP growth estimated from both approaches.

One of the most used measure of TFP calculation is the Solow's index also called **Solow Residual.**Solow uses a Cobb-Douglas production function (PF) in order to calculate the TFPG. For the estimation of this PF, he assumes a constant return to scale, autonomous Hick's neutral technical change, and that the factor payments are equal to their marginal products. The production function is then under the following form:

$Q = (t)(K, L)$ Q, K, and L, respectively represent the output, capital, and labor. A(t) is a multiplicative factor accounting for the shift of the production function between two time periods (at given levels of capital or labour). Solow then addressed the key question of measuring A(t)using index number approach. The solution is based on the logarithmic differential of the production function.

$$\frac{\dot{Q}_t}{Q_t} = \frac{\partial Q}{\partial K}\frac{K_t}{Q_t}\frac{\dot{K}_t}{K_t} + \frac{\partial Q}{\partial L}\frac{L_t}{Q_t}\frac{\dot{L}_t}{L_t} + \frac{\dot{A}_t}{A}$$

The equation above indicates that the output growth (left hand side) is divided into growth in capital and labour (inputs) both weighted by their output elasticities, and the growth in the Hicksian efficiency index (A(t)). Assuming that each input is acquired by a value which corresponds to its marginal product, and then we will have:

$$\frac{\partial Q}{\partial K} = \frac{r_t}{p_t} \quad \text{and} \quad \frac{\partial Q}{\partial L} = \frac{w_t}{p_t}$$

Consequently, the unobservable elasticities will be converted into observable income shares SK and SL. The Solow index will be calculated as:

$$R_t = \frac{\dot{Q}_t}{Q_t} - s_t^K\frac{\dot{K}_t}{K_t} - s_t^L\frac{\dot{L}_t}{L_t} = \frac{\dot{A}_t}{A}$$

So according to Solow, there were some factors whose influence was not explicitly introduced in the production function. This was termed as Total Factor Productivity or Solow Residual.

TFP Growth in India :- We have observed that TFP growth in India has been fluctuating during the study period (see figure). On an average TFP has grown by 1.49 during the study period 1961-2008. Whereas, during 1961 to 1970 the average TFP growth in India was although positive but it was very low and almost close to zero. Similarly, the economy experienced on an average negative TFP growth during the period 1971 to 1980 implying that there had been technological regress in the economy instead of technical progress.

Probable reasons for the low and negative TFP growth during the 1960s and 1970s could be assigned to mainly Indo-China, Indo-Pakistan war along external shocks like severe droughts and oil crisis and so on. Again, considerable inefficiency crept in the industrial

sectors due to 'Permit or License Raj' causing TFP to fall. However, during 1980s when internal economic reforms were started in the economy along with the gradual withdrawal of several restrictive policies, the efficiency of the economy had gone up and there was sharp jump in the TFP growth from negative 0.14 percent to positive 2.18 percent.

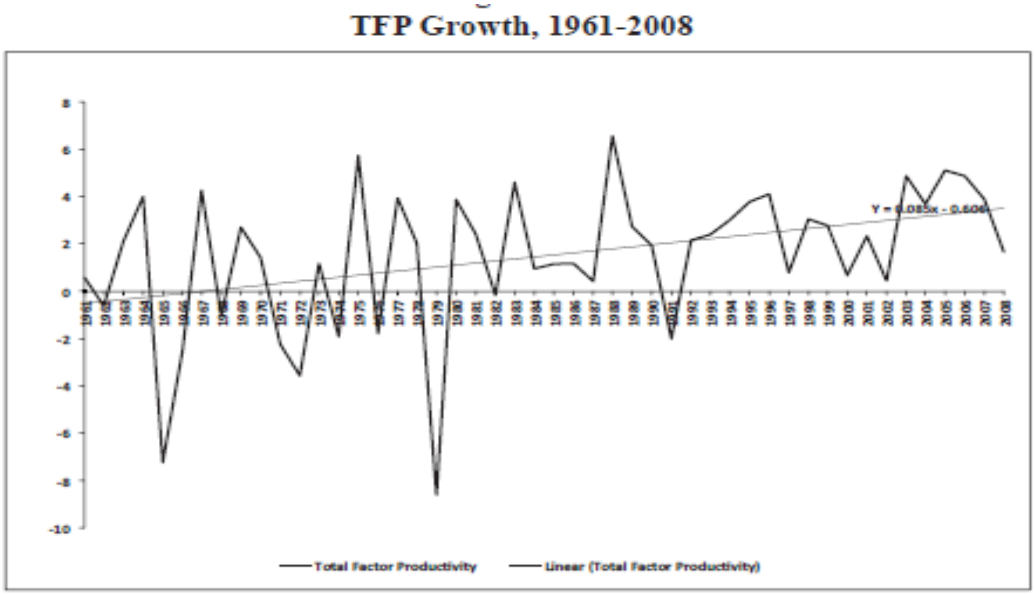

When the economy went for broad based external economic reforms from 1991, the average TFP growth still remains positive but declined slightly by 11 percentage points from 2.18 percent during 1980s to 2.07 percent in the 1990s. Then again, in between 2001 to 2008 there has been considerable increase in TFP growth by 1.18 percentage points from 2.18 percent to 3.36 percent. Rise in TFP growth during 2001 to 2008 for the Indian economy could be attributed to several changes in the macro-economic factors which are generally conducive for productivity improvement.

Recent Trends in TFP Growth :- In an article published by the Harvard Business Review in 1990, Michael Porter stated, "National prosperity is created, not inherited. It does not grow out of a country's natural endowments, its labour pool, its interest rates, or its currency value, as classical economics insists". According to Porter, the answer to consistent innovation by certain companies in certain nations lies in their ability to sustainably strategise, focus upon four broad attributes, constituting what he calls the "diamond of national advantage". These attributes include factor conditions, demand conditions, related and supporting industries, and firm strategy, structure and rivalry.

Therefore, from conventional economics literature, factors of production (land, labour, capital and entrepreneurship) per se remain marginally important on their own, in explaining the prospects of a firm to enter a given national environment and do sustainably well there over the long run. Simply having a large domestic workforce or low labour costs represents no sustainable means as competitive advantage in today's internationally competitive environment. And to support this, a given factor of production requires to be highly specialised to an industry's particular needs and be capable of factor creation through the valuecreated or added (via investment in knowledge-intensive industrial linkages), rather than being "optimally utilised".Policymakers in India can perhaps take a closer look at this by drawing some lessons from Porter's own analytical advice for its own competitive advantage today, if

in years to come, it seeks to become a leading manufacturing centre within Asia at least.

Productivity slowdown: A global disease? :- Over the last few years, The Economist, through a series of articles, has been highlighting trends of persistently falling global productivity levels across both developed and developing countries. The slowdown in global productivity levels seems to physiologically have some kind of a diabetic effect on the global economy body further affecting global employment levels, wages, price levels etc.; and can easily culminate into a deeper economic shock at any point of time. At the same time, there are no direct quick fix solutions to the problem as well.Measuring productivity is difficult. It tends to be recorded as the residual factor left over when all other growth accounting variables have been taken. In modern growth economics, this is usually done by calculating a metric called the Total Factor Productivity (TFP or portion of output not explained by the inputs used in production), usually used for measuring the allocative efficiency of inputs utilised in production. Assuming inputs are not increasing or have reached full utilisation, an increase in TFP can lead to an increase in output by making extensive resources more productive. Looking at the figure below, we get a closer idea on the deplorable state of productivity levels (via TFP levels) across all major economies. Before the 2007-08 crisis, the global level in TFP was growing at 0.9% a year and since then it has largely remained stagnant across most regions and countries covered here.

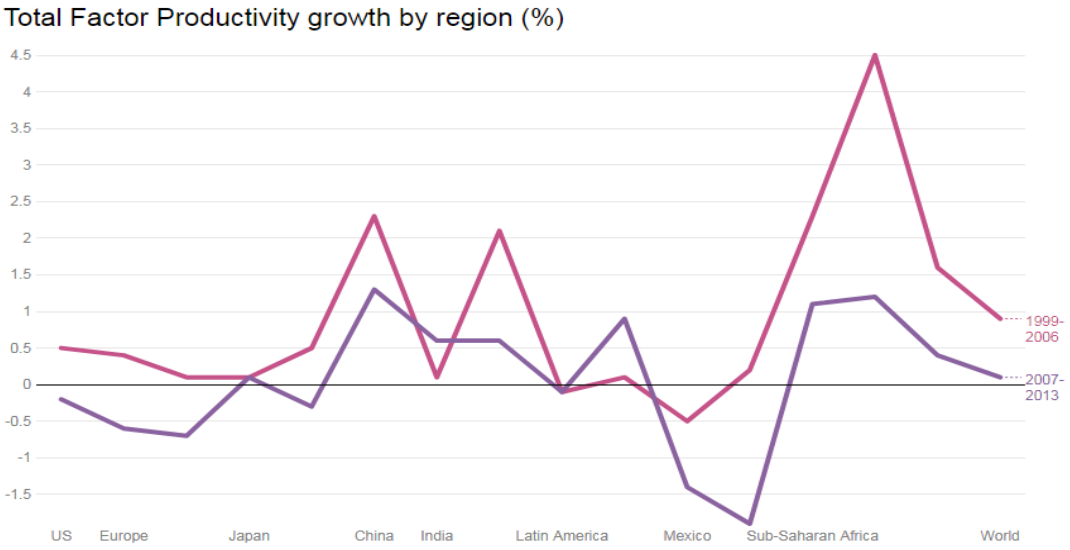

So what can explain these trends? As machines outperform human performance in a range of work activities, including ones requiring cognitive capabilities, it is critical for major developing economies (like India, China, Brazil) to harness the potential benefits from automation, endogenously, that in a way catalyses productivity across industrial segments without a drastic impact on job opportunities for the new labour entering the market. One of the other major issues remains our inability to realistically measure productivity even today.

The Indian scenario: Cases from automotive and electronics industry segments :- In India, TFP growth over the past three decades has remained quite conducive to increasing productivity, with the macroeconomic policy changes brought about, the openness seen in current and capital accounts and the resulting inflow of financial and physical capital. The figure below provides a detailed picture of the Gross Value Added and TFP levels across major industrial segments (26 in total) during 1980-2008. The median growth rate increased sharply for the industries covered below

(26 from the original dataset) from 0.13% for 1980-99 to 0.63% for the period 2000-08, albeit there are wide fluctuations in TFP growth rates across industries.

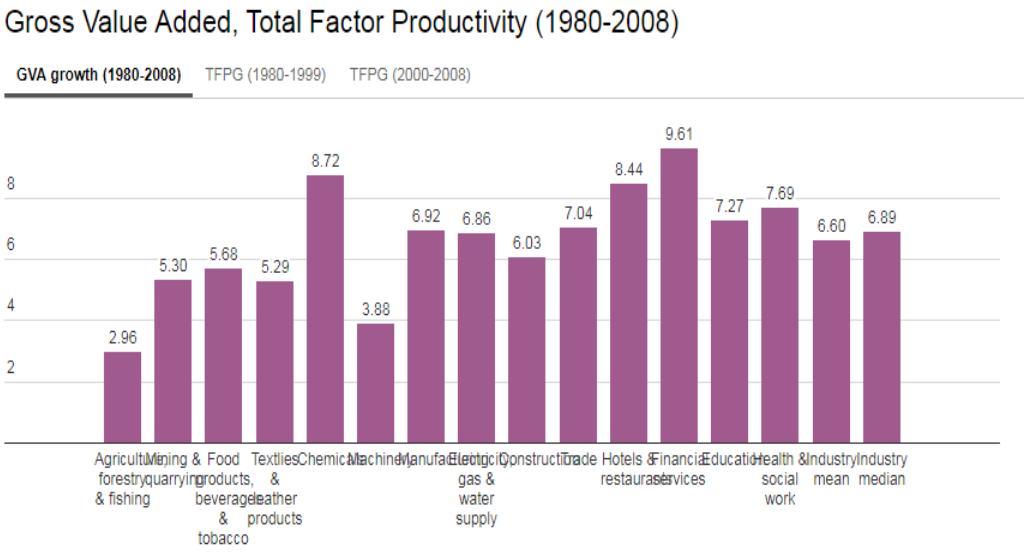

The micro picture in industrial productivity levels seems quite abstruse in the current context. In a recent paper published by the World Bank, we get an in-depth analysis of the automotive industry in South Asia, with India and Pakistan being the two biggest markets in the region. The automotive industry has been one of the most important job creating industrial spaces, not only in South Asia but globally, including in the US.

The study shows how the automotive industry in India alone contributes to approximately around 19 million direct and indirect jobs. Since the early 1990s, with economic liberalisation in India, the automotive industry started booming as a result of the acquired technical and managerial skills from leading original equipment manufacturers (OEMs) of the world who started establishing their regional production centres in India to produce more competitive exportables within the industry for the East and other Asian markets.

However, in spite of the boom and the shining success story of the industry in India since the 1990s, we now observe a major productivity gap circumscribing the prospects of growth within the automotive industry and in its ability to sustainably create more well-paying jobs across the country. The 2016 World Bank study records large-scale productivity gaps that persist with most OEMs together with suppliers in tier 1, 2, 3 all having “subscale, fragmented operations with low capacity utilization, quality levels and investment in skills below international benchmarks”. Another major challenge for the industry in India remains in moving up the global supply chain while competing with other big industrial bases with respect to investment in Research & Development (R&D), more innovation and commercialisation of new products that can create a niche for the industry in the global automotive market space.

Conclusion :- In order to reduce the productivity gap thus achieving growth in terms of total factor productivity there is a strong need for a robust industrial policy approach by India to push for greater investment in R&D, train workers through human capital development and add value to industrial segments (like the electronics and automotive sectors), and help create more job

opportunities within these industries while raising the incomes for those currently absorbed by it.

REFERENCES :-

- Barik and Pradhan (1999), "Total Factor Productivity Growth in Developing Economies: A Study of Selected Industries in India", Economic and Political Weekly, July 31, 1999.
- Bosworth, B., Collins, S. and Virmani, A., (2007): "Sources of growth in Indian Economy" NBER Working Paper No. 12901
- Reddy, Y. V. (2006): "Importance of Productivity in India", inaugural address at the Annual Conference of Indian Economic Association held on December, 27, 2005, Andhra University
- Saha, Sanjoy (2012), "Productivity and Openness in Indian Economy", Journal of Applied Economics and Business Research.
- Virmani, A. (2004): "Sources of India's Economic Growth: Trends in Total Factor Productivity", ICRIER Working Paper No. 131.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

सोशल मीडिया का युवाओं पर प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

अनंदी लाल कुर्मी
शोधार्थी, समाजशास्त्र एवं समाज कार्य विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर

प्रस्तावना :– वर्तमान समय में आधुनिकीकरण के कारण सोशल मीडिया सम्पूर्ण समाज का प्रभावित कर रहा है। सुमन स्वर्ण (2014) के अनुसार ''सोशल मीडिया ने यह स्पष्ट कर दिया है कि तकनीक अब केवल सुविधा सम्पन्नता का परिचायक नहीं है बल्कि यह अपने अधिकारों को हासिल करने का हथियार भी बन सकता है। यह लोगों को परिवर्तन के लिये इलेक्ट्रानिक स्क्रीन से लेकर सड़कों तक लाने लगा है। दूसरी ओर इसने समाज में परिवर्तन के साथ नयी समस्यायें एवं चुनौतियॉ भी पैदा की हैं।''(1) सोशल मीडिया की परिभाषा के सम्बन्ध में अभी हमारा समाज एकमत नहीं है, बस हम इतना कह सकते हैं कि सोशल मीडिया हमारे समाज का ही एक ऑनलॉइन प्रतिबिम्ब है और यह ऑनलाइन सामाजिकता के लिये एक नया शब्द है। अधिक विस्तृत दृष्टिकोण के अन्तर्गत हम कह सकते हैं कि सोशल मीडिया हमारे ही समाज का एक विस्तार है। यह वास्तविक समाज का 'सिमुलेशन'[80] है, बिल्कुल असली समाज का मॉडल जहॉ तकनीकी उपकरण द्वारा सामाजिक कार्य सम्पन्न किये जाते हैं।(2) समाज का युवा वर्ग सोशल मीडिया के पभाव में जल्दी आ जाता है, क्योंकि युवा वर्ग हमेशा परिवर्तन व नवीनता चाहता है। इस सम्बन्ध में संजय खरे (2015) कहते हैं कि ''वर्तमान युवा पीढ़ी जो एक समय तकनीकी प्रेमी थी, आज सोशल मीडिया की प्रेमी हो गई है। भारत की लगभग दो तिहाई आबादी आज अपना अधिकांश समय विभिन्न ऑनलाइन सामाजिक नेटवर्किंग साइट्स जैसे फेसबुक, ट्विटर, यूट्यूब, व्हाट्सएप, आदि पर व्यतीत कर रही है। कुछ समय पहले तक जो लोग ई–मेल का उपयोग करते थे, वह भी इन सोशल साइट्स के कारण कम होता जा रहा है। यह एक सोचनीय पहलू है कि हमारे देश में मीडिया इतनी लोकप्रियता क्यों हासिल कर रहा है।(3) सोशल मीडिया का चर्चा हर ओर है। स्कूल–कॉलेज में पढ़ने वाले किशोर और युवा छात्र–छात्राओं से लेकर मध्यम–वर्ग के कामकाजी प्रोफेस्नल्स और घरेलू महिलाओं तक और विश्वविद्यालय की कैंटीन और कक्षाओं से लेकर सरकारी और निजी कम्पनियों के दफ्तरों तक सोशल मीडिया की लोकप्रियता दिन–पर–दिन बढ़ती ही जा रही है। इसमें कोई दो राय नहीं है कि सोशल मीडिया ने सूचनाओं और विचारों की साझेदारी को नया आयाम दिया है। सोशल मीडिया के विभिन्न प्लेटफार्मों – फेसबुक, ट्विटर, व्हाट्सएप, हाइक मैसेस, यूट्यूब आदि की सबसे बड़ी ताकत उनकी तात्कालिकता, खुलापन, आजादी और बराबरी के स्तर पर बहुपक्षीय संवाद चर्चा है सोशल मीडिया की इस ताकत के कारण ही लोग इसकी ओर आकर्षित हो रहे हैं। सोशल मीडिया के इस आकर्षण में युवा वर्ग बहुत आसानी से आ जाता है, और जल्दी ही उससे प्रभावित होने लगता है। इस सम्बन्ध में स्वर्ण सुमन (2014) कहते हैं कि ''इस समय देखा जा रहा है कि युवा वर्ग अपना अधिक से अधिक समय सोशल मीडिया पर व्यतीत कर रहा है। इस मीडिया के साथ उनकी बढ़ती सक्रियता ने एक 'ऑनलाइन यूथ एक्टिविज्म' को जन्म दिया है।''(4) सोशल मीडिया संचार का प्रमुख साधन बन गया है, यह छोटी से छोटी तथा बड़ी से बड़ी खबर को कुछ ही पलों में जन जन तक पहुॅचा देता है। देश की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि व्यवस्थाओं को सोशल मीडिया प्रभावित कर रहा है, इन सबमें सबसे अधिक प्रभावित वर्ग, युवा वर्ग है। डॉ शर्मा (2003) कहते हैं कि ''मीडिया का प्रभाव समाज में सकारात्मक/नकारात्मक दोनों ही रूपों में दिखाई देता है, मीडिया पर प्रसारित कार्यक्रमों द्वारा समाज में अनेक परिवर्तन दिखाई दे रहे हैं।''(5) प्रस्तुत अध्ययन में युवाओं पर सोशल मीडिया के सकारात्मक/नकारात्मक प्रभावों को ज्ञात करने का प्रयास किया गया है। अनेक शोध यह बताते

[80] सिमुलेशन (बोर्डिलार्ड) एक ऐसी स्थिति को संदर्भित करता है जिसमें किसी वास्तविक चीज या कार्यकलाप का किसी अन्य कृत्रिम विधि से अनुभव या अनुकरण किया जाता है।

हैं कि सोशल मीडिया के युवाओं पर प्रभाव सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों पड़ते हैं। नेशनल सोसायटी फॉर द प्रिवेंशन ऑफ क्रुएलिटी ट् चिल्ड्रन (एनएसपीसीसी) रिपोर्ट (2016) के अनुसार ''11 से 18 वर्ष के किशोर फेसबुक, ट्विटर और इंस्टाग्राम जैसे सोशल साइट्स का शिकार हो रहे हैं। लोगों को इसकी इतनी आदत हो जाती है कि वे दुनिया से कट जाते हैं। फिर हताशा के शिकार होने लगते हैं। कइ बार वे इससे उबरने के लिये खुद को नुकसान पहुँचा लेते हैं, जैसे जरूरत से ज्यादा नींद की टेबलेट लेना, नसें काट लेना और खुद को आग लगा लेना। कुछ लोगों ने आत्हत्या की कोशिश भी की।''[6] इसी प्रकार का एक मामला दैनिक भास्कर समाचार पत्र (2016) में आया कि ''सोशल मीडिया, मोबाइल, घूमने के शौक के साथ बंदिशों और बराबरी के कारण से पति पत्नी के विवाद–झगड़े बढ़ रहे हैं, हालात यहॉ तक पहुँच गये हैं कि पत्नियॉ पतियों की पिटाई तक कर रहीं हैं। इसके चलते घर टूटने लगे हैं।''[7] इसी प्रकार एक अन्य शोध (2016) के अनुसार ''फेसबुक का लगातार इस्तेमाल अपने जीवन से संतुष्टि और भावनात्मकता पर नकारात्मक असर डालता है। फेसबुक से कुछ समय के लिये ब्रेक लेने की आदत से मूड बेहतर रहता है।''[8] इस प्रकार के शोध स्पष्ट करते हैं कि सोशल मीडिया तनाव, हताशा एवं पारिवारिक विघटन के लिये जिम्मेदार है। एक अन्य अध्ययन सोशल मीडिया के सकारात्मक पक्ष की बात करता है, इस सम्बन्ध में संजय खरे (2015) मानते है कि '' वर्तमान में युवा वर्ग सोशल मीडिया को अपने व्यक्तित्व विकास हेतु मुख्य साधन मानता है, इसमें प्रसारित जानकारियों को अपने ज्ञान वृद्धि, स्वास्थ्य, जागरूकता एवं स्व प्रेरक के रूप में देखता है।''[9] इस प्रकार के अध्ययन हमें यह सोचने के लिये मजबूर करते हैं कि वास्तविकता क्या है? प्रस्तुत अध्ययन में यह ज्ञात करने का प्रयत्न किया गया है कि सोशल मीडिया के प्रयोग से युवा वर्ग के सम्बन्ध समाज एवं स्वयं के साथ किस प्रकार प्रभावित हो रहे हैं, क्योंकि यह माना जाता है कि किशोरावस्था आयु का वह स्तर है जिसमें व्यक्ति नवाचार हेतु काफी आतुर रहता है। इस क्षेत्र में वर्तमान व्यवसायिक प्रतिस्पर्धा एवं सरकार की सूचना तकनीकी विकास के कारण इन साइट्स की पहुँच प्रत्येक युवा वर्ग तक हो गई है एवं युवा वर्ग अपने मनोरंजन एवं समय व्यतीत करने हेतु इन साइट्स को सबसे सहज उपलब्ध साधन मानता है। इन पर प्रसारित दृश्य, खबरों का युवाओं के मन मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ता है। आर. के. शर्मा (2003) के अनुसार ''मीडिया युवाओं की भावनाओं, विचारों को अधिक प्रभावित करता है, वह पुराने मूल्यों एवं मनोवृत्ति के स्थान पर नये मूल्यों एवं मनोवृत्ति को स्थापित करता है।''[10]

उद्देश्य :– प्रत्येक शोध कार्य में नये तथ्यों की खोज या पुराने तथ्यों का स्पष्टीकरण किया जाता है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सोशल मीडिया का समाज में निरंतर प्रयोग बढ़ता जा रहा है, यह समाज को अनेक तरह से प्रभावित करते हैं। इसके प्रभाव में युवा बहुत जल्दी आ जाते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में सोशल मीडिया के प्रभाव को देखने के लिये उद्देश्य इस प्रकार है–

1. सामाजिक प्रतिमानों के परिवर्तन में साशल मीडिया की भूमिका को ज्ञात करना।
2. युवाओं के व्यक्तित्व विकास में सोशल मीडिया की भूमिका ज्ञात करना।
3. सोशल मीडिया के प्रभाव से युवाओं के सम्बन्धों में हो रहे विस्तार का अध्ययन करना।
4. समाज में सामाजिक मूल्यों एवं नैतिकता के पतन में सोशल मीडिया की भूमिका को ज्ञात करना।
5. सोशल मीडिया के प्रयोग से युवा समाज विरोधी एवं हिंसात्मक कार्यों में संलग्न हो रहे हैं, ज्ञात करना।

शोध प्रविधि :– ज्ञान के क्षेत्र में शोध कार्य अपरिहार्य है। वर्तमान युग में शोध या अनुसंधाान का अत्यधिक महत्व है, क्योंकि किसी भी क्षेत्र से सम्बन्धित तथ्यों का प्रमाणीकरण, नवीनीकरण, एवं सत्यापन अनुसंधान के द्वारा ही किया जा सकता है। प्रस्तुत अध्ययन में शोध के उद्देश्यों तथा उपकल्पना को ध्यान में रखकर प्रतिनिधित्वपूर्ण एवं पर्याप्त निदर्श का चुनाव करने हेतु कुल 1972 समग्र में से देव निदर्शन पद्धति से 100 छात्र–छात्राओं का चुनाव किया गया है। ऑकड़ों को एकत्रित करने के लिये साक्षात्कार अनुसूची

का उपयोग किया गया है, जिसमें अध्ययन से सम्बन्धित सोशल मीडिया एवं उसके प्रयोग से सम्बन्धित प्रश्नों को समाहित किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र में प्रमुखतः प्राथमिक स्रोतों से जानकारी प्रप्त की गई है, परंतु आवश्यकतानुसार द्वितीयक स्रोतों जैसे पुस्तक, पत्रिका, समाचार पत्र, इन्टरनेट साइट्स आदि की भी सहायता ली गई है।

उपकल्पना :– चिन्तन और जिज्ञासा मानव की दो मूल प्रवृत्तियॉ हैं और इसके वैज्ञानिक आधार केन्द्र बिन्दु भी है। उपकल्पना सामाजिक अनुसंधान की प्रथम सीढ़ी है। अनुसंधान कार्य प्रारंभ करने से पूर्व अनुसंधान के कारणों, समस्याओं के समाधान एवं परिणाम के बारे में हम जो एक निश्चित रूपरेखा बना लेते हैं, उसे ही परिकल्पना या उपकल्पना कहते हैं। प्रस्तुत अध्ययन में परीक्षण के लिये जो उपकल्पना रखी गई है वह इस प्रकार है–

1. सोशल मीडिया के प्रभाव से युवाओं के सम्बन्धों में विस्तार हो रहा है।
2. सोशल मीडिया पाश्चात्य संस्कृति को बढ़ावा देती है, जिससे परम्परागत् प्रतिमानों का ह्रास होता है।

अध्ययन क्षेत्र :– प्रस्तुत अध्ययन हेतु मध्यप्रदेश के सागर जिल के गढ़ाकोटा तहसील का चयन किया गया है। इस अध्ययन हेतु शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय गढ़ाकोटा में अध्ययनरत् छात्र–छात्राओं को चुना गया है। अध्ययन के समय इस महाविद्यालय में कुल 1972 छात्र–छात्रायें पंजीकृत हैं, जिसमें 1909 छात्र–छात्रायें स्नातक एवं 63 छात्र–छात्रायें स्नातकोत्तर की उपाधि हेतु अध्ययनरत हैं।

ऑकड़ों का वर्गीकरण और सारणीयन :– इस अध्ययन में तथ्यों को प्राप्त करने के बाद संकलित तथ्यों को सारणी के रूप में प्रस्तुत किया गया है और सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया है, जो कि इस प्रकार है–

तालिका–1
सोशल मीडिया का उपयोग करने वाले उत्तरदाताओं का वर्गीकरण

सोशल मीडिया के उपकरण	संख्या	प्रतिशत
व्हाट्सएप, हाइक, फेसबुक, यू–ट्यूब,इंस्टाग्राम, सभी	45	45
फेसबुक	20	20
व्हाट्सएप	15	15
फेसबुक, व्हाट्सऐप दोनों	15	15
यू–ट्यूब	05	05
योग	100	100

तालिका क्रमांक 01 के अवलोकन से स्पष्ट है कि सबसे अधिक 45 प्रतिशत उत्तरदाता सोशल मीडिया के सभी उपकरणों का उपयोग करते हैं। 20 प्रतिशत उत्तरदाता केवल फेसबुक का उपयोग करते हैं। 15 प्रतिशत उत्तरदाता केवल व्हाट्सएप तथा इतने ही फेसबुक एवं व्हाट्सएप दोनों का उपयोग करते हैं। 5 प्रतिशत उत्तरदाता केवल यू–ट्यूब का उपयोग करते हैं। इससे स्पष्ट है कि वर्तमान में अधिकांश युवा सोशल मीडिया के सभी उपकरणों का प्रयोग तथा सभी उत्तरदाता इसके किसी न किसी उपकरण का दैनिक जीवन में प्रयोग करते हैं।

तालिका– 02

सोशल मीडिया से प्रभावित होने के कारण

प्रभावित होने के कारण	संख्या	प्रतिशत
सोशल मीडिया के साधनों की उपलब्धता	35	35
प्रसारित सामग्री के आकर्षण एवं नई खबरों के कारण	45	45
मनोरंजन के अन्य साधनों का न होना	15	15
सभी	05	05
योग	100	100

तालिका क्रमांक 02 के अवलोकन से स्पष्ट है कि सबसे अधिक 45 प्रतिशन युवा सोशल मीडिया पर प्रसारित सामग्री के आकर्षण, नई एवं चटपटी खबरों के कारण सोशल मीडिया के विभिन्न साइट्स का प्रयोग करते हैं। 35 प्रतिशत युवा मानते हैं कि सोशल मीडिया के साधनों की आसानी से उपलब्धता ही इसकी लोकप्रियता अधिक है। 15 प्रतिशत युवा इस बात को स्वीकार करते हैं कि उनके पास मनोरंजन के दूसरे साधन न होने एवं सोशल मीडिया के प्रयोग में आर्थिक भार कम होने के कारण प्रभावित हैं। 05 प्रतिशत युवा सोशल मीडिया के सभी कारणां से प्रभावित है, मानते हैं।

तालिका– 03

सामाजिक प्रतिमानों के परिवर्तन में सोशल मीडिया की भूमिका

मीडिया की भूमिका है	संख्या	प्रतिशत
सहमत	55	55
असहमत	35	35
कुछ कह नहीं सकते	10	10
योग	100	100

सोशल मीडिया पर इस प्रकार के आरोप लगाये जाते हैं कि इसने सामाजिक प्रतिमानों में परिवर्तन ला दिया है। इस सम्बन्ध में युवाओं की राय ली गई जिसे कि तालिका 03 में दर्शाया गया है। तालिका क्रमांक 03 के अवलोकन से स्पष्ट है कि सबसे अधिक 55 प्रतिशत युवा मानते हैं कि सामाजिक प्रतिमानों के परिवर्तन में सोशल मीडिया की भूमिका है, वे मानते हैं कि सोशल मीडिया ने परम्परागत् मूल्य प्रतिमानों के स्थान पर पाश्चात्य मूल्य प्रतिमानों को बढ़ावा दिया है। 35 प्रतिशत युवा सामाजिक प्रतिमानों में परिवर्तन के लिये सोशल मीडिया के अतिरिक्त अन्य साधनों को उत्तरदायी मानते हैं। 10 प्रतिशत युवा

इस सम्बन्ध में कुछ कहना नहीं चाहते। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पूरा न सही परंतु सामाजिक प्रतिमानों के परिवर्तन में सोशल मीडिया की कुछ तो भूमिका अवश्य है।

तालिका– 04

युवाओं के व्यक्तित्व विकास में सोशल मीडिया की भूमिका

युवाओं के विचार	संख्या	प्रतिशत
सकारात्मक भूमिका है	60	60
नकारात्मक भूमिका है	30	30
कुछ कह नहीं सकते	10	10
योग	100	100

तालिका क्रमांक 04 के अवलोकन से स्पष्ट है कि सबसे अधिक 60 प्रतिशत युवा अपने व्यक्तित्व विकास में सोशल मीडिया की भूमिका को स्वीकार करते हैं, क्योंकि सोशल मीडिया के विभिन्न उपकरणों द्वारा उनकी सोच, आदतों एवं मनोवृत्तियों में परिवर्तन हुआ है। 30 प्रतिशत युवा इस सम्बन्ध में नकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं। केवल 10 प्रतिशत युवा इस सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कह सकते कि व्यक्तित्व विकास में केवल सोशल मीडिया की ही भूमिका है।

तालिका– 05

सोशल मीडिया के प्रभाव से सामाजिक सम्बन्धों में विस्तार होना

युवाओं के विचार	संख्या	प्रतिशत
सम्बन्धों में विस्तार हुआ है	75	75
सम्बन्धों में विस्तार नहीं हुआ है	15	15
कुछ कह नहीं सकते	10	10
योग	100	100

तालिका क्रमांक 05 के विश्लेषण से स्पष्ट है कि सबसे अधिक 75 प्रतिशत युवा यह स्वीकार करते हैं कि सोशल मीडिया के प्रभाव से उनके सामाजिक सम्बन्धों में विस्तार हुआ है। वे जिन लोगों से कई कोशिशों के बाद भी नहीं मिल पाते थे अब एक स्थान पर बैठे–बैठे बात हो जाती है तथा जो दोस्त बहुत समय पहले बिछड़ गये थे अब फेसबुक तथा व्हाट्सएप पर आसानी से मिल जाते हैं। 15 प्रतिशत युवा सामाजिक सम्बन्धों में विस्तार के लिये सोशल मीडिया को उत्तरदायी नहीं मानते हैं। 10 प्रतिशत युवा इस सम्बन्ध में मौन हैं।

तालिका– 06

सामाजिक मूल्यों एवं नैतिकता के पतन में सोशल मीडिया की भूमिका

सोशल मीडिया की भूमिका है	संख्या	प्रतिशत
सहमत	58	58
असहमत	22	22
कुछ कह नहीं सकते	20	20
योग	100	100

तालिका क्रमांक 06 के विश्लेषण से स्पष्ट है कि सबसे अधिक 58 प्रतिशत युवा स्वीकार करते हैं कि सामाजिक मूल्यों एवं नैतिकता के पतन में सोशल मीडिया की भूमिका है। 22 प्रतिशत युवा इस बात से असहमत हैं कि सामाजिक मूल्यों एवं नैतिकता के पतन में केवल सोशल मीडिया ही जिम्मेवार है, उनकी नजर में अन्य कारण भी इसमें भूमिका निभाते हैं। 20 प्रतिशत उत्तरदाता इस सम्बन्ध में कुछ भी कहने से कतराते हैं।

तालिका– 07

युवाओं का समाज विरोधी एवं हिंसात्मक गतिविधियों में संलग्नता का कारण

संलग्नता का कारण	संख्या	प्रतिशत
सोशल मीडिया	44	44
भौतिकवादी संस्कृति	34	34
पारिवारिक तनाव	12	12
उपर्युक्त सभी	10	10
योग	100	100

तालिका क्रमांक–07 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि सबसे अधिक 44 प्रतिशत उत्तरदाता स्वीकार करते हैं कि वर्तमान समय में समाज विरोधी एवं हिंसात्मक गतिविधियों में संलग्नता का कारण सोशल मीडिया में प्रसारित सामग्री, खबरें आदि हैं। 34 प्रतिशत उत्तरदाता इसका कारण भौतिकवादी संस्कृति को मानते हैं। 12 प्रतिशत युवा पारिवारिक तनाव को समाज विरोधी एवं हिंसात्मक गतिविधियों का कारण स्वीकार करते हैं। सोशल मीडिया, भौतिकवादी संस्कृति एवं पारिवारिक तनाव, इन सभी कारणों की बात 10 प्रतिशत उत्तरदाता करते हैं।

निष्कर्ष :– उपर्युक्त सम्पूर्ण विश्लेषण से निष्कर्ष निकलता है कि समाज में युवाओं पर सोशल मीडिया के सकारात्मक/नकारात्मक दोनों प्रकार के प्रभाव पड़ते हैं। एक ओर जहाँ सोशल मीडिया के कारण युवा वर्ग समाज के सम्पर्क में अधिक आने लगा है, वहीं प्रत्यक्ष समाज से दूर होने लगा है। सोशल मीडिया के कारण सामाजिक सम्बन्धों में विस्तार तो होता है, लेकिन सम्बन्धों में अनौपचारिकता के स्थान पर औपचारिकता बस रह जाती है। प्राथमिक सम्बन्धों का ह्रास हो रहा है, तथा व्यक्ति अपने आप में सिमट कर रह जाता है, उसे देश या विदेश में घटित घटना से अधिक सरोकार होता है, जबकि परिवार या स्वयं के समुदाय में घटित घटना से सरोकार नहीं होता।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. सुमन स्वर्ण, सोशल मीडियाः सम्पर्क क्रान्ति का कल, आज और कल, हार्परकालिंस पब्लिकेशन्स इण्डिया, नई दिल्ली, 2014 पृ. 18
2. वही पृ. 19
3. खरे संजय, ''सामाजिक मीडिया का युवाओं पर प्रभाव'' राधाकमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा, वर्ष 17 अंक–02, जुलाई–दिसम्बर, 2015, पृ. 89
4. सुमन स्वर्ण, सोशल मीडियाः सम्पर्क क्रान्ति का कल, आज और कल, हार्परकालिंस पब्लिकेशन्स इण्डिया, नई दिल्ली, 2014 पृ. 146
5. Sharma R.K. "The Role of Media in Society" Aman Publication, Sagar,2003 P.93
6. दैनिक भास्कर,सागर 'भास्कर खास', ''सोशल मीडिया के तनाव से ब्रिटेन नाखुश देश में बदल गया, एक साल में 18 हजार किशोर अस्पताल में हुए भर्ती'', दिनांक– 10 दिसम्बर, 2016 पृ. 01
7. दैनिक भास्कर, सागर ''पति छोड़ सकती हूँ लेकिन मोबाइल नहीं'' दिनांक 19 दिसम्बर, 2016 पृ. 12
8. दैनिक भास्कर ''शोध में दावा, फेसबुक से ब्रेक से बेहतर रहता है मूड'' दिनांक 22 दिसम्बर, 2016 पृ. 16
9. खरे संजय, ''सामाजिक मीडिया का युवाओं पर प्रभाव'' राधाकमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा, वर्ष 17 अंक–02, जुलाई–दिसम्बर, 2015, पृ. 91
10. Sharma R.K. "The Role of Media in Society" Aman Publication, Sagar,2003 P.93

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

STUDY OF DETERMINANTS OF FOREIGN DIRECTINVESTMENT (FDI) IN INDIA

RAVIKIRAN P, REASEARCH SCHOOLER, SCSVMV UNIVERSITY (T.N)
Dr. G P RAMAN, CONTROLLER OF EXAMINATIONS, SCSVMV UNIVERSITY (T.N)

ABSTRACT :- The step was taken to add some source of capital formation in India as other developing economies were already in this practice. As a result inflow of Foreign Capital has become striking measure of economic development in both developed and developing countries Now the developing countries are witnessing changes in the composition of capital flows in their economies because of the expansion and integration of the world equity market. FDI and FII thus have become instruments of international economic integration and stimulation. The Indian stock markets are also experiencing this change. FDI & FII are becoming important source of finance in developing countries including India. It is widely assumed that FDI & FII along with some other external factors such as global economic cues, Exchange rate and Internal factors such as demand and supply, market capitalization, EPS generally drive and dictates the Indian stock market. The current project makes an attempt to study the relationship and impact of FDI & FII on Indian stock market using statistical measures correlation and regression analysis. Sensex and CNX Nifty were considered as the representative of stock market as they are the most popular Indian stock market indices. Based on 10 years data starting from 2004 to 2014, it was found that the flow of FDI has no significant impact on stock market but FII in India determines the trend of Indian stock market.

KEYWORDS :- Foreign Direct Investments (FDI), Stock Market, Determinants, Foreign Institutional Investments, Sensex, CNX Nifty

INTRODUCTION :- Foreign investment plays a significant role in development of any economy as like India. Many countries provide many incentives for attracting the foreign direct investment (FDI). Need of FDI depends on saving & investment rate in any country foreign direct investment act as a Bridge to fulfill gap between investment and saving. In the process of economic development foreign capital helps to cover the domestic saving constraint and provide access to the superior technology that promote efficiency and productivity of the existing production capacity and generate new production opportunity. Portfolio investment does not seek management control, but it motivated by profit. Portfolio investment occurs when individual investors invest mostly through stock holders in stock of foreign companies in foreign land in search of profit opportunities. India is suffering from the scarcity of financial resources and low level of capital formation because it has to majorly depend upon the external sources of Finance. Also the domestic resources are entirely inadequate to carry out development programs. In India foreign capital comes from private individuals and institutional investors on commercial terms in the form of Euro-issues comprising, external commercial borrowings, portfolio investments by non-resident of India's. Overseascorporate bodies and investments by foreign financial institutions. Foreign exchange reserves have played a pivotal role in India to supplement the low level of foreign investment. The flows of foreign exchange reserves came in India in the form of SDR (special drawing rate) and gold, foreign currency assets. Both FDI and FII is related to investment in a foreign country. FDI is an investment on that a country. FDI is an investment that a parent company makes in a foreign country. On the country, FII is an investment made by an investor in the markets of a foreign nation. In FII, the companies only need to get registered in the stock exchange to make investments. But FDI is quite different from it as they invest in a foreign nation.

The foreign institutional investors are also known as hot money as the investors have the liberty to sell it and take it back. But in FDI, that is not possible. In simple words, FII can enter the stock market easily and also withdraw from it easily.But FDI cannot enter and exit that easily. This difference is what makes nation to choose FDI's more than FII's. FDI is more preferred to the FII as they are considered to be the most beneficial kind of foreign investment for the whole economy.

STATEMENT OF THE PROBLEM :- The present study tries to assessing the determinants and impact of FDI in Indian economic factors. Thus, the present study is an endeavor to discuss the trends and patterns of FDI, and its impact of FDI on FII, SENSEX, NIFTY, FOREX RATE and FOREX RESERVES.

OBJECTIVE OF THE STUDY :-

1. To find out the growth rate of FDI, and its determinants.
2. To examine the relation between FDI and determinants.
3. To understand the influence of selected determinants on FDI.

HYPOTHESES OF THE STUDY :- To achieve the objective of the study the following hypotheses have been developed:

Ho = there is no significant difference in terms of FDI and its determinants

H1 = there is significant difference in terms of FDI and its determinants

Ho = there is no significant difference in terms of FDI and equity FDI

H1 = there is significant difference in terms of FDI and equity FDI

SCOPE OF THE STUDY :- It is apparent from the above discussion that FDI is a predominant and vital factor in influencing the contemporary process of global economic development. The study attempts to analyze the important dimensions of FDI in India. The study works out the trends and patterns, main determinants and investment flows to India. The study also examines the role of FDI on economic growth in India for the period 2004- 2014. The period under study is important for a variety of reasons. First of all, it was during July 2014 India opened its doors to private sector and liberalized its economy.

Secondly, the experiences of South-East Asian countries by liberalizing their economies in 2014s became stars of economic growth and development in early 2014s. Thirdly, India's experience with its first generation economic reforms and the country's economic growth performance were considered safe havens for FDI which led to second generation of economic reforms in India in first decade of this century. Fourthly, there is a considerable change in the attitude of both the developing and developed countries towards FDI. They both consider FDI as the most suitable form 5 of external finance. Fifthly, increase in competition for FDI inflows particularly among the developing nations. The shift of the power center from the western countries to the Asia sub – continent is yet another reason to take up this study. FDI incentives, removal of restrictions, bilateral and regional investment agreements among the Asian countries and emergence of Asia as an economic powerhouse (with China and India emerging as the two most promising economies of the world) Develops new economics in the world of industrialized nations. The study is important from the view point of the macroeconomic variables included in the study as no other study has included the explanatory variables which are included in this study. The study is appropriate in understanding inflows during 2004-2014

RESEARCH METHODOLOGY :- With a view to achieve the objectives of the present study, the secondary sources of information have been utilized. The history, genesis, components, growth, performances etc. of the Foreign Institutional Investments and Indian capital market have been examined on the basis of secondary data like

periodicals, magazines, text books, journals, reports, office records of various organizations like SEBI, RBI and ministry of finance, and different websites containing information and data of FIIs and Indian Capital market. Thus, research work is heavily banked on the secondary source of information.

The following tool were used in this research paper is;

Correlation analysis

REVIEW OF LITERATURE :-

Rad A (2011) used the unrestricted VAR model to examine the relationship between Tehran Stock Exchange (TSE) price index and three macroeconomic variables – Consumer Price Index (CPI), free market exchange rate and liquidity (M2) on the monthly data for a period from 2001 to 2007. The impulse response analysis indicated that the response of TSE price index to shocks in the three macroeconomic variables is weak. The generalized forecast error variance decomposition reveals that the contribution of macroeconomic variables in fluctuations of TSE price index is around 12%.

Asaolu T & Ogunuyiwa (2011) examined the impact of macroeconomic variables on Average Share Price (ASP) for the Nigerian stock market. The monthly data from 1986 to 2007 was taken for six macroeconomic variables – external debt, exchange rate, foreign capital flow, investments, industrial output and inflation rate. The Average Share Price for 25 quoted companies from Insurance, Manufacturing, Banking, Services and Real estate were taken representing dependent variables where as others as exogenous variables. Granger causality test, co-integration and ErrorCorrection Method (ECM) were employed and results revealed existence of weak relationship between ASP and macroeconomic variables. A long-run relationship was found between ASP and macroeconomic variables. The findings indicated that ASP is not a leading indicator of macroeconomic performance in Nigeria.

Conceptual Framework :- For the current study total 120 variables are collected namely FDI, FII, BSE, NSE, FOREX RATE, FOREX RETURN. This study made on 10 years statistics from 2004 to 2014 all the data will be collected as secondary data through RBI, Stock Exchanges and Indian Economy websites.

FDI: Data were collected for 120 months (10 years). Source- RBI website

FII: Data were collected for 120 months (10 years). Source- RBI website

BSE: Data were collected for 120 months (10 years). Source- BSE website

NSE: Data were collected for 120 months (10 years). Source- NSE website

FOREX RATE: Data were collected for 120 months (10 years). Source- RBI website

FOREX RESERVES: Data were collected for 120 months (10 years). Source- RBI website

DATA ANALYSIS& INTERPRETATION :-

TABLE REPRESENTS CORRELATION BETWEEN FDI AND ITS DETERMINANTS

Correlations							
		fdi	forex	Bse	Fii	nse	forex rate
Fdi	Pearson Correlation	**1**	.629**	.511**	-.306**	.376**	.016

	Sig. (2-tailed)		.000	.000	.001	.000	.859
	N	120	120	120	120	120	120
Forex	Pearson Correlation	.629**	**1**	.870**	-.529**	.764**	.270**
	Sig. (2-tailed)	.000		.000	.000	.000	.003
	N	120	120	120	120	120	120
Bse	Pearson Correlation	.511**	.870**	**1**	-.547**	.823**	.367**
	Sig. (2-tailed)	.000	.000		.000	.000	.000
	N	120	120	121	120	120	120
Fii	Pearson Correlation	-.306**	-.529**	-.547**	**1**	-.485**	-.645**
	Sig. (2-tailed)	.001	.000	.000		.000	.000
	N	120	120	120	120	120	120
Nse	Pearson Correlation	.376**	.764**	.823**	-.485**	**1**	.448**
	Sig. (2-tailed)	.000	.000	.000	.000		.000
	N	120	120	120	120	120	120
forex rate	Pearson Correlation	.016	.270**	.367**	-.645**	.448**	**1**
	Sig. (2-tailed)	.859	.003	.000	.000	.000	
	N	120	120	120	120	120	120
**. Correlation is significant at the 0.01 level (2-tailed).							

INTERPRETATION :- This table represents the KarlPearson correlation between the FDI and its determinants like FII, FOREX rate, FOREX reserves, SENSEX and NIFTY. As per the table FDI is having high positive correlation with FOREX reserves and BSE. NSE and FOREX rate is having low degree positive correlation at last the FII is having negative correlation with FDI. In case of FOREX reserves, it showing the correlation with FDI,BSE and NSE is high degree positive correlation at the same time there is a low degree positive correlation with FOREX rate and negative correlation with FII. In case of FII as per the table there is a low degree negative correlation with all determinants. In case of NSE there is a high degree positive correlation with FOREX reserves and BSE. And low degree positive correlation with FDI and FOREX rate. At last there is a negative correlation

with FII. In case of there is a low degree correlation with FDI, FOREX reserves, BSE and NSE. At last there is a negative correlation with FII.

TABLE REPRESENTS CORRELATION BETWEEN TOTAL FDI AND EQUITYFDI:

Correlations			
		fdi equity	total fdi
fdi equity	Pearson Correlation	1	.988**
	Sig. (2-tailed)		.000
	N	10	10
total fdi	Pearson Correlation	.988**	1
	Sig. (2-tailed)	.000	
	N	10	10
**. Correlation is significant at the 0.01 level (2-tailed).			

INTERPRETATION :- This table represents the KarlPearson correlation between FDI equity and Total FDI. With the 1% level of significance in between these two variables are having a perfect positive correlation (0.988). So the Equity FDI is having highest correlation with the Total FDI.

FINDINGS :- The FDI has the highest correlation between FII,BSE,NSE,FOREX RATE and

FOREX RES during the period 2004-14.

- The correlation between total FDI and Equity FDI has the highest positive correlationof 0.988 during the period of study.
- The correlation between FDI and all other determinants, FDI has the positivecorrelation with FOREXRES and BSE and negative correlation with FII, NSE andFOREX rate during the period of study

CONCLUSION :- Empirical results shows that the five independent variables FII's, BSE, NSE, FOREX RATE and FOREX RESERVES are significant determinants of FDI inflows in INDIA. Hence the null hypothesis of all are rejected. Thus the overall significance of the model satisfied in this study would contribute the greater understanding of the FDI determinants in the emerging markets like India. This study suggest that India should continue this program of economic reforms as a sustained healthy economic growth is the biggest attraction for foreign capital inflows. From the current study it is Evident that there is a strong positive correlation between FDI and SENSEX & FDI and NIFTY. And moderate positive correlation between FII and SENSEX.

REFERENCES :-

[1] Kumar, S.S. "Indian stock market in international diversification: An FIIs perspective" Indian Journal of Economics, Vol, lxxxii, No-327, April, pages 85- 102. 2002.

[2] Rai. K. and Bhanumurthy, N.R."Determinents of Foreign Institutional Investments in India: The Role of Return, Risk and Inflation" . 2003.

[3] Chopra, C. "Determinates of FDI Inflows in India", Decision, IIM, Calcutta, 27(2): 137-152. 2002.

[4] StanleyMorgan, "FII's influence on StockMarket", Journal: Journal of impact of Institutional Investors on ism. Vol 17. Publisher: Emerald GroupPublishingLimited. 2002.

[5] Agarwal, R.N. (1997). "Foreign portfolio investment in some developing countries: A study of determinants and macroeconomic impact", Indian Economic Review, Vol,32, Issue 2, pages 217-229.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

A Scenario on Special Economic Zone in India: a Analytically study of Its Performance, Policies and Problems

Dr. Rakesh Dhand[1], Prof. Rahul Sharma[2]

Abstract :- This paper seeks to the contemporary debates on the SEZs (Special Economic Zone) policy has been quite fierce but the focus has been mostly on the issues pertaining to the establishment, sanctioning procedures, land grabbing and protests against the SEZs policy. The establishment of the India's first Special Economic Zone unit and the consequent announcement of a comprehensive SEZs Act in February 2006, bestowed a number of benefits to SEZs in terms of fiscal incentives and state of art infrastructure. Since then SEZs have witnessed generation of employment, investments and exports over a period of time. The current study has been undertaken to highlight the efficiency and issues of SEZs and their expectations with regard to the formulation and modification of policies. The study reveals that while some progress has been made in the effective functioning of the SEZs, yet the expected benefits have not been reaped. High operational cost, fall in market demand, global slowdown, lack of skilled manpower are some reasons held accountable why SEZs in India have not taken off. Furthermore, it is found that operating in Domestic Tariff Area (DTA) has become more beneficial as compared to operating within SEZs especially after withdrawal of exemption for Minimum Alternate Tax (MAT) and Dividend Distribution Tax (DDT) for the SEZs. A robust policy design and efficient implementation can lead to the effective functioning of the SEZs which is an important mechanism for promoting trade and investment, along with generation of employment. This study has discussed the whole concept regarding SEZs, in the following parts-parts as an introduction, part 3rd gives us objective of the SEZs units, part 4th discussed about the condition and growth of the SEZs policy. This worked paper shows the grabbing condition of the agricultural land to non-agricultural purpose.

Introduction :- A Special Economic Zone (SEZ) is a geographical region that has economic laws that are more liberal than a country's typical laws. An SEZ is a trade capacity development tool, with the goal to promote rapid economic growth by using tax and business incentives to attract foreign investment and technology. The term Special Economic Zone (SEZ) is an area in which business and trade laws differ from the rest of the country. In the economic scenario, countries need foreign assistance. SEZ are located within a country's national borders, and their aims include: increased trade, increased investment, job creation and effective administration. To encourage businesses to set up in zone, financial policies are introduced. These policies typically regard investing, taxation, trading, quotas, customs and labour regulations.

The creation of Special Economic Zone (SEZ) by the host country may be motivated by the desire to attract foreign direct investment (FDI)[81]. The benefits a company gains by being in a Special Economic Zone may mean it can produce and trade goods at a lower price, aimed at being globally competitive[82,83].

What is AN SEZs :- A Special Economic Zone (SEZs) is an especially demarcated area of Land, owned

[81] "Special Economic Zone Progress, Emerging Challenges, and Future Directions". Washington DC: The International bank for Reconstruction and Development / The World Bank , 2011.
[82] "Special Economic Zones and regional integration in Africa". tralac. 2013
[83] "Goldman Sachs says reforms to create 110 mn jobs for economic in 10 yrs". Business Today , March 29,2014.

and operated by a private company, which is deemed to be foreign territory for the purpose of trade, duties and tariffs. SEZs will enjoy exemptions from customs duties, income tax, sales tax, service tax. After the passing of the SEZs Act by the parliament in June 2005, the law came into effect in February 2006, though some states, like Gujarat, had passed provincial SEZs legislation in 2004 itself.

Objective of the Study :- The following are the objective of the Study which is:

- To understand the evolution process of SEZs in India.
- To analyze the current status and performance of SEZs in India in terms of investments, employment and Exports
- To analyze the impacts of the SEZs in India in terms of the Economic impacts, Food Security, Environmental impacts and Social impacts.
- To study the origin and growth of the SEZs in India.
- To recommend the policy measures to address the concerns of SEZs developers'/ units in India.

Research Methodology :- The present study is an attempt to determine the efficiency of SEZs in India from the perspective of developers/units. For this, data are collected through secondary sources whereby various published data, government data, and government's department of India and also collected the published and unpublished research work of the India.

Evolutions the History of SEZs Policy :- India is the first country in Asia which realizes the importance of the export zone. Therefore, EPZ or Export Processing Zone is established to promote an export of the country. India has experienced from both success and failure in the establishment of various type of SEZs 2.

In 2000, Indian government found that the establishment of large Industrial zone called "Special Economic Zone" played important roles in growing the India's economy 25. And raising the employment rate. To attract a foreign investor to invest in India 26, Indian government invested a world-class infrastructure to support an operating of SEZs. Tax privileges were offered. A bureaucratic system was redesigned to reduce a complexity 27. On November 1, 2000, the SEZs was originated in India. In 2005 and 2006, the parliament of India issued Special Economic Zone Act 2005 and Special Economic Zone Rule 2006 to provide a legal support for the operation of SEZs 26 27. There

Why SEZs :- The stated purpose of creating SEZs across India is "the promotion of exports". The commerce and industries Minister Shri Kamalnath claims that exports will ultimately grow five times[84], GDP will rise 2% and that 3o lakh jobs will be generated by SEZs across India. It is also claimed by the government that SEZs will attract global manufacturing through foreign direct investment (FDI), enable transfer of modern technology and will also create incentives for infrastructure.

Who can set up a SEZs :- The given bodies set up SEZs which are below:

- Private
- Public
- Private/public
- State Government
- State government Agencies

Who Monitors SEZs :- An appointed committee of state govt. representative or a development Commissioner is responsible to monitor the performance of SEZs on annual basic.

The Life Cycle of SEZs :-

- Anybody who wishes to develop a SEZ submits a proposal to the Board of Approvals (BoA). A single window approval mechanism has been provided through a 19 member inter ministerial

[84] Shiva Vandana and Sulakshana M. Fontana (2011). "*The Great Indian Land Grab.*" Publication: Navdanya Research Foundation for Science, Technology and Ecology Delhi.

Board of Approvals (BoA), headed by the Sectary, Department of Commerce.

- The BoA then grants an **'in-principle'** or **'formal'** approvals.
- The Central Government issues a notification when the developer proves the possession, contiguity and irrevocable rights on Land. These are called '**Notified Special Economic Zone'**.
- BoA allows the developer for authorized operation. The SEZs that start operations are called **'Operational SEZs'.**
- Developers/Units are allowed various Tax Concessions/exemptions for effecting exports.

Even though Government Refers to Chinese SEZs, as the Model for India, there is a lot of difference both of Them (What has been the Experience with SEZs so Far):-

CHINA	INDIA
• China's SEZs initiative is government driven. • China has only 5 SEZs. • They are strategically located in the southeast coastal area; three of them in Guandong province, making them export friendly. • Chinese incentives differ from zone to zone and are based on the number of years of operation, use of advanced technologies, extent of exports and the type of activities indulged in. • China's SEZ initiative is linked to the opening up of its economy. It goes back to the 1980s when China was looking for a way to invite private and foreign investment.	• In India the private sector will develop most of them. • The total number of SEZs in India is about 580 and out of which 196 are operational. • India is developing SEZs across the length and breadth of the country. Land lock states like Haryana and Uttar Pradesh are also developing SEZ. • India offers incentives across the board to all SEZs in every region of the country. • India liberalized its market in 1990 thus the SEZs policy is just an aggressive manifestation of the private profit run economy.

Types of SEZs in India :- There are two types of approvals of SEZs in India i.e. Formal approvals and in-principle approvals. Formal approvals are given only when the promoter has already acquired land to set up SEZs and in-principle approval is given by Board of Approvals (BoA) when the promoter has given an assurance that he would acquire the necessary extent of land to set up the SEZs.

The term SEZs can include[85] :-

- Free Trade Zones (FTZ),
- Export Processing Zones (EPZ),
- Free Zones/ free economic Zones (FZ/FEZ),
- Industrial parks/ industrial estates (IE),
- Free Ports

[85] "Special Economic Zone Progress, Emerging Challenges, and Future Directions". Washington DC: The International bank for Reconstruction and Development / The World Bank , 2011.

- Bonded logistics parks (BLP),
- Urban Enterprises Zones.

Generally, SEZs are classified based on the following :-

1. Multi-product SEZs: Here units may be set up for manufacture of goods/services falling in two or more different sectors, for trading and warehousing.
2. Sector specific SEZs: This zone would be exclusively for one or more products/services in a particular sector.
3. Port/Airport SEZs.
4. Free Trading & Warehousing SEZs: These SEZs focuses on trading and warehousing. The objective of such a Zone is to create trade related infrastructure to facilitate import & export and facilitate trade transactions in free currency. In a standalone free trading and warehousing Zone at least 50% of the area should be earmarked for developing processing area, free trading and warehousing for multi products.

The below of table is shown the type of SEZs, and the Objective of the SEZs by the pre-strategies, size of minimum land acquired, Typical of the location, Typical of the activities and markets of the SEZs.

Type	Objective	Size	Typical Location	Typical Activities	Markets
FTZ	Support trade	<50 hectares	Port of entry	Centerport trade related	Domestic re-export
EPZ (traditional)	Export Manufacturing	<100 hectares	None	Manufacturing Processing	Mostly export
EPZ(single Unit/free enterprises)	Export Manufacturing	No minimum	Country wide	Manufacturing processing	Mostly export
EPZ(hybrid)	Export Manufacturing	<100 hectares	None	Manufacturing processing	Export domestic
Free port/ SEZ	Integrated Development	>1000 hectares	None	Multi-use	Internal domestic export

State-wise Distribution of Approved SEZs

State-wise Distribution of Approved SEZs (As on 21st June, 2016)

State/Country	Total Approved (formal +in Principle)	Total Notified	Total Operational
All India	523	352	196
Maharashtra	78	52	25
Telangana	60	42	24
Karnataka	59	39	25
Tamil Nadu	59	51	36
Andhra Pradesh	44	30	18
Gujarat	39	28	18
Haryana	37	25	6
Kerala	32	25	14

Uttar Pradesh	32	22	10
Madhya Pradesh	20	9	2
West Bengal	14	5	7
Rajasthan	10	8	4
Odisha	9	4	2
Punjab	8	2	2
Goa	7	3	0
Chhattisgarh	3	1	1
Delhi	3	0	0
Chandigarh	2	2	2
Nagaland	2	2	0
Puducherry	2	0	0
Jharkhand	1	1	0
Manipur	1	1	0
Uttarakhand	1	0	0

Data sources: www.sezindia.nic.in

The graphical conditions of the approvals notified and total operational of SEZs.

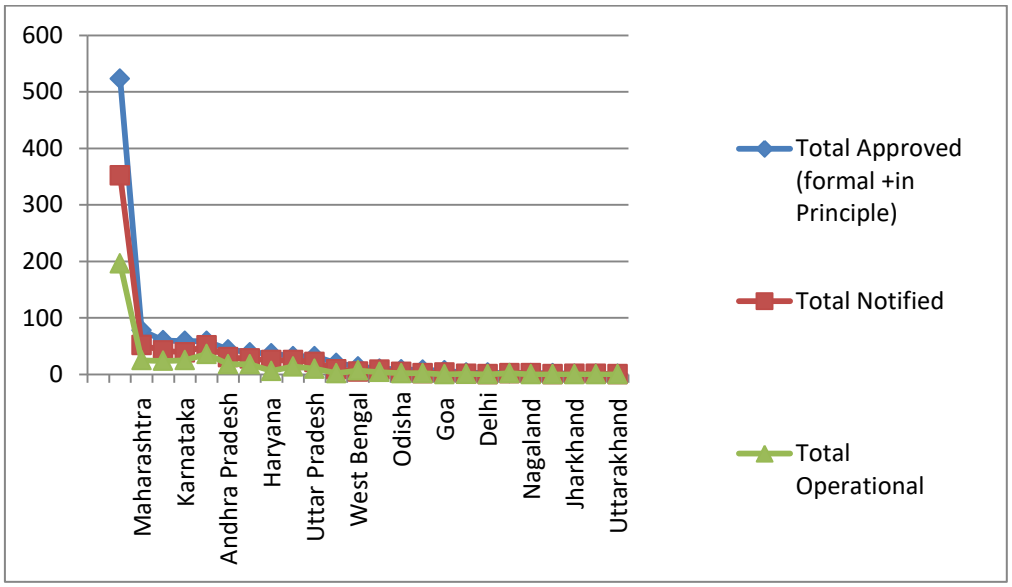

That chart table graph shown the graphical condition of the Total Approved (formal +in-principle) (Blue dotted line), Total Notified (Brown dotted line), Total Operational (Green dotted line) and it's also shown the frequency line relational ship with each other.

Advantages of SEZs in India :- Worldwide SEZs have played a vital role in the promotion of exports, employment generation as well as overall development of an economy. These are costs too and in some countries it has been found that associated costs are sometimes more than the benefits.

- **Attracting Foreign Investment :-** Free trade and foreign direct investment have been powerful channels for transmission of technology from the industrially developed advanced countries to the developing nations. The process has benefited both: the parent companies spread for economic advantage and

the developing countries gain advantage in the development ladder from resource-base, low-tech production to high-tech value added products and services.

FDI inflows in India have been growing rapidly since 2004, including a three-fold increase in the year 2007, because of SEZs with excellent infrastructure and special operating law to attract foreign investment. In 2015-16, India received FDI of US$ (mn) 40,000 as against US$ 30,931 during 2014-15, a growth of 29%. The growth of foreign investment in India is steadily increasing, but still far behind China. The reasons for slow FDI inflows are multiplicity of Central and laws infrastructure bottleneck, lack of political will to implement the remaining, yet much required, reforms such as capital account convertibility, labour laws etc.

- **Providing Employment Opportunities :-** One of the important objectives of SEZs is to reduce unemployment by creating employment opportunities in developing countries. In order to increase the job creation effect, SEZs are often establishment in areas where a big number of workers are idle, often backward areas. Empirically it is also found that activities taking place in SEZs are low-skilled often assembly work and other basic manual work.

SEZs in India play an important role in providing employment opportunities. SEZs in India provided direct employment to over 1105141 Employment growths in EPZs/ SEZs is shown in the table which is given below.

Table: Employment Generation

Sr. No.	Year	Total Employment	Average Annual Growth rate (%)
1	1966-70	70	-
2	1970-75	450	50.2
3	1975-80	1450	41.9
4	1980-85	6000	34.2
5	1985-90	16200	22.6
6	1990-95	35205	16.9
7	1995-2002	61432	11.9
10	2002-02	81317	6.2
11	2002-06	88177	5.2
12	2006-08	178763	77.8
13	2008-09	201531	22.71
14	2009-010	252735	25.41
15	2010-11	368907	45.97
16	2011-12	541904	46.89
17	2012-13	710212	31.06
18	2013-14	940200	32.38
19	2014-15	1105141	17.54

Sources: Department of Commerce, govt. of India.

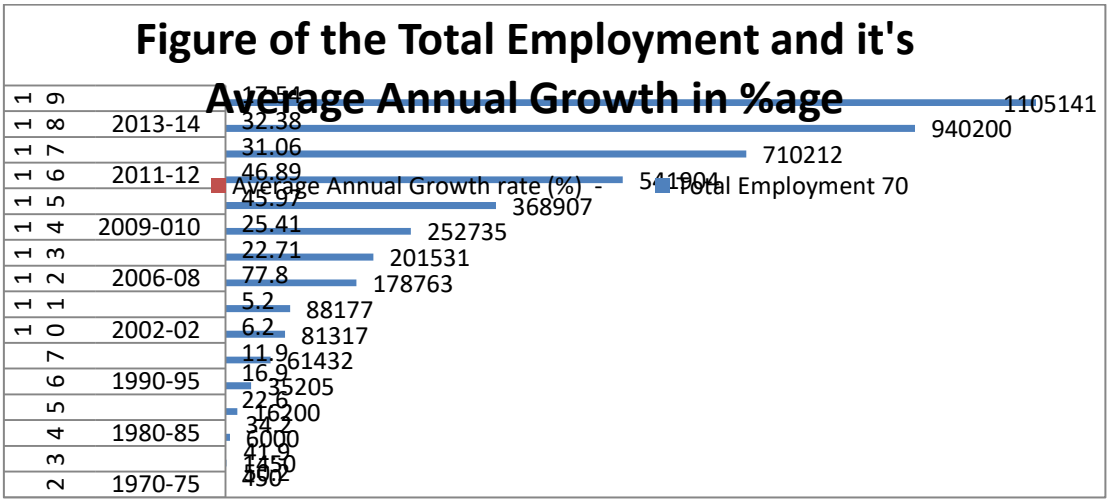

The table and figure shows the growth of the employment in EPZs/SEZs during the entire period from 1966 till 2014. Total employment increased from a mere 70 workers in 1966 to around 89000 workers in 2002. Employment average growth also decreased from 70 to over 89000; however rate in employment declined continuously.

It is worth noting that after SEZs Act came into operation in 2005 the new generation SEZs provided more employment, which is reflected in the figures, shown in the table above. Incremental employment has been observed increasing significantly from 25% in FY2009 to around 47% in 2011. However, incremental growth rate registered a decline to 32% in FY2013 on account of continuous de-notification of number of SEZs as a result of several adverse market dynamic (Refer Table). In nutshell, SEZs has witnessed four-fold generation of employment from around 3 lakh persons in FY2008 to around 12 lakh people in FY2014. However, it could not generate expected rate of employment on account of several legal and market changes.

- **Investments :-** Incremental investments have shown a positive growth rate over a period of time barring few years. On an average, incremental investments were increased by 40% from FY2009 to FY2011. However, FY2012 posted a negative growth rate of (-) 0.47% (Refer Table and figure). This steep fall was attributed to several legal and market dynamic in the domestic as well as international economy including rising cost of operations, global slowdown, fall in market demand, imposition of MAT and DDT in 2011, lack of skilled man power etc. these factors eroded the viability of setting up industrial projects within the SEZs and thus negatively impacted the investors' sentiments.

Years	Incremental Investment	Growth (%)	Cumulative Investment	Growth (%)
FY2008-09	73174	-	77210	-
FY2009-10	104867	43.31	108903	41.05
FY2010-11	144453	37.75	148489	36.35
FY2011-12	198774	37.60	202810	36.58
FY2012-13	197839	-0.47	201875	-0.46
FY2013-14	232681	17.61	236717	17.26
FY2014-15	284441	22.25	288477	21.87

Sources: Department of Commerce, Govt. of India.

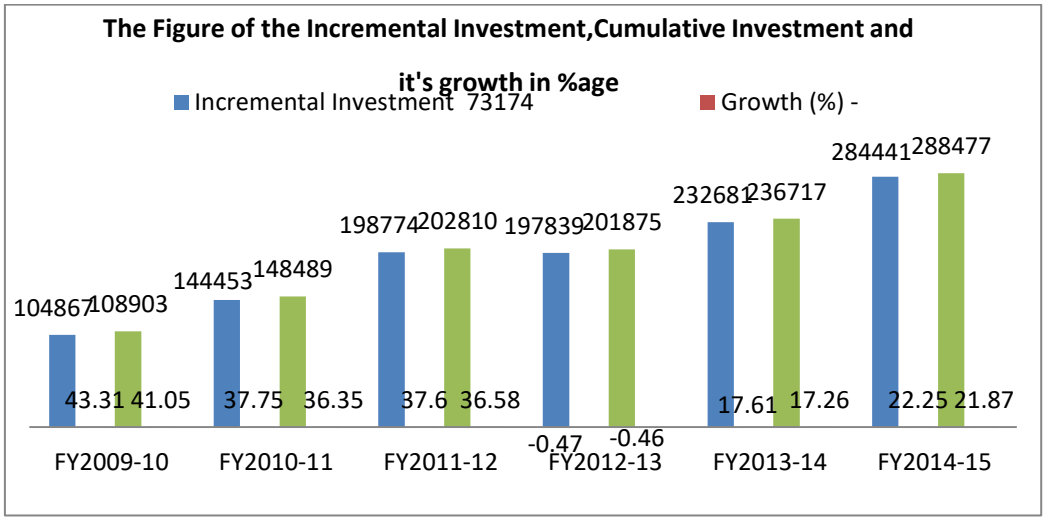

Though incremental investments growth rate turned positive at 18% in FY2013 and 22% in FY2014, yet could not achieve the earlier levels of around 40% achieved during FY2009- FY2011. Corresponding to the incremental investments growth rate, cumulative investments growth rate also depicted the same trends. In nutshell, though investments in the SEZs increased from three fold from Rs. 77000 cr. in FY2008 to Rs. 288000 cr. in FY2014, however, its growth rate didn't remain consistent owing to several unfavorable changes in the domestic and global market.

- **Promoting Exports :-** Generally, success of SEZs policy is judged by its ability to enhance foreign investment and promote exports. As it is stated in the objective that promotion of export is an important criterion to measure success of SEZs policy particular SEZ Act came into effect, SEZs in India showed tremendous increase in exports. Exports performance of EPZs/SEZs is discussed in the tables which are given below:

(RS.in Crore)

Years	Average Annual Total Export
1966-1970	0.0326
1971-1975	0.1736
1976-1980	1.8677
1981-1995	23.7124
1986-1990	58.291
1991-1995	208.4874
1996-2000	591.8479
2001-2003	932.5175
2003-2004	1385.44
2004-2005	1830.90
2005-2006	22840
2006-2007	34615
2007-2008	66638
2008-2009	99689
2009-2010	220711

2010-2011	315868
2011-2012	364478
2012-2013	476159
2013-2014	494077

Sources: Department of Commerce, Govt. of India.

According to figure in the table show that we has been a meager growth in exports during the first phase (1965-1980)[86] and it accelerated towards the end of the period when average annual export raised 1.8677 crore from just 0.1736 crore during the first half of 1970s. Although the phase-3rd (1999-2000) witnessed a big change in the government policies towards explore due to economic liberalization the growth in export remained almost static during this period. The subsequent phases i.e. phase-4th (2000-05) and phase-5th (2005-07) registered a quantum jump in average annual exports of Rs. 1382.9705 crore and further to Rs. 1920.90 crore from 504.411 crore during the phase 3rd. The overall growth rate of exports during the period 1966-2002 is estimated at 42.4%. However, the exports growth remained extremely volatile from 52% in FY2007 to 121% in FY2010 and to 43% in FY2011. The following years also registered the declining growth rate from 15% in FY2013 to 4% in FY2014 (Refer Table). In nutshell, though exports growth of SEZs in India remained fluctuating over the period of time, yet exports from SEZs have witnessed a significant rise of around 22 fold from Rs. 22000 crores in 2005-06 to Rs. 5 lakh crores in 2013-14.

[86] According to the table we has been created the phases of the years which are that phases: in the 1st phase (1965-80), 2nd phase (1980-90), 3rd phase (1990-2000), 4th phase (2000-2005), 5th phase (2005-07) because of the fluctuated the data in that years. And the SEZs analyzed before the SEZ Act, 2005, came into force are those EPZs that converted into SEZs after the enactment of the SEZ legislation. They are: Kandla, Santacruz Electronics Export Processing Zone (SEEPZ), Nodia, Madras Export Processing Zone (MEPZ), Cochin, Falta and Visakhapatnam.

SEZs and Agriculture :- In India 74% population resides in rural area and out of them 70% is directly depending upon agriculture whereas the 4% depend upon agro based occupation directly or indirectly (Dhand Rakesh et.al.,2015). Out of the total cultivable agricultural land of India 1/4th had been acquired for sales. Due to this the farmers, labourers and local businessman are turned to be unemployed. It has also decreased the productivity of food items. In future we also expect a number of such other complications.

In India in 1999-2000 the area used for production of food grains was 123.11 million hectares. It had been decreased in the year 2004-2006 to 120.16 million hectares. This decreased of land for food grains production is due to SEZs. In 1999-2000 the wheat production was 76.3 million tons which decreased in 2004-05 to 67.6 million tones. This decrease is due to the acquisition of cultivation for SEZs. It is expected that in future there will be further deterioration in food production and the nation would have to face its adverse and favorable effects.

Impacts of SEZs on Indian Agriculture :-

a) Favorable Effects :-

- SEZs will generate 15, 75,452 new employments which will benefit to rural poor's.
- Processing unit's setup in SEZs will create demand for agriculture products as raw materials.
- SEZs will prompt export of agricultural products.
- The infrastructure facilities developed by the developer of SEZs will help to the progress of agriculture.
- The agricultural processing units in SEZs will promote to contract agriculture and the

farmers will receive fixed rates for their products.

b) Adverse Effects :- The SEZs policy will cause the following effects on Indian agriculture.

- The acquisition of huge tracts of prime and fertile agricultural land will cause reduction in food grain production.
- Huge concession given to SEZs units and developers will add to fiscal deficit and agricultural process.
- The acquisition of huge land more than requirement will divert prime agricultural land to non-agricultural uses.
- Giving the land acquired at concessional rate, to rich corporate houses is unjustified.
- In practice, SEZs units will not provide sufficient employment, because modern units will need highly skilled workers in a limited strength only.
- The SEZs policy will create dual economy, SEZs area/zones will be developed, but non- SEZ area will be backward comparatively.
- Acquiring fertile land at concessional rate (low than market rate) will cause clashes between the government and the farmers.
- SEZs policy should not be the policy for putting the farmers out on the streets.

Thus acquisition of prime or fertile land producing two or three crops a year at concessional government rates will cause conflicts. The landless farmers will have to work as peons or securities at the mercy of the factory owners.

Conclusion and Suggestion :-

1) No proposal for setting up SEZs on prime agricultural land is cleared.
2) The rehabilitation policies must be strength and speeded up.
3) Out of the total SEZs area, 50% land should be used for industrial use, 25% for infrastructure and remaining 25% for other facilities.
4) SEZs zones should be approved near the metropolitan cities. They should be in barren lands and in the remote backward areas.
5) Farmers should be given compensation for their land at market rates and farmers should not be forced to give their land for SEZs.

For industrial development through SEZs definitely there would be shifting of land from agriculture/rural sector to semi urban/urban sector. This practice can further be encouraged by making the land loser as shareholders in the forthcoming firm/industries according to their land proportion. This will also stop complication based land transfer. It may also get rid of many legal complications and battles. A regular return on their shares may be ensured by the firm.

Landless labors may be accommodated in SEZs for employment/self employment especially during project period. Such opportunities may be created quickly in ancillary and service sectors. Micro financing in such cases may also be a viable alternative.

Finally, we should like to indicate that the loopholes, flaws and drawbacks in the present SEZs policy should be effectively and urgently removed for the welfare and development of farmers. The backbone of Indian Economy i.e. agriculture should be saved, if India wants to be a super power in 2020.

Acknowledgement :- I would like to thank all my co-authors for rendering me the required support needed to complete the article.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Crisis of Domestic Fuels in Chitrakoot Region and Future Prospects

***Dr. N.L. Misra**
Associate professor, Faculty of Rural Development and Business Management, Mahatma Gandhi Chitrakoot Gramodaya Vishwavidyalaya, Chitrakoot, Satna (M.P.)

****Mirthunjai Mishra**
Research Scholar, (Education) Mahatma Gandhi Chitrakoot Gramodaya Vishwavidyalaya, Chitrakoot

Abstract :- Energy is an important input for development and it's aims of human welfare covering domestic, agriculture and industrial complexes like other natural resources are also renewable and non-renewable. Today rural population of India is facing domestic fuel crisis due to massive cutting of forest. The fast increasing graph of L.P.G. consumption in rural areas reflects the reality of the fuel scarcity. Present study has been formulated to assess the current situation of domestic fuels around the Chitrakoot belt of Satna district and its scarcity in near future. Obtained result clearly indicated that educated respondents were worried about the sustainability of traditional cooking fuels while uneducated respondents had expressed very poor level of anxiety and future orientation as to the unavailability of traditional cooking fuels.

Today rural population of India is facing domestic fuel crisis due to massive cutting of forest, land redistribution, regional planning and village development planning. Central and State government are putting in their best efforts to inter link the villages with main roads. Due to such developmental activities the water flow in rainy season is interrupted and crops like maze, Arahar and others that require only flowing water in some areas are damaged due to water logging. Besides crops, there are other sources of fuels such as traditional non commercial fuels but these sources are also reducing day by day. The fast increasing graph of L.P.G. consumption in rural areas reflects the reality of the fuels scarcity.

The rural energy scenario in India is dominated by the domestic sector, which accounts for 75% of the total energy consumed. The fuel consumption pattern of the domestic sector in the rural areas is characterized by higher dependence on bio-resource based fuels such as fuel wood, agricultural residues etc. cooking and water heating are the major heads in domestic sector that account for over 90% of the energy consumption. Rural population still depends on the traditional devices for cooking and water heating that are proven inefficient leading to excess consumption of local resources. This is mainly due to poor awareness of new energy efficient devices and renewable energy technologies.

National sample survey (NSS) has stated according to it's survey, about 36.5 percent of fuel needs in urban and 17.2 percent fuel needs in rural area is met by sources like kerosene, and electricity. All other cooking is done either with fuel wood or dung cakes. It indicates the higher dependence on bioresource to meet the energy requirement that is mainly due to availability of biofuels at zero private cost and also non-availability of other sources of energy (high costs and unreliable supply network).

The National Commission on Agriculture (NAC) in 1976 projected the fuelwood demand up to the year 2000 (Kumar, 1999). The net per capita fuel wood consumption was estimated at about 194 Kg/year. The demand projections estimated on that basis for fuel wood was 157.5 million tonnes in 2000. The commission did not project an appreciable shift away from non-commercial fuels. Comparative analysis of village level domestic energy consumption patterns across coastal, interior, hilly and plain zones considering regional and seasonal variations was done for Uttarra

Kannada district in 1999. Average consumption (Kg/Capital/day) of fuel wood for cooking ranges from 2.01+ 2.09 (hilly). Season wise cooking fuel wood requirement for coast and hilly zones, ranges from 1.98 and 2.22 (summer) to 2-11 and 2.51 (monsoon) respectively, while for water heating (for bathing and washing), it ranges from 1.17 + .02 (coast) to 1.63 + .05 (hilly). Examination of present role of biomass in the energy supply of Uttara Kannada district, Karnataka and the potential for future biomass provision and scope for conversion to both modern and traditional fuels reveals that fuel wood was mainly used for cooking, and horticultural residues from coconut and areca nut trees were used for water heating purposes. Most of the households in this reason still use traditional stoves whose efficiency is less than 10%. The study also reveals that grazing in forests as well as removal of fuel wood has affected the sustainability of the forests, as there is large-scale degradation in many localities (Ram Chandran et.al 2000).

Against the above background, efforts have been made to assess the current position of cooking fuels around the Chitrakoot belt of Satna (M.P.) and the likely scarcity in future. It is quite well known that the poor and tribal people of Chitrakoot region freely and frequently cut the forest trees and sell them into the market without any restraints. They hardly appreciate the future implication regarding sustainability. Over one thousand peoples are involved in this activity. Looking in to the gravity of the problem the department of Rural Management, Mahatma Gandhi Chitrakoot Gramodaya University has decided to undertake a study to understand the current thinking of the villagers and its future prospects. With this background the following objectives have been framed :-

- To study the actual position of domestic fuels in identified area.
- To study the availability of the domestic fuels in identified areas.
- To study the problems faced by villagers and respondents in arranging fuels.
- To study the prospective orientation towards domestic fuel.

Methodology :- Present study has been completed in Majhaganwa Tehsil of Satna district (M.P.) which is fully covered by dense forest. Two localities namely village - Rajaula and Arogyadham have selected for the investigation in which Rajaula is purely rural and nearer to the forest belt while Arogyadham is a mixed society of rural and urban people.

Sample :- One third households were randomly selected equally from both localities. From Rajaula 36 and from Arogyadham 36 respondents were chosen. The literacy rate and socio-economic states of both the localities were quite different. It has been calculated on the basis of socio-economic status scale developed by Singh (1984).

Tools and Techniques :- The following scale and schedule have been applied for data collection.

- Socio-Economic scale
- Schedule : perception and utilization pattern of domestic fuels.

Result and Discussion :- Obtained data scrutinized and analyzed in the light of contents and objectives of the study. The prevailing status of domestic fuels on the basis of its availability is given in table -1.

RURAL URBAN

S.No.	Questions	Particular	Frequencies	In %	Frequencies	In %
1	Usage of fuel and types ?	Gas	1	2.78	30	83.33
		Wood	30	83.33	1	2.78

		Stove (Kerosin)	2	5.56	2	5.56
		All above	3	8.33	3	8.33
		Total	**36**	**100.00**	**36**	**100.00**
2	Do you use the same type of fuels for the whole year ?	Yes	31	86.11	30	83.33
		No	5	13.89	6	16.67
		Total	**36**	**100.00**	**36**	**100.00**
3	Do you purchased the Fuel, or it is available at your home ?	Purchase	9	25.00	36	100.00
		Forest	27	75.00	--	--
		Total	**36**	**100.00**	**36**	**100.00**
4	Problems faced in purchasing	Lack of money	2	5.56	2	5.56
		Traveling	2	5.56	14	38.89
		Extra labor	1	2.78	00	00
		Unavailability	2	5.56	8	22.22
		More Expensive	00	00	11	30.56
		No any problems	29	80.56	1	2.78
		Total	**36**	**100.00**	**36**	**100.00**
5	How you arrange fuels in rainy season?	From purchasing	3	8.33	6	16.67
		Collection from forest	27	75.00	1	2.78
		Extra arrangement	6	16.67	29	80.56
		Total	**36**	**100.00**	**36**	**100.00**
6	Suggestions for availability of profitable, and cheap fuels.	From live-stock	6	16.67	00	00

		From plantation	2	5.56	8	22.22
		From coal and wood	3	8.33	4	11.11
		From forest	23	63.89	00	00
		Alternate source of energy	00	00	10	27.78
		From live-stock and plantation	2	5.56	2	5.56
		From solar energy	00	00	6	16.67
		From bio-gas	00	00	6	16.67
		Total	**36**	**100.00**	**36**	**100.00**
7	Advance management of fuel	2 month	8	22.22	00	00
		3 month	7	19.44	00	00
		4 month	7	19.44	00	00
		6 month	14	38.88	00	00
		Total	**36**	**100.00**	**00**	**00**
8	How have you arranged fuel at that time.	From purchasing	1	2.78	13	36.11
		Collect from Neighbor	8	22.22	3	8.33
		Brought from hotel	00	00	3	8.33
		To paid extra money	00	00	15	41.67
		Collect from farm	7	19.44	00	00
		No any problems	20	55.56	2	5.56
		Total	**36**	**100.00**	**36**	**100.00**

Further investigation were carried out to know the problems faced by villagers and respondents regarding the arrangement of domestic fuels. It has been found that uneducated respondents belonging to rural areas had no tension regarding the domestic fuels either for present or for the future. Whereas the respondents belonging to educated category have indicated several problems in arranging the domestic fuels. Similar trend has been obtained in the matter of semi urban society. The trend of result clearly indicate the mind of rural people. Respondents belonging to educated and semi urban categories pointed out several problems in case of domestic fuel crisis such as observe fasting, requesting neighbors, arranging Kerosin oil, or resort to hotels etc. It is presented in table - 2.

Table-2 : Problems faced by Respondents in Arrangement of cooking fuels.

Rajaula (Rural) Arogyadham (Semi Urban)

Responses	Educated		Uneducated		Educated		Uneducated	
	Freq.	In %	Freq.	In %	Freq.	In %	Freq.	In %
No any problem	7	19.4	27	75.0	00	00	3	8.33
Several problems	2	5.6	00	00	27	75.0	6	16.67

Psychological studies have established that people with farsighted and futurist orientation are careful towards preservation and securing the reserves rather than those who are hand to mouth. With this observation in mind the present finding have been explained. Result of the study is given in table - 3.

Table - 3 : Attitude of Respondents towards Existence of Cooking Fuels for the Near Future.

(A)

Availability of domestic fuels	Rajaula (Rural)		Arogyadham (Semi Urban)	
	No. of Respondents	%	No. of Respondents	%
Yes	15	42	07	21
No	21	58	29	79
Total	**36**	**100**	**36**	**100**

(B)

Availability of domestic fuels	Educated		Illiterate	
Yes	13	36	29	82
No	23	64	07	18
Total	**36**	**100**	**36**	**100**

Table 3 reveals that 42 percent respondents belonging to rural area believe long term availability of domestic fuels while 58 percent had clearly mentioned it's unavailability. On the other side 79 percent respondents of semi urban area observed scarcity of domestic fuels in the future. Similarly the same trend has been noted in the perspective of educated respondents. It has been observed that 64 percent educated respondents were worried about the sustainability of traditional cooking fuels while uneducated respondents had expressed very poor level of anxiety as to the unavailability of traditional cooking fuels.

An important fact has been noticed that the maximum people who live adjacent to the forest, are very poor, have infertile land, addicted to drugs and are unemployed. Forest-wood is the only source of livelihood. This is likely reason of carelessness towards scarcity of cooking fuels for the future.

Conclusion :- The study reveals that domestic fuel is an essential need for human being. The major sources of domestic fuel is wood. But the uncontrolled increasing population has created a serious imbalance between existing sources of fuel and requirement. People who live around the forest have no tension of the cooking fuel. They meet their own needs and supply the surplus to others in near by town and cities.

The prevailing forest policy regarding preserving forest wealth needs amendment and special awareness programs to be launched for those living in and around forest to preserve the forest and wild life therein. Alternate employment avenues for those living in vincity of forest be arranged.

References :-

1. Armstead H C D Tester J.W. (1987) Heat Mining a New Source of Energy, London : E & FN Spon.
2. Agarwal B. (1983) Diffusion of rural innovations : some analytical issue and the case of wood burning stoves. World Development.
3. Alam Metal. (1985) Firewood survey of Hyderabad. New Delhi : concept publishing House.
4. Bhat M.S. 1984. Design of rural energy systems. Sadhna.
5. Chopra S.K. (1987). Integrated Rural Energy Programme : Design, Programme contents implementation, Urja.
6. Dayal M. (1989) Renwable Energy - Environment and Development Konark Publishers Pvt. Ltd.
7. Joshi V, Sadaphal P, Pal R.C. (1989) Evaluation of improvement stoves in Tamil Nadu, Rajasthan and West Bengal. Report submitted to ministry of non conventional energy sources. New Delhi : tata energy research institute.

8. Kernz J.H. (1976) Energy Conservation and utilization Ally and Bacon Inc Boston.
9. Mitchell C.P. (1990) : Nutrients and growth in short rotation forestry Biomass.
10. NCAER. (1985) Domestic fuel survey with special reference to kerosene, volumes I and II New Delhi : National council for applied economic research.
11. NCAER. (1993) evaluation survey of national programme on improved chulha volume I New Delhi : National council for applied economic research.
12. S. Lancashire, J. Kenna and Freaenkel Windpumping (1987) Hand book I.T. Publication.
13. Vimal O.P., and Tyagi P.D. (1986), fuel wood from wastelands yatna Publications, New Delhi.
14. Williams K.R., (1966) ed, an Introduction to fuel cell (Amsterdam : Elsevier Publishing Co.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Content based image retrieval using machine learning approach : A Review

Hirdesh Patidar
Research Scholar , Computer Science, Aisect university
Dr Rajendra Gupta
Assistant Professor, Dept. Of computer science & Application, Aisect university

Abstract : - Now a day's Digital Image Processing is become a most important area. The basic definition of Digital Image Processing is- When digital image is process by the help of digital computer refers to as Digital Image Processing. Digital Image Processing is used in many areas, and several methods are used for image processing. The input and output in any image processing techniques are always an image. Many techniques are used in image processing. In this paper we focus on the content based image retrieval the area of Image Processing, and compare the different CBIR existing methodology like RF-SVM, Naive Bayes Nearest Neighbour based, Fuzzy, SVM, GA based, BMMA.

Keywords :- Digital Image Processing, RF- SVM, NBNN, Fuzzy Decision Tree, BMMA, CBIR, KNN.

INTRODUCTION :- IN THE CONTENT BASED IMAGE RETRIEVAL THE SEMANTIC GAP BETWEEN PRE-PROCESSED STORED IMAGES AND QUERY IMAGE REDUCES. IN IMAGE RETRIEVAL, BASICALLY IMAGE IS RETRIEVED BASED ON THREE ATTRIBUTES SUCH AS COLOUR, TEXTURE AND SHAPE. THIS IS KNOWN AS FEATURE SELECTION PROCESS. THIS FEATURE SELECTION PROCESS GENERATES A NEGATIVE RESULT OF QUERY PROCESSING [1]. IN CONTENT-BASED IMAGE RETRIEVAL SYSTEM, WE HAVE NOTICE THAT THE PROBLEM OF SEARCHING LARGE IMAGE BASED ON CONTENT SEARCHING STILL TAKES MUCH TIME [9] [10]. AND BECOME THE MOST IMPORTANT TOPIC OF RESEARCH IN LAST FEW DECADES. IMAGE RETRIEVAL IS AN ACTIVE FIELD OF STUDY BECAUSE MANY DATABASES THAT CONTAIN NUMBER OF IMAGES HAVE EXAMINES UNEXPECTED GROWTH BOTH IN NUMBER OF IMAGES AND SIZE THEY CONTAIN.

Labeling images into one of some predefined categories is refers to as image retrieval. Image retrieval is generally challenging for machines not for humans. Sometimes it suffers with uncontrolled conditions, complicated and difficult to understand objects in an image. Categorization is a technique which categorized images into multiple groups. Retrieval of an image enable us to analysis our surroundings efficiently. Sometimes image classification becomes one of the most complex areas. Especially it becomes more complex when it contains blurry or noisy image. We have lots of methods to classify the images and most of the time they provide good output but they fail to provide satisfactory output because image contains noisy and blurry content. It is very hard to achieve better result with the noisy and blurry image than with normal image. The main aim of this paper is to give a brief overview about some of most common image retrieval methods. The main methods which we are discussing in this paper are RF-SVM, NB-NN, Fuzzy Decision Tree and BMMA.

RF-SVM has the power to generate both the optimal feature subset and SVM parameters at the same time. To optimize the parameters and feature subset selection process, without losing the SVM classification performance [2] is our basic aim when using this method.

Naïve Bayes Nearest Neighbor approach is an nonparametric approach. NBNN is very simple, efficient, and it does not require any learning/training phase. It is important image classifiers. Nonparametric approach is an approach which is also known as no learning approach. Or it required no training and learning.

Fuzzy Decision Tree approach for image classification uses a non parametric approach and depends on hierarchical rule based method. This method is more reliable; because the nature of this method is fuzzy.

BMMA and semi-BMMA are two approaches which overcomes all the disadvantages of RF-SVM. It is a content based image retrieval method. It is easily distinguish between positive and negative feedback.

Here we are going to discuss our scheme, where we planned to build our system to more efficient and produce more accurate result. So for it we are using a layered by process as svm in first layer and another very popular classification knn classifier. In the second section we'll discuss it in detail.

CLASSIFICATION METHODS :- IN THIS SECTION WE BRIEFLY DISCUSS ABOUT THE ALL FOUR METHODS AND OUR PROPOSED METHOD OF IMAGE RETRIEVAL I.E. RF-SVM, NB-NN, FUZZY AND BMMA. FIRST SUBSECTION DEFINES ABOUT THE RF-SVM AND ITS ADVANTAGES AND DISADVANTAGES. SECOND SUBSECTION DEFINES ABOUT THE NB-NN AND ITS ADVANTAGES AND DISADVANTAGES. THIRD SUBSECTION DEFINES ABOUT THE FUZZY AND ITS ADVANTAGES AND DISADVANTAGES. FORTH SUBSECTION DEFINES ABOUT THE BMMA AND ITS ADVANTAGES AND DISADVANTAGES.

A. RF-SVM

If we are using support vector machine as an image classifier, it suffers with two major problems-

First it does not determine the best kernel parameter.

Secondly it does not know how to select the optimal feature sub-set input.

Because of these two problems support vector machine does not perform better and does not able to provide the accurate result. To reduce the feature selection process of support vector machine for image classification it uses the pre-sampling of feature. SVM classification performance is modifying by the feature selection, proper parameter adjustment. Parameter C and the kernel function parameters such as the gamma (g) for the radial basis function (RBF) kernel defined by the parameters that should be optimal include [3]. Three steps are very important to use a SVM, First is we must choose a kernel function, Second is to set the kernel parameters and third one is to determine a soft margin constant C which is also known as penalty parameter. To finding the best C and gamma when using the RBF kernel function classification algorithm refers to as best alternatives. RF algorithms have the potential that they generate at the same time both the optimal feature subset and SVM parameters. Main aim is that we can optimize the feature subset selection process and parameters, without losing the SVM classification performance [4].

If RF is used with the SVM so it has narrow down the so called Semantic Gap. Or we can say that to fill the semantic gap low level features and high level semantic concepts Relevance Feedback (RF) scheme becomes a powerful technique. So RF-SVM improves the performance of CBIR system.

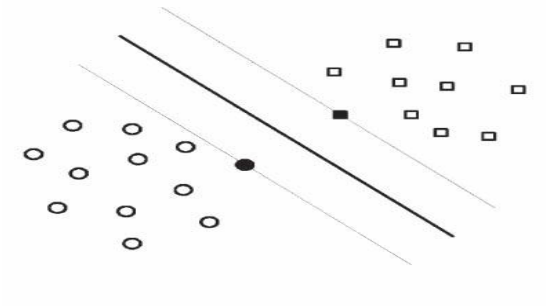

FIG.1 SEPRATING HYPERPLAN USING SVM

B. NB-NN

If we uses only Nearest-Neighbour (NN) based image classification technique so we does not require any training because it is a nonparametric approach. But NN suffers with some drawbacks:

First is local image descriptor's quantization which is used to generate "bags-of-words".

Second it generally calculate the distance of 'Image-to-Image', instead of 'Image-to-Class' distance.

Naive-Bayes Nearest Neighbor (NBNN) easily and effectively overcomes the disadvantages of NN technique. NBNN computes direct 'Image-to-Class' distances instead of 'Image-to-Image' distance without descriptor quantization. NBNN theoretically optimized image classifier which can be accurately approximated. NBNN method of image classification is a very simple, efficient, and non-parametric approach which requires no learning/training phase.

NBNN is based on simple methodology: Take a query image, Compute all its local image descriptors d1; :::; dn.

Search for the class C which minimizes the sum n i=1 k di ¡ NN C(di) k2 (where NNC(di) is the NN descriptor of di in class C).

C. FUZZY DECISION TREE

Fuzzy Decision Tree approach is also a non parametric approach. It is basically based on hierarchical rule based method. It is more reliable, because of its fuzzy nature. FDT method uses the benefits of both the methods i.e. Fuzzy and decision tree. The Class grouping algorithm is used to determine the tree structure. It forms the groups of classes which have been separated at each internal node [6]. Within the tree building process effective feature selection is incorporated, selecting suitable feature subsets required for the node discriminations [6]. FDT has number of advantages like the classification accuracy is enhanced, interpretable hierarchy, and low model complexity. It also gives the hierarchical image segmentation and has reasonably low demands for computational and data storage. Obtained classifiers generalization capabilities depends strongly on the tree structure.

D. BMMA

Biased Maximum Margin Analysis is a good classification method. It overcomes all the disadvantages of RF-SVM method i.e. firstly it is not able to make any differences between positive and negative feedback. It is not suitable in the situation when two groups of training feedbacks have different properties. Second, most of the SVM-based RF techniques do not take into the unlabeled samples into account. But the BMMA and semi-BMMA easily remove these drawbacks. The BMMA able to make differences between positive feedbacks and negative ones based on local analysis; by introducing a Laplacian regulaizer to the BMMA semi-BMMA can easily integrate information of unlabeled samples. We generally feel this problem into general subspace learning and then create an approach which is automatically determining the dimensionality of the subspace for RF. Experimentally it is prove that if the proposed scheme combined with the SVM RF so it can gradually improve the performance of CBIR systems [8].

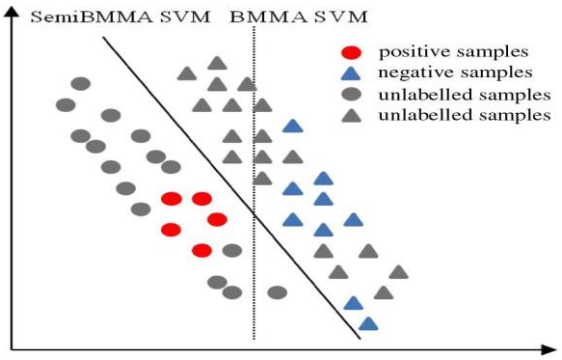

FIG.2 WORKING OF BMMA & SEMI-BMMA

E. Proposed Scheme

Here we proposed a methodology named content based image retrieval using two layered architecture, where SVM classification is used in first layer then proceed it output as input into the layer second, where the resultant images again

classified and filtered and will produce more accurate result while retrieval.

The following are the basic steps of a proposed system:

1. Read image database source.
2. Extract features of each read images and stored into a separate data file.
3. Then read query single image, and extract same feature for it.
4. For feature extraction to use colour based model and colour co-occurrence method.
5. Then filter and generated features with PSO and SVM, then classify it with SVM classify.
6. After successful classification, it'll process for the second layer as input.
7. Computer similarity matrix and apply standard distance formula to arrange images as order.
8. To get the KNN based classified images here after second process.
9. Then rearranged final classified images into separate classes or group, on the basic of similarity distance.
10. Finally display resultant classified images in a group.

LITERATURE REVIEW :- IN THIS CHAPTER WE DISCUSSED THE PREVIOUS RESEARCH DONE BY THE DIFFERENT RESEARCHERS, WHERE:

Hongbao Cao, Hong-Wen Deng, and Yu-Ping Wang proposed algorithm which improves the classical fuzzy c-means algorithm (FCM) by the use of a gain field, which models and corrects intensity in homogeneities caused by a microscope imaging system, flairs of targets (chromosomes), and uneven hybridization of DNA. Other than directly simulating the in homogeneously distributed intensities over the image, the gain field regulates centres of each intensity cluster. The algorithm has been tested on an M-FISH database that we have established which demonstrates improved performance in both segmentation and classification [1].

G. Guo, A. K. Jain, W. Ma, and H. Zhang proposed a new scheme of learning similarity measure is for content-based image retrieval (CBIR). It learns a boundary that separates the images in the database into two clusters. . Images inside the boundary are ranked by their Euclidean distances to the query. The scheme is called constrained similarity measure (CSM), which not only takes into consideration the perceptual similarity between images, but also significantly improves the retrieval performance of the Euclidean distance measure [5].

Oren Boiman, Eli Shechtman, Michal Irani proposed a trivial NN based classifier – NBNN (Naive-Bayes Nearest-Neighbor), which employs NN distances in the space of the local image descriptors (and not in the space of images). NBNN computes direct 'Image to-Class' distances without descriptor quantization [7].

Serafeim Moustakidis, Giorgos Mallinis, Nikos Koutsias John B. Theocharis proposed the FDT-support vector machine SVM classifier, where the node discriminations are implemented via binary SVMs. The tree structure is determined via a class grouping algorithm, which forms the groups of classes to be separated at each internal node, based on the degree of fuzzy confusion between the classes. In addition, effective feature selection is incorporated within the tree building process, selecting suitable feature subsets required for the node discriminations individually [8].

Jipsa Kurian, V. Karunakaran provide a brief overview image classification method and comparison between them. It has shown that Self Organizing Tree Algorithm, an unsupervised classification method classify the images to 81.5% even it contain blurry and noisy content. Hence proved that it is the best classification method [13].

Jisha.K.P, Thusnavis Bella Mary. I, Dr.A.Vasuki proposed a image retrieval method based on the semantic based image retrieval system using Gray-

Level Co-occurrence Matrix (GLCM) for texture feature extraction. Based on the texture features, semantic interpretations are given to the extracted textures. The images are retrieved according to user satisfaction and thereby reduce the semantic gap between low level features and high level features [19].

Swati Agarwal, A. K. Verma, Preetvanti Singh proposed algorithm for image retrieval based on shape and texture features only not on the basis of color information. Here input image is first decomposed into wavelet coefficients. These wavelet coefficients give mainly horizontal, vertical and diagonal features in the image. After wavelet transform, Edge Histogram Descriptor is then used on selected wavelet coefficients to gather the information of dominant edge orientations. The combination of DWT and EHD techniques increases the performance of image retrieval system for shape and texture based search [14].

Qian Du proposed a constrained linear discriminate analysis (CLDA) approach for classifying the remotely sensed hyper spectral images. Its basic idea is to design an optimal linear transformation operator which can maximize the ratio of inter-class to intra-class distance while satisfying the constraint that the different class centres after transformation are aligned along different directions. Its major advantage over the traditional Fisher's linear discriminate analysis is that the classification can be achieved simultaneously with the transformation. The CLDA is a supervised approach, i.e., the class spectral signatures need to be known a priori. But, in practice, these in formations may be difficult or even impossible to obtain. So this paper will extend the CLDA algorithm into an unsupervised version, where the class spectral signatures are to be directly generated from an unknown image scene [20].

Sreena P. H., David Solomon George proposed CBIR system, Tamura texture features are extracted as image content. To measure similarity of query image with images in database, a fuzzified distance measure, fuzzy hamming distance (FHD), is used. The database is sorted in the increasing order of similarity measure, and made available to user [15].

Khadidja Belattar, Sihem Mostefai focused on CBIR and basic concepts pertaining to it, as well as Relevance Feedback and its various mechanisms. Relevance Feedback (RF) was incorporated to CBIR systems. By allowing the user to assess iteratively the answers as relevant/irrelevant or even giving him/her the opportunity to specify a degree of relevance (user's feedbacks), the system creates a new query that better captures the user's needs, hence raising the opportunity to get more relevant image results. An important contribution in this work is a comparative analysis of CBIR systems using reference feedback [18].

Machine Bounthanh, Kazuhiko Hamamoto, Boonwat Attachoo, Tha Bounthanh proposed a novel framework for combining and weighting all of three i.e. color, shape and texture features to achieve higher retrieval efficiency. The color feature is extracted by quantifying the YUV color space and the color attributes like the mean value, the standard deviation, and the image bitmap of YUV color space is represented. The texture features are obtained by the entropy based on the gray level co occurrence matrix and the edge histogram descriptor of an image [17].

Pooja Kamavisdar, Sonam Saluja, Sonu Agrawal attempts to study and provides a brief knowledge about the different image classification approaches and different classification methods. Most common approaches for image classification can be categories as supervised and unsupervised, or parametric and nonparametric or object-oriented, sub pixel, per-pixel and per field or spectral classifiers, contextual classifiers and spectral-contextual classifiers or hard and soft classification. This survey gives theoretical knowledge about different classification methods

and provides the advantages and disadvantages of various classification methods [11].

CONCLUSION :- WE DISCUSS ABOUT THE FOUR IMPLEMENTED METHODS OF IMAGE RETRIVAL AND CLASSIFICATION AND ALSO DISCUSSED OUR PROPOSED METHODOLOGY ALONG WITH THE IMPLEMENTED METHOD IN THIS PAPER. IN PAPER RETRIVAL METHODS ARE DIVIDED INTO FOUR SEPARATE MODELS RF-SVM, NBNN, FDT AND BMMA. EACH METHOD HAS ITS OWN ADVANTAGES AND DISADVANTAGES. AS WE SEEN THAT RF-SVM PROVIDES GOOD HYPER PLAN, WHEREAS IT IS UNABLE TO DIFFERENTIATE BETWEEN POSITIVE AND NEGATIVE FEEDBACK. WHEN WE WERE STUDYING ABOUT NBNN, WE FOUND THAT THIS METHOD ELIMINATE THE OVER FITTING BUT ALSO DEGRADE THE PERFORMANCE OF POWER DESCRIPTOR. FDT METHOD SEEMS MORE ADVANTAGES BUT IT ALSO SUFFERS WITH A VERY SEVERE DRAWBACK. THE LIMITATION OF FDT IS ITS CALCULATION IS VERY COMPLICATED, WHICH IS GENERALLY NOT UNDERSTOOD BY NORMAL PROGRAMMER. NOW WE COME INTO OUR LAST BUT MOST EFFECTIVE TECHNIQUE BIASED MAXIMUM MARGIN ANALYSIS (BMMA), IT EASILY DEALS WITH THE LARGE AND SMALL PARAMETERS. SOMETIMES WE USE SEMI-BMMA, WHICH GIVES THE BENEFITS OF BOTH SUPERVISED AND UNSUPERVISED METHODS. SO THIS PAPER CONCLUDED BMMA IS A MOST EFFECTIVE RETRIEVAL METHOD AMONG THE REMAINING METHODS, BUT WE CAN'T SAY IT'LL GOOD GLOBALLY BECAUSE HERE WE PROPOSED A NEW METHODOLOGY WHERE I HOPE IT'LL PRODUCE MORE ACCURATE RESULT WHEN IT'LL FULLY FUNCTIONAL. SO WE CAN THAT OUR PROPOSED METHOD WILL BE MORE AND MORE ACCURATE AND FINE AS COMPARING TO DISCUSS EXISTING METHOD HERE.

REFERENCES :-

[1] Hongbao Cao, Hong-Wen Deng, and Yu-Ping Wang "Segmentation of M-FISH Images for Improved Classification of Chromosomes With an Adaptive Fuzzy C-means Clustering Algorithm" in IEEE TRANSACTIONS ON FUZZY SYSTEMS, VOL. 20, NO. 1, February 2012.

[2] Lexiao Tian, Dequan Zheng and Conghui Zhu "Research on Image Classification Based on a Combination of Text and Visual Features" in Eighth International Conference on Fuzzy Systems and Knowledge Discovery 2011.

[3] D. Tao, X. Tang, X. Li, and X.Wu, "Asymmetric bagging and random subspace for support vector machines-based relevance feedback in image retrieval," IEEE Trans. Pattern Anal. Mach. Intell., vol. 28, no. 7, pp. 1088–1099, Jul. 2007.

[4] G. Guo, A. K. Jain, W. Ma, and H. Zhang, "Learning similarity measure for natural image retrieval with relevance feedback," IEEE Trans. Neural Network., vol. 13, no. 4, pp. 811–820, Jul. 2002.

[5] Saurabh Agrawal, Nishchal K Verma, Prateek Tamrakar, Pradip Sircar, "Content based color image classification using SVM", Department of Electrical Engg., IIT, Kanpur, India, 2011 8th international conference on information technology.

[6] Oren Boiman, Eli Shechtman, Michal Irani, "In defense of Nearest-Neighbor based Image Classification", WIS Rehovot, ISRAEL.

[7] Serafeim Moustakidis, Giorgos Mallinis, Nikos Koutsias, John B. Theocharis, "SVM-Based Fuzzy Decision Trees for Classification.

[8] of High Spatial Resolution Remote Sensing Images" Member IEEE.

[9] Lining Zhang, Student Member, IEEE, Lipo Wang, Senior Member, IEEE, Weisi Lin, Senior Member, IEEE, "Semi supervised biased maximum margin analysis for interactive image retrieval", IEEE transaction of image processing, Vol.21, No.4, April 2012.

[10] W. M. Smeuldes, M. Worring, S. Santini, A. Gupta, and R. Jain, "Content based image retrieval at the end of the early years," IEEE Trans. Pattern And Mach Intell, vol.21, No.4,pp. 1349-1380, Dec. 2002.

[11] Pooja Kamavisdar, Sonam Saluja, Sonu Agrawal. "A survey on image classification approaches and techniques", Department of Computer Science & Applications, SSCST, Bhilai, India, IJARCCE, Vol.2, Issue.1, Jan 2013.

[12] Mostafa Sabzekar, Mohammad Ghasemigol, Mahmoud Naghibzadeh, H. S. Yazdi, "Improved DAG SVM a new method for multiclass svm

classification", Department of computer science & Engineering, Ferdowsi University of Mashhad, Iran ICAI'09 I.

[13] Jipsa Kurian, V. Karunakaran, "A survey on image classification methods", Department of Computer Science, Karunya University, Coimbatore, India, IJARECE, Volume 1, Issue.4, Oct 2012.

[14] Swati Agarwal, A. K. Verma, Preetvanti Singh "Content Based Image Retrieval using Discrete Wavelet Transform and Edge Histogram Descriptor", International Conference on Information Systems and Computer Networks IEEE, 2013

[15] Sreena P. H., David Solomon George "Content Based Image Retrieval System with Fuzzified Texture Similarity Measurement",Department of ECE, Govt. Rajiv Gandhi Institute of technology Kottayam, India, International Conference on Control Communication and Computing 2013

[16] http://www.jars1974.net/pdf/12_Chapter11.pdf

[17] Machine Bounthanh, Kazuhiko Hamamoto, Boonwat Attachoo, Tha Bounthanh "Content-Based Image Retrieval System Based on Combined and Weighted Multi-Features" King Mongkut's Institute of Technology Ladkrabang Bangkok 10520, Thailand, 13th International Symposium on Communications and Information Technologies 2013.

[18] Khadidja Belattar, Sihem Mostefai "CBIR using Relevance Feedback: Comparative Analysis and Major Challenges" Computer Science Department MISC Laboratory Mentouri University Constantine, Algeria, 5th International Conference on Computer Science and Information Technology 2013.

[19] Jisha.K.P, Thusnavis Bella Mary. I, Dr.A.Vasuki "An Image Retrieval Technique Based on Texture Features using Semantic Properties" International Conference on Signal Processing, Image Processing and Pattern Recognition 2013.

[20] Qian Du, "Unsupervised real time constrained linear discriminate analysis to hyper spectral image classification", Department of Electrical & Computer Engg, Mississippi state university, USA, www.sciencedirect.com, Pattern Reorganization (2005) 361-368.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

BMI and Nutritional Awareness

Khushboo Sahu* Dr. Rajlakshmi Tripathi**
*Msc. DFSM IGNOU **Associate Professor Govt. M.H. College of Home Science and Science for Women Jabalpur M.P.

Abstract :- This study was designed for establish the relationship between health status and increasing nutrition awareness level. The target population consisted of NSS State level camp 2014 residents. In this camp students of seven traditional universities of M.P. were participated. The total number of students was 500, of the age group 18-24 years. Exhibition of food groups, nutritional models and food guide pyramid were used as tools for nutrition education. Questionnaire was developed for measuring pre and post awareness level and frequency distribution statistics method was applied for BMI distribution, For measuring health status of residents. Result shows that good health status is required to facilitate learning in NSS Camp residents.

Introduction :- Student life is the most crucial period in the life. The most important things in student's life are discipline and punctuality without discipline students are like a bird without wings. Punctuality is the exact time to again knowledge. It is said that "student life is golden life," because student life is the most important part of human life. Proper nutrition is the one of the important aspect of lifestyle and health is directly related to the food. Food use in our body like fuel, it needs to grow and work properly after eat food brake down and used it to build and repair body cells and provide energy that process is responsible for growth and good health by Virgil L John et al. (2014). Only a healthy mind can develop qualities such as patience, fearlessness, fortitude, forbearance and self confidence which are necessary for promotion of family, community and national harmony and also for quality living. Health is a state of complete physical, mental and social well-being and not merely the absence of disease or infirmity according to WHO (1948). The wealth of a nation is not necessarily measured by the gold it possesses, but mainly by the potentiality of its youth. Adolescent nutritional problem are common through the country. They have to encounter a series of serious nutritional challenges not only affecting their growth and development but also their livelihood as adult (Gupta et.al. 2008).Fast foods are strongly related to early onset of High B.P, Diabetes, Obesity, Malnutrition, Hypertension etc (Sultana et.al. 2014). Nutrition programme is the important tool for raising public nutrition knowledge. Malnutrition is a factor of poor academic performance in adolescence and pre adulthood age, maintenance of body weight to the desirable level in adulthood is very important because obesity is the forerunner of many diseases. Kabayashi (2009) determined that GPA (grade point average) was negatively correlated with BMI and fast food intake, and BMI and fast food intake were positively correlated in the American sample. According to Dina et. al. (2014) Obesity and weight gain rate are particularly high young adults and university students resulting, overweight or obese. WHO (2007) can be classified the BMI in different categories-

Table 1-BMI Classification for underweight

Chronic energy deficiency grade	BMI(KG/M^2)
Normal	>18.5
Grade I	17.0-18.4
Grade II	16.0-16.9
Grade III	<16.0

Table 2- BMI Classification for overweight and obesity

Grade for BMI	BMI(KG/M^2)
Under Weight	<18.5
Healthy	18.5-24.9
Overweight	25-29.9
Grade 1 Obesity	30-34.9

Patel et al. (2013) characterized that the knowledge of girl's student regarding health aspects improved significantly after Health Awareness programme.

Madhya Pradesh is the only state in which, through Department of Higher Education MP organizes a State Level camp every year. In 2014 this camp was hosted by Rani Durgawati University at Jabalpur from 7-13 February at Rani Durgavati Samadhi Sthal at Narrai nala, approximately 24 Kilometers from Jabalpur.

The camp schedule is designed in such a manner that the students not only are rigorously involved in physical but equally in mental and emotional exercises. This increases the pressure and the requirement of good health through proper nutritional intake steps in. the Aim of this study determine the relationship between, health status and increasing nutrition awareness level in NSS residents.

Material & Method :

Material :- Nutrition knowledge was assessed by a questionnaire specifically designed for the study. That study was conducted on 500 NSS residents of state level camp 2014, they were age group 18-24 years. Every student was a respondent for the survey. exhibition was used like a tool and represent different type models of different food group items with these information's- General name, Botanical name**,** Health benefits information and suitable information about their composition in include carbohydrates, protein, fat, energy with percentage and anti nutritional factors related information.

1. List of Exhibits :-

S. No.	Food group	Exhibit
1	Cereal grains & product	Bajra ,Wheat, Rice,Maize,Oates,Barley,Jowar Buckwheat/kuttu, Kodo, Barnyard millet/odalu, Forctail millet/kangni, Little millet/semai, Ragi/ finger millet
2	Pulses & legumes	Masur dal, Mung dal/green gram, Urad dal/Black gram,Green gram whole, Bengal gram/channna,Red gram/tuar/arahar dal, Bangal gram whole, Black gram whole, Moog dal whole, Cow pea/labia, Masoor whole, Horse gram dal, Horse gram whole
3	Milk & milk product and also meat and meat product	Milk, Curd, Paneer. Egg, Fish
4	Fruits and vegetable	Spinach, Fenugreek leaves,Carrot Radish, Brinjal, Apple, Orange Grapes, Pomegranate, Lemon, Mango, Pine apple.
5	Fat & oil seeds ,nuts and sugar	Olive oil, Niger seeds, Mustered / rai seeds, Ground

	and sugar products	nut/pea nut, Linseed nut/flox nut, Gingelly seeds, Soyabeen, Walnut/akhroat, Chilgoja, Pista, Makkhana, Ceshaw nut, Piyal seeds, Almonds,Coconut dry, Apricot, Sugar, Honey.
6	Flavoring agents, Condiments and spices,	Black sees/kalongi, Poppy seeds, Aniseeds/souf, Vanilla, Trochyspermum/ajwain, Cloves/loung, Saffron/crocus sativus/keser, Javitri/myristica fragans, Hing/asafactida, Black cardamom/badi elaichi Cinnamon/dalchini, Cardimum/elaichi, Black stone flower/pathar fool, Fenugreek seeds/methi dana, Papper/piper nigrum, Chillies/mirchi, Bird pepper/cayenne pepper, Turmeric, Coriander/dhaniya, Cumin seed/cuminium cyminum/zeera, Tejpatta
7	Miscellaneous	Chestnut/castenea, Amaranth/ rajgira, Sago/saboodana/tapioca, Garden cross seed.
8	Empty energy and fast food groups Beverages	Sprite, Mirinda, Lehar, Cococola, Frooti Fast foods- Noodals, Pasta
9	Beverages	Toffies, Coffee, Tea

Source of Specific Nutrients

- **Cereal grains & product** - Source of carbohydrate, some amount of protein, Invisible fat, Fiber, Vitamin B_1.
- **Pulses & legumes** - Plant protein source, Invisible fat, Fiber, Vitamin B_1, B_2, B_3, Micro minerals like potassium, calcium.
- **Milk & milk product and also meat and meat product-** Rich in animal source of animal protein, Vitamin B Complex, vitamin A,D, Micro minerals,
- **Fruits and vegetable** - Rich in fiber, Carotenoids, vitamin B_2, Vitamin c, folic acid, and Micro minerals (Na, K, Ca, Mg).
- **Fat & oil seeds, nuts and sugar and sugar products** - Fat and oil are rich source of fat, Nuts are rich in fat and protein, Sugar and their product good source of energy.
- **Flavoring agents**, **Condiments and spices** - They are use for specific flavors, tests and aroma in a particular food items.
- **Miscellaneous** - Rich source of carbohydrates.
- **Empty energy and fast food groups** – Source of Energy.
- **Beverages** - Source of Antioxidants.

2. **Poster and chart** were used as second type of education material Chart showed reasons of anemia and source of iron rich food. Obesity, BMI (body mass index) and 6 posters were related to food items and their nutrients.

3. **Food guide pyramid** was a educational tool that show dietary guidelines in an easy format and helpful for concept of variety, quantity and inclusive of food types in the total diet for an individual. We need to consume variety of foods in balanced amount.

Methodology :- Questionnaire method was used as a tool for assessing nutrition awareness level. Question paper was prepared for pre and post evaluation of nutritional awareness level of NSS residents students, That question were related to balance diet, food group their importance and recommended (RDA) for our body. Fast food and

empty calories food items and its effects also were included. Anthropometric measurement were used for assessment of nutrition status of resident .Then BMI calculated, which is a more sensitive indicator of changes in nutritional status than a single parameter at a point time. In this camp digital weighting machine was used for measurement of resident body weight in (kg) and Measuring tape was used for measurement of height in (c.m.). Comparison of nutrition awareness level of different universities was presented in the form of percentage.

Frequency distribution :- Frequency Distribution Statistics method was applied for BMI distribution among NSS resident students for awareness of their nutritional status.

Result and discussion :-

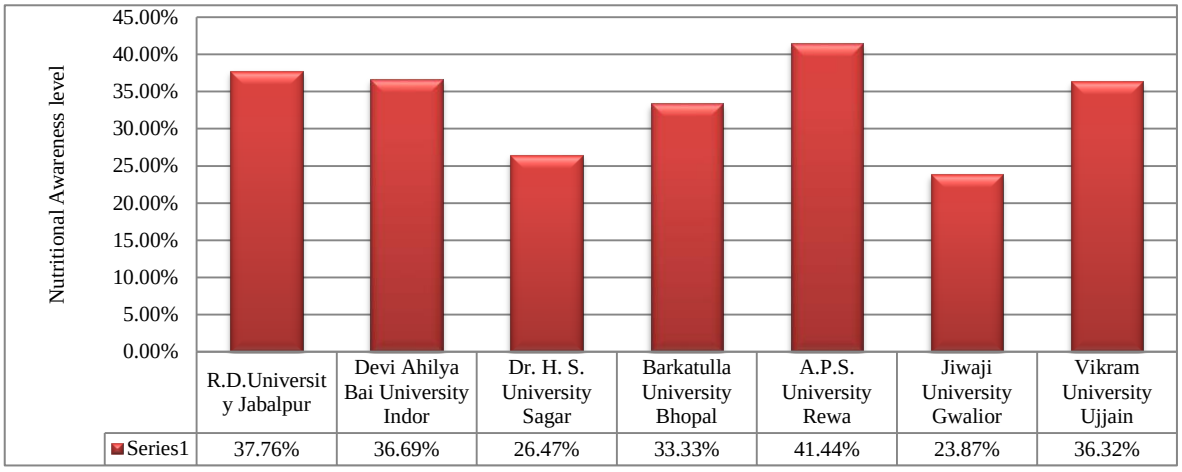

Figure-1 Nutrition awareness level difference amongst students of various Universities

Table-3 BMI grade distribution in seven University NSS Camp Residents-

S.No.	Grade for BMI	BMI Reference Value	Name of University: R.D. University Jabalpur	Dr, H.S. Gour University Sagar	Barkatulla University Bhopal	D.A. University Indore	A.P.S. University Rewa	Jiwaji University Gowalior	Vikram Universi ty Ujjain
1	Grade III (chronic energy deficiency)	<16	2.88%	0.00%	1.96%	2.22%	5.12%	0.00%	5.26%
2	Grade II (chronic energy deficiency)	16-16.9	1.92%	13.51%	5.88%	4.44%	7.69%	0.00%	5.26%

3	Grade I (chronic energy deficiency)	17.0-18.4	20.19%	16.21%	5.88%	20%	7.76%	28.20%	15.78%
4	Healthy	18.5-24.9	75.96%	62.16%	56.86%	73.33%	82.05%	69.23%	73%
5	Overweight	25.0-29.9	2.88%	8.10%	7.84%	4.44%	0.00%	2.56%	0.00%

Nutritional awareness level of students of seven traditional universities shown in Figure-1. A.P.S. University Rewa showed the highest level of awareness where as Jiwaji University Gwalior exhibited the lowest level. the health status of residents from A.P.S. University Rewa showed BMI closest to normal as per WHO (2007). The standards as in table- 3.where as Barkatulla University Bhopal indicated the lowest level of BMI as pre standards norms. the rest of the universities lied in the between the two. the health of resident status shown in table-3. This finding can be attributed to the use of nutritional awareness in consuming healthier food for normal BMI and since Jiwaji University Gwalior students showed low level of awareness was confirmed by their low BMI Indices. But a surprising finding was shown in the table-3 as H.S. Gour University Sagar students who have more number of normal BMI but with low level of awareness nutrition. This can be attributed to by their eating habits at home or the availability of food for various reasons where as the Barkatulla University Students showed high level of awareness contributed by exposure to media, environment, source of information etc., but exhibited a low level BMI because of improper use of their knowledge about nutrition. It can be due to their distance from parents, home, life style in a big city and no availability of nutritious food due to many reasons.

Virgil L John et al. (2014) reported that Students awareness level was increased after nutrition education program by. Lectures seemed to have improved the cognition for nutrition and food safety among students. Scores on knowledge, attitude and practice among students in the intervention group were significantly higher, when comparing to the control group according to Susan et al. (2014). Nutrition education is an important tool to improve dietary habits and food choices in adolescent girls. After nutrition education through lectures, audiovisual aids and demonstration there was significant improvement in nutrition knowledge of subjects by gupta et al. (2008). In current research representing that nutrition exhibition and their different type of exhibits are very effective for increasing the awareness level of students of all seven universities and showed a positive result in figure-1. According to G. O'brien and M. Davies (2006) result demonstrated that there was no significant correlation between of nutrition knowledge and BMI. Similar result are seen in the present study where students from H.S. Gour University Sagar are compared with students of B.U. University Bhopal for their nutritional knowledge and BMI. nutrition knowledge.

Conclusion :- The nutrition awareness does not grantee normal body mass index of students, however nutritional literacy can be improved with

nutrition education programmes using various tools. The effectiveness of tools can be taken up for further study.

Normal BMI can be because of many reasons not included in the study as genetics financial background and availability of food among students.

However Nutritional Knowledge should be given to all students because it directly effects their performance affecting the health of society in general and the growth of nation in particular.

References :-

Atiqua Sultana and Ahluwalia Savita (2014). Impact of Modern Approaches on Nutritional Health of College Going Adolescent Girls of Lucknow City, Global Journal of Finance and Management, Vol. - 6, 287-292.

Fatah Dina Samy (2014), Effect of Nutrition Awareness on Body Mass Among University Students. PH. D. Thesis (unpub.) Helwan University Faculty of Home Economics, Department of Nutrition & Food-Science, 1-55.

Gupta N. and G Kochar (2008), Role of Nutrition Education in Improving the Nutritional Awareness Among Adolescent Girls, the Internet Journal of Nutrition and Wellness, vol.-7(1).

Kobayashi F. (2009) Academic Achievement, BMI and Fast Food Intake of American and Japanese College Students, journal of nutrition & food science vol.-39(5) 55-66.

O'Brien G. and M.Davies (2006).Nutrition knowledge and body mass index. Oxford journals, vol. - 22,571-575.

Patel H., H. Solanki, V. Gosalia, F. Vora, and M.P. Singh (2013), A Study Of Awareness Of Nutrition & Anaemia Among College Going Students Of Mahila college of Bhavnagar, National Journal of Community Medicine 4(2) 300-303.

Susen turnbull- Fortune, Neela Badrie (2014), practice, Behavior, Knowledge and Awareness of food Safety among Secondary & tertiary level students in Trinidad, West Indies vol.-5(15) 1463-1431.

Virgil L. J., A. P. Lorion and M. L. Macaraeg (2014) Snack Choices and Nutritional Awareness of Students in Iligan City National High School, The Global Summit On education GSE-2014, 255-265.
World Health Organization (1948).

World Health Organization (2007). BMI Chart.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

SIVAGIRI MUTT-A CITADEL OF CULTURAL SERVICES

DR. O.K. PRAVEEN
Assistant Professor Department of History, Sree Kerala Varma College, Trissur, Kerala

ABSTRACT :- Sree Narayana Guru had a wider vision of Social services at the comprehensive development of the individual and the society. He that human relations very important. The path of generosity is broad and self-centered and the path of miserliness in narrow. A generous man should his fellows men and it would lead to a various life. Narayana Guru reached Sivagiri in the month of January 1903. Kumaran Asan mekes a reference to the arrival of Guru at Sivagiri in the first volume of Vivekodayam. Guru,s presence at Varkala attracted people from far and wide. They came to see him just at Aruvippuram years back. He used to talk thse people about the peculiarities of the place and the special teatures nof Varkala Tunnel, Varkala spring, green plantation and trees, land, lakes and proximity to sea and of course about the importance of the Junardhana Swami temple. He like the plce and expressed his desire to have an ashram there. Late Guru become a perminant settle ther. Of course, he used to travel to other place as well but continued to stay at Varkala.

INTRODUCTION :- Sivagiri is one of the most part of the Indian sub- continent that plays a dominant role in socio-religious history of the modern world. It is citadel of spirituality of which is located at Varkala near chiranyinkil taluk in the district of Thiruvananthapuram. Sree Narayana Guru selected this isolated hilly area for his meditation and centre of his activities and established an Ashrama there. Soon it rose in to prominence as a spiritual centre and become the venue of pilgrimage.

After leaving Aruvippuram Guru did not stay at aplace long. Like **Lord Buddha** and **Sankara**, Guru had unquenchable 'wanderlust'. He never remained in one place for long.1 He traveelled incessantly. In the course of Guru's extensive travels, he was searching for suitable area to establish an Ashramam, of the many places pronounced for the natural beauty, which the Swami had visited, the one that attracted him was a neglected hill-top later named as 'Sivagiri' at Varkala.2 It enchanted him. His visit to Varkala become more frequent around 1903. In the beginning, he sat near a **jack tree**. In due course Guru made temporary parnasala3 there with palm leaves and stayed there.

Establishment of Ashram and Sivagiri :- Narayana Guru reached Sivagiri in the month of January 1903. Kumaran Asan makes a reference to the arrival of Guru at Sivagiri in the first volume of Vivekodayam.4 Guru,s presence at Varkala attracted people from far and wide. They came to see him just at Aruvippuram years back. He used to talk thse people about the peculiarities of the place and the special teatures nof Varkala Tunnel, Varkala spring, green plantation and trees, land, lakes and proximity to sea and of course about the importance of the **Janardhana Swami temple.** He like the plce and expressed his desire to have an ashram there. Late Guru become a perminant settle ther. Of course, he used to travel to other place as well but continued to stay at Varkala.5

The sivagiri became a centre of attraction with the arrival of Narayana Guru. After establishing his ashram at hill top he almost stayed permanently therw. He named the place as "**Sivagiri Kunnu**" the Hindu God Siva is Believed to be in 'Kailas', the topmost spot of the universe. Siva being the favourite God of Guiru, he naturalyu named hill in the name of Siva. Thus this place is known as Sivagiri.6

Sivagiri : A Spiritual Centre :- The purpose of the all great men is to make the world a happy place

to live, by establishing universal fraternity. Guruu,s life was dedicated to this purpose. It was a great yoga. His life was full of activities to achive this goal. The main centre's of such activities of Guru were **Aruvippuram, Sivagiri** and **Always**.7 He started from Aruvippuram. Guru wanted Sivagiri to be a spiritual centre. Ultimately Sivagiri turned to be thew centre of everything connected with Guru, his teaching, his message etc. In 1087(M.E.)(1912). Sivagiri was duly developed to be religious centre contemplated by Guru. The consecration of Siva and Devi were the main functions to convert Sivagiri as religious centre.

The Sivagiri Installation :- It is recorde by historians andf biographers nof Guru that such a splendid function as Sivagiri Installation of **Siva** and **Sarada** were done before in the long history of SNDP Yogam. A description of the function is given in 1087 Edavam Edictorial vivekodayam as" The important function of installation of Sarada Devi was done on 19th Medam1087 (M.E.)(19th MAY 1912) on 18th Tuesday night abouty 3o' clock Guru and some thantries (pujaris) and Sanyasins came after bath and started the ceremony. Siva prathishta was done at 4o' clock and Sarada pratishta at 5o'clock.

Sarada Mutt :- Sarada (**Saraswathy**) is the Goddes of Wisdom, Janna or Vidya. The place where Sarada Devi installed is called '**Sarada madom'**. Sarada Mutt is quite dofferent from other conventional temples established by Guru.8 It is septagonal building constructed with smooth tiles and windows with colorful glasses. Indistinct with other temp; les, it has windows,. There are two doors in front and back side of the mutt. The front door, which opens towards the idol, has blue glass panes and the back door was made of plank.9

It is cute pagoda like **Sreekovil** inside a circular enclosure with a half wall and yard spread with snow-white sand. The beaming idol of the Devi iss medeled idol, idol of the Goddess being sculptured as in standing pose, with foot fixed in a beautiful lotus.10On thw wall behind the idol of Goddess Sarada there depicted the symbol 'Om'.11

Parnasala :- On the right side of the sarada mutt there is a parnasala roofed with coconut leaves. The room inside the parnasala contains an idol and a picture of Sree Narayana Guru. There are may pictures of guru and other histiric personalities, on the walls of the circumambulating corridor of the parnasala. It includes the pictures from Jesus Christ toi Sai Baba and from Gandhiji to Tagorte.12 It was treated as the resting place of Sree Narayana Guru. The prominent personalities LIKE, c. Rajagopalachari, Watts, and may others had met with Guru there.

Very near to that parnasala, there is mutt of Guru where Gandhiji, Tagore, C.F. Androse and others held discussion with Guru. The articles used by Guru are kept there even today. Theis venerated abode of Guru. Next to the Validika mutt there we can see the Samadhi mandapam of this principal disciple Swami Bodhananda.

Mahasamadhi Mandapa :- The most attractive and spiritual part of the structural constructions at sivagiri was the marvelous concrete designed structural building, know2n as 'Maha Samadei Mandapa' erected in the top most of **Sivagiri** hill. It is the penacle of peace and brotherhood, where the soul of Guru rest in place.12

Brahma Vidyalaya :- The dream of Guru to start a centre for imparting philosophical, spiritual and theological education relating to all sects was materialized in the farm of Brahma Vidyalaya. It is the centre of higher learning in spirituality. It attedmpts to inculcate the spiritual qualities of teacher especially good behavior, fair customs and manners, mercy and tender heart, devotion and peity and scholasticism among the students. The students who joined in Brahma Vidyalaya are known as Bramacharis. The Brahmacharis underwent process of rigorous training. To them education is not a mere physical exercise but spiritual exercise. They were strictly guided by the rules and regulations put forward by the Guru. The

Guru's exalted ideal were soon to materialize in one of the great confluences in the history of spiritual movements the Sivagiri pilgrimage.

Conclusion :- As per the Puranas and Ithihasa the term 'sivagiri' is used to denote 'kalidasa', the abode of Lord Siva, the destroyer. There are other mplaces in India bearing the same namew, in Ramanathapuraam district Tamil nadu located very near to Ideuki district of Kerala, there is a place known as 'Sivagiri Mountain' of Sahya Mountain Range. That is why this particular place assumed the name Sivagiri. There are references in north India and Maharastra about the name 'Sivagiri' .Sivagiri is one of most holy part of the Kerala.

End notes :-

1. "For the sake of fellows-men, uncasing day and night instining strives the kindly ma…."Guru, One hundred verses of self Instruction, Poem23p.293.
2. Narayana Guru, Dharmam Verses23, p.111.
3. File.no. D.Dis.350 dated 19 August 1926. The sivsgiri Mutty.
4. K.K.Mohanan, Sivagiri Charitham (Mal.). Thiruvananthapuaram, 2007, p.23.
5. Kumaran Asan, sree Narayana Guru, Viverkodayam, March31st, 1903, p.26.
6. M.K. Sanoo, Narayana Guru, p.82.
7. Ibid.
8. Vivekodayam, Edvam edition, 1087 (1912).
9. Somu Jacob, Charitra Smithikalude Sivagiri, Yoganada, (mal.), December 16 1998, thiruvananthapurtam, p.69.
10. Ibid.
11. Yoganadam, op.cit.
12. Parnasala-Thached shed with sticks and leaves.

References :-

Primary Sources :-

File No. 50C.S. Vol.III (1914)

File NO. 9/9, Sivagiri Theerthayathra Festival to Pilgrims 1946

File No. 57, 1947, Pilgrime convention at Sivagiri Mutt.

Secondary Sources :-

Anchutha Menon, C., Sivagiri Theerthadanaam, sivagiri Mutt, neyyattinkara, 1935.

Govinda Vaidyair Vallabasseri, Sivagiri Theerthadanam, Kottayam, 2002.

Kittan, T.K., Sivagiri Theerthadanam, Kottayam, 1930.

Kujakkan, K.A., Sivagiri Charitam, Thiruvananthapuram, 2007.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

बालाघाट जिले के आर्थिक विकास में लघुवनोपजों का योगदान

डॉ. कुसुमलता उइके
सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र), शासकीय कला महाविद्यालय कटंगी (बालाघाट)

वन विश्व की प्राकृतिक सम्पदा है, वनों का मानव जीवन से गहरा संबंध है, मनुष्य जीवन पर्यन्त वनों से प्राप्त होने वाले वस्तुओं का उपयोग करता है। मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति में वन प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से योगदान प्रदान करते है। किसी भी देश के आर्थिक विकास में वन संसाधनों की महत्वपूर्ण भूमिका है। वनों से प्राप्त हाने वाले वनोपज को मुख्य रूप से दो वर्गों में बाटाँ गया है – प्रथम काष्ठायीय वनोपज द्वितीय आकाष्ठीय वनोपज। काष्टीय वनोपज जिसमें इमारती काष्ठ एवं जलाउ लकडी शामिल है, को मुख्य वनोपज की श्रेणी में रखा गया है। वनो के समीप रहने वाले ग्रामीणों का जन–जीवन पूर्णतः लघुवनोपज पर आधारित है। रोजमर्रा की उपयोग की वस्तुएं, खाद्य सामग्री, औषधी, तथा आय प्राप्ती के लिए ग्रामीण लघुवनोपज पर काफी हद तक निर्भर करते है। कृषि कार्यों में मानसून की अनिश्चितता तथा उन्नत तकनीकी के आभाव में वनों व लघुवनोपज के उपयोग पर निर्भर है।

लघुवनोपनजों में रोजगार के अवसरों का निर्माण करने की असीम क्षमता है। विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में लघुवनोपज द्वारा रोजगार उपलब्ध कराने की अपार संभावनाएं मौजूद है लघुवनोपज से रोजगार एवं राजस्व दोनों ही प्राप्त होते है। सुदूर वनांचल में रहने वाले ग्रामीण समाज में जीविकापार्जन के विशेष साधनों में लघुवनोपज की भूमिका स्वंयसिद्ध है।

बालाघाट जिले का 50 प्रतिशत से अधिक मात्रा में वन है जहां मुख्य वनोपज के साथ–साथ लघुवनोपजों की बहुतायत मात्रा पायी जाती है जिससे शासन को राजस्व की प्राप्ति होती है साथ ही लघुवनोपज वनवासियों के जीवन निर्वाह का प्रमुख साधन भी है। ग्रामीण पूरे वर्ष भर किसी न किसी लघुवनोपज का दोहन एवं संग्रहण करते रहते हैं, जिससे उनके आर्थिक स्तर में सुधार होता है यद्यपि ग्रामीण लघुवनोपज दोहन की वैज्ञानिक पद्धति नहीं जानते अतएव प्रचलित पद्धतियों के द्वारा लघुवनोपजों का संग्रहण किया जाता हैं।

प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य बालाघाट जिले में लघुवनोपजों की स्थिति का पता लगाना, लघुवनोपजों के विदोहन की मात्रा एवं उससे प्राप्त होने वाली आय का आकलन करना, लघुवनोपजों के संग्रहण से ग्रामीणों के आर्थिक आय में योगदान का अध्ययन करना है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन क्षेत्र में वनसंपदा का विशाल भंडार है यहां कुल क्षेत्रफल का लगभग 52 प्रतिशत भाग वनों से ढका हैं। जहां मुख्य रूप से पाये जाने वाले लघुवनोपज – तेन्दूपत्ता, बाँस, महुआ, चिरोंजी, आंवला, बेल आादि है। शोध कार्य हेतु इन लघुवनोपजों में पाँच लघुवनोपज–तेन्दूपत्ता, बाँस, लाख, महुआ, ऑवला लिया गया है, इनके उत्पादन, संग्रहण, विपणन, रोजगार, राजस्व प्राप्ति आदि का विश्लेषण किया गया है, इनके विश्लेषण के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों हो प्रकार के समंको का प्रयोग किया गया है। तेन्दूपत्ता एवं बाँस राष्ट्रीयकृत लघुवनोपज है जिनका संग्रहण शासन द्वारा वन विभाग के माध्यम से कराया जाता है व लाख, महुआ, ऑवला, अराष्ट्रीयकृत लघुवनोपज है जिसका संग्रहण संग्राहकों द्वारा स्वतंत्रता पूर्वक किया जाता है राष्ट्रीयकृत लघुवनोपजों के विश्लेषण हेतु द्वितीयक समंक, अध्ययन क्षेत्र के वन मंडल कार्यालय एवं बेबसाइड से प्राप्त किए गए है व उनका विश्लेषण किया गया है। अराष्ट्रीयकृत लघुवनोपज लाख, ऑवला, महुआ का उत्पादन, संग्रहण, विपणन, स्वतंत्र है इनके विश्लेषण हेतु अध्ययन क्षेत्र में लघुवनोपजों की सघनता एवं उन पर निर्भरता के आधार पर समिति के अनुसार परिवारों का सर्वेक्षण किया गया है। सर्वेक्षण में बालाघाट जिले की पाँच तहसील बैहर, लांजी, वारासिवनी, परसवाड़ा, लालबर्रा, किरनापुर को लिया गया है। एवं उन क्षेत्रों में बहुतायात मात्रा में पाया जाने वाला लघुवनोपज लाख, महुआ ऑवला को शामिल

किया गया है। इन लघुवनोपजों का संग्रहण एवं विपणन व्यक्तियों द्वारा स्वतंत्र रूप से किया जाता है इनके अलावा सर्वाधिक मात्रा में पाया जाने वाला लघुवनोपज बाँस एवं तेन्दूपत्ता भी है किन्तु इनका संग्रहण एवं विपणन शासन स्तर पर वन विभाग द्वारा किया जाता है।

बालाघाट जिले में तेन्दूपत्ता संग्रहण एवं विकय से प्राप्त राजस्व की जानकारी

कं.	वर्ष	संग्राहकों की संख्या	कुल संग्रहण (मानक बोरा)	संग्राहकों को भुगतान की गई राशि	तेन्दूपत्ता विकय से प्राप्त राजस्व
1	2011	35396	57337.085	31557396.75	78593056.50
2	2012	38044	46107.235	25358979.25	70376184.60
3	2013	37732	57917.365	37646092.25	77308963.70
4	2014	38312	58736.445	38178689.25	79213510.40
5	2015	41723	69938.270	52453702.5	84362917.43

स्त्रोत :– मुख्य वन संरक्षक कार्यालय बालाघाट

चयनित परिवारों की लघुवनपजों एवं अन्य स्त्रोत से प्राप्त आय एवं बचत का विवरण

कं.	तहसील का नाम	ग्रामों की संख्या	परिवारों की संख्या	लघुवनोपजों से प्राप्त आय (लाख, महुआ, ऑवला)	अन्य स्त्रोत से प्राप्त आय	कुल आये	परिवार पर खर्च	कुल बचत
1	कटंगी	14	51	2123207	1105680	3228887	2481660	747227
2	वारासिवनी	16	52	1921950	1920150	3842100	2935780	906320
3	बैहर	21	55	1594450	1325530	2919980	2533790	386190
4	परसवाडा	15	52	1404825	1317345	2722670	2317230	405440
5	लांजी	16	51	1707000	1480370	3187370	2753710	433660

स्त्रोत :– सर्वेक्षण से प्राप्त ऑकडे

सर्वेक्षण से प्राप्त ऑकडो के आधार पर स्पष्ट होता है कि चयनित तहसीलों के सर्वेक्षित परिवारों की अन्य स्त्रोत से प्राप्त आय लघुवनोपजों से प्राप्त आय की अपेक्षा कम है इन

परिवारों के लघुवनोपजों से प्राप्त आय एवं अन्य स्त्रोतों से प्राप्त आय का योग कर परिवार का कुल खर्च घटाने पर बचत प्राप्त होता है जिससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्र में बहुत सारे परिवार ऐसे हैं जो लघुवनपजों के उत्पादन, संग्रहण एव विपणन से ही अपनी अजीविका चलाते है।

सुझाव :–

1. लघुवनोपजों के संरक्षण एवं सतत् प्राप्ति हेतु इनके दोहन में नियंत्रण एवं वैज्ञनिक पद्धति का उपयोग किया जाना आवश्यक है।
2. लघुवनोपजों की आवश्यकता बढने से मांग एवं पूर्ति के बीच एक बडा अंतर आ गया है। चूंकि अध्ययन क्षेत्र में लोगों के पास निजी पडत भूमि है उस पडत भूमि में लघुवनपजों का रोपण कर इनके उत्पादन की मात्रा में वृद्धि की जानी चाहिए।
3. वनविभाग द्वारा कार्यशाला आयोजित कर लघुवनोपजों का महत्व वैज्ञानिक रोपण पद्धति तथा दोहन के विषय में ग्रामीणों को प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।
4. ग्रामीण द्वारा संग्रहित लघुवनोपजों का प्रसंस्करण ग्राम स्तर पर करके उन्हें रोजगार एवं आय प्राप्ति के साधन उपलब्ध कराना चाहिए।

संदर्भ सूची :–

1. श्री हरि गुहा–वन उपयोगिता श्री कृष्ण लॉ हाडस, बैतूल।
2. शील भद्र–वृक्षारोपण एवं वन संरक्षण मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल।
3. मुख्य वन संरक्षक कार्यालय बालाघाट।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Corporate Social Responsibility : Impact and challenges

Dr. Vimmi Behal
Atal Bihari Vajypee Hindi Vishwavidyalya, Bhopal, (M.P.)

Abstract :- India is a developing country.Corporate social responsibility play important role in the organisations. The concept of corporate social responsibility is in existence since ancient times. The writing of ancient Indian epics have nartated CSR is various forms. Various studies over a period of time have given models for CSR approach. There are several challenges facing corporate social responsibility in India and the proper provides suggestion to overcome then and accelerate the CSR in India .Corporate social resposibility is gaining more and more importance day by day. Changing market scenario globalizations, ethical consumerism all are adding head to the CSR concept. More and more organisation are showing their commitments towards CSR either for enhancing their corporate image or to be in competition.

Keywords :- CRS, Challenges, Charity ,Stakeholder growth & development, History, Models etc.

Introduction : - The Concept of CSR is not new in India. It has found its existence since vedic times .Various teachings, values and the culture depicted through epics like Bhagwad Gita, Ramayana, Mahabharata along with Vedas, artha Shastras etc focus on the existence of concept of ethics in Indian value system .CSR expanded to include both economic and social interests. In the teaching of Vedas there are four Vedas. Rig- Veda, Yajur Veda, Sama veda and atharva Veda. The most prime Component of these Vedas is the understanding of concept of Universe. An attempt tp help achieve ones goals and objectives - ie. union of self (atman) and world (Brahma)

Upanishads forms the hard core sool of the individual, laying a path to connect individual self to the supreme power, the god, and rise over and above the desire and liking from the materialistic pleasure.

Bhagvad Gita establishing a sound base for spirituality and ethics, the Karma Yoga, Bhakti Yoga and The there Gunas (Sallwa, Rajas, Tamas) have a eminent implication in the context of ethical leadership, decision making and managemment, the area of concern where the concepts of CSR corporate Goverance and ethics are expected to be practiced. Ramayans it depicts the duties of relationships, portraying ideal character like the ideal father, ideal servant, ideal brother the ideal wife and the ideal king. Apart from this, the Ramayana also teaches how the temptation for lust can bring a powerful and well established man's dooms day.

Lord Gautam Buddha gave the world with four fundamental noble truths .They are.
1. Suffering exists
2- There is a cause of the suffering
3. Suffering can be eradicated
4. There is a means for eradication of that suffering

His Practice establishes the fact that every thing on earh is non - permanent and every thing on earth has an "anatta". Buddha also gave the world the eight foldpath to liberation from all suffering.

The new concept of ethics prevalent since the ancient times has now been termed as the corporate social responsibility" in the era of corporation and globalisation. Stake holder, the term includes customers, consumers governments, regulatory authorities, Suppliers, employees and shareholdrs. Stakeholders represent various segments of the society where in business is one of the component of society extracting resources and catering to the needs and demands of these groups. The corporates are the

explorers and extractors of resources from the society, environment and natures without giving anything in return.

CSR Defined :- The world Business Council for Sustainable Development Defines CSR as " The continuing commitment by business to behave ethically and contributes to economoic development while improving the quality of life of the work force and their families as well as of the local community and society at large".

Infosys chairman, Narayana Murthy, defines CSR as, "Social responsibility is to create maximum shareholder value working under the circumstance where it is fair to all its stake holders, workers, consumers the community Government and the environment."

The definition of CSR was discussed in the edition of wall street Journal 2005, "Big Issues" forum where B.W. Heineman, a senior Vice president for law and public affairs at general Electric co. described three elements of corporate social resposibility.

1. Strong, sustained economic performance.
2. Rigorous compliance with financial and legal roles.
3. Ethical and citizenship actions beyond formal requirement, which advances corporation's reputation and long term health.

History and Development of CSR Globally :- The histroy of CSR globally can be divided into two periods-

1. Before 1900 and.
2. from 1900 to present.

CSR frame work given below :-

Model	Focus	Champions
Ethical	Volontary commitment by companies to public welfare	M.K. Gandhi
Statist	State ownership and legal requirements determine corporate responsibility	Jawahar lal Nehru
Liberal	Corporate responsibilities limited to private owners shareholders.	Milton friedman

Ethical Model (1930-1950) :- The Aspect of this model is the promotion of trusteeship that was revived and are- interpreted by Gandhijis and to manage the business entity as a trust held in the interest of community. Many family owned businesses were motivated to reward back the society by socio economic development.

Statist Model (1950-1970) :- Under the the aegis of Jawahar Lal Nehru, this model came into being in the post independence era.. The era was driven by a mixed and socialist kind of economy, The important features of this model was that the state ownership and legal requirements decided the corporate responsibilities.

Liberal Model (1970-1990) :- The model was encapsulated by milton friedman. As per this model, corporate social responsibiliy is confined to its economic bottom line. This implies that it is sufficient for business to obey the law and generate wealth, which through taxation and private charitable choices can be directed to social ends.

Stakeholder Model (1990-Present) :- The Model came into existence during 1990s as a consequencee of realisation that with growing economic profits, bussinesses also have certain societal roles to fulfil. The model expects companies to perform according to "triple bottom line" approach. The business are also focusing on accountability and transparency through several mechanisms. CSR need to be understood within the context captured in the development oriented.

Stakeholder	Companies respond to the need of sakeholders custumers, employees, communities, etc.	R. Edward freeman

Objectives :–

(1) To develop and understand the concept of CSR.
(2) The under stand the policies governing CSR.
(3) To examine corporate social Responsibility Practices and its impact on Business.
(4) To provide information for folure research work on CSR.
(5) To determine the challeges in execution of corporate social Responsibility.

Research Methodology :- The Research paper is an attempt of exploratory research, based on the Secondary data sourced from journals, magazines, articles, news papers and media report. Keeping in view of the set objectives, this research design was adopted to have greater accuracy and in depth analysis of the research study.

Corporate social responsibility – opnions of various Indian corporates :-

- Dr. abdul kalam, former President of India (2012)- Sustainable development refers to mode of human development in which resource use aims to meet human needs while preserving the environment so that these needs can be meet not only present, but also for the generation to come.
- Azim premji, chairman of wipro Ltd. - Corporate social responsibility aims at fundamental social development. In Indian context, it means an attempt to realize the vision of just, humane and equitable society and where ever action, however small, is driven by this larger vision, that is real social action.
- Ratan J. Tata, chairman, Tata group - The developing world has two options. The first is to sit back and react when problem arises, The second is to act as a conscious citizen and rise above our vested interest for the sake of future generations ,so that the history does not records that we have deprived them of their livehood.
- Narayan Murthy, Infosys founder (2012) social responsibility is to create maximum share holder value working under the circumstances, where it is fair to all the stakeholders, workers, consumers, community, government and the environment.

Issues & Challenges :- Many companies think that corporate social responsibility issue for their business and customer satisfaction more important for them. They imagine that customer satisfaction is now only about price and service, but they fail to point out on important changes that are taking place worldwide that could blow the business out of the water. The change is named as social responsibility which is an opportunity for the business. Some of the drivers pushing business towards CSR include .

The Shrinking Role of Government :– In the past, governments have relied on legislation and regulation to deliver social and environmental objectives in the business sector. Shrinking government resources, coupled with a distrust of regulations, has led to the exploration of voluntary and non-regulatory intiatives instead.

Demands for Greater Disclosure :– There is a growing demand for corporate disclosure from stakeholders, including customeres, suppliers employees, communities, investors, and activist organizations.

Increased Customer Interest :- There is evidence that the ethical conduct of companies exerts a growing influence on the purchasing decisions of customers, In a recent survey by Environs International, more than one in five consumers reported having either rewarded or punished companies based on their precevied social performance.

Growing Investor pressure :– Investors are changing way they assess companies performance, and are making decisions based on criteria that include ethical concerns, The Social Investment Forum reports that in the Us in 1999, there was more than $2 trillion worth of assets invested in portfolios that used screens linked to the environment and social responsibility.

Competitive labour Markets :– Employees are increasingly looking beyond pay checks and benefits, and seeking out employers whose philosophies and operating practices match their own principles. In order to hire and retain skilled employees, companies are being forced to improve working conditions.

Supplier Relations :– As stakeholders are becoming incrasingly interested in busuness affairs, many companies are taking steps to that their partners conduct themselves in a socialy responsible manner. Some are introducing codes of conduct for their suppliers, to ensure that other companies policies or practices do not tarnish their reputation.

Challenges of CSR :- It is important for CSR strategies to become central to business strategy and part of the long- term planning process. stakeholders are questioning more CSR intiatives of the companies today. They are challenging the companies" decisions- making in this direction .In India the CSR managers face number of challenges in managing CSR activities.

Lack of community Participation In CSR Activities :– There is a lack of interest of the local communnity in participating and contributing to CSR activities of companies. This is largely attributable to the fact that there exists little or no knowledge about CSR within the local communities as on serious efforts have been made to spread awareness about CSR and instil confidence in the local communities about such intiatives.

Need To Build Local Capacities :– There is a need for capacity building of the local non – governmental Organizations as there is serious dearth of trained and efficient organizations that can effectively contribute to the ongoing CSR activities initiated by companies. This seriously compromises scaling up of CSR initiatives and subsequently limits the scope of such activities.

Issues of Transparency :- There is an expression by the companies that there exists lack of transparency on the part of the local implementing agencies as they do not make adequate efforts to disclose information on their programs, audit issues, impact assessment and utilization of funds.

Non – Availability of well Organized Non – Governmental Organization :– There is non – availability of well- organized nongovernmental organizations in remote and rural areas that can assess and identify real needs of the community and work along companies to ensure successful implemantation of CSR activities.

Visibillity Factor :– The Role of media in highlighting good cases of successful CSR initiatives is welcomed as it spreads good stories and sensitizes the local population about various ongoing CSR initiatives of companies.

Narrow perception towards CSR Initiatives :– Non- governmental organizations and Government agencies usually possess a narrow outlook towards the CSR initiatives of companies, often defining CSR initiatives more donor –driven than local in approach.

Non – Availability of Clear CSR Guidelines :– There are no clear cut statutory guidelines or policy directives to give a definitive direction to CSR initatives of companies. It is found that the scale of CSR initiatives of companies should depend upon their business size and profile.

Lack of Consensus On Implementing CSR Issues :– There is a lack of consensus amongst local agencies regarding CSR projects. This lack of consensus often results in duplication of activities

by corporate houses in areas of their intervention. This results in a competitive spirit between local implementing agencies rather than building collaborative approaches on issues. This factor limits company's abilities to undertake impact assessment of their initiatives from time to time.

The Relevance Of CSR Within An Organization :– It has also been found that to a growin degree companies that pay genuine attention to the principles of socially reponsible behaviour are also favoured by the public and preferred for their goods and services. This has given rise to the concept of CSR. Some of the positive outcomes that can arise when businesses adopt policy of social responsibility include :

Company benefits

- Improved financial Performance;
- Lower operating costs ;
- Enhanced brand image and reputation ;
- Increased sales and customer loyalty ;
- Greater productivity and quality ;
- More ability to attract and retain employees ;
- Reduced regulatory oversight ;
- Access to capital ;
- Workforce diversity ;
- Product safety and decreased liability ;

Benifits to the Community and the General Public

- Charitable contributions ;
- Employee volunteer programs :
- Corporate involvement in community education, employment and homelessness programs ;
- Product safety and quality.

Environmental Benefits

- Greater material recyclability :
- Better product durability and functionality ;
- Greater use of renewable resources ;

Conclusion :- Corporate social Responsibility to be successful and acceptable from the grass root levels to the tierorchical structures needs several act to be performed. Corporate social responsibility policy shoold function as a built – in, self regulating mechanism wheteby businesses would monitor and ensure their adhetence to law, ethical standards and international norms. companies have started to realise the importance of corporate social responsibility and initiating the steps toward it . It is found that there is a need for creation of awerness aboot CSR amongst the general public to make corporate social responsibility initiatives more effective.

This awareness generation can be taken up by various stake holders incloding the media to highlight the good work done by corporate houses in this area. This will bring about effective charges in the approach and attitude of the public towards corporate social responsibility initiatives undertaken by corporate houses. This effort will also motivate other corporate houses to join the leagus and play an effective role in addressing and livelihood opportunities for a large number of people in India through their innovative corporate social responsibility

References :-

1) Kotler, Philip and Nancy lec, Corporate social Responsibility : Doing the most good for your business, (2005)
2) Corporate social Responsibility activities by the aditya Birla group projects/overview.
3) Mohan A (2001) "Corporate Citizenship" Perpestives from India", Journal of corporate citizenship, spring pp 107-117.
4) Banerjee, P.K. (2003) " Corporate Governance of Business ethics in the 21st Century", ICFAI Journal of corporate Goverence, vol III No. 2
5) Arore, R.F. Richa, G.D. (2013) corporate social responsibility – Issuces and challenges in India – International Jouranl of Research in finance and Marketing. 3 (2)
6) Ahuja, v. (2014) corporate social Responsibility : issues of challenges in India, international Journal of Drganizational Behaviour & Management Perpectives, (4) 657-660.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

धूमिल और उनकी कविताओं में संवेदना

डॉ. सुनीता उपाध्याय
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, जी.एस. अर्थ एवं वाणिज्य महाविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)

कुछ लोगों का निर्माण परिस्थितियाँ करती है लेकिन कुछ विरले ऐसे भी होते हैं जो इन परिस्थितियों के जाल में न फँसकर खुद अपना अलग व्यक्तित्व निर्माण करते है। सुदामा पाण्डेय धूमिल ऐसे ही लोगों में से हैं जिन्होंने अपनी अलग पहचान बनायी। धूमिल का जन्म 9 नवम्बर 1936 में वाराणसी के पास खेवली गाँव में हुआ था। इनके पिता का नाम पंडित शिवनायक और माता का नाम श्रीमती रजवंती देवी था। धुमिल की प्ररंभिक शिक्षा गाँव में ही हुई। हाईस्कूल पास करने वाले गाव के पहले व्यक्ति थे। हाईस्कूल पास करने के बाद ये विज्ञान से इंटर करने के लिए बनारस आए लेकिन पारिवारिक समस्याओं के चलते शहर में पढाई के खर्चे वहन न कर पाने के कारण पढाई का क्रम यहीं से टूट गया। रोजगार के लिए धूमिल कलकत्ता चले गए। यहाँ पर लोहा और लकड़ी ढोने का काम किया पर मालिक से नहीं बन पाने के कारण वापस भी लौट आए। और उन्हौने स्वाध्याय से हिन्दो और अंग्रजी का ज्ञान अर्जित किया। 1957 में धुमिल ने वनारस की औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान में प्रवेश लिया और 1958 में विद्युत में डिप्लोमा प्रथम श्रेणी में, प्रथम स्थान प्राप्त कर पास किया। इसी संस्थान में 1958 में विद्युत अनुदेशक के पद पर नियुक्त हो गये और जीवन पर्यन्त इसी संस्था में विभिन्न स्थानों में कार्य करते रहे। धूमिल का जीवन संघर्षो से जूझता हुआ आगे बढ़ रहा था, जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण उनकी काव्य रचना में देखा जा सकता है। उनका प्रथम काव्य संग्रह 'संसद से सड़क तक' वष 1972 में प्रकाशित हुआ है, द्वितीय काव्य संग्रह 'कल सुनना मुझे' मरणोपरांत सन् 1977 में प्रकाशित हुआ है। उनका तीसरा काव्य संग्रह 'सुदामा पांडे का जनतंत्र' भो मरणोपरांत ही प्रकाशित हुआ। उन्हें मरणोपरांत 1979 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

धूमिल की कविताओं में आजादी के सपनों के मोहभंग की पीड़ा और आक्रोश को सबसे सशक्त अभिव्यक्ति मिलती है। व्यवस्था जिसने जनता को छला है, उसको आइना दिखाना मानों धूमिल की कविताओं का परम लक्ष्य है। देश की आजादी के पूर्व देश की जनता को जो सपने दिखाए गए थे वे आजादी मिलने के कुछ ही वर्षों में टूटकर बिखरने लगे। समस्याओं का समाधान जुटाने की बजाय जनता का ध्यान दूसरी ओर खींचने तथा झूठे वादे देकर जनता को गुमराह करने वाले नेता वर्ग पर कवि का यह आक्रोश सत्य प्रतीत होता है।

उसी लोक नायक का,बार–बार चुनता रहा,
जिसके पास हर शंका और हर सवाल का एक ही जबाव था,
यानी की कोट के बटन–होल में महकता हुआ एक फूल, गुलाब का
वह हमें विश्वशांति और पंचशील के सूत्र समझाता रहा।

सन् 1960 के बाद की हिन्दी कविता में जिस मोहभंग की शुरूआत हुई थी, धूमिल उसकी अभिव्यक्ति करन वाले अत्यंत प्रभावशाली कवि है। उनकी कविता में परंपरा सभ्यता, सुरूचि, शालीनता और भद्रता का विरोध है, क्योंकि इन सबकी आड में जो आक्रोश पलता है उसे धूमिल पहचानते है इस विरोध के कारण उनकी कविता में एक प्रकार की आक्रामकता मिलती है। किन्तु उससे उनकी कविता की प्रभावशीलता बढ़ती है। धूमिल अपनी कविता के माध्यम से एक ऐसी काव्य भाषा विकसित करते हैं जो नई कविता के दौर की काव्य भाषा की रूमानियत, अतिशय कल्पनाशीलता और जटिल बिंब–धर्मिता से मुक्त है। वे किसी के सुर में सुर मिलाने के कायल न थे। उन्होंने तमाम ठगे हुए लोगों को जुबान दी। धूमिल का कवि हृदय, लोकमानस की तकलीफों व दर्द को दूर करने के लिए प्रयासरत है, इसलिए वे कविता को हथियार के रूप में प्रयोग करते है। धूमिल उस पूंजीवादी एवं सामन्तवादी व्यवस्था के विरोध में है जो स्वाधीनता के बाद भी आमजनता

को उसके अधिकार से वंचित किए है लेकिन गरीब इस व्यवस्था की चालाकी को समझ नहीं पाता। इसलिए धूमिल ने लिखा है –

लोगों ने सुविधा के लिए। बनिया सच्चाई है।

यह मंहगाई है जिसने बाजार को चकमा दिया है।

धूमिल की काव्य कला, संवेदना तथा सामाजिक पक्षधरता को समझने के लिए उनकी कविता ''पटकथा'' बहुत आवश्यक है। यह कविता हिन्दी साहित्य की लम्बी कविताओं में से एक है। नेमीचन्द्र जैन ने पटकथा पर लिखा है कि ''देश को और अपनी ऐसी बेरहम तस्वीर इतनी बेबाकी से उतार सकना एक समर्थ सर्जनात्मक प्रतिभा द्वारा ही संभव है और उचित ही यह कविता धूमिल को समकालीन कवियों में एक अलग खास और उच्च दजा प्राप्त है।'' धूमिल ने मात्र विषय के स्तर पर ही नहीं बल्कि भाषा और शैली के स्तर पर भो अपनी अलग पहचान बनाई है। भाषा के स्तर पर उन्होंने सपाटबयानी एवं भदेशपन को प्रमुखता दी। उनकी भाषा में आकामकता, तीखापन एवं व्यंग्य है साथ ही ग्रामीण जीवन की सरलता भी है। धूमिल के बाद के अनेक कवियों ने इस शैली को अपनाया। धूमिल की कविता के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं।

समझदार लोग/चीजों को/घटी हुई दरों में
कुतते हैं
और कहते है सौन्दर्य में स्वाद का मेल/जब नहीं
मिलता
कुत्ते महुए के फूल पर मूतते है।
जो बीमार हैं। उसे रोशनी में
नंगा होने का पूरा अधिकार है।

धूमिल की कविताओं में सत्तागत आकोश की ध्वनि मुखारित होती है। अवसरवादी नेताओं ने सत्ता हासिल कर ऐसी धांधली मचायी कि आम जनता हतप्रभ हो देखती रह गयी। देश की और सामान्य जन–जीवन की दशा–दिशा मं कोई खास परिवर्तन नहीं आया। नेताओं की स्वार्थवृत्ति, मुखौटेबाजी, अवसरवादिता, नारेबाजी, भ्रष्टाचार जैसी विसंगतियों ने धूमिल के दिलो–दिमाग को झकझोर दिया। कवि के मन का आकोश और झुंझलाहट कविता में तीखी और धारदार अभिव्यक्ति बनकर उभर आयी है। इस लोकतंत्र से धूमिल उकता गए से लगते है। वे लिखते हैं –

मैंने इंतजार किया – अब कोई बच्चा
भूखा रहकर स्कूल नहीं जायेगा
अब कोई छत बारिश में नहीं टपकेगी।
अब कोई आदमी कपड़ों की लाचारी में
अपना नंगा चेहरा नहीं पहनेगा
अब कोई दवा के अभाव में घुट घुटकर नहीं
मरेगा
अब कोई किसी की रोटी नहीं छीनेगा
कोई किसी को नंगा नहीं करेगा अब यह जमीन
अपनी है
आसमान अपना है जनतंत्र, त्याग, स्वतंत्रता .....

धूमिल द्वारा लिखित 'रोटी और संसद' छोटी कविता है पर इसकी चर्चा हमेशा होती है। प्रजातांत्रिक व्यवस्था में संसद की मौनता, आँखें होकर भी अंधा होना बहुत बड़ी बिड़म्बना है। काम करने वाले मेहनतकश का पसीना पानी सा बहाया जा रहा है, उसका खून चूसा जा रहा है। पेट भरने के बाद रोटी से खेलता अमीर कवि ने हमेशा देखा और दूसरी तरफ से पीडित घरों का आकोश भो। अतः धूमिल का मन विद्रोह कर उठता है –

एक आदमी रोटी बेलता है
एक आदमी रोटी खाता है
एक तीसरा आदमी भी है
जो न रोटी बेलता है न रोटी खाता है
वह सिर्फ रोटी से खेलता है मैं पूछता हूँ–
यह तीसरा आदमी कौन है ?
मेरे देश की संसद मौन है।

स्वार्थ और सत्तालोलुप नेता वर्ग जनता को देश के नागरिक न मानकर उस सिर्फ वोट के रूप में देखता है। धूमिल ने नेताओं के इस पाखंड को बेनकाब कर दिया है –

हाँ यह सही है कि इन दिनों मंत्री जब प्रजा के
सामने आता है

तो पहले से कुछ ज्यादा मुस्कुराता है नये–नये वादे करता है

आजादी के बाद की कविता में देश, लोकतंत्र और आम आदमी की पीड़ा को संसद के गलियारों तक मुखर करने वाले धूमिल ने भुखमरी, मंहगाई और बेरोजगारी पर किसी भविष्यदृष्टा की तरह कलम चलाई। बारीकी से देखें तो धूमिल की कल की पंक्तियाँ आज का सच उकेरती मिलती हैं। कविता के बारे में धूमिल का विचार है –

एक सही कविता पहले

एक सार्थक वक्तव्य होती है/जीवन में कविता की क्या अहमियत है –

कविता भाषा में आदमी होने की तमीज है।

भय, भूख, अकाल सत्तालोलुपता, अकर्मण्यता और अन्तहीन भटकाव को रेखांकित करती धूमिल की कविताएँ सत्ता के गलियारे का आइना दिखाने, का काम करती है। जिन पंक्तियों को धूमिल ने आज से 40 वर्ष पहले ही लिख दिया था, आज वही पंक्तियाँ पूरे समाज के लिए ज्वलंत प्रश्न के रूप में हैं। यदि ध्यान पूर्वक विचार किया जाए तो कहना होगा कि लोकतंत्र की विसंगतियों और बिडंबनाओं का पूरा दस्तावेज ही है धूमिल की कविताएं/बेकारी, गरीबी, बढ़ती जनसंख्या के बारे में लिखते हुए वे कहते हैं –

मैंने उसका हाथ पकड़ते हुए कहा –

बच्चे तो बेकारी के दिनों की बरकत है इससे व भी सहमत है

जो हमारी हालत पर तरस खाकर, खाने के लिए रसद देते हैं।

हाथी के दांत खाने को और दिखाने के और कहावत को सिद्ध करने वाले नेता आजादी मिलने पर समाजवाद की दुहाई देते थे, लेकिन वही लोग उसका रास्ता रोके हुए थे। समाजवाद के नाम पर उन दिनों काफी शोरगुल हुआ, लेकिन आखिरकार समाजवाद को दफना दिया गया। इन स्थिति को धूमिल ने व्यंग्य वाण की तीक्ष्ण नोंक से अनावृत्त कर दिया है –

समाजवाद उनकी जुबान पर अपनी सुरक्षा का एक आधुनिक मुहावरा है

मगर मैं जानता हूँ कि मेरे देश का समाजवाद माल गोदाम में लटकती हुई

उन बाल्टियों की तरह है जिस पर आग लिखा है आर उनमें बालू और पानी भरा है।

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है। लेकिन हमारे स्वार्थी नेताओं ने ऐसी धांधली मचायी है कि अब धीरें–धीरे जनता का विश्वास जनतंत्र से उठता जा रहा है। जनता के विकास के नाम पर नता–वर्ग अपना ही विकास कर रहा है। इस अराजकता पर धूमिल ने भरपूर फटकार लगाई है –

ऐसा जनतंत्र है जिसमें जिंदा रहने के लिए

घोड़े और घास को एक जैसी छूट है

व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई ने एक जगह लिखा है कि 'इस देश के बुद्धिजीवी सब शेर हैं, पर वे सियारों की बारात में बैंड बजाते हैं।'' इस देश के बुद्धिजीवी लोग भी इस कदर भ्रष्ट और स्वार्थी हो गये हैं कि अपने लाभ के लिए वे अपना मान–सम्मान, ईमानदारी, जमीर सब कुछ दांव पर लगा देते है। भ्रष्ट और लंपट नेताओं की चापलूसी करन वाले और ऊपर की आमदनी की फिराक में रहने वाले टुच्चे बुद्धिजीवियों की धूमिल ने बखिया उधेड़ दी है –

वे सब के सब तिजोरियों के दुभाषिये है वे वकील है वैज्ञानिक है

लेखक है। कवि है। कलाकार है। यानी कि कानन की भाषा बोलता हुआ

मृत्यु के कुछ समय पूर्व उन्हाने लिखा था – लोहे का स्वाद लोहार से मत पूछो

उस घोडे से पूछो जिसके मुहं में लगाम है।

इस प्रकार निष्कर्षः कहा जा सकता है कि धूमिल भावनाओं के स्थान पर गहरे विचार के कवि हैं। यथार्थ की गहराई से टटोल के कारण उनकी कविताएं अर्थ गुम्फित और कहीं–कहीं वक्र भी हो गयी है जिस पर पाठकों को गहन पैठ

बनाने के लिए समय – सापेक्ष उनके मन में व्यवस्था के प्रति हिलोरे लेती अराजकता, उनके जीवन के संघर्ष की जटिलता और उनकी रचना – प्रकिया को बारीकी से समझा जा सकता है। धूमिल इस दुनिया को खास तौर से इस देश को सम्पन्न, खुशहाल और शोषण मुक्त देखना चाहते है इसलिए उनका आक्राश अत्यधिक आक्रामक हो उठता है। कहा जा सकता है कि उनकी यह आक्रामक अराजकता ही उनकी कविता की शक्ति है। दरअसल उनकी कविता नये विम्ब विधान व नए संदर्भो में जनता के संघर्ष के स्वर में स्वर मिलाती है। हिन्दी कविता को नए तेवर देने वाले इस जनकवि का योगदान चिरस्तरणीय है।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. धूमिल, कल सुनना मुझे, युगबोध प्रकाशन एस 2/363,सिकरौल, वाराणसी कैंट, 1977
2. धूमिल, संसद से सड़क तक, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि. 1–बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली, 2009
3. पाण्डेय, रत्नशंकर, धूमिल–सुदामा पाण्डेय का प्रजातंत्र, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली 2001
4. मिश्र, शिवकुमार, धूमिल की श्रेष्ठ कविताएं, लोकभारती प्रकाशन पहली मंजिल दरबारी बिल्डिंग 2009
5. विश्वकर्मा, डॉ. अनिल कुमार, वाग्प्रवाह, सी.ओ. कॉलोनी उ.प्र. 2010
6. सिंह डॉ. शुकदेव, धूमिल की कविताएं, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी 2003

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

मध्यप्रदेश में सोयाबीन उत्पादन की प्रवृत्ति एवं विपणन

डॉ. वनश्री मेहता
अतिथि, व्याख्याता डी. एन. जैन महाविद्यालय जबलपुर

शोध –सार :– प्रस्तुत शोध में मध्यप्रदेश में सोयाबीन उत्पादन वृद्धि में क्षेत्राच्छादन, उत्पदिता एवं विपणन के योगदान का अध्ययन किया गया। उक्त अध्ययन हेतु मुख्यतः द्वितीयक समंकों का चयन किया गया। सोयाबीन के क्षेत्रफल, उत्पादन एवं उत्पादिता हेतु वर्ष 2000–01 से 2012–13 तक समंको का संकलन किया गया। मध्यप्रदेश के लगभग 35 जिलों में सोयाबीन की खेती की जा रही है, 2012–13 के आंकड़ों के अनुसार जिनमें से 22 जिलों में सोयाबीन का लगभग 90 प्रतिशत उत्पादन किया जा रहा है। प्रदेश के प्रमुख सोयाबीन उत्पादक जिलों में उज्जैन, शाजापुर, देवास, सोहोर, सागर, धार, मंदसौर, विदिशा, बैतूल, छिन्दवाड़ा आदि महत्वपूर्ण है। वर्ष 2012–13 में प्रदेश में 6.03 मिलियन हैक्टेयर पर 7.80 मिलियन टन सोयाबीन का उत्पादन हुआ तथा प्रति हैक्टेयर उत्पादिता 1293 किग्रा रही। प्रदेश में देश का लगभग 53ः सोयाबीन उत्पादन हो रहा है। मध्यप्रदेश सोयाबीन के क्षेत्रफल एवं उत्पादन में तो देश में प्रथम स्थान पर है साथ ही इसके प्रसंस्करण एवं विपणन की प्रमुख इकाईयों एवं माध्यमों में भी आगे है। प्रदेश में सोयाबीन के विपणन का प्रमुख माध्यम कृषि उपज मण्डियॉ है तथापि विगत् वर्षों मं इसमें कमी दिखाई दे रही है। प्रदेश में सोयाबीन के उत्पादन वृद्धि हेतु कई प्रतिष्ठान अनुसंधान कार्य में लगे हुये हैं जिससे उन्नत किस्म की सोयाबीन का उत्पादन किया जा सके तथापि सोयाबीन की प्रति हैक्टेयर उत्पादिता वृद्धि में अभी और अधिक प्रयास किये जाने आवश्यक है।

प्रस्तावना :– मध्यप्रदेश की प्रमुख तिलहनी फसलों में सोयाबीन, मूंगफली, राई–सरसों, अलसी, सूर्यमुखी, नाइजर एवं अरण्डी आदि है, जिसमें सोयाबीन प्रथम स्थान पर है। सोयाबीन उत्पादन के मामले में आठवें दशक से ही मध्यप्रदेश का नाम सबसे अग्रणी है आज भी इसके उत्पादन के अतिरिक्त प्रसंस्करण और विपणन में भी पूरे देश में मध्यप्रदेश प्रथम स्थान पर है। इसी के फलस्वरूप मध्यप्रदेश को ''सोयाबीन राज्य'' घोषित किया गया है। सोयाबीन सर्वप्रथम उत्तर भारत एवं मध्यप्रदेश में ही उत्पादित किया गया। प्रदेश में प्रोटीन से संपन्न सोयाबीन के उत्पादन और इसके बने उत्पादों की मात्रा में निरंतर वृद्धि हो रही है। सोयाबीन के पीले बीजों ने इसकी पैदावार में क्रांति ला दी है। खेती करने के नये तरीकों के इस्तेमाल के फलस्वरूप पिछले 10–15 वर्षों में सोयाबीन की उपज में लगातार वृद्धि दिखाई दे रही है। खाद्य तेलों के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने की दृष्टि से सोयाबीन के तेल की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। देश में प्रतिवर्ष लगभग 10–15 लाख टन सोयाबीन तेल का उत्पादन होता है, मध्यप्रदेश इस मामले में अग्रणी है। यहॉ सोयाबीन से खाद्य तेल निकालने की 60 से अधिक इकाईयॉ हैं। इनमें सोयाबीन का आटा भी तैयार किया जाता है। अपने विशिष्ट गुणों के कारण सोयाबीन की मांग तेजी से बढ़ रही है। सोयाबीन ही एक मात्र ऐसी फसल है जो दलहन एवं तिलहन दोनों प्रकार से जानी जाती है। सोयाबीन के सोया पेय, सोया तेल, सोया दूध, सोया आटा जैसे उत्पाद भी विभिन्न ब्राण्ड के नाम से बाजार में आ गये हैं, लेकिन प्रचुर प्रोटीन के बावजूद इन्हें अपने दैनिक आहार में शामिल करने में अभी भी अधिसंख्य लोगों ने रूचि नहीं दिखाई है जिस कारण सोयाबीन को दलहन के रूप में विशेष पसंद नहीं किया जाता तथापि वर्तमान में सोयाबीन के महत्व को लोग समझने लगे हैं तथा इसका उपयोग प्रतिदिन बढ़ रहा है।

मध्यप्रदेश में सोयाबीन का उत्पादन का एक प्रमुख कारण तत्कालीन समय में किसानों द्वारा रबी मौसम (अक्टू से मार्च) में की जाने वाली खेती तथा खरीफ मौसम में खेतों को खाली छोड़ दिया जाना रहा। प्रदेश के किसान खरीफ मौसम में खेतों को खाली छोड़ देते थे तथा खरीफ की जमा नमी से रबी मौसम में खेती की जाती थी। किसानों ने जब सोयाबीन को खरीफ मौसम में

लगाना प्रारंभ किया तो इस फसल के उत्पादन से रबी की द्वितीय फसलों में कोई खराब प्रभाव नहीं पड़ा। प्रदेश की जलवायु सोयाबीन के अनुकूल होने के कारण पूर्व में किसानों द्वारा कम उन्नतशील एवं देर से पकने वाली सोयाबीन की खेती प्रारंभ की गई। वर्ष 1989–90 में भारत सरकार के विशेष प्रयासों के उपरांत उन्नत किस्म की जल्दी पकने वाली (90 दिन) सोयाबीन फसल के उत्पादन में वृद्धि हुई। उन्नत किस्म की पैदावार से सोयाबीन की उत्पादकता में वृद्धि होने लगी। जिससे किसानों का रूझान इस फसल की ओर बढ़ने लगा जिससे छोटे और मझोले किसान भी सोयाबीन की कृषि की ओर अग्रसर होने लगा। शासन द्वारा सोयाबीन की खेती को बढ़ावा देने के लिये उपयुक्त बीज, खाद, कल्चर, कृषि संयत्र एवं पौध संरक्षण की भी व्यापक व्यवस्था सुनिश्चित की जाती है। मध्यप्रदेश में सोयाबीन की सफलता को देखते हुये भारत शासन ने राष्ट्रीय सोयाबीन अनुसंधान केन्द्र (National Research Centre for Soybean) की स्थापना की है, जिसका मुख्यालय इन्दौर में है। यह केन्द्र प्रदेश में सोयाबीन के अनुसंधान में सक्रिय सहयोग देता है। इसके अतिरिक्त जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय एवं अन्य कृषि महाविद्यालयों द्वारा भी सोयाबीन पर अनुसंधान कार्य किया जा रहा है। भारत से निर्यात होने वाले सोयाबीन उत्पादों में सोया खली का बहुत बड़ा स्थान है। भारत विश्व के लगभग 40 देशों में सोया खली का निर्यात करता है। इस परिप्रेक्ष्य में मध्यप्रदेश की अग्रणी संस्था सोयाबीन प्रोसेसर्स ऐसोसियेशन इन्दौर (सोपा) महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह कर रहा है, यहॉ से बहुत बड़ी मात्रा में खली का निर्यात किया जा रहा है। मध्यप्रदेश तथा भारत सरकार प्रोटीन समृद्ध सोया खली के अन्य उत्पादन तैयार कर निर्यात हेतु प्रयासरत है।

शोध प्रविधि :– प्रस्तुत शोध कार्य हेतु महत्वपूर्ण तिलहनी फसल सोयाबीन के उत्पादन एवं विपणन हेतु मध्यप्रदेश का चयन किया गया है। शोध का प्रमुख उद्देश्य मध्यप्रदेश में सोयाबीन की वर्तमान स्थिति एवं भविष्य की संभावनाओं का पता लगाना है। इस बाबत् सोयाबीन के क्षेत्राच्छादन, उत्पादन, उत्पादिता, विपणन की प्रवृत्ति एवं उच्चवचनों का अध्ययन किया गया तथा उक्त अध्ययन हेतु मुख्यतः द्वितीयक समंकों का चयन किया गया। सोयाबीन के क्षेत्रफल, उत्पादन, उत्पादिता एवं मण्डियों में सोयाबीन की आवक हेतु वर्ष 2000–01 से 2012–13 तक समंको का संकलन किया गया। द्वितीयक समंकों को समय–समय पर भारत शासन, राज्य शासन, जिला अथवा विकासखण्डवार, पत्र–पत्रिकाओं, समाचार पत्रों, इन्टरनेट आदि में प्रकाशित सामग्री से संकलित किया गया है। विभिन्न माध्यमों से सूचनाएँ, जानकारियॉ एवं समंक प्राप्त एवं एकत्रित करने के पश्चात् उनका तालिका द्वारा प्रस्तुतीकरण एवं सांख्यिकीय एवं बीजगणितोय प्रविधियों की सहायता से विश्लेषण किया गया तथा मध्यप्रदेश में सोयाबीन के उत्पादन, संग्रहण एवं विपणन की वृद्धि का अनुपात का पता लगाया गया।

सोयाबीन के क्षेत्र एवं उत्पादन की प्रवृत्ति का विश्लेषण :– वर्तमान में सोयाबीन मध्यप्रदेश के किसानों की खरीफ मौसम में बोये जाने वाली प्रमुख फसल है। भारत मे कुल उत्पादित सोयाबीन का आधे से अधिक उत्पादन अकेले मध्यप्रदेश के किसानों की खरीफ मौसम में बोये जाने वाली प्रमुख फसल है। यहॉ की जलवायु सोयाबीन उत्पादन के लिये सर्वथा अनुकूल है। सोयाबीन की फसल के बारे मे कृषको को जागरूक करने का श्रेय मध्यप्रदेश शासन को भी जाता है जिस कारण किसान जागरूक हो रहे हैं तथा किसानों के रूझान, उत्साह एवं सतत् प्रयास के कारण भारत दुनिया में सोयाबीन उत्पादन में पॉचवें स्थान पर है। देश के उत्पादन का लगभग 53 प्रतिशत उत्पादन मध्यप्रदेश मे होता है। वर्ष 2000–01 में भारत मे कुल 6420 हजार हैक्टेयर क्षेत्रफल पर 5280 हजार टन सोयाबीन उत्पादित किया गया जिसमें मध्यप्रदेश में 4475 हजार हैक्टेयर भूमि पर 3431 हजार टन उत्पादन हुआ अर्थात् कुल उत्पादन का 65% मध्यप्रदेश में उत्पादित किया गया जबकि वर्ष 2012–13 में भारत 10840 हजार हैक्टेयर में 14670 हजार टन सोयाबीन उत्पादित किया गया। जिसमें से 6030 हजार हैक्टेयर पर 7800 हजार टन अर्थात् लगभग 53% उत्पादन प्रदेश में हुआ। वर्ष 2000–01 से 2012–13 तक भारत एवं मध्यप्रदेश में सोयाबीन का क्षेत्रफल एवं उत्पादन का अध्ययन करें तो पता लगता है कि विगत् वर्षों में प्रदेश के उत्पादन में

कुछ उच्चावचनों के बाद भी मध्यप्रदेश प्रथम स्थान पर बना हुआ है। जहॉ तक प्रति हैक्टेयर उत्पादिता का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि सत्र 2000–01 मे मात्र 767 किग्रा प्रति हैक्टयर थी जो 2012–13 में बढकर 1293 किग्रा प्रति हैक्टयर हो गई तथा देश में उत्पादित सोयाबीन के लगभग बराबर है। जिसे तालिका क्रमांक 1 से समझा जा सकता है।

यदि मध्यप्रदेश का अन्य प्रदेशों से तुलनात्मक अध्ययन किया जाये तो पता लगता है कि वर्ष 2012–13 में भारत में कुल 10.84 मिलियन हैक्टयर पर सोयाबीन बोया तथा जिसमें मध्यप्रदेश में 55.64%, महाराष्ट्र में 29-69% एवं राजस्थान में 9.59% सोयाबीन का क्षेत्र रहा तथा उत्पादन के आंकड़ों पर ध्यान दें तो देश क कुल उत्पादन 14.67 मिलियन टन में मध्यप्रदेश में 53.18%, महाराष्ट्र में 31.85% एवं राजस्थान में 10.01% उत्पादन हुआ। (तालिका क्र.2) अर्थात देश के कुल उत्पादन का लगभग 95% उत्पादन इन तीन राज्यों में हो रहा है जिसमें मध्यप्रदेश प्रथम स्थान पर है।

मध्यप्रदेश के विभिन्न जिलों में सोयाबीन के क्षेत्रफल, उत्पादन एवं उत्पादिता का विवरण तालिका क्रमांक 3 में दिया गया है। तालिका के अध्ययन से ज्ञात होता है सोयाबीन के क्षेत्राच्छादन एवं उत्पादन में उज्जैन जिला प्रथम स्थान पर है जहॉ 455.73 हजार है. पर 599.93 हजार टन उत्पादन हुआ जो प्रदेश के कुल क्षेत्र का 7.82% तथा कुल उत्पादन का 8.31% है। उपरोक्त तालिका में मध्यप्रदेश में सोयाबीन उत्पादन के प्रमुख जिले उज्जैन, शाजापुर, देवास, सीहोर, सागर, धार, मंदसौर, विदिशा, बैतूल, छिन्दवाड़ा जिले प्रमुख भूमिका निभा रहे है जिनमें प्रदेश के कुल उत्पादन का लगभग 60% उत्पादन हो रहा है। जहॉ तक प्रति हैक्टेयर उत्पादिता का अध्ययन किया जाये तो सर्वाधिक उत्पादित छिन्दवाड़ा जिले में देखी गई है जहॉ 154 हजार है. पर 312 हजार टन सोयाबीन उत्पादित किया गया तथा उत्पादिता 2027.99 किग्रा/है. रही।

तालिका क्रमांक 1. भारत एवं मध्यप्रदेश में सोयाबीन का क्षेत्रफल/उत्पादन/उत्पादिता

वर्ष	भारत			मध्यप्रदेश			देश के उत्पादन में म.प्र. का प्रतिशत
	क्षेत्रफल 000 हैक्टे.	उत्पादन 000 हैक्टे.	उत्पादिता किग्रा/हैक्टे	क्षेत्रफल 000 हैक्टे.	उत्पादन 000 हैक्टे.	उत्पादिता किग्रा/हैक्टे	
2000-01	6420	5280	822	4475	3431	767	65%
2001-02	6340	5960	940	4450	3735	840	62.7%
2002-03	6110	4650	762	4191	2674	638	57.5%
2003-04	6560	7820	1193	4212	4653	1106	59.5%
2004-05	7570	6870	908	4594	3760	819	54.7%
2005-06	7710	8270	1073	4590	4814	1050	58.2%

2006-07	8320	8850	1063	4705	4789	1018	54.1%
2007-08	8880	10970	1235	5202	5368	1033	48.9%
2008-09	9510	9900	1040	5295	5924	1120	59.8%
2009-10	9730	9966	1026	5454	6428	1180	64.4%
2010-11	9600	12740	1327	5560	6670	1201	52.35%
2011-12	10110	12210	1208	5786	6497	1124	53.21%
2012-13	10840	14670	1353	6030	7800	1293	53.16%

Source ."Area production and yield of soybean in major producing state" –Agriculture Statistics at a glance 2014 Govt. of India, Ministry of Agriculture, Directorate of Economics and Statistics, page No. 112-13

तालिका क्रमांक 2. भारत में प्रादेशिक स्तर पर सोयाबीन की स्थिति (2012–13)

प्रदेश	क्षेत्रफल (मि.है)	भारत में प्रतिशत	उत्पादन (मि. टन)	भारत में प्रतिशत	उत्पादिता (किग्रा/हैक्ट)
मध्यप्रदेश	6.03	55.64	7.80	53.18	1293
महाराष्ट्र	3.22	29.69	4.67	31.85	1451
राजस्थान	1.04	9.59	1.47	10.01	1412
आंध्रप्रदेश	0.16	1.47	0.29	1.97	1818
कर्नाटक	0.17	1.57	0.18	1.21	1047
अन्य	0.22	2.04	0.26	1.77	1182
कुल भारत	**10.84**	**100**	**14.67**	**100**	**1353**

Source Agriculture Statistics at a glance 2014 Govt. of India, Ministry of Agriculture, Directorate of Economics and Statistics, page No. 114

तालिका क्रमांक 3. मध्यप्रदेश के प्रमुख सोयाबीन उत्पादक जिले (2012–13)

जिले	क्षेत्रफल (मि.है)	कुल का प्रतिशत	उत्पादन (मि. टन)	कुल का प्रतिशत	उत्पादिता (किग्रा/हैक्ट)
उज्जैन	455.73	7.82	599.93	8.31	1315.46'

शाजापुर	358.37	6.15	445.63	6.17	1242.24
देवास	328.80	5.64	435.23	6.03	1318.42
सागर	318.93	5.47	387.17	5.36	1214.12
राजगढ	312.77	5.37	327.70	4.54	1045.29
सीहोर	294.13	5.05	425.27	5.89	1453.40
धार	274.40	4.71	381.93	5.29	1390.41
मंदसौर	269.93	4.63	374.10	5.18	1377.81
विदिशा	260.40	4.47	328.20	4.55	1267.92
इंदौर	225.90	3.88	262.33	3.63	1159.05
बैतूल	223.97	3.84	331.63	4.59	1470.14
होशंगाबाद	220.37	3.78	218.67	3.03	995.85
गुना	219.83	3.77	275.87	3.82	1253.90
रतलाम	217.37	3.73	266.23	3.69	1218.45
हरदा	176.83	3.03	263.17	3.65	1493.08
खण्डवा	172.37	2.96	123.67	1.71	713.52
रायसेन	171.77	2.95	155.40	2.15	915.05
छिन्दवाड़ा	154.00	2.64	312.20	4.32	2027.99
शिवपुरी	150.30	2.58	148.47	2.06	992.62
नीमच	123.00	2.11	150.13	2.08	1217.8
सिवनी	120.43	2.07	135.47	1.88	1125.87
भोपाल	108.33	1.86	146.63	2.03	1352.84
अन्य जिले	669.90	11.49	723.54	10.02	1080.07
मध्यप्रदेश	**5827.83**	**100**	**7218.57**	**100**	**1235.56**

मध्यप्रदेश में सोयाबीन का विपणन :– मध्यप्रदेश सोयाबीन के क्षेत्रफल एवं उत्पादन में तो देश में प्रथम स्थान पर है साथ ही इसके प्रसंस्करण एवं विपणन की प्रमुख इकाईयों एवं माध्यमों में भी आगे है। प्रदेश में सोयाबीन के विपणन का प्रमुख माध्यम कृषि उपज मण्डियॉ है। मध्यप्रदेश में संभाग एवं जिला स्तर पर विभिन्न कृषि उपज मण्डियॉ सोयाबीन के विपणन कार्य में संलग्न है, वर्ष 2000–01 से 2012–13 तक पदेश की कृषि उपज मण्डियों में सोयाबीन की आवक का विवरण तालिका क्रमांक 4 में दर्शाई गई है।

तालिका के विगत 13 वर्षों के आंकड़ों के अध्ययन से ज्ञात हुआ कि मध्यप्रदेश की कृषि उपज मण्डियों में सोयाबीन की वार्षिक आवक में कुछ उच्चावचनों के साथ वृद्धि दर्ज की गई। वर्ष 2000–01 में जहॉ कुल वार्षिक आवक 3195348 मि.टन थी वह 2012–13 में बढ़कर 4353513 मि. टन. हो गई अर्थात् इसमें आधार वर्ष (2000–01) की तुलना में 136% की वृद्धि हुई। विगत् दशक में सोयाबीन की कुल आवक का ओसत 4069459 मि.टन रहा। मध्यप्रदेश में सोयाबीन के उत्पादन में आवक के प्रतिशत तालिका क्रमांक 5 में दर्शाया गया है।

तालिका क्र. 5 का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ प्रदेश की मण्डियों में उत्पादन का औसत 79% सोयाबीन की आवक है अर्थात् प्रदेश में सोयाबीन के विपणन में कृषि उपज मण्डियॉ प्रमुख माध्यम है। तथापि वर्ष 2000–01 में जहॉ उत्पादन की 93% आवक थी वह 2012–13 में घटकर 56% रह गई अर्थात् विगत् वर्षों में मण्डियों में आवक तुलनात्मक रूप से घटी है। प्रदेश में कई किसान सीधे प्रसंस्करण मिलों को भी सोयाबीन का सीधे विक्रय कर देते हैं। प्रदेश में लगभग 60–65 तेल प्रसंस्करण मिले तथा सोपा, ऑइल फैड, कृषि विश्वविद्यालय आदि संस्थान सोयाबीन के अनुसंधान एवं प्रसंस्करण तकनीकों में वृद्धि का कार्य कर रही हैं तथा बची हुई खली का निर्यात किया जाता है। ये संस्थायें मुख्यतः सोयाबीन से तेल निकालने का कार्य करती है तथा कुछ प्रसंस्करण यूनिट से तेल के अतिरिक्त सोयाबीन के अन्य उत्पाद यथा सोया आटा, नगट्स, बड़ी आदि भी बनाई जा रही है। इसके अतिरिक्त मध्यप्रदेश राज्य बीज निगम द्वारा सोयाबीन की उन्नत पैदावार हेतु बीजों के उत्पादन एवं प्रसंस्करण का कार्य किया जा रहा है तथा किसानों को उन्नत बीज उपलब्ध कराने हेतु प्रयासरत् है।

तालिका क्रमांक 4. मध्यप्रदेश की कृषि उपज मण्डियों में सोयाबीन की आवक

वर्ष	आवक (मि.टन)	आधार वर्ष की तुलना में प्रतिशत
2000-01	3195348	100%
2001-02	3525434	110%
2002-03	2337704	73%
2003-04	3358398	105%
2004-05	2492332	78%
2005-06	4169769	130%
2006-07	4695896	147%
2007-08	5123623	160%
2008-09	3928981	123%
2009-10	4352980	136%
2010-11	6492897	203%
2011-12	4876091	153%
2012-13	4353513	136%

औसत आवक	**4069459**

स्त्रोत : म.प्र. विपणन बोर्ड की विभिन्न मण्डियों एवं मण्डी बोर्ड की वेवसाईट mpmandiboard.gov.in

तालिका क्रमांक 5. मध्यप्रदेश में सोयाबीन के उत्पादन एवं कृषि उपज मण्डियों की आवक

वर्ष	उत्पादन (हजार टन में)	आवक (हजार टन में)	आवक का उत्पादन में प्रतिशत
2000-01	3431	3195	93%
2001-02	3735	3525	94%
2002-03	2674	2337	87%
2003-04	4653	3358	72%
2004-05	3760	2492	66%
2005-06	4814	4169	87%
2006-07	4789	4695	98%
2007-08	5368	5123	95%
2008-09	5924	3928	66%
2009-10	6428	4352	68%
2010-11	6670	6493	97%
2011-12	6497	4876	75%
2012-13	7800	4353	56%
औसत आवक	**5119**	**4069**	79%

प्रदेश में सोयाबीन की उन्नत किस्मों की पैदवार हेतु मध्यप्रदेश राज्य बीज एवं विकास निगम द्वारा प्रमाणित बीजों का उत्पादन किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त सोयाबीन के प्रसंस्करण हेतु प्रदेश में कई प्रसंस्करण इकाईयॉ कार्यरत् है जहॉ प्रदेश एवं देश भर की मण्डियों से सोयाबीन एकत्रित कर उनका प्रसंस्करण किया जाता है। भारत में सर्वाधिक सोयाबीन उत्पादन मध्यप्रदेश में होने के कारण सोयाबीन के उत्पादन में अधिक प्रगति हेतु सोयाबीन पर अनुसंधान के साथ–साथ अन्य उत्पादों के निर्माण, विपणन एवं निर्यात आदि में उतरोत्तर वृद्धि के उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रदेश में सर्व–सुविधा संपन्न प्रतिष्ठान स्थापित किये गये। जिनमें सोयाबीन प्रोसेसर्स एसोसियेशन ऑफ इण्डिया (सोपा) इन्दौर, मध्यप्रदेश राज्य तिलहन उत्पादक सहकारी संघ मार्यादित भोपाल (ऑइल फैड) एवं राष्ट्रीय सोयाबीन अनुसंधान केन्द्र इन्दौर प्रमुख है। ये संस्थान सोयाबीन पर अनुसंधान, प्रसंस्करण, निर्यात, प्रजनक बीज उत्पादन के कार्य में संलग्न है तथा मध्यप्रदेश का कृषि विभाग उन्नत बीजां के उत्पादन तथा उपार्जन करके कृषकों तक पहुंचाने का प्रबंध करता है।

निष्कर्ष एवं सुझाव :– मध्यप्रदेश में सोयाबीन के उत्पादन, उत्पादकता, प्रसंस्करण, विपणन, अनुसंधान में मध्यप्रदेश शासन एवं सोयाबीन के अनुसंधान केन्द्र महती भूमिकायें निभा रहे है जिससे प्रदश में सोयाबीन के उत्पादन, संग्रहण एवं विपणन में लगातार वृद्धि हो रही है। उक्त संस्थाओं के अतिरिक्त जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विभागों, बीज निगम आदि में भी सोयाबीन की उन्नत फसलों हेतु लगातार प्रयास किया जा रहा है। निष्कर्षतः कहा जा

सकता है कि मध्यप्रदेश में सोयाबीन के क्षेत्रफल, उत्पादन, प्रसंस्करण तथा विपणन में लगातार वृद्धि हो रही है। देश में सर्वाधिक सोयाबीन उत्पादन में विगत् कई वर्षों से मध्यप्रदेश प्रथम स्थान पर बना हुआ है तथापि उत्पादिता में वृद्धि की जानी आवश्यक है। भारत की प्रति हैक्टेयर उत्पादिता विश्व की उत्पादिता की तुलना में बहुत कम है तथा देश का सर्वाधिक उत्पादन मध्यप्रदेश में किया जा रहा है अतः उत्पादिता में वृद्धि हेतु प्रयास किये जाने चाहिये। इसी प्रकार मध्यप्रदेश में सोयाबीन विपणन हेतु कृषि उपज मण्डियॉं, प्रसंस्करण इकाईयॉं, प्रतिष्ठान कार्यरत् है एवं विगत वर्षों में इसमें स्पष्टतः वृद्धि हुई है तथापि अध्ययन से यह तथ्य भी सामने आया है कि प्रदेश में पूर्व में 100 से अधिक प्रसंस्करण इकाईयॉं थी जिसमें कई यूनिट हानि, समस्या, लेबर, उपयोग में कमी आदि के कारण बंद हो चुकी है, जिससे सोयाबीन के प्रसंस्करण में कठिनाई उत्पन्न हो रही है। प्रदेश की जलवायु सोयाबीन के अनुकूल है अतः उन क्षेत्रों में जहॉं अभी सोयाबीन की खेती में कमी है किसानों को सोयाबीन उत्पादन हेतु प्रोत्साहित किया जाना आवश्यक है।

संदर्भ :–

1. Acharya S.S., Agrawal, N.L. 2004. “Agricultural Marketing In India”. Oxford and IBH Publishing, New Delhi.
2. Ahirwar, R.F.; Nahatkar, S.B.; Sharma, H.O. 2006. “Growth and Supply Response in Malwa Plateau of Madhya Pradesh”- Soybean Res. Journal, 4:49-53.
3. Ahirwar, R. S.; Nahatkar, S.B.; Sharma, O.P. 2007. “Profitablity and Input Use Efficiency in Cultivation of Soybean in Malwa Plateau of M.P.” Soybean Research Journal Vol. 5, Page 43-49.
4. Ahirwar, R.F.; Verma, A.K.; Raghuwanshi, S.R.S.2016. “Analysis of GrowthTrends and Variability of Soybean Production in Different Districs of Madhya Pradesh”- Soybean Research 14(2):89-96.
5. GOI.2014 Agricultrual Statistics at a Glance. Oxford University Press New Delhi. Page 214.
6. Banga, G; Kumar, B; Singh, Gill. 2010. “Marketing Practices followed by Soybean Processors in Punjab” Soybean Research, 8: 64-74.
7. Banafar, K.N.S. (2003) “Economics Processing of Soybean in Sehore District of Madhya Pradesh” – Indian Journal of Agriculture Economics, 419 words.
8. Singh B.B. 2006. “Success of Soyabean in India: The Early Challenges and Pioneer Promoters,” Asian Agriculture History 10, 1, 43-45.
9. Website of M.P. Marketing Board – mpmandiboard.gov.in
10. Website of Soybean Processors Association Indore-www.sopa.org.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

औद्योगिक निवेश में संस्थागत वित्त का महत्व (एक विश्लेषण)

डॉ. किरण सिंह

शोधसार :– प्रस्तुत शोध पत्र में औद्योगिक निवेश में संस्थागत वित्त के महत्व को प्रतिपादित करने का प्रयास है। औद्योगिक निवेश को बढ़ावा देने के लिए देश में अनेक विशिष्ट वित्तीय संस्थाओं की स्थापना की गई है। जिसका प्रमुख उद्देश्य उद्योगों के संचालन को सुगम और सुविधाजनक बनाना है। जिससे पूँजी निर्माण में वृद्धि होगी साथ ही रोजगार के अवसरों में वृद्धि संभव हो सकेगी। अतः देश के औद्योगिक विकास में संस्थागत वित्त एक महत्वपूर्ण स्तंभ की भांति है।

प्रस्तावना :– निवेश का मुख्य कार्य उद्योगों के संचालन को सुविधाजनक बनाना है। निवेश को गति तभी प्रदान होगी जब निवेशक आगे आयेंगें। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में कई वित्तीय और विकास निगमें अस्तित्व में आई जिन्होने औद्योगिक विकास को बढ़ाने तथा पूँजी को बढ़ाने में सहायता की। ऐसी संस्थाओं को विशिष्ट वित्तीय संस्थाओं के नाम से जाना जाता है। औद्योगिक वित्त को संगठित करने वाली विशेष संस्था निवेश में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इस उद्देश्य से देश में पिछले कुछ वर्षो में केन्द्र तथा राज्य दोनों ही स्तरों पर बहुत सी संस्थाएँ स्थापित की गई हैं। इसमें से कुछ संस्थाएँ ऐसी है जो बड़े और छोटे दोनों प्रकार के उद्योगों को वित्त प्रदान करती है। विशिष्ट वित्तीय संस्थाओं द्वारा निर्मित यह आधार व्यावसायिक बैंकों को उत्प्रेरित करने की मंशा से बनाया गया है। जो उद्योगों को अल्पकालीन व दीर्घकालीन ऋण उपलब्ध कराकर निवेश को बढ़ावा दे सके। उद्योगों को सहायता प्रदान करने के क्षेत्र में उद्योगों के लिए पुनर्वित निगम की स्थापना की गई जो पुनः वित्त व्यवस्थापन संबंधी सुविधाएँ उपलब्ध कराता है। साथ ही बैंकों को उत्प्रेरित करता है कि वे उद्योग को मध्यम और दीर्घ अवधि के ऋण उपलब्ध करावे। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को बढ़ाने में भी इन्हीं विशिष्ट वित्तीय संस्थाओं का योगदान रहा है। ये संस्थाएँ कम ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराती है। भारत में पर्याप्त संख्या में विशिष्ट वित्तीय संस्थाओं का जाल बिछा हुआ है जो औद्योगिक क्षेत्र के विकास के लिए वित्त उपलब्ध कराता है। ये संस्थाएँ इसलिए महत्वपूर्ण हैं कि छोटी बचतों को संचयी करके विनियोग करता है।

प्रस्तुत शोध कार्य का उद्देश्य है :–

- संस्थागत वित्त की आवश्यकताओं एवं उसके महत्व को प्रतिपादित करना है।
- संस्थागत वित्त संरचना का विश्लेषण करना है।
- अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन वित्त स्त्रोतों के रूप में वित्तीय संस्थाओं की भूमिका का विश्लेषण करना है।
- पिछड़े क्षेत्रों के विकास के लिए उद्योगों की स्थापना करके समस्या के निदान के लिए सुझाव देना है।

शोध–पत्र निम्न मान्यताओं पर आधारित है –

- विशिष्ट संस्थाओं को स्थापना से निवेश प्रवृत्ति प्रोत्साहित होगी।
- वित्तीय संस्थाओं के द्वारा उद्योगों की वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति संभव हो सकेगी।
- पूँजी निर्माण की प्रक्रिया में वृद्धि हो।
- बचत करने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलेगा।
- औद्योगिक निवेश के द्वारा रूग्ण इकाईयों को पनः स्थापित करने में मदद मिलेगी।

संस्थागत वित्त हेतु अनेक संस्थाएं कार्यरत हैं। जिनका उद्देश्य निवेश द्वारा उद्योगों का विकास करना। जिससे आर्थिक विकास की गति तीव्र हो सके। शोध पत्र को सीमाओं में बांधने हेतु विश्लेषण के लिए विशिष्ट संस्थाओं का चयन किया गया है।

शोध विधि :– शोध विश्लेषण हेतु द्वितीयक समंकों को आधार बनाया गया है। इस हेतु पत्रिकाओं, पुस्तकों तथा इंटरनेट पर उपलब्ध सामग्री चयनित है।

संस्थागत वित्त :– औद्योगिक वित्त प्रदान करने के लिए सरकार ने देश में अनेक विशिष्ट वित्तीय संस्थाओं की स्थापना की है। जिन्हें संस्थागत वित्त के नाम से जाना जाता है। इसमें भारतोय औद्योगिक वित्त निगम, भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण बैंक, भारतीय औद्योगिक विकास निगम, भारतीय आद्योगिक साख एवं विनियोग निगम, जीवन बीमा निगम, भारतीय सामान्य बीमा निगम तथा यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया या एक्सिस बैंक ने विशेष रूप से सराहनीय कार्य किए है। ये संस्थाएँ उद्योगों को दीर्घकालीन व मध्यमकालीन वित्तीय सुविधाएँ उपलब्ध कराती हैं। ये संस्थाएँ प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष सहायता, प्रतिभूतियों के क्रय, अभिगोपन, ऋणों के भुगतान की गारंटी आदि के रूप में कार्य करती हैं। वित्तीय सहायता के अतिरिक्त ये संस्थाएँ उद्योगों की स्थापना, विस्तार एवं संचालन का कार्य करती हैं साथ ही पूँजी बाजार के कार्य कलापों का संचालन करते हुए विनिमय पत्रों का आदान प्रदान कर उद्योगों की जरूरतों को पूरा करती हैं।

- भारतीय औद्योगिक विकास बैंक :– यह बैंक दीर्घकालीन और मध्यम कालीन वित्त प्रदान करने और औद्योगिक विकास के लिए वित्त व्यवस्था से संबंधित सभी अभिकरणों की गतिविधियों में तालमेल स्थापित करने के उद्देष्य से स्थापित किया गया। वित्त व्यवस्था के क्षेत्र में एक उल्लेखनीय कदम के रूप में यह बैंक विभिन्न तरीकों से वित्तीय सहायता प्रदान करता है।

- भारतीय औद्योगिक वित्त निगम :– यह निगम तीन तरीकों से वित्त प्रदान करता है। यह औद्योगिक प्रतिष्ठानों को उधार देता है उनके द्वारा जारी किये गये ऋण पत्रों में धन लगाता है। पूँजी बाजार में औद्योगिक प्रतिष्ठानों के कर्जो की गारंटी करता है तथा औद्योगिक प्रतिष्ठानों द्वारा जारी किए गए शेयर, बंधपत्र और ऋण पत्रों की हामीदारी करता है। भारतीय औद्योगिक वित्त निगम का उद्देश्य निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों के बड़े व मझोले उद्योगों के दीर्घकालीन वित्त की व्यवस्था करना है।

- भारतीय औद्योगिक ऋण एवं निवेश निगम :– यह निगम दीर्घकालीन और मध्यकालीन ऋण देता है। इक्विटी पूँजी में भाग लेता है। शेयरों तथा ऋणपत्रों के नए निर्गमों को आश्वस्त करता है। इस निगम का उद्देश्य नए उद्योगों को बढ़ावा देना, विद्यमान उद्योगों के विस्तार और उनके आधुनिकीकरण में सहायता देना और उत्पादन तथा रोजगार अवसरों में वृद्धि करने के उद्देश्य से तकनीकी तथा प्रबंधात्मक सहायता प्रदान करना है।

- भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण बैंक :– औद्योगिक क्षेत्र में मार्च 1985 में एक वैधानिक निगम के रूप में इसका पुनर्गठन किया गया और इसे भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण बैंक का नाम दिया गया। इस बैंक का कार्य सामान्यतः उद्योगों को प्रोत्साहन देने और विशेष रूप से बीमार औद्योगिक इकाईयों को पुनः स्थापित करने के लिए ऋण और निवेश प्रदान करना है।

- भारतीय जीवन बीमा निगम :– भारतीय जीवन बीमा निगम भारत का एक महत्वपूर्ण प्रभावशाली विनियोक्ता है। इसके द्वारा नियंत्रित विशाल पूँजी का निवेश देश की अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में किया जाता है। सार्वजनिक क्षेत्र में केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों, कंपनियों, स्वायत्त संस्थाओं आदि की प्रतिभूतियाँ शामिल हैं। निजी क्षेत्र के विनियोग में औद्योगिक कंपनियों तथा अन्य कंपनियों द्वारा निर्गमित समता अंश, ऋण पत्र शामिल है।

- यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया :– यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया की निवेश नीति सुरक्षा तथा आय पर बल देती है। ट्रस्ट छोटे–छोटे निवेशकों से पूँजी एकत्रित कर लाभप्रद प्रतिभूतियों में लगाता है ताकि निवेशकों को छोटी–छोटी बचत का उपयोग प्रदान कर सके। यूनिट ट्रस्ट अपनी पूँजी का निवेश संतुलित एवं सुवितरित पोर्ट फोलियो के निर्माण करने के सिद्धांत के आधार पर करता है।

- भारतीय सामान्य बीमा निगम :– सामान्य बीमा निगम कंपनियों द्वारा किये गये निवेश की

नीति में निवेश योग्य कुल कोषों के 25 प्रतिशत भाग का विनियोग केन्द्रीय सरकार की प्रतिभूतियों के रूप में किया। निगम की निवेश नीति में प्रत्यक्ष ऋणों, अंशों तथा प्रत्यक्ष अभिदान, प्रतिभूतियों के अभिगोपन, केन्द्र व राज्य की प्रतिभूतियों में विनियोग के रूप में तथा औद्योगिक प्रतिभूतियों के विनियोग के रूप में किया।

तालिका
विशिष्ट वित्तीय संस्थाओं द्वारा निवेश (करोड़ रू. में)

वर्ष / संस्था	2012	2013	2014	2015	2016
IDBI	83175.36	98800.93	103773.50	120963.21	98999.43
%	(16.4%)	19.5%	20.5%	23.9%	19.5%
IFCI	10761.87	8641.41	7513.53	7590.35	8188.16
%	25.2%	20.2%	17.5%	17.7%	19.1%
ICICI	159560.04	171393.60	177021.82	186580.03	160411.80
%	18.6%	20.04%	20.7%	21.8%	18.7%
LIC	164.03	184.63	199.31	237.14	276.84
%	15.4%	17.3%	18.7%	22.3%	26.06%
UTI	93192.09	113737.54	113548.43	132342.83	--
%	20.5%`	25.1%	25.07%	29.2%	
GIC	10.35	9.93	9.93	9.83	9.80
%	20.7%	19.9%	19.9%	19.7%	19.6%
कुल प्रतिशत	**116.8**	**122.04**	**122.37**	**134.6**	**102.96**

उपरोक्त तालिका में विशिष्ट वित्तीय संस्थाओं द्वारा किए गए निवेश से स्पष्ट होता है कि 2012 में ICICI बैंक का निवेश 159560.04 करोड़ रूपये से बढकर 2016 में 160411.80 करोड़ रूपये हो गया। जबकि GIC द्वारा सन् 2012 में 10.35 करोड़ रूपयों का निवेश किया गया था जो 2016 के दरम्यिान घटकर 9.80 करोड़ रूपये रह गया। अतः कहा जा सकता है कि विशिष्ट वित्तीय संस्थाओं का प्रतिशत परिवर्तन भी 2012 के दरम्यान 116.8% था, जो 2016 में घटकर 102.96% हो गया। इस प्रकार समय समय पर उद्योगों के विकास के लिए निवेश प्रवृत्ति को बढ़ाने का प्रयास किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष :– औद्योगिक निवेश को बढ़ाने के लिए विशिष्ट वित्तीय संस्थाओं के माध्यम से अल्पकालीन मध्यकालीन व दीर्घकालीन ऋण

उपलब्ध कराये जाने चाहिए। ये संस्थाएँ बचतों का संग्रहण करती हैं और विनियोजन के माध्यम से उन्हें गतिशील बनाती हैं। जिससे निवेश द्वारा पूँजी निर्माण में वृद्धि होगी। साथ ही बचत प्रवृत्ति बढ़ेगी। अतः आर्थिक विकास में वृद्धि करने के लिए निवेश अवश्यम्भावी ह। निवेश वह स्तंभ है जिसकी बुनियाद पर उद्योग टिका है।

सुझाव :–

- दीर्घ अवधि ऋणों के प्रयोग के संदर्भ में तिमाही या छैमाही आधार पर समीक्षा होते रहना चाहिए।
- इन संस्थाओं को तकनीकी ज्ञान व प्रशिक्षण के लिए विशेषज्ञों की सुविधाएँ, निवेशकों को उपलब्ध की जानी चाहिए।
- प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को प्रोत्साहित करने हेतु प्रयास किये जाने चाहिए।
- ऋण प्राप्ति की विधि को सरल बनाया जाये जिससे आम व्यक्ति आसानी से ऋण प्राप्ति की प्रक्रिया को समझ सकें।
- व्यवसाय में वित्तीय आवश्यकताआं के लिए ऋणों के पुनर्भुगतान की व्यवस्था होनी चाहिए।
- इन संस्थाओं द्वारा पिछड़े क्षेत्रों के विकास के लिए विशेष प्रयास किये जाने चाहिए जिससे इन क्षेत्रों में विनियोग प्रोत्साहित हो सके।

संदर्भ ग्रंथ :–

- डॉ0 आर.एस. कुलश्रेष्ठ 'औद्योगिक अर्थशास्त्र' पेज 216–217, 322
- डॉ0 आर.एस. कुलश्रेष्ठ 'निगमों का वित्तीय प्रबंध' पेज 1–2, 44, 448, 456
- लोकनाथन पी.एस 'इण्डस्ट्रीयल ऑरगनाइजेशन इन इंडिया' सितम्बर 1957
- जैन पी0सी0 'इंडस्ट्रियल फाइनेन्स इंडिया' 1964
- एस0के0 वासु 'इंडस्ट्रियल फाइनेन्स इन इंडिया' पेज–3
- आर.बी.आई बुलेटिन 2016 डॉ0 किरण सिंह, अतिथि विद्वान, अर्थशास्त्र, शासकीय श्याम सुंदर अग्रवाल महाविद्यालय सिहोरा, जबलपुर (म0प्र0)

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

''भारतीय इस्पात (स्टील) उद्योग में निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र के योगदान का विश्लेषणात्मक अध्ययन''

डॉ. मंजू सिंह, अतिथि विद्वान

शोध–सार :– भारत एक मिश्रित अर्थव्यवस्था वाला देश है मिश्रित अर्थव्यवस्था में सार्वजनिक क्षेत्र तथा निजी क्षेत्र दोनो का ही स्थान प्रमुख व महत्वपूर्ण होता है। मिश्रित अर्थव्यवस्था में निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र का सह–अस्तित्व होता है तथा दोनो को ही महत्व दिया जाता है। किसी देश की अर्थव्यवस्था के विकास के लिये लोहा एवं इस्पात उद्योग विशेष महत्व रखता है लोहा एवं इस्पात के महत्व को देखते हुये कुछ लोग आधुनिक युग को लोह युग कहने लगे है। इस्पात उद्योग का भारत के आर्थिक व सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान है। आधारभूत उद्योग में सबसे महत्वपूर्ण लोहा एवं इस्पात उद्योग है। इस्पात से मशीने बनती है ये मशीने अन्य उत्पादो के लिये उपयोग में लाई जाती है। इस उद्योग के विकास पर करती है। भारत में भारतीय इस्पात (स्टील) उद्योग में निजी एवं सार्वजनिक दोनो क्षेत्र का महत्वपूर्ण योगदान है। ही देश का आर्थिक विकास निर्भर होता है। किसी देश की प्रगति वहां के औद्योगिक विकास पर निर्भर

मुख्य शब्द :– (की–वर्ड, भारतीय इस्पात (स्टील) उद्योग में निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र का संक्षिप्त विवरण :–

भारतीय इस्पात उद्योग में निजी क्षेत्र का संक्षिप्त विवरण :– निजी क्षेत्र में सन् 1907 में एशिया का प्रथम स्टील प्लांट टाटा आयरन एण्ड स्टील कंपनी सॉकची जमशेदपुर झारखण्ड (पूर्व में बिहार) में स्थापित किया गया जो आज विश्व के मानचित्र में उभर कर ध्रुव तारे की तरह चमक रहा है। टाटा आयरन एण्ड स्टील कंपनी के संथापक जमशेद जी नुसरेवान जी टाटा जी थे। सर दोराब जी टाटा जमशेद जी के बडे पुत्र जिन्होने जमशेदजी के निधन के बाद उनके सपने को साकार करने में अहम भूमिका निभाई तत्पश्चात् जे.आर.डी. टाटा ने सन् 1938 में टाटा ग्रूप के चेयरमेन का पद संभाला 50 वर्षो तक जे. आर.डी. टाटा आयरन एण्ड स्टील कंपनी के चेयरमेन बने रहे, टाटा स्टील एक एकीकृत इस्पात संयत्रं है। विदेशी भूमि पर टाटा स्टील का पहला उपक्रम दक्षिण अफ्रीका में रिचर्ड–बे से शुरू हुआ, जहॉ 2006 में एक फरो-क्रॉम संयत्रं के स्थापना की। 1907 में टाटा आयरन एण्ड स्टील कंपनी के रजिस्ट्रेशन् की शताब्दी पर कम्पनी ने विशालकाय एंग्लो–डच. इस्पात संयत्रं ''कोरस'' को खरीद कर एक नये युग में प्रवेश कर लिया इतिहास के पहिये ने मानो अपना एक चक्र पूरा कर लिया।

भारतीय इस्पात उद्योग में सार्वजनिक क्षेत्र का संक्षिप्त विवरण :– स्वतंत्र भारत की सरकार ने देश की तीव्र आर्थिक प्रगति हेतु पंचवर्षीय योजनाओं के रूप में अपना कार्यक्रम तैयार किया, प्रथम पंत्रवर्षीय योजना के अंत तक देश में निजी क्षेत्र में प्रमुख इस्पात उत्पादन के संयत्र (टाटा आयरन एण्ड स्टील कंपनी, इंडियन आयरन एण्ड स्टील कंपनी) तथा सार्वजनिक क्षेत्र में भद्रावती आयरन एण्ड स्टील वर्क्स थे। देश की आवश्यकता मात्र इससे पूरी नही होती थी अतः शेष आवश्यकता की पूर्ति के लिये आयात करना पड़ता था इन परिस्थितियों को देखते हुये सरकार ने देश को इस्पात की आवश्यकताओं के लिये आत्म निर्भर बनाने का निश्चय किया इस दिशा में पहला कदम 19 जनवरी 1954 को हिंदुस्तान स्टील लिमिटेड के स्थापना के साथ उठाया गया। इस कंपनी का समामेलन इस्पात तथा भारी इंजीनियरिंग मंत्रालय भारत सरकार के अंतर्गत हुआ। आरंभ में हिंदुस्तान स्टील (एच.एस.एल.) को राउरकेला म लगाये जा रहे एक इस्पात कारखाना का प्रबंधन के लिये गठित किया गया था, भिलाई और दुर्गापुर इस्पात कारखानो के लिये प्राथमिक कार्य लोहे और इस्पात मंत्रालय ने किया था। अप्रेल 1957 में इन दो इस्पात कारखानो का नियंत्रण व कार्य को देखरेख भी हिंदुस्तान स्टील को सौप दिया गया। हिंदुस्तान स्टील का पंजीकृत कार्यालय आरंभ में नई दिल्ली में था, 1956 मे इसे कलकत्ता (कोलकता) और 1959 में रांची ले जाया गया। भिलाई और राउरकेला इस्पात

कारखाने की दस लाख टन क्षमता का चरण दिसम्बर 1961 में पूरा किया गया, दुर्गापुर इस्पात कारखाने की दस लाख टन क्षमता का चरण व्हील एवं एक्सल संयत्र के चालू होने के बाद जनवरी 1962 में पुरा हुआ। हिंदुस्तान स्टील लिमिटेड के तीनो संयत्रों में दुर्गापुर इस्पात संयंत्र सबसे छोटा संयत्रं है इस समूचे संयंत्र के निर्माण हेतु भारत सरकार तथा ब्रिट्रेन की 13 प्रमुख फर्मो के संघ के बीच संविदा हुआ। भारत के आर्थिक एवं औद्योगिक विकास में इस्पात के बढते हुई आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये बोकारों इस्पात परियोजना प्रारंभ की गई। प्रारंभ काल से यह परियोजना हिंदुस्तान स्टील लिमिटेड को सौपी गई थी किंतु बाद में 29 जनवरी 1964 को सरकारी कंपनी के रूप में इसका पंजीयन किया गया। बोकारों स्टील लिमिटेड का पंजीकृत कार्यालय प्रशासनिक भवन बोकारों स्टील सिटी बिहार (अब झारखण्ड) के धनबाद जिले में है।

भारत सरकार के इस्पात मंत्री श्री मोहन कुमार मंगलम् ने भारत में इस्पात उद्योग के प्रबंध एवं विकास के लिए एक सूत्रधारी कम्पनी बनाने के निर्णय की घोषणा जुलाई 1972 में की भारत में इस्पात उद्योग के प्रबंध एवं विकास के लिये 1 फरवरी 1973 को स्टील ॲथारिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड (सेल) का संगठन किया गया, निम्नांकित लोकक्षेत्र संस्थाए इसकी सहायक होगी हिंदुस्तान स्टील लिमिटेड, बोकारो स्टील लिमिटेड, सलेम स्टील लिमिटेड, नेशनल मिनरल डेवलपमेण्ट कॉरपोरेशन, भारत कोकिंग कोल लिमिटेड, हिंदुस्तान स्टील वर्क्स कन्स्ट्रक्शन लिमिटेड, मैगनीज ओरस लिमिटेड, बोलानी ओरस लिमिटेड, मेटल स्कैप ट्रेड कॉरपोरेशन लि., तथा मेटलर्जिकल एण्ड इंजीनियरिंग कन्सलटेण्ट्स (इण्डिया) लि. राष्ट्रपति वाले इन कम्पनियों के अंष सेल के नाम हस्तान्तरित कर दिये जायेगें। इसके अतिरिक्त मैसूर आयरन एण्ड स्टील कंपनी लि. एवं इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी लि. तथा अन्य निजी क्षेत्रीय इस्पात कम्पनियों के राष्ट्रपति वाले अंश भी सेल के नाम हस्तान्तरित कर दिये जायेगें। सूत्रधारी कम्पनी को भिलाई, बोकरो, दुर्गापुर, राउरकेला और बर्नपुर स्थित एकीकृत इस्पात कारखाने तथा दुर्गापुर स्थित मिश्र इस्पात कारखाना और सेलम इस्पात कारखाने के लिए उत्तरदायी बनाया गया 1978 सेल का पुर्नगठन किया गया और इसे एक परिचालन कम्पनी बनाया गया अपने गठन के बाद ही सेल देश में औद्यौगिक विकास के लिए एक सुदृढ़ आधार तैयार करने में सहायक सिद्ध हुई है।

राउरकेला इस्पात कारखाना सेल का ऐसा पहला और एक मात्र इस्पात कारखाना है जहॉ शतप्रतिशत स्लैब अधिक गुणवता और कम लागत वाले कंटीनुअस कास्टिंग मार्ग से तैयार किये जाते है। भारतीय इस्पात प्राधिकरण लि. भारतीय कम्पनी अधिनियम 1956 के तहत् पंजीकृत कम्पनी और भारत सरकार का एक उपकृम है। इसके पॉच एकीकृत स्टील संयत्रं भिलाई (छत्तीसगढ़), राउरकेला (ओड़िसा), दुर्गापुर (पश्चिम बंगाल), बोकरो (झारखण्ड) और बर्नपुर (पश्चिम बंगाल) में है। सेल के तीन विशेष और एलॉय स्टील प्लांट अर्थात् पश्चिम बंगाल के दुर्गापुर स्थित एलॉय स्टील प्लांट, सेलम तमिलनाडु में स्थित सेलम स्टील संयत्रं और कर्नाटक के भद्रावती में स्थित विश्वेश्वैरया लोहा और इस्पात संयत्रं है इसके अलावा चंद्रपुर में फेरों एलॉय का उत्पादन करने वाला एक संयत्रं है जिसका स्वामित्व महाराष्ट्र इलेक्ट्रोस्मेल्ट के पास है, जो सेल की सहायक कम्पनी है राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड (आर. आई.एन.एल.) विशाखापट्टणम इस्पात संयंत्र आंध्रप्रदेश के विशाखापट्टणम स्थित (आर.आई.एन. एल) समुद्र तट पर स्थित पहला एकीकृत इस्पात करखाना है इस संयत्रं को अत्याधुनिक तकनीक अर्न्तराष्ट्रीय तकनीक के आधार पर बनाया गया है, इसमें ऊर्जा की अधिकतम बचत और प्रदूषण नियंत्रण उपायों को आधिकतम ख्याल रखा गया है।

भारतीय इस्पात (स्टील) उद्योग में निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र में इस्पात उत्पादन सन् 2009–10

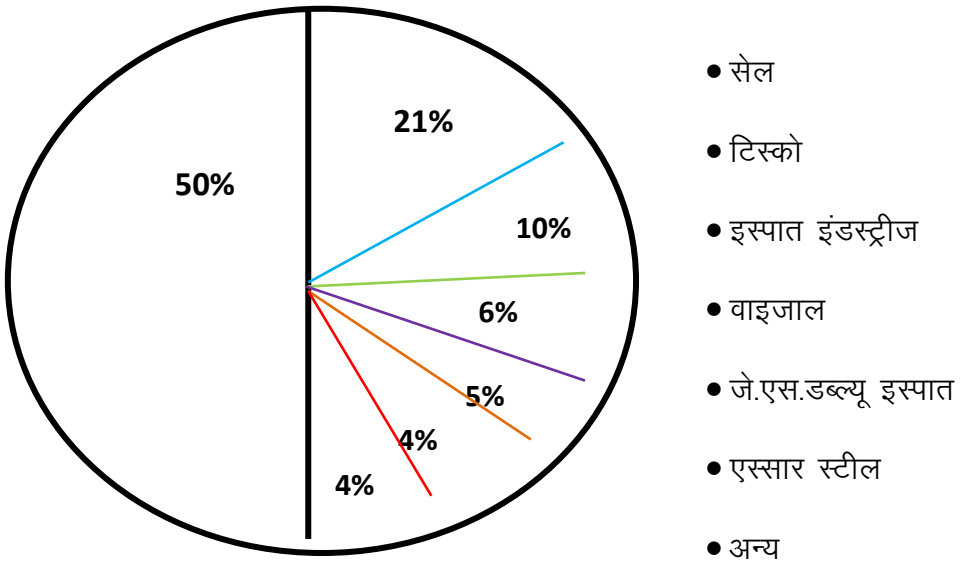

भारतीय इस्पात का वैश्विक दर्जा :–

(2016 में विश्व में कच्चा इस्पात उत्पादन)

श्रेणी	देश	मात्रा (मी.टन)
1.	चोन	808.4
2.	जापान	104.8
3.	भारत	95.6
4.	संयुक्त राज्य अमेरिका	78.6
5.	रूस	70.8

सुझाव :– भारतीय इस्पात (स्टील) उद्योग में निजी एवं सार्वजनिक दोनों क्षेत्र को ही आवष्यकता इस बात की है कि कम लागत में उच्च गुणवत्ता के इस्पात का निर्माण कार्य करें भविष्य में इस्पात का उत्पादन बढ़ाने के साथ–साथ उत्पादन लागत में कमी करें यह तभी संभव है, जब अनुसंधान एवं विकास में खर्च की गई राषि को बढ़ाया जाये तथा इस्पात के उच्च गुणवत्ता का शीघ्र–अति शीघ्र खोज किया जाये इस प्रकार कम लागत पर उच्च गुणवत्ता के इस्पात का उत्पादन की खोज अनुसंधान एवं विकास कार्यक्रम के जरिये किया जाये।

भारतीय इस्पात में उद्योग में निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र में इस्पात उत्पादन में वृद्धि हो रहा जिससे भारत में रोजगार के अवसर नागरिकों को प्राप्त हो रहे है। वर्तमान में इस्पात उद्योग की स्थापना की ओर उद्यमियों का रूझान बढ़ा है तथा भारत में वर्तमान में कई इस्पात उद्योग स्थापित किये जा रहे है, तथा भविष्य में स्थापना करने हेतु एम.ओ.यू.पर हस्ताक्षर भी किये गये है इस क्षेत्र कि ओर उद्यमियों का निवेश लगातार बढ़ता जा रहा है सरकार को चाहिये कि इस्पात उद्योग की स्थापना से संबंधित नीति में और अधिक सुगम एवं सरल विधि अपना कर भारत में

अधिक से अधिक इस्पात उद्योग की स्थापना का द्वार खोले लें।

भारतीय इस्पात उद्योग में निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्रों द्वारा विशेषज्ञों के सुझाये गये सुझाव द्वारा नई तकनीकों के ज्ञान का निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्रों में आदान–प्रदान करके उन्नत तकनीकों द्वारा इस्पात उत्पादन में वृद्धि करना चाहिए। इस्पात की मॉग दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही है। तथा आर्थिक विकास में इस्पात का योगदान सर्वोच्च रहा है। किन्तु भविष्य में इस्पात की मांग निरंतर बढ़ने की संभावना है इस हेतु 2017 में केन्द्रीय इस्पात राज्य मंत्री विष्णु देव सांय ने चर्चा के दौरान यह व्यक्त किया कि मध्यप्रदेश के जबलपुर जिले में केन्द्रीय इस्पात मंत्रालय दिल्ली की टीम इस्पात कारखाना लगाने की संभावनाएं खोजने शीघ ही आयेगी इस प्रकार खनिज संसाधनो की खोज कर इस्पात (स्टील) उद्योग की स्थापना निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र में किया जाना चाहये।

संदर्भ ग्रस्थ सूची :–

1. श्री आर एम लाल '' स्टील का रोमांस'' राजकमल प्रकाशन प्रा.लि. दिल्ली।
2. श्री जे.बी. जथार, एस.जी. बेरी, ''भारतीय अर्थशास्त्र'' राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड दिल्ली।
3. प्रतियोगिता दपर्ण भारतीय अर्थशास्त्र उपकार प्रकाशन आगरा – 2 सन् 2009
4. www. Tatasteel. com
5. www. Danikseveratimes.com
6. www. Mnaidunia. jagran.com
7. www. en.m. Wikipedia.org
8. www. Statistics for iron and steel industry in india. com
9. www. Sail.com
10. www. vizag. steel. com

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

ग्रामीण विकास में पंचायतीराज की भूमिका

डॉ. मोतीलाल कुर्मी
रामवार्ड, पॉवर हाउस के पास, गढ़ाकोटा, जिला–सागर (म.प्र.)

संविधान में 73वें संशोधन के पश्चात् लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया को ठोस एवं संवैधानिक आधार प्राप्त हुआ। ग्रामीण क्षेत्र एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था को नियोजित ढंग से विकसित करने का दायित्व अब पंचायतीराज संस्थाओं का है। इस प्रक्रिया में मध्यप्रदेश देश का पहला राज्य है जिसने संविधान के 73वें संशोधन के प्रावधानुसार पंचायत व्यवस्था का श्रीगणेश किया तथा 1993 में म.प्र. पंचायत अधिनियम 1993 पारित कर, इस व्यवस्था को व्यावहारिक स्वरूप 1994 को प्रदान किया गया।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था के समग्र विकास के लिए पंचायतीराज की त्रिस्तरीय व्यवस्था का क्रियान्वयन वर्तमान में है, जिसमें ग्रामीणों का आर्थिक विकास, ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत सुविधाओं का विकास, सामाजिक न्याय एवं कल्याण की स्थापना एवं संविधान अनुच्छेद की ग्यारहवीं अनुसूची में वर्णित 29 विषयों को ध्यान में रखकर योजनाओं का निर्माण एवं व्यावहारिक स्वरूप वर्तमान में प्रदान किया जा रहा है। इस प्रकार ग्रामीण विकास में पंचायतीराज संस्थाओं की महत्वपूर्ण योगदान है।

शोध का विषय :– पंचायतीराज व्यवस्था लागू करते समय हमारे नीति निर्माताओं ने परिकल्पना की थी कि पंचायती व्यवस्था के माध्यम से गाँवों का सर्वांगीण विकास होगा, जन सहभागिता बढगी, जन सामान्य की आवश्यकताओं की पूर्ति होगी, गाँवों की वास्तविक समस्याओं की सही पहचान हो सकेगी, उनके समाधान के लिए व्यावहारिक हल खोजे जा सकेगे, ग्रामीण संस्कृति एवं लोक कलाओं की रक्षा की जायेगी, ग्रामीण कौशल तथा स्थानीय संसाधनों का उचित उपयोग, ग्रामीण स्तर पर सत्ता का विकेन्द्रीकरण होगा तथा निर्णय प्रक्रियाओं में महिलाओं, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा पिछड़े वर्गों का उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त होगा, परन्तु पंचायती व्यवस्था के आधार पर ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायतों के गठन के बाद भी किन्हीं कारणों से इनके सिद्धान्तों एवं व्यावहारिकता में काफी अन्तर है। इतने लंबे कार्यकाल के बाद भी अपने निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति न होने के कारण इस दिशा में कारणों की खोज एवं जानकारी प्राप्त करना अनिवार्य है। पंचायतीराज के विराट उद्देश्य, विकास के नये–नये कायक्रम, नई–नई योजनायें अपनी चमक दिखा कर लुप्त हो जाती है। ये असफल क्यों हो रहे है? ये कुछ ऐसे प्रश्न है जिनका उत्तर ढूँढ़ना न केवल नीति निर्माताओं के लिये बल्कि जनसामान्य के लिये भी आवश्यक है। यदि इन प्रश्नों की उपेक्षा की जाती है तो निश्चित ही पंचायतीराज के स्वर्णित सपने, सपने बनकर ही रह जायेगे कभी भी साकार नहीं हो सकेगे।

शोध के उद्देश्य :–

1. पंचायतीराज व्यवस्था से ग्रामीण परिवेश में परिवर्तन का अवलोकन करना।
2. ग्रामीण क्षेत्रों में लागू विभिन्न विकासोन्मुखी योजनाओं का क्रियान्वयन तथा उनका आर्थिक विश्लेषण करना।
3. पंचायतीराज कानून के प्रति ग्रामीणों में रूझान को जानना।
4. राज्य के आधुनिकीकरण में पंचायतीराज संस्थायें उपयोगी व आवश्यक है, इसका अध्ययन करना।
5. पंचायतों में विभिन्न सुविधाओं को ज्ञात करना।
6. पंचायतों के आय के साधनों को ज्ञात करना तथा स्वयं की आय का प्रबन्धन आदि का अध्ययन करना।
7. पंचायतीराज व्यवस्था में व्यावहारिक कठिनाइयों या समस्याओं को ज्ञात करना।
8. ग्रामीण विकास में ग्राम पंचायतों के योगदान का मूल्यांकन करना।

9. ग्राम पंचायतों का नियंत्रण व निरीक्षण की प्रबन्ध व्यवस्था कहाँ तक प्रभावी है।

शोध परिकल्पनाएँ :–

1. ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा का स्तर बहुत कम होता है, जिसका परिणाम यह होगा कि प्रतिनिधियों में नेतृत्व की क्षमता का अभाव पाया जाता होगा।
2. सामुदायिक विकास कार्यक्रम के समय ग्रामीण नागरिकों का सहयोग कम मिलता होगा।
3. ग्रामीणों की सहभागिता के बिना ग्राम पंचायतों को आत्मनिर्भर बनाना संभव नहीं होगा।
4. ग्राम पंचायतों के चुनावों में प्रतिनिधियों की योग्यता, दक्षता, कुशलता आदि को महत्व दिया जाता है।
5. पंचायतीराज से राजनैतिक चेतना का निर्माण होता हैं।
6. ग्रामीण नागरिक शासन की योजनाओं तथा सुविधाओं का समुचित लाभ प्राप्त करते है।
7. पंचायतीराज ग्रामीणों को रोजगार प्रदान करने में सक्षम हैं

शोध की उपयोगिता :– प्रस्तुत शोध पत्र ग्रामीण विकास में पंचायतीराज का योगदान, पंचायतीराज व्यवस्था, प्रशासन एवं कार्यप्रणाली आदि के बारे में एक व्यावहारिक अध्ययन हैं जिसमें शोध के माध्यम से ग्रामीण आर्थिक विकास, गरीबी उन्मूलन उपाय, रोजगार के साधन तथा स्थानीय संसाधनों के विकास एवं ग्रामीण बाजारों का ज्ञान आदि के बारे में या समग्र विकास की ओर एक सैद्धान्तिक अध्ययन के माध्यम से सहयोगी होगा। ग्रामीण क्षेत्रों में शासकीय मानकां के अनुसार विकास में यदि अंतर पाया जाता है तो इनके कारणों का अध्ययन के माध्यम से दूर करने में सहयोग प्रदान करेगा।

भारतीय अर्थव्यवस्था मुख्यतः कृषि आधारित है तथा ग्रामीण क्षेत्रों में निवास कर रहे लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि ही है। इस अध्ययन के माध्यम स एक अतिरिक्त आय बढ़ाने के इस बिन्दु पर भी प्रकाश डालने की कोशिश की है, कि कृषि व्यवसाय के साथ–साथ कृषि से जुड़े अन्य व्यवसाय जैसे पशुपालन, मत्स्य पालन, पोल्ट्री फार्म, औषधि पौधों की खेती, विभिन्न प्रकार के फलों तथा फूलों का व्यवसाय, जैविक खाद, केंचुआ निर्माण, लघु उद्योग तथा स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों का विदोहन जैसे पत्थर, ईंट, रेत, वनोपज आदि का कृषि के साथ–साथ एक या दो अतिरिक्त कार्य सम्पन्न हो सकते है। जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में मौसमी तथा अदृश्य बेरोजगारी का उन्मूलन हो सकता है। अध्ययन को उपयोगिता सिर्फ प्रस्तुतीकरण में नहीं बल्कि शोध कार्य द्वारा निकाले गये निष्कर्षों से है। अध्ययन द्वारा दिये गये निष्कर्ष एवं प्रस्तुत समाधान (सुझाव) पंचायतीराज प्रणाली के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं को दूर करने में सहायक होगे।

पंचायतों की भूमिका सामान्य रूप से केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा गांव के विकास के लिए तय की गई योजनाओं और कार्यक्रमों को लागू करना ही समझी जाती है। पंचायतें भी मुख्य रूप से वही काम कर रही हैं जो उन्हें शासन के विभिन्न विभागों ने सौपे हैं। विकास की योजनाओं और विभागों के द्वारा सौंपे गये काम के लिए धन राशि भी पंचायतों को केन्द्र और राज्य शासन से मिलती है। तथा इन विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन तथा क्रियान्वयन पंचायतों के द्वारा ही अंतिम रूप प्रदान किया जाता है। निचले स्तर पर स्वशासन के लिए पंचायती राज प्रणाली अत्यंत महत्वपूर्ण है।

भारत में पंचायतीराज व्यवस्था बेहद लोकप्रिय है तो इसका कारण यह है कि यही एक मात्र ऐसी व्यवस्था है जिसमें राजनैतिक शक्ति, वास्तविक रूप में आम जनता के हाथों में रहती है तथा विभिन्न महत्वपूर्ण मामलों पर वही अंतिम फैसला करती है। हमारे अधिकतर राज्य में त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था लागू है लेकिन कुछ राज्य ऐसे भी है जहां द्विस्तरीय पंचायत व्यवस्था अस्तित्व में है। दरअसल पंचायतीराज, राज्य सूची का विषय है इसलिए विभिन्न राज्य अपनी सुविधा और जरूरतों के मुताबिक अपने राज्य में पंचायती राज संस्थाओं की सरंचना निर्धारित करते हैं। स्थानीय स्वशासन हमारे यहां धीरे–धीरे विकसित हुआ है। इस दिशा में काफी

उतार–चढ़ाव आए लेकिन 1991–92 में हुए 73वें और 74वें संशोधन इस दिशा में मील के पत्थर साबित हुए क्योंकि इन संशोधनों ने भारत में पंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिक दर्जा दे दिया। भारत की वर्तमान पंचायती राज व्यवस्था बलवंत राय मेहता समिति की सिफारिशों पर आधारित है। प्रारंभ में हमारे यहां सामुदायिक विकास कार्यक्रम शुरू किए गये थे लेकिन इसके अपेक्षित नतीजे नहीं निकल सके तो सरकार ने इसकी जांच के लिए सन् 1957 में एक अध्ययन दल गठित किया जिसके अध्यक्ष बलवंत राय मेहता थे। बलवंत राय मेहता ने अपनी सिफारिशों में कहा कि यदि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और सामुदायिक विकास कार्यक्रम को सफल बनाना है तो पंचायती राज संस्थानों की स्थापना की जानी चाहिए। इसके लिए समिति ने एक त्रिस्तरीय संरचना प्रस्तावित की जिसमें गांव स्तर पर ग्राम सभा तथा ग्राम पंचायतें, ब्लाक स्तर पर जनपद पंचायतें तथा जिला स्तर पर जिला पंचायत की स्थापना थी।

73वें संविधान संशोधन के ग्रामीण क्षेत्रों के लिए लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण

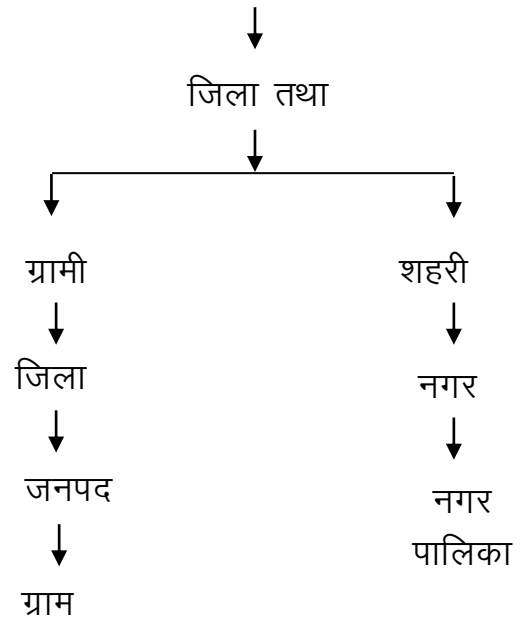

आज ग्रामीण विकास का सामान्य अर्थ ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक, सामाजिक विकास से लगाया जाता है। ग्रामीण विकास की प्रक्रिया के अंतर्गत ऐसी नियोजन नीति अपनाई जाती है जिसके द्वारा ग्रामीण समाज के कमजोर वर्ग के व्यक्तियों के सामाजिक एवं आर्थिक स्तर को स्थानीय संसाधनों के अनुकूलतम् उपयोग द्वारा उठाया जा सके एवं उन्हें आत्मनिर्भर बनाया जा सके। ग्रामीण विकास के कार्यक्रम निर्धारित करते समय आर्थिक एवं सामाजिक दोनों पहलुओं पर गहन विचार–विमर्श किया जाता है। आर्थिक पहलू से तात्पर्य रोजगार, उत्पादन, आय एवं व्यावसायिक प्रगति तथा उपभोग स्तर में सुधार से है। अतः ग्रामीण विकास को सामान्यतः राष्ट्रीय विकास की मुख्य धारा से पृथक नहीं किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में ग्रामीण विकास का अर्थ ग्रामीण नागरिकों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाना है। इस संबंध में आम धारणा भी यही है, किन्तु व्यापक रूप से ग्रामीण विकास का आशय गाँवों में रोजगार के अवसरों में वृद्धि, उपलब्ध मानवीय एवं अन्य भौतिक संसाधनों का यथेष्ट उपयोग, लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास, ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण एवं स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, परिवहन, संचार आदि बुनियादी सुविधाओं का विकास या विकसित करने से है। अतः इन सुविधाओं का विकास ग्रामीण विकास के लिए अनिवार्य है। इसके अलावा ग्रामीण विकास को स्पष्ट रूप से समझने के लिए यह आवश्यक है कि ग्रामीण नागरिकों के शैक्षणिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन को सुधारने से भी है। इस दृष्टि से ग्रामीण विकास के लिए निचले स्तर से उस व्यक्ति से शुरू करना चाहिए है एवं जो साधन विहीन है जिनका जोवनयापन भी बहुत कष्टदायक है। अर्थात् ग्रामीण विकास गरीब एवं गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले, निराश्रित तथा समाज की मुख्य धारा से पिछड़े क्षेत्रों में ग्रामीण विकास का मुख्य केन्द्र होना चाहिए।

ग्रामीण विकास की आवश्यकता :– किसी भी देश के समग्र विकास की अनिवार्यता में ग्रामीण विकास का मुख्य ध्येय होना चाहिए। हमारा देश विकासशील राष्ट्रों की श्रेणी में आता है तथा यहाँ की अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है। अतः ग्रामों की अधिकता होना निश्चित है, इसीलिए भारत को गाँवों का देश भी कहा जाता है। अतः ग्रामों के विकास को समग्र विकास या गाँवों को विकास की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए आवश्यकता है कि ग्रामीण विकास में वृद्धि की जाये तथा गाँवों

को खुशहाल एवं समृद्धशाली बनाया जाये। ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी सुविधाएँ उपलब्ध कराने के लिए ग्रामीण विकास की अनिवार्यता है। निम्न बिन्दुओं के माध्यम से ग्रामीण विकास की आवश्यकता को व्यक्त किया जा सकता है –

- समाज में सभी को अवसर
- आधारभूत सुविधाओं के विकास के लिए
- स्थानीय स्वशासन के विकास के लिए
- स्थानीय संसाधनों के विकास के लिए
- जनसंचेतना या जनजागृति के लिए
- विकास की प्रक्रिया में जन सहभागिता हेतु

अन्य –

(i) आर्थिक विषमता का उन्मूलन करना।

(ii) रोजगार सुअवसरों की खोज करना।

(iii) योजनाओं का क्रियान्वयन एवं कार्यान्वयन करना।

(iv) ग्रामीण नेतृत्व का विकास।

(v) स्वरोजगार को प्रोत्साहित करना।

(vi) ग्रामीण जन मानस के जीवन स्तर में सुधार।

(vii) प्रशासकीय कार्यों में सहायक।

ग्रामीण विकास एवं पंचायतीराज :– आजादी के बाद सम्पूर्ण राष्ट्र के विकास के साथ ही ग्रामीण विकास को महत्व देते हुए सन् 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम के माध्यम से ग्रामीण भारत के निर्माण की नींव रखी गई। तथा इसी दौरान पंचवर्षीय योजनाओं का श्री गणेश किया गया जिसमें भी ग्रामीण विकास को शामिल किया गया। सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के मूल्यांकन के लिए सन् 1957 में बलवंत राय मेहता समिति का गठन किया गया तथा इस समिति ने त्रिस्तरीय पंचायतीराज व्यवस्था की अनुशंसा की। इसका प्रभाव शीघ्र ही देखने को मिला जब भारत में राजस्थान के नागौर जिले में सन् 1959 में पंडित श्री जवाहर लाल नेहरू द्वारा इस व्यवस्था का श्री गणेश किया।

इसके बाद सन् 1977 में ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों को गति देने के लिए अशोक मेहता समिति की स्थापना हुइ तथा समिति ने त्रिस्तरीय पंचायत व्यवस्था के स्थान पर द्विस्तरीय पंचायतीराज व्यवस्था की सिफारिश की, लेकिन इस व्यवस्था को व्यावहारिक स्वरूप प्राप्त नहीं हो सका। ग्राम शासन को विकसित एवं सशक्त करने के लिए अन्य समितियों का गठन हुआ सभी ने स्थानीय स्वशासन के रूप में पंचायतीराज व्यवस्था को अंगीकार करने की सिफारिश की।

1980 के दशक के पश्चात् प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी ने बीस सूत्रीय कार्यक्रमों के माध्यम से ''समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम'' एवं ''राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम'' को लागू किया। इसके बाद सन् 1986 में श्री राजीव गाँधो जी ने नये संशोधित 20 सूत्रीय कार्यक्रम के अंतर्गत सम्पूर्ण कार्यक्रमों में ग्रामीण विकास को ही आधार माना है।

उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सन् 1992 में संविधान के 73वें संशोधन में त्रिस्तरीय पंचायतीराज व्यवस्था को संवैधानिक निकाय का दर्जा प्राप्त हुआ। भारत सरकार द्वारा इस व्यवस्था को स्वीकार करने को कहा गया। म.प्र. में 1994 में इस व्यवस्था को स्वीकृत कर पूरे प्रदेश में पंचायतीराज व्यवस्था कानून के रूप में लागू कर दिया एवं देश में इस प्रणाली को सर्वप्रथम व्यावहारिक स्वरूप देने का गौरव मध्यप्रदेश ने हासिल किया। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का मुख्य उद्देश्य पंचायत व्यवस्था को मजबूत करने के साथ–साथ शासन शक्तियों का भर्रापण (अधिकारों का हस्तान्तरण) ग्रामों को प्राप्त हो तथा गाँवों को विकास की धारा से जोड़ा जाए। वर्तमान त्रिस्तरीय पंचायतीराज व्यवस्था पूर्व में प्रारम्भ किये गये ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के उद्देश्यों के ठीक अनुरूप है।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का मानना था कि भारत की आत्मा गांवों में निवास करती है। ग्रामीण भारत का विकास समूचे भारत के विकास का आधार है। दो तिहाई से अधिक जनसंख्या गांवो में निवास करती है तथा कृषि इनका जीविकोपार्जन का आधार है। भारत में ग्रामीण विकास के लिए आजादी के बाद से अनेक प्रयास

किये गये, लेकिन ग्रामीण विकास का वास्तविक आधार तब प्राप्त हुआ जब संविधान के 73वें संशोधन के माध्यम से नवीन पंचायत राज व्यवस्था का शुभारंभ हुआ। हॉलाकि वर्तमान में ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना प्रगति पर है जो भारत के समग्र विकास को दृष्टिगत रखते हुए, सन् 1951 से देश के आर्थिक नियोजन के लिए शुरूआत हुई थी।

73वें संशोधन से स्थानीय स्वशासन को सशक्त आधार प्राप्त हुआ। इस व्यवस्था के अनुरूप ही मध्यप्रदेश में पंचायतीराज संस्थाओं का गठन हुआ। इस व्यवस्था में प्रावधानों के अनुसार सभी वर्गो को प्रतिनिधित्व का अवसर प्राप्त हुआ। केन्द्र तथा राज्य शासन की पंचायतीराज की विभिन्न सामुदायिक एवं हितग्राहीमूलक योजनाओं में निरंतर वृद्धि हुई। सामुदायिक विकास योजनाओं में क्षत्र विशेष के पिछड़ेपन की महत्व प्रदान करते हुए, ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में योगदान रहा है। हितग्राही मूलक योजनाओं के आवंटन पर भी शासन द्वारा गरीबी रेखा तथा गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले नागरिकों को प्राथमिकता प्रदान की गई है। इसमें अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पिछड़ा वर्ग के व्यक्तियों के साथ ही इन्हीं वर्गो की महिलाओं को भी हितग्राही मूलक योजनाओं द्वारा लाभांवित किये जाने के उद्देश्य निर्धारित किये गये है। इस तथ्य की व्यावहारिकता का अध्ययन शासन की विभिन्न योजनाओं में इन वर्गो को प्राप्त आवंटन तथा लाभांवित वर्गो के अध्ययन से प्राप्त हो सकता है।

त्रिस्तरीय पंचायतीराज व्यवस्था की सफलता का पंचम कार्यकाल निःसंदेह प्रगति पर है अर्थात इस व्यवस्था में पांचवा निर्वाचन सम्पूर्ण प्रदेश में समाप्त हुआ है। इससे पूर्व की स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था में इतनी लंबी यात्रा पूरी नहीं हो सकी। पंचायतीराज व्यवस्था से ग्रामीण परिवेश में परिवर्तन परिलक्षित हुआ है।

पंचायतीराज संस्थाओं द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों परिवर्तन या ग्रामीण विकास तो हुआ है परन्तु वर्तमान में पंचायतीराज व्यवस्था के सम्मुख कुछ आतंरिक समस्याएँ जैसे योग्य प्रतिनिधि ग्राम पंचायत को प्राप्त न हों, योजनाओं के आवंटन पर पक्षपात न हो, ग्रामीणें का सहयोग प्राप्त न होना आदि कठिनाईयां है जो उसके अस्तित्व के समक्ष संकट उत्पन्न कर रही है किन्तु इन समस्याओं का दृढ़ संकल्प के साथ निवारण किया जा सकता है।

पंचायतें अपने अधिकारों एवं शक्तियों का उपयोग करते हुए ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामीण आधारभूत संरचना में सुधार या वृद्धि करने में सफल हुई है जैसे ग्रामीण सड़के, सिंचाई के साधन, वन विकास, पशुपालन, कृषि विकास, ग्रामीण शैक्षणिक संस्थाऐं, पेयजल व्यवस्था तथा आंगनवाड़ी केन्द्र आदि कार्यो में शासन द्वारा प्रावधानित कोष का उपयोग किया है। निर्धनता उन्मूलन एवं रोजगार सजन कार्यक्रमों जैसे इंदिरा आवास, सामाजिक कल्याण की योजनाऐं तथा रोजगार गारंटी कार्यक्रमों से ग्रामीणों को लाभांवित किया है।

आजादी के 70 वर्षो के उपरांत ग्रामीण जीवन में निश्चित ही परिवर्तन हुआ है। पंचायतीराज व्यवस्था का वास्तविक विकास सन् 1992–93 में ही हुआ। त्रिस्तरीय पंचायत व्यवस्था को लगभग 24 वर्ष ही व्यतीत हुए है। इस व्यवस्था के पूर्व के ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों की प्रगति की तुलना वर्तमान व्यवस्था के अधीन ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों की प्रगति का तुलना की जाए तो निश्चित ही अंतर देखा जा सकता है। पंचायतीराज व्यवस्था के प्रथम व द्वितीय निर्वाचन के पश्चात पंचायत प्रतिनिधियों ने अपने अधिकारों के प्रयोग में अवश्य पीछे रहे है लेकिन वर्तमान में पंचायत प्रतिनिधि (सरपंच) राज्य शासन के मंत्रियों के साथ राहत राशियों के वितरण में साथ देखा जा सकता है। वर्तमान प्रतिनिधियों मे अनुसूचित एवं अनुसूचित जनजाति एवं महिला प्रतिनिधियों ने पंचायती कार्यो में अपनी सहभागिता प्रदान कर रहे है।

अपनी महत्वपूर्ण भूमिका के चलते पंचायतीराज व्यवस्था अपने वाले समय में अपरिहार्य होगी, इसके लिए सार्वजनिक निजी क्षेत्रों की सहभागिता, जन सहयोग तथा सरकार की दृढ़ इच्छा शक्ति एवं प्रभावी क्रियान्वयन तंत्र की आवश्यकता है, जिससे की ग्रामीण क्षेत्रों में

भौतिक, प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों का अधिकतम उपयोग किया जा सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. वर्मा, अंजली (2009), भारत में पंचायती राज, ओमेगा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली
2. सबलोक; डॉ. संदीप (2002), पंचायतीराज में ग्रामीण विकास, अमन प्रकाशन, सागर
3. शर्मा, डॉ. श्रीनाथ ; पंचायतराज एवं ग्रामीण विकास, आदित्य पब्लिशर्स, बीना (म.प्र.)
4. बुच, श्रीमती निर्मला (1998), मध्यप्रदेश पंचायत एवं ग्रामीण विकास, मध्यप्रदेश जनसंपर्क विभाग
5. सिसौदिया यतीन सिंह (2001), मध्यप्रदेश राज व्यवस्था, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
6. द्विवेदी, राधेश्याम (2008), मध्यप्रदेश पंचायती राज एवं ग्राम स्वराज अधिनियम सुविधा, लॉ हाउस, भोपाल
7. सरकार, एम. एवं मुनीर, जे.जे. (2000), भारत का संविधान, एलिया लॉ एजेंसी, इलाहाबाद
8. सिंह, अनिल कुमार (1992), ''ग्रामीण समुदाय में सामाजिक परिवर्तन'' क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली
9. ग्रामीण विकास की प्रमुख योजनाएँ एवं कार्यक्रम, महात्मा गांधी राज्य ग्रामीण विकास संस्थान, आधारताल, जबलपुर म.प्र. (2010)
10. Bhatt Sharma U.K. (1998), New Panchyat Raj System, Print Well Publisher, Jaipur.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

भारतीय स्टेट बैंक का इतिहास एवं विकास

सविता सोहाने
शोधार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर

भारत की सबसे बड़ी एवं सबसे पुरानी बैंक एवं वित्तीय संस्था है। इसका मुख्यालय मुंबई में है। यह एक अनुसूचित बैंक है। 2 जून 1806 को कलकत्ता में बैंक ऑफ कलकत्ता की स्थापना हुई थी। तीन वर्षो के पश्चात् इसको अपना चार्टर मिला तथा इसका पुनर्गठन बैंक ऑफ बंगाल सरकार द्वारा चलाया जाता था। बैंक ऑफ बॉम्बे तथा बैंक ऑफ मद्रास की शुरूआत बाद में हुई। ये तीनों बैंक आधुनिक भारत के प्रमुख बैंक तब तक बने रहे जब तक कि इनका विलय इंपीरियल बैंक ऑफ इंडिया (हिन्दी अनुवाद–भारतीय शाही बैंक) में 27 जनवरी 1921 को नहीं कर दिया गया। सन् 1951 में पहली पंचवर्षीय योजना की नींव डाली गई जिसमें गांवों के विकास पर जोर डाला गया था। इस समय तक इंपीरियल बैंक ऑफ इंडिया का कारोबार सिर्फ शहरों तक सीमित था। अतः ग्रामीण विकास के मद्देनजर एक ऐसे बैंक की कल्पना की जिसकी पंहुच गांवों तक हो तथा ग्रामीण जनता को जिसका लाभ हो सके। इसके फलस्वरूप 1 जुलाई 1955 को स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना की गई। अपने स्थापना काल में स्टेट बैंक के कुल 480 कार्यालय थे जिसमें शाखाएँ तथा तीन स्थानीय मुख्यालय शामिल थे, जो इंपीरियल बैंको के मुख्यालयों को बनाया गया था।

इतिहास :– भारतीय स्टेट बैंक का प्रादुर्भाव उन्नीसवीं शताब्दी के पहले देशक में 2 जून 1806 को बैंक ऑफ कलकत्ता की स्थापना के साथ हुआ। तीन साल बाद बैंक को अपना चार्टर प्राप्त हुआ और इसे 2 जनवरी 1809 को बैंक ऑफ बंगाल के रूप में पुनगर्ठित किया गया। यह एक अद्वितीय संस्था और ब्रिटेन शासित भारत का प्रथम संयुक्त पूंजी बैंक था जिसे बंगाल सरकार द्वारा प्रायोजित किया गया था। बैंक ऑफ बंगाल के बाद बैंक ऑफ बॉम्बे की स्थापना 15 अप्रैल 1840 को तथा बैंक ऑफ मद्रास की स्थापना 1 जुलाई 1843 को की गई। ये तीनों बैंक 27 जनवरी 1921 को तथा उनका इंपीरियल बैंक ऑफ इंडिया के रूप में समामेलन होने तक भारत में आधुनिक बैंकिंग के शिखर पर रहें।

उद्भव एवं विकास :– अखिल भारतीय ग्रामीण साख सर्वेक्षण समिति सन् 1953–54 की सिफारिश पर भारतीय स्टेट बैंक की स्थापना की गई, इसकी स्थापना के लिए स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एक्ट 1955 भारतीय संसद में स्वीकृत किया गया तथा जुलाई 1955 से स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना हुई। वित्तीय क्षेत्र में स्टेट बैंक इंडिया की स्थापना द्वितीय पंचवर्षीय योजना के प्रारंभ में की गई उस समय समाजवादी समाज की स्थापना का लक्ष्य रखा गया था। अतः इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया का राष्ट्रीयकरण कर स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना करना एक महत्वपूर्ण घटना थी।

इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया :– इम्पीरियल ऑफ इंडिया की स्थापना 27 जनवरी, 1921 में की गई। इस्ट इंडिया कंपनी ने यूरोपियन पद्धति के बैंकों की भारत में स्थापना के सिलसिले में यह कदम उठाया, इसके पूर्व में बंगाल प्रांत ने बैंक ऑफ कलकत्ता के नाम से सन् 1806 में पहला प्रेसीडेन्सी बैंक स्थापित किया जो बाद में बैंक ऑफ बंगाल के नाम से जाना गया। सन् 1840 में बैंक ऑफ बाम्बे एवं 1843 में बैंक ऑफ मद्रास की स्थापना भी की गई, तीनों बैंकों को मुद्रा निर्गमन के अधिकार सन् 1862 तक प्राप्त रहे। इन तीनों प्रेसीडेन्सी बैंकों की शाखायें महत्वपूर्ण नगरों में खोली गई, परन्तु इनकी कार्यप्रणाली में एकरूपता नहीं थी। अतः पूरे देश में एक केन्द्रीय बैंक की आवश्यकता अनुभव की गई।

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद यह आवश्यकता तेजी से अनुभव की गई। परिणामस्वरूप उपरोक्त तीनों प्रेसीडेन्सी बैंकों का विलय करके 27

जनवरी, 1921 को इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना की गई। इस हेतु इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया एक्ट 1920 पास किया गया। इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया मुख्य रूप से एक व्यापारिक बैंक था, परंतु 1935 के पूर्व में केन्द्रीय बैंक की स्वतंत्र व्यवस्था न होने के कारण इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया एक व्यापारिक बैंक के द्वारा सम्पन्न किये जाने वाले कार्यों के अतिरिक्त अप्रत्यक्ष रूप से राष्ट्र के केन्द्रीय बैंक के रूप में विभिन्न गतिविधियां संचालित करता था, परंतु सन् 1926 में हिल्टन यंग कमीशन ने सिफारिश की कि देश की केन्द्रीय बैंकिंग प्रणाली के लिए एक पूर्णतः पृथक बैंक की स्थापना की जानी चाहिए, जो कि व्यापारिक बैंक काय न करें इसी आधार पर सन् 1935 में केन्द्रीय बैंक के रूप में रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना की गई। रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना के बाद भी इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया भारतीय रिजर्व बैंक के प्रतिनिधि के रूप में विभिन्न अतिरिक्त सेवायें प्रदान करता रहा। अतः भारतीय बैंकिंग के क्षेत्र में इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया का विशेष महत्वपूर्ण स्थान था। इसी कारण इम्पीरियल बैंक का राष्ट्रीयकरण कर 1955 में भारतीय स्टेट बैंक की स्थापना की गई। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि भारतीय बैंकिंग के क्षेत्र में इम्पीरियल बैंक के द्वारा सम्पन्न किये जाने वाले कार्यों का विशेष उल्लेख किया जाये। इम्पीरियल बैंक के द्वारा किये जाने वाले समस्त कार्यों को दो श्रेणियों में बांटा गया।

1. केन्द्रीय बैंकिंग कार्य,
2. व्यापारिक बैंकिंग कार्य

रिजर्व बैंक की स्थापना के पश्चात् भी इम्पीरियल बैंक का महत्व उसके विशाल साधनों, अधिकतम शाखाओं, प्रभाव एवं प्रतिष्ठा के कारण कम नहीं हुआ। वह गैर सरकारी आधार पर भारतीय मुद्रा बाजार का नेतृत्व करता रहा। राष्ट्रीयकरण से पूर्व देश बैंकिंग व्यवस्था में इम्पीरियल बैंक का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान था। इस महत्वपूर्ण बैंक की स्थापना का मुख्य उद्देश्य भारतीय बैंकिंग व्यवस्था में समन्वय स्थापित करना तथा ब्रिटिश प्रणाली से प्रत्यक्ष संबंध स्थापित करना था। उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि भारत में बैंकिंग व्यवसाय के क्षेत्र में राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप उन्नति एवं विकास के लिये इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया का राष्ट्रीयकरण वांछनीय था।

भारतीय स्टेट बैंक की स्थापना मूलतः भारतीय ग्रामीण साख सर्वेक्षण समिति की सिफारिश के आधार पर की गई थी। सन् 1948 में भारतीय रिजर्व बैंक के राष्ट्रीयकरण के पश्चात् ही इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया के राष्ट्रीयकरण की मांग की गई थी, परंतु फरवरी 1948 में तत्कालीन केन्द्रीय वित्तमंत्री ने संसद में यह घोषणा की कि सरकार ने सैद्धांतिक रूप से इम्पीरियल बैंक के राष्ट्रीयकरण की मांग को स्वीकार कर लिया है, किन्तु अनेक व्यवहारिक कठिनाईयों के कारण वर्तमान में उसका राष्ट्रीकरण संभव नहीं है।

सन् 1949 में भारत सरकार ने इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया के प्रस्तावित राष्ट्रीकरण के प्रश्न पर ग्रामीण बैंकिंग जांच समिति से सुझाव प्रस्तुत करने का आग्रह किया। विस्तृत अध्ययन के पश्चात् समिति ने मत व्यक्त किया कि इम्पीरियल बैंक के विरूद्ध जो आरोप लगाये जा रहे हैं, कुछ हद तक न्याय संगत है किन्तु मौद्रिक व्यवस्था में बैंक के महत्व को दृष्टिगत रखते हुये इसका राष्ट्रीयकरण किया जाना अधिक तक्र संगत नहीं होगा। समिति का यह मत था, कि राष्ट्रीयकरण करने की अपेक्षा उसका भारतीयकरण किया जाना अधिक उचित होगा। इसके अतिरिक्त समिति द्वारा यह भी सुझाव प्रस्तुत किया गया कि इम्पीरियल बैंक आगामी पांच वर्षों में कम से कम 270 शाखायें ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित करें किन्तु 30 जून, 1954 तक बैंकों द्वारा केवल 64 शाखायें ही स्थापित की जा सकी थी। भारतीय रिजर्व बैंक ने अगस्त 1951 में एक ''अखिल भारतीय ग्रामीण साख सर्वेक्षण समिति'' की नियुक्ति श्री ए. डी. गोरेवाला की अध्यक्षता में की थी। इस समिति ने सन् 1954 में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। समिति में इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया के कार्यों की कटु आलोचना की एवं अपना मत व्यक्त करते हुये कहा कि ''बैंक ने ग्रामीण क्षेत्रों में शाखायें स्थापित करने की दिशा में सक्रिय रूचि का प्रदर्शन नहीं किया है। अतः देश में कृषि साख व्यवस्था पर्याप्त मात्रा में सुदृढ़ नहीं हो सकी है।

समिति ने सुझाव प्रस्तुत किया कि इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया तथा भूतपूर्व देशी रियासतों से सम्बंधित 10 बैंकों को मिलाकर भारतीय स्टेट बैंक की स्थापना की जाना चाहिये, जिसके 52 प्रतिशत अंशों पर सरकारी स्वामित्व हो। इस सुझाव से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि समिति ने इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया के राष्ट्रीयकरण के संबंध में स्पष्ट रूप से कोई सुझाव प्रस्तुत नहीं किया था। समिति ने अपने प्रतिवेदन में इस बात पर विशेष बल दिया कि इम्पीरियल बैंक अपने नवीन स्वरूप में ग्रामीण क्षेत्रों से अधिक से अधिक संख्या में शाखायें स्थापित करें, सहकारी साख संस्थाओं को वित्तीय सहायता प्रदान करें तथा राष्ट्रीय नीतियों के अनुरूप अपनी कार्य प्रणाली का संचालन करें।

सरकार ने समिति की सिफारिशों को स्वीकार करते हुए और परिस्थितियों को देखते हुये इम्पीरियल बैंक के राष्ट्रीयकरण को ही अधिक उचित समझा। अतः राष्ट्रीयकरण को ही अधिक उचित समझा। अतः 16 अप्रैल, 1951 को इम्पीरियल बैंक का राष्ट्रीयकरण एवं भारतीय स्टेट बैंक की स्थापना से संबंधित विधेयक लोकसभा में प्रस्तुत किया गया। स्टेट बैंक की स्थापना की आवश्यकता को देखते हुए लोकसभा ने विधेयक पर अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी। इसके स्वीकृत हो जाने पर 1 जुलाई, 1955 से भारतीय स्टेट बैंक ने अपना कार्य विधिवत् आरंभ कर दिया।

अतः केन्द्रीय सरकार ने अखिल भारतीय ग्रामीण साख सर्वेक्षण समिति की अनुशंसा के आधार पर स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना का निर्णया लिया। तत्कालीन वित्तमंत्री श्री सी. डी. देशमुख ने स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना की घोषणा की तथा लोकसभा में इम्पीरियल बैंक अधिग्रहण हेतु विधेयक प्रस्तुत करते हुए कहा – ''इसमें इस सदन के सदस्यों तथा जनता की भावनायें एवं इच्छाऐं सन्निहित हैं। स्टेट बैंक न तो सिर्फ कृषि साख की पूर्ति करेगा बल्कि ग्रामीण उद्योगों के हितों की सेवा भी करेगा। इस विधेयक का उद्देश्य मात्र इम्पोरियल बैंक का अधिग्रहण करना नही है बल्कि इसका उद्देश्य हमारे ग्रामीण जीवन में प्राण संचार करना तथा ग्रामीण क्षेत्रों में फिर से नई प्रेरणा प्रदान करना है।

उपरोक्त भावना के अनुरूप केन्द्रीय सरकार ने 16 अप्रैल, 1955 को लोकसभा में विधेयक प्रस्तुत किया। राष्ट्रपति को स्वीकृति के बाद 1 जुलाई, 1955 से यह अधिनियम प्रभावशाली हुआ तथा इम्पीरियल बैंक ने स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के रूप में अपना कार्य प्रारंभ किया।

संदर्भ :–

1. S.G. Parandiker : Banking in India
2. सक्सेना आर.डी. भंडारी वाय.एस. भारतीय बैंकिंग विकास, विकास पब्लिकेशन प्रा.लि. नई दिल्ली
3. Bank Nationalisation in India : A Symposium
4. भारतीय स्टेट बैंक, वार्षिक रिपोर्ट 2012–13
5. State Bank of India Act, 1956 Section 17 and 19

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम का क्रियान्वयन एवं पद्धति

डॉ. संजय तिवारी
विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) नवयुग कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)
श्रीमती शिल्पा भारद्वाज (मिश्रा)
शोध–छात्रा रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)

भारत सरकार द्वारा प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम के रूप में एक नवीन क्रेडिट लिंक सब्सिडी आधारित कार्यक्रम स्वीकृत किया गया है जिसमें रोजगार अवसरों के सृजन हेतु ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में सूक्ष्म उद्यमों की स्थापना द्वारा प्रधानमंत्री रोजगार योजना तथा ग्रामीण रोजगार सृजन कार्यक्रम का विलय कर दिया गया है। प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम केंद्रीय क्षेत्र की एक योजना है जिसका प्रशासन सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग मंत्रालय द्वारा किया जाता है। राष्ट्रीय स्तर पर योजना का क्रियान्वयन एकमात्र केंद्रीय एजेंसी के रूप में खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग द्वारा किया जाता है जो सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग मंत्रालय के प्रशासनिक नियंत्रण के अंतर्गत एक वैधानिक संगठन है। राज्य स्तर पर, योजना का क्रियान्वयन राज्य खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग संचालनालयों, राज्य खादी एवं ग्रामोद्योग मंडलों तथा जिला उद्योग केंद्रों एवं बैंकों द्वारा किया जाता है। योजना के अंतर्गत शासकीय सब्सिडी का निर्धारण केंद्रीय ग्रामोद्योग आयोग द्वारा निर्धारित बैंकों के माध्यम से हितग्राहियों/उद्यमियों को उनके बैंक खातों में वितरित कर किया जायेगा। क्रियान्वयन एजेंसियाँ अर्थात् केंद्रीय ग्रामोद्योग आयोग, केंद्रीय ग्रामोद्योग बोर्ड तथा जिला उद्योग केंद्र योजना के क्रियान्वयन, विशेषतः क्षेत्र विशेष की सक्षम परियोजनाओं के हितग्राहियों के निर्धारण एवं उद्यमिता विकास का प्रशिक्षण प्रदान करने हेतु प्रतिष्ठित गैर–सरकारी संगठनों/प्रतिष्ठित स्वशासी संस्थाओं/ स्वयं सहायता समूहों/राष्ट्रीय लघु उद्योग आयोग/राजीव गाँधी उद्यमी मित्र योजना के अंतर्गत सूची में सम्मिलित उद्यमी मित्र, पंचायती राज संस्थाओं तथा अन्य सम्बद्ध निकायों को सम्बद्ध करेंगे।

योजना के उद्देश्य :–

- नवीन स्व–रोजगार उपक्रम/परियोजना/सूक्ष्म उद्यम स्थापित कर देश के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में रोजगार अवसरों का सृजन करना।
- वृहद रूप से पृथक पारम्परिक शिल्पकारों/ग्रामीण एवं शहरी बेरोजगार युवाओं को साथ लाना तथा उन्हें स्थानीय स्तर पर स्व–रोजगार प्रदान करने के हरसम्भव प्रयास करना।
- देश में पारम्परिक एवं भावी शिल्पकारों तथा ग्रामीण व शहरी बेरोजगार युवाओं को निरंतर एवं स्थायी रोजगार प्रदान करना, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों के युवाओं का शहरों की ओर पलायन कम हो सके।
- शिल्पकारों की आय क्षमता में वृद्धि करना तथा ग्रामीण व शहरी रोजगार की विकास दर में वृद्धि हेतु योगदान देना।

वित्तीय सहायता की प्रकृति :– निर्माण क्षेत्र के अंतर्गत परियोजना/इकाई की अधिकतम स्वीकृत लागत रुपय 25 लाख है। सेवा क्षेत्र के अंतर्गत परियोजना/इकाई की अधिकतम स्वीकृत लागत रुपये 10 लाख है। योजनांतर्गत दी जाने वाली शासकीय सब्सिडी जो हितग्राहियों के बैंक खातों में जमा की जाने वाली है, खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग द्वारा चयनित बैंकों के माध्यम से निर्धारित की जाती है। सामान्य श्रेणी के हितग्राहियों/संस्था हेतु बैंक परियोजना लागत की 90 प्रतिशत राशि तथा हितग्राही/संस्था की विशेष श्रेणी होने पर परियोजना लागत की 95 प्रतिशत राशि स्वीकृत करते हैं तथा परियोजना निर्माण हेतु आवश्यक पूर्ण राशि का भुगतान करते हैं।

हितग्राहियों हेतु पात्रता की शर्तें :–

- कोई भी व्यक्ति जिसकी आयु 18 वर्ष से अधिक हो
- प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम के अंतर्गत परियोजना निर्माण में वित्तीय सहायता हेतु आय की कोई उच्चतम सीमा नहीं होगी।
- निर्माण क्षेत्र में रुपये 10 लाख एवं व्यवसायिक/सेवा क्षेत्र में रुपये 5 लाख से अधिक के परियोजना निर्माण हेतु हितग्राहियों को न्यूनतम 8वीं कक्षा उत्तीर्ण होना चाहिये।
- प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम के अंतर्गत स्वीकृत नवीन परियोजनाओं को ही योजना में वित्तीय सहायता उपलब्ध है।
- स्व–सहायता समूह (गरीबी रेखा सूची में सम्मिलित भी, यदि उन्होंने किसी भी अन्य योजना का लाभ न लिया हो) भी प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम के अंतर्गत वित्तीय सहायता के पात्र हैं।
- सोसायटी पंजीयन अधिनियम, 1860 के अंतर्गत पंजीकृत संस्थाएँ।
- उत्पादन सहकारी समितियाँ तथा
- धमार्थ ट्रस्ट
- वर्तमान में कार्यरत इकाइयाँ (प्रधानमंत्री रोजगार योजना, ग्रामीण रोजगार सृजन कार्यक्रम अथवा अन्य शासकीय या राज्यीय योजना के अंतर्गत) तथा वे इकाइयाँ जो पूर्व में ही भारत सरकार अथवा राज्य सरकार की किसी अन्य योजना में शासकीय सब्सिडी का लाभ प्राप्त कर चुकी हैं, वे इस योजना में पात्र नहीं होंगी।

क्रियान्वयन एजेंसी :– खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग अधिनियम, 1956 के अंतर्गत गठित खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग मुम्बई द्वारा योजना क्रियान्वित की जाती हैं, जो राष्ट्रीय स्तर की एकमात्र केंद्रीय एजेंसी है। योजना का क्रियान्वयन राज्य स्तर पर खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग के राज्य संचालनालयों तथा ग्रामीण क्षेत्रों में जिला उद्योग केंद्रों द्वारा किया जाता है। महानगरों में योजना का क्रियान्वयन केवल राज्य के जिला उद्योग केंद्रों द्वारा ही किया जाता है। खादी ग्रामोद्योग आयोग राज्यस्तरीय खादी ग्रामोद्योग आयोगों/राज्यस्तरीय जिला उद्योग केंद्रों से समन्वय कर ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में योजना का निष्पादन मूल्यांकन करता है। खादी ग्रामोद्योग आयोग एवं जिला उद्योग केंद्र;राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम, राजीव गाँधी उद्यमी मित्र योजना के अंतर्गत सम्मिलित उद्यमी मित्रों, पंचायती राज संस्थाओं एवं अन्य प्रतिष्ठित गैर–सरकारी संगठनों को भी प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम के अंतर्गत हितग्राहियों की निर्धारण प्रक्रिया में शामिल करते हैं।

अन्य एजेंसियाँ :– प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम के क्रियान्वयन में केंद्रीय एजेंसियों द्वारा सम्बद्ध की जानी वाली अन्य एजेंसियों का विवरण निम्नानुसार है :–

- खादी ग्रामोद्योग आयोग के क्षेत्र अधिकारी एवं इसके राज्यीय कार्यालय।
- राज्यस्तरीय खादी ग्रामोद्योग मंडल
- समस्त राज्य सरकार/केंद्रशासित प्रदेश प्रशासनों के जिला उद्योग केंद्र, जो सम्बंधित आयुक्त/सचिव (उद्योग) को सूचना प्रदान करते हों।
- बैंक/वित्तीय उद्योग।
- खादी ग्रामोद्योग संघ
- महिला एवं बाल विकास विभाग, नेहरू युवा केंद्र संगठन, आर्मी वाइव्ज़ वेलफेयर एसोसियेशन ऑफ इंडिया (आवा) तथा पंचायती राज संस्थाएँ।
- गैर–सरकारी संगठन, जिन्हें लघु, कृषि आधारित व ग्रामीण उद्योग के प्रचार–प्रसार, तकनीकी परामर्श सेवाओं, ग्रामीण विकास, सामाजिक कल्याण जैसे क्षेत्रों के परियोजना परामर्श में न्यूनतम 5 वर्ष का अनुभव तथा दक्षता प्राप्त हो। साथ ही, वे आवश्यक अधोसंरचना एवं मानव शक्ति से भी युक्त होने चाहिये जो राज्य अथवा जिलों में ग्रामीण स्तर पर कार्य कर सके। गैर–सरकारी संगठनों को उनके द्वारा विगत 3 वर्षों की अवधि में आयोजित किसी भी कार्यक्रम हेतु राज्य अथवा केंद्रीय स्तर की शासकीय एजेंसी से अनुदान–प्राप्त होना चाहिये।
- व्यवसायिक मार्गदर्शन अथवा तकनीकी पाठ्यक्रमों से युक्त व्यवसायिक संस्थाएँ/तकनीकी महाविद्यालय, जो

शासन/विश्वविद्यालय, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग एवं ए.आई.सी.टी.ई द्वारा मान्यता प्राप्त हों तथा उनमें आई.टी.आई, ग्रामीण पॉलिटेक्निक, खाद्य प्रसंस्करण प्रशिक्षण संस्थानों जैसे कौशल आधारित प्रशिक्षण प्रदान किये जाते हों।

- खादी ग्रामोद्योग आयोग/खादी ग्रामाद्योग मंडल द्वारा सहायता प्राप्त प्रमाणित खादी ग्रामोद्योग संस्थाएँ, यदि इन्हें ए+, ए अथवा बी श्रेणी प्राप्त हो तथा क्रियान्वयन हेतु वे आवश्यक अधोसंरचना, मानव शक्ति व दक्षता से युक्त हों।
- खादी ग्रामोद्योग आयोग/खादी ग्रामोद्योग मंडल के विभागीय एवं गैर विभागीय प्रशिक्षण केंद्र।
- सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग विकास संस्थाएँ, एम.एस.एम.ई. टूल रूम एवं तकनीकी विकास केंद्र जो विकास आयुक्त कार्यालय, एम.एस.एम. ई. के प्रशासनिक नियंत्रण में हों।
- सार्वजनिक एवं निजी सम्बद्धता (पी.पी.पी. मोड) में स्थापित किये गये राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम के कार्यालय, तकनीकी केंद्र, लघु उद्यम तथा लघु उद्यम प्रशिक्षण केंद्र।
- राष्ट्रीय स्तर के उद्यमिता विकास संस्थान, जैसे – सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग मंत्रालय के प्रशासनिक नियंत्रण के अंतर्गत आने वाले राष्ट्रीय उद्यमिता एवं लघु व्यवसाय विकास संस्थान, राष्ट्रीय सूक्ष्म, ल्घु एवं मध्यम उद्योग संस्थान तथा भारतीय उद्यमिता संस्थान गुवाहाटी, उनकी शाखाएँ तथा सहायक संस्थाओं द्वारा स्थापित उद्यमिता विकास संस्थान।
- सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग मंत्रालय की राजीव गाँधी उद्यमी मित्र योजना के अंतर्गत सूची में सम्मिलित उद्यमी मित्र।
- प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम संघ, जब भी स्थापित हो।

वित्तीय संस्थाएँ :–

- 27 सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक
- समस्त क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक
- प्रमुख सचिव (उद्योग)/आयुक्त (उद्योग) की अध्यक्षता के अंतर्गत राज्यस्तरीय कार्यदल समिति द्वारा अनुमोदित सहकारी बैंक।
- प्रमुख सचिव (उद्योग)/आयुक्त (उद्योग) की अध्यक्षता के अंतर्गत राज्यस्तरीय कार्यदल समिति द्वारा अनुमोदित निजी क्षेत्र के अनुसूचित व्यवसायिक बैंक
- भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (सिडबी)

हितग्राहियों का निर्धारण :– राज्य स्तर पर हितग्राहियों का निर्धारण, खादी ग्रामोद्योग आयोग/राज्य खादी ग्रामोद्योग मंडल एवं राज्यस्तरीय जिला उद्योग केंद्रों तथा बैंकों के प्रतिनिधियों से युक्त एक कार्यदल द्वारा किया जाता है। इस कार्यदल की अध्यक्षता जिला मजिस्ट्रेट/उपायुक्त/सम्बंधित कलेक्टर द्वारा की जायेगी। प्रक्रिया के प्रारम्भ से सम्मिलित बैंक अधिकारी यह सुनिश्चित करते हैं कि आवश्यकता से अधिक आवेदन एकत्रित न हों। तथापि, जिन आवेदकों ने उद्यमिता विकास कार्यक्रम/कौशल विकास कार्यक्रम/उद्यमिता सह कौशल विकास कार्यक्रम अथवा व्यवसायिक प्रशिक्षण के अंतर्गत न्यूनतम 2 सप्ताह का प्रशिक्षण प्राप्त किया हो, वे प्रत्यक्ष रूप से बैंकों को आवेदन प्रस्तुत कर सकते हैं। हालांकि, बैंक ऐसे आवेदनों को विचार हेतु कार्यदल के समक्ष ही प्रस्तुत करते हैं। केवल अधिक सब्सिडी प्राप्त करने के उद्देश्य से परियोजना लागत में वृद्धि करना अमान्य है। खादी ग्रामोद्योग आयोग, भारतीय स्टेट बैंक एवं भारतीय रिजर्व बैंक से परामर्श कर एक स्कोर कार्ड बनाते हैं तथा उसे जिलास्तरीय कार्यदल एवं अन्य राज्य/जिलास्तरीय अधिकारियों को अग्रेषित कर देते हैं। यह स्कोर कार्ड हितग्राहियों के चयन का आधार बनता है। यह स्कोर कार्ड खादी ग्रामोद्योग आयोग एवं मंत्रालय की वेबसाइटों पर प्रदर्शित किया जाता है। चयन प्रक्रिया पारदर्शी, उद्देश्यपरक एवं निष्पक्ष आधार पर होनी चाहिये। चयन प्रक्रिया में पंचायती राज संस्थाओं को भी शामिल किया जाता है।

बैंक वित्त :–

1. सामान्य श्रेणी के हितग्राहियों/संस्था हेतु बैंक परियोजना लागत की 90 प्रतिशत राशि तथा हितग्राही/संस्था की विशेष श्रेणी होने पर

परियोजना लागत को 95 प्रतिशत राशि स्वीकृत करते हैं तथा परियोजना निर्माण हेतु आवश्यक पूर्ण राशि का भुगतान करते हैं।

2. बैंक, मियादी ऋण के रूप में पूँजीगत व्यय तथा नकदी ऋण के रूप में कार्यशील पूँजी हेतु वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं। परियोजना हेतु बैंकों द्वारा वित्तीय सहायता संयोजित ऋण के रूप में भी दी जा सकती है जिसमें पूँजीगत व्यय तथा कार्यशील पूँजी सम्मिलित हों। बैंक ऋण की राशि कुल परियोजना लागत की 60–75 प्रतिशत राशि के मध्य होती है जिसकी गणना 15–35 प्रतिशत मार्जिन राशि (सब्सिडी) तथा स्वामित्व योगदान (सामान्य श्रेणो हेतु 10 प्रतिशत तथा विशिष्ट श्रेणी हेतु 5 प्रतिशत) घटाकर की जाती है। अतः इस योजना में प्रतिभागी बैंकों द्वारा ऋणों के संवर्धित आवंटन एवं स्वीकृति की आवश्यकता होती है। इसकी प्राप्ति आवश्यक होतीहै क्योंकि भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा पूर्व से ही सार्वजनिक क्षेत्रां के बैंकों को इस सम्बंध में दिशानिर्देश जारी किये गये हैं कि वे सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग क्षेत्र के ऋणों में प्रतिवर्ष 20 प्रतिशत की वृद्धि सुनिश्चित करें। भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (सिडबी) भी सूक्ष्म उद्यमों में अपने ऋण प्रदाय क्रियाकलापों को सशक्त कर रहा है जिससे वर्ष 2006–07 से प्रारम्भ पाँच वर्ष की अवधि में वह 50 लाख अतिरिक्त हितग्राहियों को लाभ प्रदान करेगा, साथ ही यह प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम के अंतर्गत अन्य अनुसूचित व्यवसायिक बैंकों के अतिरिक्त एक प्रतिभागी वित्तीय संस्थान के रूप में प्रतिष्ठित है।

3. यद्यपि बैंक परियोजना प्रतिवेदन तथा तत्सम्बंधी स्वीकृत प्रकरणों में मार्जिन राशि (सब्सिडी) का दावा पूँजीगत व्यय सम्बंधी तथ्यों के आधार पर करते हैं, तथापि यदि पूँजीगत व्यय के वास्तविक उपयोग पर मार्जिन राशि (सब्सिडी) यथावत रखते हुए अधिशेष की जानी है तो उसका प्रतिभुगतान खादी ग्रामोद्योग आयोग को परियोजना के उत्पादन हेतु तैयार होने के तुरंत बाद कर दिया जायेगा।

4. कार्यशील पूँजी का संयोजन इस प्रकार से किया जाना चाहिये कि एक स्थिति में यह तीन वर्ष की अवधि में नकद ऋण की 100 प्रतिशत सीमा तक पहुँच जाये तथा स्वीकृत सीमा के 75 प्रतिशत उपयोग से किसी भी स्थिति में कम न हो। यदि यह उपरोक्त सीमा तक नहीं पहुँचता तो मार्जिन राशि (सब्सिडी) की आनुपातिक राशि की वसूली बैंक/वित्तीय संस्थाओं द्वारा की जाती है और तीसरे वर्ष के अंत में खादी ग्रामोद्योग आयोग को इसका प्रतिभुगतान कर दिया जाता है।

5. ब्याज की सामान्य दर भारित की जाती है तथा ऋण भुगतान की समय–सारणी के अंतर्गत सम्बंधित बैंक/वित्तीय संस्थान द्वारा निर्धारित प्रारम्भिक स्थगन आदेश के पश्चात् भुगतान सीमा 3 से 7 वर्ष के मध्य हो सकती है। बहुधा यह देखा गया है कि बैंक प्रक्रियात्मक रूप से प्रस्ताव के गुणों का अवलोकन करने की अपेक्षा ऋण की गारंटी सुनिश्चित करने हेतु अधिक जोर डालते हैं। इस अवधारणा को हतोत्साहित किया जाना चाहिये। भारतीय रिजर्व बैंक, बैंकों को दिशानिर्देश जारी करता है कि प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम के अंतर्गत स्वीकृत परियोजनाओं को प्राथमिकता दी जाये। भारतीय रिजर्व बैंक यह दिशानिर्देश भी जारी करता है कि किन क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को योजना के क्रियान्वयन में शामिल नहीं किया जाना चाहिये।

प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम के अंतर्गत स्थापित इकाइयों का भौतिक सत्यापन :– प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम के अंतर्गत स्थापित प्रत्येक इकाई की वास्तविक संरचना एवं कार्यकारी स्तर का 100 प्रतिशत भौतिक सत्यापन किया जाता है, इनमें वे इकाइयां भी शामिल हैं जिनकी स्थापना खादी ग्रामोद्योग मंडलों एवं जिला उद्योग केंद्र के माध्यम से की गई है। इनका सत्यापन खादी ग्रामोद्योग आयोग द्वारा राज्य सरकार की एजेंसियों और/अथवा, आवश्यकतानुसार बाहरी स्रोत को ठेके पर कार्य देने की प्रणाली से उन पेशेवर संस्थाओं के माध्यम से कराया जायेगा जिन्हें इस क्षेत्र में दक्षता प्राप्त हो और वे भारत सरकार के सामान्य वित्तीय नियमों के अनुसार निर्धारित प्रक्रिया का पालन करेंगे। बैंक, जिला उद्योग केंद्र एवं खादी ग्रामोद्योग मंडल समन्वित रूप से खादी ग्रामोद्योग आयोग का सहयोग करेंगे और सुनिश्चित करेंगे

कि इकाइयों का 100 प्रतिशत भौतिक सत्यापन हो रहा है। इकाइयों के इस प्रकार के भौतिक सत्यापन हेतु खादी ग्रामोद्योग आयोग द्वारा एक उचित प्रारूप रूपांकित किया जाता है। खादी ग्रामोद्योग आयोग द्वारा सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग मंत्रालय को निर्धारित प्रारूप में त्रैमासिक प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जाता है।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

किशोरावस्था की छात्राओं की समस्याओं पर विद्यालयीन परिवेश के प्रभाव का अध्ययन

स्वाती पाठक
शोधार्थी, शिक्षा संकाय, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल

डॉ. ममता बाकलीवाल
प्राध्यापक, शिक्षा संकाय राजीव गाँधी महाविद्यालय, त्रिलंगा, भोपाल

प्रस्तुत शोध पत्र में किशोरावस्था की छात्राओं की समस्याओं पर विद्यालयीन परिवेश के प्रभाव का अध्ययन किया गया है। न्यादर्श के रूप में 100 छात्राओं का चयन कर उन पर किशोरावस्था समस्या मापनी एव विद्यालयीन परिवेश मापनी का प्रशासन किया गया तथा विद्यालयीन परिवेश के आधार पर छात्राओं को उच्च एवं निम्न विद्यालयीन परिवेश समूह में बांट कर किशोरावस्था की छात्राओं की विभिन्न समस्याओं पर विद्यालयीन परिवेश के प्रभाव का अध्ययन किया गया। प्राप्त परिणामों के अनुसार किशोरावस्था की छात्राओं की संवेगात्मक/सामाजिक/ व्यावसायिक समस्याओं पर विद्यालयीन परिवेश का सार्थक प्रभाव पाया गया।

किशोरावस्था को जीवन की बंसत ऋतु माना गया है। यह विकास की वह अवस्था है जो बाल्यावस्था एवं प्रौढ़ावस्था के मध्य संधि काल के रूप में रहती है। इस अवस्था में किशोरावस्था की छात्राओं के शरीर, व्यवहार, संवेगों में तीव्र गति से परिवर्तन आते हैं। जिनके कारण वह विभिन्न समस्याओं से जूझती हैं और उन्हें समझ नहीं आता कि वो क्या करें, इस अवस्था में उनकी जिज्ञासाओं का उचित समाधान न होने के कारण उनमें चिंता व बैचैनी बढ़ने लगती है। किशोरावस्था में छात्राएं अपने मूल्यों, आदर्शों तथा संवेगों में संघर्ष का अनुभव करती हैं एवं उचित समायोजन न होने के कारण वह स्वयं को दुविधापूर्ण स्थिति में पाती हैं। अतः इस अवस्था में विद्यालयों, शिक्षकों, समाज व परिवार का यह कर्त्तव्य है कि वह किशोरावस्था की छात्राओं के लिए ऐसी शिक्षा का प्रबंध करें जिससे छात्राएं अपने जीवन में आने वाली समस्याओं को हल करने के योग्य बन सकें। किशोरावस्था में सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास में विद्यालय की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, अतः किशोरावस्था की छात्राओं के सकारात्मक व्यक्तित्व विकास व समायोजन में विद्यालय की महत्वपूर्ण भूमिका होने के कारण ही किशोरावास्था की छात्राओं की विभिन्न समस्याओं पर विद्यालयीन परिवेश के प्रभाव का अध्ययन करना बहुत हो सामयिक प्रतीत हो रहा है।

प्रस्तुत शोध से संबंधित पूर्व में भी कुछ शोध कार्य किये गये हैं जैसे – लीकॉक (1969), गुडविन, सैण्डर (1969) एवं फ्रेडमेन (1973) द्वारा मध्यमवर्गीय अल्पसंख्यक विद्यार्थियों पर किये गये मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में शिक्षक का दृष्टिकोण सामान्यतः नकारात्मक पाया गया, जिसका प्रभाव अधिकांश विद्यार्थियों के व्यवहार में देखा गया। कक्कर (1967) ने अपने अध्ययन में बताया कि किशोरों को मुख्यतः विद्यालयों में अधिकतर समस्याओं का सामना करना पड़ता है। कोल तथा वेरोन (1976) ने अपने अध्ययन में पाया कि शिक्षक का कुसमायोजित व्यक्तित्व, विद्यार्थियों में असुरक्षा, हीनता का भाव, अप्रसन्नता आदि गुण विकसित करता है। दास, एन. (1982) ने अपने अध्ययन के निष्कर्षतः पाया कि विद्यालय का असंतोषजनक वातावरण, विद्यालय में निम्न समायोजन, विद्यालयीन कार्यक्रमों में भागीदारी, सामाजिक स्थिति, अध्यापकों और छात्रों के समुदाय आदि का किशोरों की व्यवहारगत समस्याओं में योगदान पाया गया। रावल, जी.एल. (1984) ने अपने अध्ययन के निष्कर्षतः पाया कि विद्यालयीन परिवेश संवेगात्मक विचलित किशोरों के पूर्ण समायोजन को प्रभावित करता है। मंजुबनी (1990) ने अपने अध्ययन में पाया की पारिवारिक एवं विद्यालयीन वातावरण का मानसिक स्वास्थ्य के निर्धारण में सार्थक योगदान था। प्रधान, सी. (1991) के अध्ययन के निष्कर्षतः ज्ञात हुआ कि विद्यालयीन संस्थागत वातावरण विद्यार्थियों के गृह, सामाजिक, स्वास्थ्य, संवेगात्मक तथा विद्यालयीन समायोजन को प्रभावित नहीं

करता है। विद्या, प्रतिमा (2006) ने अपने अध्ययन में पाया कि विद्यार्थियों में तनाव का 40 प्रतिशत कारण उनके विद्यालय हैं तथा किशोर–किशोरियों के समायोजन में विद्यालय की महत्वपूर्ण भूमिका है। पालीवाल एवं अन्य (2006) ने अपने अध्ययन में पाया कि विद्यालयीन समायोजन तथा विद्यालयीन वातावरण में सार्थक सह संबंध पाया गया। गलफट, संगीता; शर्मा, आलोक एवं बाजपेयी, आशीष (2015) ने अपने अध्ययन में पाया था कि निम्न विद्यालयीन परिवेश वाले किशोरावस्था के छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों में, उच्च विद्यालयीन परिवेश वाले छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों की तुलना में अधिक संवेगात्मक, सामाजिक, व्यावसायिक समस्याएं पाई गई थीं। उपर्युक्त अध्ययनों से शोधकर्ता ने निष्कर्ष निकाला की किशोरावस्था की छात्राओं की समस्याओं पर विद्यालयीन परिवेश के प्रभाव का अध्ययन करना आवश्यक है, जिससे की छात्राओं की समस्याऐं जानकर उनका निराकरण किया जा सके।

उद्देश्य :–

1. किशोरावस्था की छात्राओं की संवेगात्मक समस्या पर विद्यालयीन परिवेश के प्रभाव का अध्ययन करना।
2. किशोरावस्था की छात्राओं की सामाजिक समस्या पर विद्यालयीन परिवेश के प्रभाव का अध्ययन करना।
3. किशोरावस्था की छात्राओं की व्यावसायिक समस्या पर विद्यालयीन परिवेश के प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पना :–

1. किशोरावस्था की छात्राओं की संवेगात्मक समस्या पर विद्यालयीन परिवेश का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जायेगा।
2. किशोरावस्था की छात्राओं की सामाजिक समस्या पर विद्यालयीन परिवेश का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जायेगा।
3. किशोरावस्था की छात्राओं की व्यावसायिक समस्या पर विद्यालयीन परिवेश का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जायेगा।

उपकरण :–

1. किशोरावस्था समस्या मापनी – आशीष बाजपेयी, हरगोविंद शुक्ला एवं अमित गुप्ता

2. विद्यालयीन परिवेश मापनी – डॉ. अशोक शर्मा एवं डॉ. (श्रीमति) अनीता सोनी

विधि :– सवप्रथम होशंगाबाद जिले के माध्यमिक विद्यालयों की सूची प्राप्त की गई तथा इस सूची में से दो विद्यालयों का चयन किया गया तथा इन विद्यालयों की कक्षा नवमीं व दसवीं में अध्ययनरत् 100 छात्राओं का चयन साधारण यादृच्छिक विधि द्वारा कर उन पर सामूहिक रूप से 'किशोरावस्था समस्या मापनी' एवं 'विद्यालय परिवेश मापनी' का प्रशासन किया गया। विद्यालयीन परिवेश के आधार पर छात्राओं को उच्च एवं निम्न विद्यालयीन परिवेश समूह में विभाजित कर किशोरावस्था समस्या मापनी के तीनों क्षेत्रों का अलग अलग फलांकन किया गया। प्राप्तांकों के आधार पर मास्टर शीट तैयार की गई। मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रांतिक अनुपात परीक्षण के द्वारा आंकड़ों का विश्लेषण किया गया तथा प्राप्त परिणामों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गये।

परिणामों का विश्लेषण :–

परिकल्पना – 1 : किशोरावस्था की छात्राओं की संवेगात्मक समस्या पर विद्यालयीन परिवेश का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जायेगा।

तालिका क्रमांक – 1
किशोरावस्था की छात्राओं की संवेगात्मक समस्या पर विद्यालयीन परिवेश के प्रभाव संबंधी तुलनात्मक परिणाम

विद्यालयीन परिवेश	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात मान	'पी' मान
उच्च	59	8.85	3.03	2.64	< 0.01
निम्न	41	10.41	2.79		

स्वतंत्रता के अंश – 98 0.01 स्तर के लिये निर्धारित न्यूनतम मान – 2.63

उपरोक्त सारणी में प्रदर्शित परिणामों से यह स्पष्ट है कि किशोरावस्था की उच्च एवं निम्न विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं की संवेगात्मक समस्या के मध्यमान क्रमशः 8.85 व 10.41 प्राप्त हुये जिनके मध्य 1.56 का अंतर है। यह अंतर सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक है क्योंकि इनके लिये प्राप्त क्रातिक अनुपात का मान 2.64 स्वतंत्रता के अंश 98 पर सार्थकता के 0.01 स्तर के लिये निर्धारित न्यूनतम मान 2.63 की अपेक्षा अधिक है।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि किशोरावस्था की उच्च एवं निम्न विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं के मध्य संवेगात्मक समस्या में सार्थक अंतर पाया गया तथा निम्न विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं में, उच्च विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं की तुलना में अधिक संवेगात्मक समस्याएं पाई गयी, अर्थात् किशोरावस्था की छात्राओं की संवेगात्मक समस्याओं पर विद्यालयीन परिवेश का सार्थक प्रभाव पाया गया।

उपरोक्त परिणामों के परिप्रेक्ष्य में पूर्व में ली गई परिकल्पना ''किशोरावस्था की छात्राओं की संवेगात्मक समस्या पर विद्यालयीन परिवेश का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जायेगा'' अस्वीकृत की जाती है।

परिकल्पना – 2 : किशोरावस्था की छात्राओं की सामाजिक समस्या पर विद्यालयीन परिवेश का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जायेगा।

तालिका क्रमांक – 2
किशोरावस्था की छात्राओं की सामाजिक समस्या पर विद्यालयीन परिवेश के प्रभाव संबंधी तुलनात्मक परिणाम

विद्यालयीन परिवेश	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात मान	'पी' मान
उच्च	59	7.17	2.95	2.02	< 0.05
निम्न	41	8.32	2.68		

स्वतंत्रता के अंश – 98 0.05 स्तर के लिये निर्धारित न्यूनतम मान – 1.98

उपरोक्त सारणी में प्रदर्शित परिणामों से यह स्पष्ट है कि किशोरावस्था की उच्च एवं निम्न विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं की सामाजिक समस्या के मध्यमान क्रमशः 7.17 व 8.32 प्राप्त हुये जिनके मध्य 1.15 का अंतर है। यह अंतर सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक है क्योंकि इनके लिये प्राप्त क्रातिक अनुपात का मान 2.02 स्वतंत्रता के अंश 98 पर सार्थकता के 0.05 स्तर के लिये निर्धारित न्यूनतम मान 1.98 की अपेक्षा अधिक है।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि किशोरावस्था की उच्च एवं निम्न विद्यालयीन

परिवेश वाली छात्राओं के मध्य सामाजिक समस्या में सार्थक अंतर पाया गया तथा निम्न विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं में, उच्च विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं की तुलना में अधिक सामाजिक समस्याएं पाई गयी, अर्थात् किशोरावस्था की छात्राओं की सामाजिक समस्याओं पर विद्यालयीन परिवेश का सार्थक प्रभाव पाया गया।

उपरोक्त परिणामों के परिप्रेक्ष्य में पूर्व में ली गई परिकल्पना ''किशोरावस्था की छात्राओं की सामाजिक समस्या पर विद्यालयीन परिवेश का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जायेगा'' अस्वीकृत की जाती है।

परिकल्पना – 3 : किशोरावस्था की छात्राओं की व्यावसायिक समस्या पर विद्यालयीन परिवेश का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जायेगा।

तालिका क्रमांक – 3

किशोरावस्था की छात्राओं की व्यावसायिक समस्या पर विद्यालयीन परिवेश के प्रभाव संबंधी तुलनात्मक परिणाम

विद्यालयीन परिवेश	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात मान	'पी' मान
उच्च	59	4.93	2.35	3.24	< 0.01
निम्न	41	6.29	1.97		

स्वतंत्रता के अंश – 98 0.01 स्तर के लिये निर्धारित न्यूनतम मान – 2.63

उपरोक्त सारणी में प्रदर्शित परिणामों से यह स्पष्ट है कि किशोरावस्था की उच्च एवं निम्न विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं की व्यावसायिक समस्या के मध्यमान क्रमशः 4.93 व 6.29 प्राप्त हुये जिनके मध्य 1.36 का अंतर है। यह अंतर सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक है क्योंकि इनके लिये प्राप्त क्रातिक अनुपात का मान 3.24 स्वतंत्रता के अंश 98 पर सार्थकता के 0.01 स्तर के लिये निर्धारित न्यूनतम मान 2.63 की अपेक्षा अधिक है।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि किशोरावस्था की उच्च एवं निम्न विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं के मध्य व्यावसायिक समस्या मं सार्थक अंतर पाया गया तथा निम्न विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं में, उच्च विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं की तुलना में अधिक व्यावसायिक समस्याएं पाई गयी, अर्थात् किशोरावस्था की छात्राओं की व्यावसायिक समस्याओं पर विद्यालयीन परिवेश का सार्थक प्रभाव पाया गया।

अतः उपरोक्त परिणामों के परिप्रेक्ष्य में पूर्व में ली गई परिकल्पना ''किशोरावस्था की छात्राओं की व्यावसायिक समस्या पर विद्यालयीन परिवेश का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जायेगा'' अस्वीकृत की जाती है।

निष्कर्ष :–

1. किशोरावस्था की छात्राओं की संवेगात्मक समस्याओं पर विद्यालयीन परिवेश का सार्थक प्रभाव पाया गया तथा निम्न विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं में, उच्च विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं की तुलना में अधिक व्यावसायिक समस्याएं पाई गयीं।
2. किशोरावस्था की छात्राओं की सामाजिक समस्याओं पर विद्यालयीन परिवेश का सार्थक प्रभाव पाया गया तथा निम्न विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं में, उच्च विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं की तुलना में अधिक व्यावसायिक समस्याएं पाई गयीं।
3. किशोरावस्था की छात्राओं की व्यावसायिक समस्याओं पर विद्यालयीन परिवेश का सार्थक प्रभाव पाया गया तथा निम्न विद्यालयोन परिवेश वाली छात्राओं में, उच्च विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं की तुलना में अधिक व्यावसायिक समस्याएं पाई गयीं।

परिणामों की व्याख्या :– किशोरावस्था की उच्च तथा निम्न विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं की विभिन्न समस्याओं (संवेगात्मक, सामाजिक एवं व्यावसायिक) में सार्थक अंतर पाया जाना तथा निम्न विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं में उपरोक्त समस्याएँ उच्च विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं से अधिक पाया जाना इस बात का घोतक है कि विद्यालयीन परिवेश छात्राओं के समायोजन को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक है, जिन विद्यालयों का परिवेश शांत, सुखद व सकारात्मक होता है उन विद्यालयों में छात्राओं का समायोजन बेहतर तरीके से होता है एवं उन्हें विभिन्न प्रकार की समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ता है या फिर वे अपनी समस्याओं के लिए विद्यालयों में शिक्षकों से मार्गदर्शन प्राप्त कर अपनी समस्याओं का समाधान प्राप्त कर लेती हैं। साथ ही अच्छे विद्यालयों में कैरियर, मार्गदर्शक एवं परामर्शदाता की नियुक्ति भी की जाती है जिससे कि वह छात्राओं विशेषकर किशोरावस्था की छात्राओं को विषय चयन, भविष्य निर्माण संबंधी जानकारी प्रदान करने के साथ ही छात्राओं की विभिन्न समस्याओं के लिए उन्हें परामर्श प्रदान कर उनकी समस्याओं को हल करने में सकारात्मक भूमिका का निर्वाह करते हैं, संभवतः यही कारण है कि उच्च विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं में निम्न विद्यालयीन परिवेश वाली छात्राओं की अपेक्षा कम समस्याएं पायी गयीं। रावल, जी.एल. (1984) ने अपने अध्ययन के निष्कर्षतः पाया कि विद्यालयीन परिवेश संवेगात्मक विचलित किशोरों के पूर्ण समायोजन को प्रभावित करता है। विद्या, प्रतिमा (2006) ने अपने अध्ययन में पाया कि विद्यार्थियों में तनाव का 40 प्रतिशत कारण उनके विद्यालय हैं तथा किशोर–किशोरियों के समायोजन में विद्यालय की महत्वपूर्ण भूमिका है। गलफट, संगीता; शर्मा, आलोक एवं बाजपेयी, आशीष (2015) ने अपने अध्ययन में पाया था कि निम्न विद्यालयीन परिवेश वाले किशोरावस्था के छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों में, उच्च विद्यालयीन परिवेश वाले छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों की तुलना में अधिक संवेगात्मक, सामाजिक, व्यावसायिक समस्याएं पाई गई थीं। अतः प्रस्तुत शोध से प्राप्त परिणामों की पुष्टि पूर्व में किए गए उपरोक्त शोध कार्यों से होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गुप्ता, एस. पी. (2005) ''सांख्किीय विधियां'' शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
2. वालिया, जे.एस. (2005) ''शिक्षा मनोविज्ञान की बुनियादें'' पाल पब्लिशर्स, जालंधर।
3. गलफट, संगीता; शर्मा, आलोक एवं बाजपेयी, आशीष (2015) ''किशोरावस्था के विद्यार्थियों की समस्याओं पर विद्यालयीन परिवेश के प्रभाव का अध्ययन'', सामाजिक शोध योजना, वाल्यूम–III, अंक–टए अक्टूबर (2015), पेज नं. 18–23
4. रावल, जी.एल. (1984) "संवेगात्मक रूप से विचलित किशोरों के व्यक्तित्व समायोजन का पारिवारिक एवं विद्यालयीन वातावरण के संबंध का अध्ययन", फोर्थ सर्वे ऑफ एजूकेशन रिसर्च, वाल्यूम–I, पेज.नं. 422–423
5. Das, N. (1982) "Some Behaviour Problems of the Secondary School Students of the District of Burdwan and Their Causes", Ph.D. Edu., In Third Survey of Research in Education. (1978-83), Pg. No. - 121.
6. Manjuvani, E. (1990) "Influence of home and school environment on the mental health status of children", Ph.D., Home Sc., Sri Venkateswara University, In Fifth Survey of Educational Research (1988-92), Vol. - II, Pg. No. 968.
7. Pradhan, C. (1991) "Effect of school organisational climate on the creativity, adjustment and academic achievement of secondary school students of Orissa", Ph.D. Edu., Utkal Univ., In Fifth Survey of Educational Research (1988-92), Vol. - II, Pg. No. 1840.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

सिन्धिया – होलकर प्रतिद्धन्दिता –एक विवेचना

Dr. Pankaj Kumar Malviya
Gf. History Govt. College Bagh Dist. Dhar M.P

सिन्धिया और होलकर के मध्य की यह प्रतिद्धन्दिता परम्परागत थी। महादजी सिन्धिया और तुकोजी होलकर का परस्पर बैर भाव और विरोध बड़ा पुराना था, जो राणोजी सिन्धिया और मल्हारराव होलकर के समय चला आ रहा था। जब अगस्त 1790 ई. में महादजी ने मथुरा में एक बड़ा जलसा किया तो तुकोजी ने उसमें जाने से इन्कार कर दिया। इस प्रकार दोनों मराठा सरदारों को मनोमालिन्य बढ़ता ही रहा। लखेरी के युद्ध में तुकोजी की पराजय होने से दोनों के मध्य की खाई और भी अधिक बढ़ गई। जिसे पाटा न जा सका। यशवन्तराव होलकर को भी यह वैरभाव विरासत में प्राप्त हुआ था।

यश्वन्तराव होलकर का प्रतिस्पर्धा और उसका समकालीन दौलतराव सिन्धीया एक प्रकार से 'शेठ' था। वह मन्दबुद्धि और अशिक्षित था। महादजी की एक उपपत्नि जिसका नाम केसर बाई था, वह अपनी बुद्धिमता और सुमति के लिए ख्यातनाम थी। वही अक्सर दौलतराव को सम्मार्ग पर चलने की सलाह देती थी और उसे समझाते हुए अक्सर कहा करती थी कि – 'पतंगबाजी और पूना के जंगलों में गीदड़ के शिकार आदि निम्नकोटि के व्यसनों को छोड़ दे।'

दौलतराव जब 13 वर्ष का था, तभी से वह विलासीता की और इतना झुका हुआ था कि उसको शीघ्र ही वह रोग लग गया, जो समय से पूर्व इन्द्रिय विलास करने वालो को प्रकृति दण्ड़ स्वरूप लगा दिया करती थी। शाह हबीब के व्यसनी युवक पुत्र ने दौलतराव सिन्धिया को इन आदतों में डाला था।

दौलतराव सिन्धिया का एक अन्यत्र शर्जेराव घाटगे। शर्जेराव घाटगे का पूरा नाम 'सखाराम घाटगे' उपनाम शर्जाराव घाटगे था। वह भागल के सरदार परिवार का मराठा था। सेवा की तलाश में वह सर्वप्रथम नाना फड़नवीस के अंगरक्षकों में भर्ती हो गया और नाना का विश्वास पात्र बन गया। नाना के पलायन के पश्चात वह मार्च, 1796 ई. में वह पूना से और उसने दौलतराव सिन्धिया की चाकरी स्वीकार कर ली और 26 फरवरी, ई. 1798 को उसने अपनी रूपमती पुत्री बैजाबाई का विवाह दौलतराव सिन्धिया के साथ कर दिया। इस वैवाहीक संबंध से शर्लोराव घाटगे दौलतराव सिन्धिया के दरबार का सर्वोच्च अधिकारी बन गया। शर्जोराव की कुसंगज और कुप्रभाव से दौलतराव सिन्धिया पतन के बहुत निकट पहुंच गया था।

दौलतराव सिन्धिया द्वारा यशवन्तराव के ज्येष्ठ भ्राता सवाई मल्हारराव की दारूण हत्या की गई थी और यशवन्तराव होलकर प्रतिशोध से भरा हुआ था। अतः उसने सिन्धिया के अधिनस्थ प्रदेश उज्जैन पर आक्रमण करके उसे लूटा और उसे भस्मीभूत किया। यशवन्तराव और अमीर खां के संयुक्त आक्रमण के सममुख सिन्धिया सेना ने शस्त्र डाल दिये। इस विजय से यशवन्तराव के सैनिक सम्मान में अत्यधिक वृद्धि हुई।

अक्टू., ई. 1801 में उज्जैन की पराजय का बदला लेने के लिए सिन्धिया सेनापति शर्जोराव घाटगे ने 12 सैनिक दस्तों तथा 20,000 हजार अश्वरोहियों के साथ इन्दौर पर आक्रमण किया। इन्दौर से लगभग 7 मील दक्षिण में बीजलपुर नामक स्थान पर युद्ध हुआ। इस युद्ध में होलकर की सेना की पराजय हुई। सिन्धिया सैनिकों के अत्याचारों से बचने के लिए कई महीलाओं ने नगर के कुओं और बावड़ीयों मे कूद कर आत्महत्याएं कर ली, जिनके मृत शरीरों से बावड़ीयां भर उठी थी।

पूना का युद्ध ई. 1802 – पेशवा – सिन्धिया सेना की संयुक्त पराजय :– ई. 1802 का वर्ष दक्षिण स्थित पेशवा की सरकार के लिए घोर विपत्तियां लेकर आया। यह वर्ष यशवन्तराव होलकर के लिए पराक्रमों का वर्ष था। यशवन्तराव होलकर इस बात के लिए भी दृढ़ संकल्पित था कि वह अपने

भाईयों – सवाई मल्हारराव तथा विठोजी होलकर के हत्यारों को चेन की सांस नहीं लेने देगा। अतः उसने मराठा अधिपति पेशवा बाजीराव (द्वितीय) के सम्मुख अपनी तीन मांगे रखी –

दौलतराव सिन्धिया ने खण्ड़ेराव को बन्दी बना कर रखा था, एसे मुक्त किया जावे। खाण्ड़ेराव को होलकर राज्य का औपचारिक स्वामी तथा यशवन्तराव हो उसका संरक्षक एवे राज्य प्रबंधक नियुक्त किया जावे। 2. भारत वर्ष के किसी भी भाग में कोई गांव या दुर्ग जो कभी होलकरों के अधिन थें, वे पुनः यशवन्तराव के अधिकार में दिये जावे तथा होलकर से कोई दुर्भाव या भेदभाव न करते हुवे उसे सिन्धिया के समकक्ष माना जावे। 3. काशीराव को सिन्धिया द्वारा कोई आर्थिक या सैनिक सहायता न दी जाये, जिससे कि वह होलकर घराने का मुखिया न बन सके।

उस समय तक यशवन्तराव खानदेश में थलनेर के निकट ताप्ती के तट पर अपने डेरे लगा चुका था। अपनी न्यायोचित मांगो पर पेशवा की और से कोई अनुकूल प्रतिक्रिया न देखकर उसने अपने अनुभवी राजनीतिज्ञ पाराशर दादा को पेशवा के पास अनुनय – विनय करने हेतु भेजा किन्तु दम्भी पेशवा ने उसकी विनय को सुनने से इन्कार कर दिया। पेशवा बाजीराव (द्वितीय) एक घूर्त और निकम्मा व्यक्ति था। वह स्वये न तो राज्य के कार्यो को देखता था आक्र न दूसरो को देखने देता था। राज्य की सम्पत्ति का उपयोग अनैतिक कार्यो में करता था। उसके मंत्री मण्डल में उसके नादान दोस्त – हरिदास और पनसरे जैसों की भरमार थी। हंसी मजाक करना और लोगों को ठगना यही उसके शौक थे। पेशवा पद की प्रतिष्ठा और गरिमा को उसने मिट्टी मे मिला दिया था। पूर्व पेशवाओं के नाम पर वह एक कलंक के समान था।

अपनी विनय को ठुकराये जाने से रूष्ठ होकर यशवन्तराव ने अपने दो प्रमुख सरदारों फतसिंह माने और शहमत खां पठान को पेशवा के प्रदेशों से बलपूर्वक बदला लेने के लिए भेजा। 21 जून को शहमत खां अपने पठान रिसाले के साथ नासिक जिले में कूद पड़ा। 2 अग., ई. 1802 को यशवन्तराव स्वयं संगनेर पहुंच गया और उसने युद्ध का संचालन अपने हाथों में ले लिया, शहमत खां पठान और माने ने अहमद नगर के दक्षिण के प्रदेश को भीमा नदी के प्रवेश पड़े गांव तक खूंद डाला। उधर यशवन्तराव क्रोधपूर्वक अंगोड़ा, अहमद नगर और जाम्बगांव पर टूट पड़ा। उधर फतरसिंह ने माने पण्ढरपुर के जिलों पर कहर ढ़ा रहा था। दक्षिण के इस अभियान के समय पिण्ड़ारी प्रधान सेना ने सम्पूर्ण महाराष्ट्र में बरबादी और आतंक फैला रखा था। उस युग के मराठी समाचार पत्रों ने यशवन्तराव होलकर की पिण्ड़ारी प्रधान सेना के आतंक के विषय में लिखा था – 'पिण्ड़ारीयों ने घटमाथ तक पश्चिम में सब नगरों को लूटकर बेचिराग कर डाला है, केवल पूना शेष है। होलकर के आतंक ने सम्पूर्ण पूना को नष्ट कर दिया है तथा लोग पूना छोड़कर भाग रहे है।' उस समय पूना के मार्ग में नारायणगढ़ गांव के निकट सिन्धिया की शक्तिशाली सेना होलकर को मार्ग रोके खड़ी थी, अतः यशवन्तराव ने पूना पर दो विविध ओर से आक्रमण के लिए अपनी सेना को आगे बढ़ाया। इस प्राकार जुन्नार और पढरपुर की और से उसकी सेना आगे बढ़ी।

पूना के इस युद्ध में यशवन्तराव की सेना में युद्ध के नये और पुराने दोनो साधन विद्धमान थे। दक्षिण में सधी हुई सेना का नेतृत्व हार्डिग्ज, आर्मस्टांग और विकर्स जैसे योग्य योरोपियन्स अधिकारियों के हाथों में था। उनके साथ एक अच्छा तोपखाना और अमीर खां के तगड़े पठान थे। अकेले यशवन्तराव ने मई मास के तीन सप्ताह में 20 लाख रूपये लूट पाट बतौर एकत्रीत कर लिए थे, जिससे उसने अपने रिसाले का वेतन चुका दिया।

पूना के इस युद्ध में उसके साथ सरदार माने, नागों शिवाजी, शेवनी, बख्शी भवनीशंकर, शहमत खां पठान, अमीर खां, आबाजी लक्ष्मण तथा हरनाथ कुवर जैसे योद्धा थे। होलकर की सेना के विषय में फ्रेंकलिन लिखता है कि – 'होलकर की अश्वसेना सिन्धिया की अश्वसेना से ऊंचे दर्जे की है। उसके अफसर अधिक अच्छे है और मराठों की लूटमार करके युद्ध करने की विधि को भली भांति जानते है।'

बारामती शिविर से यशवन्तराव होलकर ने पेशवा के नाम अंतिम चेतावनी भेजी –'आप स्वामी है, मेरी इच्छा आपके विरूद्ध हाथ उठाने की कदापि नहीं है। सिन्धिया के साथ मेरे झगड़े का कनपटारा करना आपको शोभा देगा। अंग्रेज हमारे द्वार पर मराठा राज्य पर अधिकार करने के अवसर की प्रतिक्षा कर रहे है। व्यर्थ वार्तालाप में नष्ट करने के लिए मेरे पास समय नहीं है ..... मैं आपको शान्तिमय निपटारे का अंतिम अवसर दे रहा हूँ। .... मेरा झगड़ा सिन्धिया से है और आप सिन्धिया के हाथों की कठपुतली बन गये है और राज्य का विनाश कर रहे है। .... आप स्वामी का कर्तव्य करे और मुझे सेवक का कार्य करने दे।

यशवन्तराव की यह चेतावनी पेशवा को 23 अक्टू. ई. 1802 को प्राप्त हुई। सिन्धिया को दीवान कुंजर, बख्शी सदाशिवराव तथा ब्रिगेड अधिकारी डोयज ने बड़े घमण्ड से कहा – 'हम अपनी तोपों की मार से यशवन्तराव को भागने के लिए विवश कर देंगे। आपको केवल दूर स यह खेल देखना होगा।'

अन्ततः 25 अक्टू., ई. 1802 को दिपावली के दिन पेशवा के भाग्य निर्णय का दिन आ ही गया। धन त्रयोदशी के दिन रण निनाद गूंज उठा। इस भीषण युद्ध में पेशवा का सेनानायक नाना त्रयम्बक पुरन्दे अपनी जान लेकर भागा। सेनापति पाण्ड़ो कुंजर (बालोजी कुंजर का पुत्र) युद्ध के मैदान से ऐसा अन्यथा होकर भागा कि तीन दिन तक उसका पता नहीं चला। सेनापती मालोजी घोरपड़े को भयान घाव लगे और वह नीचे गिर पड़ा। शिन्दे का सेनापति सदाशिवराव बख्शी धराशाही हो गया और जरी पटका छोड़ कर भागा।

पेशवा के शनिचारा भवन से पेशवा पलायन कर चुका था। पेशवा के भवन में केवल पेशवा की पत्नी ताई साहेब, सवाई माधवराव की विधवा पत्नी यशोदाबाई और चीमा जी अप्पास की पत्नी सीताबाई ही मौजूद थे।

पूना के इस युद्ध में अन्ततः पेशवा सिन्धिया संयुक्त सेना की पराजय हुई। पूना के युद्ध में विजयश्री मिलने से यशवन्तराव होलकर का मराठा मण्डल में मान बढ़ा। पूना की विजय यशवन्ताराव होलकर के जीवन की एक महती उपलब्धि थी।

बेसिन की सन्धि :– 31 दिस., ई. 1802 को पूना के इस युद्ध में पेशवाई का अन्त हो गया। यशवन्तराव के पराक्रम से भयभीत हाकर पेशवा बाजीराव (द्वितीय) अंग्रेजों की शरण में चला गया और पेशवा ने अंग्रेजों से आतम रक्षार्थ बेसिन की सन्धि कर ली। बाजीराव ने अपनी स्वतन्त्रता को गिरवी रखकर अपने शरीर की रक्षा अवश्य कर ली थी किन्तु उसने इस सन्धि से मराठा संघ का विनाश कर दिया।

सन्दर्भ गंथ सूची :–

1. जदुनाथ सरकार : मुणाल साम्राज्य का पतन
2. डॉ. मथुरालाल शर्मा : मराठों का संक्षिप्त इतिहास
3. एम. डब्ल्यू बर्वे : तुकोजीराव (द्वितीय) रूलर ऑफ इन्दौर
4. इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया
5. सर देसाई : मराठों का नवीन इतिहास

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Feminism in Politics

Dr. Sapna Gehlot
Assistant Professor, Political Science Jayoti Vidyapeeth Women's University, Jaipur Rajasthan

Feminism is a collection of movement and ideologies aimed at defining establishing and defending equal political, economic and social rights for women. The French philosopher Charles Fourier is credited with having originated the word "Feminism" in 1837. The word 'feminism' and 'feminist' first appeared in France and the Netherlands in 1872. The Oxford English dictionary defines a feminist as an advocate or supporter of the rights and equality of women.[1]

The history of the modern western feminist movement is divided into three waves. The first wave compromised women's suffrage, movements of the 19th century promoting women's right to vote. The second was associated with the ideas and actions of the women's liberation. Liberation movement beginning in the 1960's. The second wave campaigned for legal and access of contraceptive and abortion, feminist have also worked to protect women and girls from domestic violence, sexual harassment and sexual assault. In a nutshell feminism is mainly focused an women's issue and seeks gender equality.[3]

Feminists have cover a long road the wave of feminism was visualize during the 19th century and early 20th century. In the UK and US it focused on the promotion of equal contract, marriage, parenting and property right for women. Later on the focused was shifted on primarily on gaining political power particularly the right of women's suffrage, women's suffrage was achieved Elizabeth Cady Stanton and Susan B. Anthony, who campaigned for the abolition of slavery prior to championing women right to vote with all this efforts. U.S. made 19th amendment to the United State constitution 1919, granting the right to women in all aspects. These wave of feminism had their effect in the countries of middle Asia too. In social equality for women and third wave is a continuation of and a reaction to the perceived failures of second wave feminism, beginning in 1998.[2]

Feminist theory, which emerged from feminist movements, aim to understand the nature of gender inequality by examining women's social roles and lived experience, it has developed theories in a variety of a disciplines in order to respond issue such as the social construction of sex and gender. Feminist activists campaign for women's right. And these demands of women rights have changed societies. Some important women rights for which women have struggle a lot like women's suffrage, right at work place like equal pay for equal work, maternity leave, some personal rights like reproductive rights for women which include women right to

in Britain's Australasian colonies at the close of the 19th century, with the self governing colonies of New Zealand and South Australia women the right to vote in 1893 and 1935 respectively even Australia during this period permitting women to stand for Parliamentary office and granting women the right to vote.

In Britain in 1918, the representation of the people act was passed granting the vote to women over the age of 30 who owned house. In 1928 this was extended to all women over twenty one. This time the main notable leaders of the movement were: - Lucretia Mott, 1899, Qasim Amin, considered the 'father' of Arab feminism wrote, The Liberation of Women, which argued for legal and social reforms for women. Hoda Shaarawi founded the Egyptian feminist movement in 1923, and became its President and a symbol of the Arab women's right movement.[5]

The Iranian Constitutional revolution in 1905 triggered the Iranian women's movement who aimed to achieve women's equality in education, marriage, careers and legal right but during the Iranian Revolution of 1979, many of the rights that women had gained from the women's movement were systematically abolished, such as the family protection law. In France women obtained the right to vote in 1944. French philosopher Simone De Beauvoir wrote a book name Le Deuxieme Sexe (The Second Sex) in 1949. This book expressed feminist sense of injustice, by this mid 20th century a new wave began which is continuing till present it is largely concerned with issues of equality other than suffrage, such as ending discrimination. In this period the feminist activist and author Carol Hanisch coined the slogan 'The Personal Political' which became synonymous with the second wave. In 1956 President Gamal Abdel Nasser of Egypt initiated 'State feminism' which outlawed discrimination based on gender and granted women's suffrage, but also blocked political activism by feminist leaders. During Sadat presidency, his wife, Jehan Sadat publicly advocated for further women's right though Egyptian policy and society began to move away from women's equality with the new Islamist movement and governing conservation. However, some activists proposed a new feminists movement, Islamic feminism, which argues for women's equality with an Islamic framework. In the countries of Latin America this second wave brought changes.[6]

In the early 1990's in the U.S. third wave feminism began as a response to perceived failures of the second wave and to the backlash against imitative and movements created by the second wave. Third wave feminists focus on "micro-politics and challenge the second wave's paradigm as to what is, or is not, good for women and tend to use a post-structuralism interpretation of gender and sexuality. Noted second wave personalities were Gloria Anzaldna, Bell hooks, Chela Sandoual, Cherrie Moraga, Maxime Hong Kingston and many other black feminists sought to negotiate a space within feminist thought for consideration of race-related subjectivities.[7]

Since the 1980's standpoint feminists have argued that the feminist movement should address global issues such as rape, slavery and culturally specific issues in order to understand how gender inequality interacts with racism, classism and colonization etc. Third wave sexism contains internal debates between difference feminists, who believe that there are important differences between the sexes and those who believe that there are no irherent differences between the sexes. And contend that gender roles are due to social conditioning.[8]

Factors affecting the Acceptance of Feminism :- Feminism has very varied world wide impact; political system, values and culture are important factors in determining the acceptance of feminist ideas. The electoral and representative system of testate significantly affects the likelihood of women being able to make change. Generally, women to have most influence in more reprehensive system. Canada's feminist success relative to the U.K. is related to its proportional representation rather than the 'first past the post' election system as fewer barrior are posed for minorities. Similarly democracies tend to be much more accessible to women than authoritarian regimes. Reason for this – inaccessibility is linked to the lack of civil society– the political area women tend to be most prominent.[10]

Women participation has notably decreased in countries emerging from socialism into system further to the political right, usually accompanied by attacks on women's rights. In China, the move towards a market economy has been accompanied by a crash in women's wages from approximately 80% of means in the 1980 to just 65% in 2004.[11]

In Latin America the introduction of neoliberal economics has been indentified as on obstacle for feminism. Neo-liberalism tends to increase low paid works, dominated by women

balancing jobs and house work leaving little time for politics.

Feminism is often aided by revolutionary values; Uganda and Nicarguan women used the radical values of revolutions to ensure their equality with men. A similar tactic was used by Iranian women following the 1979 revolution. They were able to hold the government to part of its commitment to restore women's rights and dignity, despite the implementation of Shari's Law religious beliefs were used to improve their situation and respectability and family responsibility stressed to gain ground on education, economic rights and political participation.[12]

Women's position as 'mother of the nation' often make them important symbols in revolutionary situation. However women's importance in the context can often lead to strict controls on their behaviour. Similarly, the rise of a culture of sexual violence in South Africa is partly a result of the social progress of women.

In terms of religion, Ali relates this blacklash to the rise of identity politics in the 1990,s which gave religion more prominence. The identifies religious restrictions on women's freedom in the former USSR, Arab States and the U.S.A. An example of the cultural restrictions of religious revival is the 2004 Indonesian presidential election, in which the country largest Islamic organization forbid Muslims from voting for the country's female president.[13]

Impact of feminism in Politics :- At the risk of making of sweeping generalization about the political inclination of feminist, it is generally accepted that prior to the proliferation of the feminist movement the most women were considered to be politically conservative because of their close ties to family, religion and traditional values however this determination of conservation was based on a group of women who were generally kept away from the political process, information about political belief system and exactly what different political groups believe in and represent.[14]

Once women were exposed to feminism and along with it the freedom to express themselves politically in the ways that they choose based upon informed decisions, by and large feminist embraced a more liberal mindset. This is not to say that they abandoned their family and religious values, but perhaps it is more correct to say that in more left wing thinking, feminists were able to enjoy a greater degree of political freedom, recognition and an avoidance of the oppression that they suffered for so many years under a more conservative view point and philosophy. Once feminist were on the path of free political expression, their activism made contributions to the study of political participation in several areas.[15]

The simple assertion by feminists that women have right that should be protected has made a significant impact on world wide politics and provided a starting point for women to question and change the rules and norms that given them.

On a strategic level, the advancement of women into the halls of higher learning institutions contributed to political studies form both sides of the classroom in a sense. Female students, now empowered by a clearer sense of political identity and their role in the feminist movement began to challenge the course content which usually portrayed men as superior in intelligence and having politically superior to women. Female student also fought for the right to have access to the same educational institution and resources as their male counterparts. Eventually having earned degree of higher learning as well as political power, feminist rose to the role of instructor in many educational settings giving them a pulpit from which to share the practical realities and advantage of feminist thought and practice.[16]

The impact that feminist political action has had on the study of political participation is quite significant as well, when feminists became extremely politically active the sheer volumes of activity that they were creating became too hard for even their most biased critics to ignore. As feminist movement gained national and international media coverage and their influence was felt in mainstream society, they captured the curiosity of the academic minds of the world. Whether the mainstream liked it or not feminism was a force with which to be reckoned and was going to be around in one form or another for the foreseeable future.

It lead to question gender roles by drawing attention to universal gender based power relations which are otherwise overlooked.

It promoted the belief that women's social experience gives them different expertise which would be valuable in government. The Welsh assembly is currently the only legislature to have 50% female participation, Norway is one of many countries to introduce sex quotas for public bodies to achieve more equal representation. In 1993 the British labour party used quotas in its selection of candidates making the proportion of women in parliament rise significantly.

It is the impact of the feminism thought only that the formation of various women's groups had began. The spread of feminist thought can give women the ideas and confidence to make changes within their lives and communities and making them aware of their rights. Many women in Bodhgaya, India, Participated in the vahine land reform movement which had a strong feminist element. The value accorded to women within the Vahini gave some of the basic confidence needed to ask their husbands to help wash up for Mexican women, the organization of small discussion group taught them to become confident in arguing for rights.[17]

For many feminists the personal is political; they identity social subjugation of women as a political problems which must be addressed. This idea has world wide impact of which the emergence of domestic violence as an issue is an example. Domestic violence is so prolific that is the principal cause of illness for many women feminist thought has raised awareness of this problem, the white Ribbon campaign against women has been internationally popular among men and shows a growing male acceptance of feminist ideas.

Support for feminist ideas has grown in many societies due to women increasing role in raising public awareness. In Spain solidarity campaigns with political prisoners were used to mobilize enough public support to make changes. Britain has been significant alternation in public opinion concerning abortion, housework and employment. [9]

In a nutshell :- No doubt after analyzing all this we can reach on this conclusion that feminist through has made women answer of their rights and possibility of improving their lives. It has increased their confidence by revealing the politics in their daily lives and encouraging political and social participation. Women's group have succeeded in getting female candidates elected to all levels of govt. and altering legislation. They have also made changes in their daily lives, on a aiming to ensure, that they are appropriate representatives of their nation.

In popular revolutions, it is necessary for women to place their rights on the agenda and actively participates. Beside this the culture and public opinion within which women's group function plays a significant role in determining their impact. Throughout history women have had to change the attitudes of men to gain rights for themselves and this continues today for eg. in Uruguay the Catholic Church was able to prevent the passage of a bill legalizing abortion, despite illegal abortions being the principal cause of death for pregnant women and majority public support for the bill.

Currently many women struggles not only against traditional cultures of male dominance but also against a recent religious and conservative blacklash challenges to women are coming increasingly from men who believed that women rights have gone too far. The U.K. men's movement go as far as to say 'feminism is an aberration like Nazism and communism a blight on our society. '

Community made significant step towards changing public opinion but in some countries culture in particular recent religious and conservative backlashes, has also served to restrict the impact of feminism. So it can be concluded that feminist though has had a significant impact on contemporary politics but in varying degrees worldwide.

If we analysis we see that feminism has grown from a theory to a political movement that has liberated the oppressed fostered independent political thought and fostered an entirely new way of evaluating politics. So we can say that the future of feminism promises to be even more dynamic and effective as people continue to seek the natural state of freedom and speak out against opposition in all forms.

References :-

1- Feminism from Wikipedia, the free Encyclopedia
2- Feminism from Wikipedia, the free Encyclopedia
3- Feminism from Wikipedia, the free Encyclopedia
4- Feminism from Wikipedia, the free Encyclopedia
5- Feminism from Wikipedia, the free Encyclopedia
6- Feminism from Wikipedia, the free Encyclopedia
7- Feminism from Wikipedia, the free Encyclopedia
8- Feminism from Wikipedia, the free Encyclopedia
9- Essay – Assess the impact of feminist thought on contemporary politics by Katie Smith.
10- Essay – Assess the impact of feminist thought on contemporary politics by Katie Smith.
11-Essay – Assess the impact of feminist thought on contemporary politics by Katie Smith.
12-Essay – Assess the impact of feminist thought on contemporary politics by Katie Smith.
13-Essay – Assess the impact of feminist thought on contemporary politics by Katie Smith.
14-Essay – Assess the impact of feminist thought on contemporary politics by Katie Smith.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

भारत में महिला मानवाधिकारों की वर्तमान स्थिति

डॉ. सपना गहलोत
एसोसिएट प्रोफेसर ज्योति महिला विद्यापीठ, महिला विश्वविद्यालय महला, जयपुर (राजस्थान)
श्रीमति गीता बाजिया
शोधार्थी, राजनीतिक विज्ञान, ज्योति महिला विद्यापीठ, महिला विश्वविद्यालय महला, जयपुर (राजस्थान)

संदर्भ :– प्रत्येक मनुष्य को जीवन यापन के लिये अधिकारों की आवश्यकता होती है। वे अधिकार उसके जीवन का अभिन्न अंग है। जिनके बिना समाज में रहना उसके लिये अत्यंत कठिन है तथा मनुष्य को जन्म के साथ भी कुछ अधिकार प्राप्त हो जाते है। इन सभी अधिकारों को मानवाधिकारों के नाम से जाना जाता है। भारत में मानवाधिकारों को सदैव संघर्ष से ही प्राप्त किया गया है। मुख्यतः महिलाओं को मानवाधिकार प्राप्त होना बहुत बड़ी चुनौती रही है। ईश्वर की अनुपम कृति के रूप में मानव निर्मित हुआ है तथा ईश्वर के लिये सभी मानव जाति समान रूप से मानी गयी है। ईश्वर एक है और संपूर्ण मानव जगत उसकी संतान है। अतः ईश्वरीय कृति के रूप में स्त्री, पुरूष भी समान ही है व उनके अधिकार भी समान ही होने चाहिए।

भारतीय संस्कृति में नारी को एक महान शक्ति के रूप में आदर–सम्मान दिया जाता रहा है। वैदिक काल में इस देवभूमि की नारी सभी क्षेत्रों में पुरूष की सहभागिनी थी। इस काल में उसने सामाजिक व पारीवारिक क्षेत्रों में अपने कर्तव्य का पालन करते हुये अपना गौरव व सम्मान बढ़ाया था। भारत में हिन्दु मनुस्मृति में कहा गया है कि –

स्त्रियां रोचसानायं सर्व तद् रोचते कुलम्।
तस्यां तु अरोचमानायां सर्वमेवं व रोचते।।[1]

मध्यकाल में भारत में मुगलों का शासन स्थापित हो गया था उसके बाद भारतीय महिलाओं की स्थिति दिनोंदिन दयनीय होती गयी, भारतीय समाज व नारी दोनों की स्थिति बिगड़ गयी थी, उनके सामने नयी–नयी समस्याएं पैदा होने लगी थी। शिक्षा का अधिकार तो लगभग समाप्त हो गया था। अपने अस्तित्व की रक्षा के लिये नारी ने अपने जीवन का त्याग करना शुरू कर दिया। इसी के साथ सती प्रथा जैसी कुरीतियां समाज में उत्पन्न हो गयी तथा पुरूष प्रधान समाज में महिला का कोई अस्तित्व नही रहा।

भारत में 18वीं सदी का समय महिलाओं के लिये घोर अवनति व अधोगति का रहा। इसमें राजा राममोहनराय, स्वामी दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद, गांधीजी आदि सुधारकों ने महिलाओं की स्थिति को सुधारने व पुनर्जागरण काल के रूप में कार्य किया। महिलाओं की निम्नस्थिति को उठाने का कार्य करने का श्रेय इन्हीं सुधारकों को जाता है। यह स्थिति ब्रिटिश काल के समय से गुजरती हुई संघर्ष व बलिदानों के साथ भारतीय आजादी तक भी बनी रही तथा आजादी के बाद भारतीय महिलाओं को संविधान में तमाम अधिकार प्रदान कर दिये गये।[2]

भारत के संविधान निर्माताओं ने भी स्वीकार किया कि राष्ट्र के सर्वांगीण विकास के लिये महिलाओं के साथ लिंग के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए। भारत का संविधान कल्याणकारी राज्य की संकल्पना के साथ जीवन और समाज के प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं और पुरूष दोनों को समान अधिकार प्रदान करता है। संविधान में अनुच्छेद– 14,15,16 में महिलाओं को समानता, स्वतंत्रता और न्याय प्रदान करने का प्रावधान है। इस कारण महिलायें वर्तमान में शिक्षा व रोजगार के क्षेत्र में पुरूषों के समान भागीदारी निभा रही है। इन्होंने हर क्षेत्र में नये कीर्तिमान स्थापित कर दिये है। राजनीतिक क्षेत्र में महिलायें मंत्री से लेकर मुख्यमंत्री, प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति के पद तक पहुंच चुकी है। खेल के क्षेत्र में सानिया का टेनिस खेलना, अंतरिक्ष के क्षत्र में कल्पना चावला का उड़ना, राष्ट्रपति के रूप में प्रतिभा

पाटिल, प्रधानमंत्री के रूप में कई वर्षो तक देश की बागडोर संभालने वाली श्रीमति इंदिरा गांधी ने भारतीय महिलाओं के लिये आदर्श कीर्तिमान स्थापित किया है।

भारत की महिलाओं में ही नोबेल पुरस्कार पाने वाली मदर टेरेसा, युद्ध के मैदान में कार्य करने वाली बरखा दत्त, राखी बख्शी, कला के क्षेत्र में कई अभिनेत्री संगीत के क्षेत्र में स्वर कोकिला लता मंगेशकर, एवरेस्ट पर फतह हासिल करने वाली बछेन्द्रीपाल व पुलिस के क्षेत्र में कदम रखने वाली किरण बेदी जैसी महिलायें भारतीय समाज की शान हैं। जिन्होंने भारत के विकास में सराहनीय योगदान दिया है।[3]

इसके साथ ही भारतीय महिलाओं की स्थिति का एक पक्ष उजागर होता हैं, परंतु वास्तविकता कुछ और है, जो प्रत्यक्ष रूप से दिखाई नहीं देती है। उसको देखने के लिय महिला रूपी आवरण पहनने की आवश्यकता होती है। व्यवहारिक रूप में भारतीय संविधान में नारी को समानता, स्वतंत्रता के अधिकार तो दिये गये हैं परंतु ये अधिकार केवल लिखित है। अलिखित कानून की वास्तविकता यह है कि वह विश्व में नारी बचपन से लेकर बढ़ापे तक पुरूष के ज़ुल्मों का शिकार होती है। खासतौर पर भारत में यह होता है। भारत में परम्परागत परम्पराओं के रूप में चली आ रही बुराईयां बाल–विवाह, दहेज, भ्रूण हत्या, देवदासी आदि कुप्रथायें हर रोज नारी दासता के रूप में प्रताड़ना के नए पन्नों की कहानी लिखती है। इसक लिये कई कानून बनाये गये परंतु कानून तभी काम करता है जब समाज मिलकर उसके लिये सहयोग देता है। नये नये कानून बनते गए परंतु ये बुराईयां आज भी तीव्र गति से समाज में फैल रही है।

आज भारत के पंजाब, हरियाणा दिल्ली जैसे राज्यों में दिनोंदिन पुरूष महिला अनुपात का फासला कम होने के बजाय बढ़ता ही जा रहा है। इंडियन मेडिकल एसोसिएशन के अनुसार, हिन्दुस्तान में प्रतिवर्ष लगभग पचास लाख कन्या भ्रूण का गर्भपात या हत्या कर दी जाती है। कहने को तो प्रसव पूर्व निदान तकनीक (P.N.D.T.) टेस्ट 1994 में लागू किया गया है परंतु यह केवल कागजों तक ही सीमित है। सर्वेक्षण के अनुसार महाराष्ट्र में 8,000 गर्भपात कराये गये थे उनमें से 7,999 बालिकायें ही थी। दुनिया में कई प्रकार के राष्ट्र कई की शासन व्यवस्थायें, गरीबी, अमीरी है परंतु जीवनदायिनी होते हुये भी अपमानित, प्रताड़ित व दण्डनीय हा रही है।

भारत में घरेलू हिंसा, यौन प्रताड़ना बलात्कार व महिलाओं को अन्य कई अपराधों का शिकार होना पड़ रहा है। महिलाओं के प्रति अपराध पूरी दुनिया में ही होते है। महिला पिटाई या जुल्मों–सितम का शिकार होती है। इससे भी अधिक महिलायें बलात्कार जैसे घृणित अपराध का शिकार बनती है। ऐसे–ऐसे बलात्कारी कार्य किये जाते है जिनको सुनकर प्रत्येक व्यक्ति की रूह कांपने लगे तथा आंखों से आंसू बहना शुरू हो जाये। छः माह की बच्ची से लेकर 60 वर्ष की वृद्धा इन अपराधों के लिये समान है।[4]

घेरलू हिंसा और यौन शोषण के विषय में किये गये सर्वेक्षण से सामने आया है कि 50 प्रकरणों में से एक ही प्रकरण पुलिस में दर्ज होता है। अतः दिये गये आंकड़े भी पूर्ण नहीं है और महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों का रूप अत्यंत व्यापक है। महिला ही इस स्थिति का कहीं न कहीं पितृसत्तात्मक समाज ही जिम्मेदार है क्योंकि पुरूष को महिला का विकास सहन नहीं होता है। वह सदैव महिला को दबाने की कोशिश में रहता है। न ही तो भारतीय महिला आज किसी भी क्षेत्र में पुरूष से कमजोर है पर सामाजिक क्षेत्र में उसे कमजोर बना दिया जाता है। किसी भी कार्य के लिये महिला की सराहना नहीं होती है उसे सदैव प्रताड़ना ही सहन करनी पड़ती है। आज के समाज ने महिला के प्रति दृष्टिकोण ही बदल दिया है पुरूष को आज हर नारी एक रूप में ही दिखाई देती है अर्थात् वह प्रत्येक नारी को हेय दृष्टि से दखता है। प्राचीन काल के विचार पर स्त्री माता के समान होती है आज सार्थक नही हैं। कार्यस्थल पर महिलाओं को सर्वाधिक शोषण का शिकार होना पड़ता है। महिला परिवार के समान जिम्मेदार निभाते हुए पुरूष की सहभागिता के लिए घर से बाहर कार्य करती है फिर भी उसको समाज की दृष्टि में हीन माना जाता है यह एक विडंमना है कि समान अधिकार वाले पुरूष नारी असमान जीवन यापन कर रहे। अर्थात देश की आधी आबादी प्रताड़ना को सहन

कर रही है। इस स्थिति में रहते हुए देश का विकास संभव नहीं है। अतः समाज को मिलकर इसके लिए कार्य करने को आवश्यकता है। क्याकि आधुनिक युग में नारी को भी बाजार की एक वस्तु के रूप में देखा जाता है। समाचारों, अखबारों, इश्तहारों और पोस्टरों में उसे भोग की एक वस्तु के रूप में प्रचारित–प्रसारित किया जा रहा है। अपने व्यवसाय के लिए उसे एक साधन के रूप में एप्योग किया जा रहा है। बाजारी होड़ में सौंदर्य प्रतियोगिताओं के माध्यम से नारी की नग्न छवि प्रस्तुत की जा रही है। किसी भी समाचार–पत्र, विज्ञापन आदि में जहां उसकी जरूरत नहीं है चहां भी उसे विज्ञापन के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। इसका उत्तरदायी आज का समाज ही है क्योंकि समाज में आर्थिक चकाचौंध इतनी बढ़ गयी है कि किसी भी माध्यम से व्यक्ति यरा महिला से व्यक्ति या महिला धन कमाता चाहता है परन्तु इस होड़ में हमसे क्या पीछे छूटता जा रहा है।

21वीं सदी में यदि इसी तरह चलता रहा तो महिला जो कि वेदों में पूज्यनीय मानी जाती है वह एक उपयोगी वस्तु के रूप में रह जायेगी महिला आज आधुनिक चकोचौंध में सभी मर्यादाओं और संस्कारों को भूलती जा रही है। पश्चिमी सभ्यता का अन्धानुकरण किया जा रहा है तथा भारतीय संस्कारों को भुलाया जा रहा है। इसका परिणाम तो विनाशकारी होगा हो वह अपनी संतानों को असंस्कारी बनाता जा रहा है। आज के बच्चे संस्कारों को रूढ़िवादिता के रूप में मानते है तथा पश्चिमीकरण को नयापन मानते है वस्तुतः आज का युवा न तो भारतीय संस्कृति सभ्यता को पूर्ण रूप से छोड़ सका और न ही वह पश्चिमी सभ्यता को पूर्ण रूप से अपना सका। इस कारण उसका विकास किसी भी दिशा में पूर्ण रूप से नहीं हो सका।

भारत में यदि संतुलित एवं संस्कारयुक्त समाज का निर्माण करना है तो पुरूष व महिला दोनों को अपनी मानसिकता परिवर्तित रिनी होगी सभी क्षेत्रों में सम्मान व प्रतिष्ठा स्थापित करने के लिए सर्वप्रथम महिला को सम्माननीय बनाना होगा जिसे प्रकार वेदों मे उसे देवी के रूप में मानकर पूर्ण सम्मान दिया जाता था। अतः इसमें सभी का योगदान आवश्यक है। प्रथम रूप से पुरूष जो स्त्री को अर्धांगिनी के रूप में स्वीकार करता है आज वही स्त्री का भयानक शत्रु बना हुआ है। इसके उपरान्त भारतीय सरकार, मीडिया, समाचार पत्र–पत्रिकायें, राजनीतिक व गैर–राजनीतिक सामाजिक संगठनों को आगे आना होगा। महिला को अपने परिवार की झूठी आधुनिकता की मानसिकता को समाप्त करना होगा। गांधीजी का कहना था कि ''स्त्रीयॉ पुरूष की सहचरी है। उसकी मानसिक शक्त्यिां कही भी पुरूष से कम नहीं है। बाल विवाह से मुझे घृणा है, विधवा बालिका को देखकर में कॉपने लगता हूं पत्नी के देहांत क पश्चात् तुरंत शादी करने वाले पुरूष को देखकर में पागल हो जाता हूं।

अतः पत्नी पति की गुलाम नहीं साथी, सहचरी और पुरूष की शक्ति होती है। यदि दोनों मिलकर किसी उद्देश्य को पूरा करना चाहें तो कठिन से कठिन लक्ष्य को प्राप्त कर सकते है।

निष्कर्ष :– नारी सृष्टि की जनक है उसको सदैव जननी के रूप में सम्मान मिलना आवश्यक है। नारी का जीवन सम्मानपूर्वक जीना भारतीय विकास के लिए मार्ग है। भारतीय नारी की शिक्षा उसकी स्थिति के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। सदैव महिला के विकास के लिये भारत में कठोर कानून बनाये गये है। यही कानून कठोर रूप से लागम करना भी आवश्यक है जिससे समाज में नारी को अपना अस्तित्व प्राप्त होगा। समाज का विकास ही राष्ट्र का विकास है। अतः सभी क्षेत्रों में नारी को समर्थ बनाकर उसको भी राष्ट्र के विकास में योगदान करने योग्य बनायें। और यह कार्य समयानुसार किया भी जा रहा है औश्र सभी के सहयोग से पूर्ण हो जायेगा। आने वाले समय में महिला की स्थिति को सुदृढ बनाया जा सकेगा।

संदर्भ :–

1. कुमारी किरण 2001 वैदिक साहित्य एवं संस्कृति, दिल्ली, न्यू भारतीय बुक कॉरपोरेशन।
2. धनंजय वीर 'महात्मा ज्योतिराव फुले, फादर ऑफ अवर सोशल रिवोल्युशन' बंबई पोपूलर प्रकाशन, 1995, पेज–40
3. महात्मा गांधी, यंग इंडिया (1919–1912) पेज–749

4. महिला अधिकार और मानव अधिकार, ममता महरोत्रा, ज्ञान गंगा नई दिल्ली, 2011 पेज–160
5. डॉ. शारदा अग्रवाल 'आधो आबादी का यथार्थ–भारतीय नारी', राधा पब्लिकेशन, 2010 नई दिल्ली पेज–04
6. शर्मा गजानन, 1971, प्राचीन भारतीय साहित्य में नारी, इलाहाबाद प्रकाशन।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

अनुसूचित जनजाति एवं गैर अनुसूचित जनजाति की छात्राओं के आत्मप्रत्यय का तुलनात्मक अध्ययन

श्रीमती पूनम अवस्थी
शोधार्थी, शिक्षा संकाय, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल
डॉ. श्रीमती ज्योत्स्ना खरे
प्राचार्य, एन. ई. एस. महाविद्यालय, होशंगाबाद

प्रस्तुत शोध पत्र में अनुसूचित जनजाति एवं गैर अनुसूचित जनजाति की छात्राओं के आत्मप्रत्यय का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। न्यादर्श के रूप में 100 छात्राओं (50 अनुसूचित जनजाति एवं 50 गैर अनुसूचित जनजाति) का चयन कर उन पर 'आत्म–प्रत्यय प्रश्नावली' का प्रशासन किया गया। प्राप्त परिणामों के अनुसार अनुसूचित जनजाति एवं गैर अनुसूचित जनजाति की छात्राओं के शारीरिक, सामाजिक व बौद्धिक आत्मप्रत्यय में सार्थक अंतर पाया गया जबकि स्वभावगत, शैक्षिक, नैतिक एवं समग्र आत्मप्रत्यय में सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

व्यक्ति अपने वारे में क्या साचता है, अर्थात् व्यक्ति के गुणों और व्यवहार आदि के संबंध में उसका मत। एक व्यक्ति अपने गुणों और व्यवहार आदि के संबंध में जो मत रखता है, वही उसका आत्मप्रत्यय है। प्रत्येक व्यक्ति का आत्मप्रत्यय उसके विचारों पर निर्भर करना है। बालक/बालिका के भीतर आत्मप्रत्यय का विकास व्यक्तित्व विकास का महत्वपूर्ण केन्द्र बिन्दु है। आइजेंक व उनके साथियों ने आत्मप्रत्यय को परिभाषित करते हुए लिखा है कि, ''व्यक्ति के व्यवहार, योग्यताओं और गुणों के संबंध में उसकी अभिवृत्ति निर्णयों और मूल्यों के योग को ही आत्मप्रत्यय कहते है।''

आत्मप्रत्यय एक व्यापक सम्प्रत्यय है और उसमें आत्म ज्ञान (Self-awareness) आत्म प्रतिबिम्ब (Self-image) आत्म सम्मान (Self-esteem) तथा आत्म परिचय (Self-identity) सभी सम्मिलित हैं।

एक बार आत्मप्रत्यय बनने के बाद यह स्थिर होते हैं। परन्तु नये अनुभवों के बढने के साथ–साथ इनमें परिवर्तन होता रहता है। बालक/बालिका में जो प्रांरभिक अवस्था में आत्मप्रत्यय बनते हैं उन्हें प्राथमिक आत्मप्रत्यय कहा जाता है, ये माता–पिता, अभिभावक, शिक्षक, परिवार के सदस्यों के शिक्षण के आधार पर बनते हैं। बालक/बालिका के भीतर आत्मप्रत्यय का विकास अन्य सामाजिक व्यवहारों की भांति उसके समाजीकरण का ही परिणाम होता है।

बालक/बालिका जब विकास करता है व अन्य लोगों के संपर्क में आता है तब उसके प्राथमिक आत्मप्रत्ययों का संशोधन व परिवर्तन होने लगता है। अतः यदि हमें बालक/बालिका में सकारात्मक व्यक्तित्व निर्माण करना है, तो उसे ऐसा वातावरण प्रदान करना होगा, जिससे उसमें स्वयं अनुकरण के द्वारा उच्च कोटि के व्यक्तित्व का विकास हो सके, यदि व्यक्तित्व विकास सकारात्मक दिशा में होगा तो आत्मप्रत्यय भी उच्च कोटि का विकसित होगा। अतः उपरोक्त सभी बातों को ध्यान में रखते हुए वर्तमान समस्या का चयन शोधकार्य हेतु किया गया है।

प्रस्तुत शोध से संबंधित पूर्व में भी कुछ शोध कार्य किये गये हैं जैसे – बनई, कोत्सु (1992) ने अपने अध्ययन में पाया कि छात्र–छात्राओं के आत्म–प्रत्यय में सार्थक अंतर नहीं पाया गया। कल्याणी देवी, टी. एवं माधुरी लता, बी. (2004) के अध्ययन के निष्कर्षतः ज्ञात हुआ कि अनुसूचित जनजाति एवं गैर अनुसूचित जनजाति के किशोरावस्था के विद्यार्थियों के आत्म–प्रत्यय में सार्थक अंतर पाया गया एवं किशोरावस्था के विद्यार्थियों के आत्म–प्रत्यय में लिंग भिन्नता नहीं पाई गई। हेनरी, सपना एवं मिश्रा, मुक्ति (2006) के अध्ययन के निष्कर्षो से ज्ञात हुआ कि गैर अनुसूचित जनजाति वर्ग की

छात्राओं एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग की छात्राओं के आत्म–प्रत्यय में सार्थक अंतर पाया गया तथा गैर अनुसूचित जनजाति वर्ग की छात्राओं में, अनुसूचित जनजाति वर्ग की छात्राओं की तुलना में उच्च आत्म–प्रत्यय पाया गया। डेविड, अलका एवं खान, शमीम (2010) ने अपने अध्ययन में पाया कि बालिकाओं का आत्म–प्रत्यय, बालकों की तुलना में उच्च पाया गया। बागड़े रेखा; डेविड, अल्का एवं करोड़िया, कविता (2011) ने अपने अध्ययन में पाया कि किशोर व किशोरियों के मध्य आत्म–प्रत्यय के क्षेत्रों शारीरिक स्वास्थ्य व आत्मस्वीकृति में सार्थक अंतर नही पाया गया। चौधरी, स्वाती (2011) ने अपने अध्ययन के निष्कर्षतः पाया कि छात्र व छात्राओं के आत्म–प्रत्यय में लिंग भेद पाया गया एवं छात्राओं का आत्म–प्रत्यय, छात्रों की तुलना में उच्च पाया गया। श्रीवास्तव, नीलम एवं चौधरी, स्वाती (2012) के अध्ययन से ज्ञात हुआ कि आत्म–प्रत्यय में लिंग भिन्नता नहीं पाई जाती है।

उद्देश्य :– अनुसूचित जनजाति एवं गैर अनुसूचित जनजाति की छात्राओं के आत्मप्रत्यय (शारीरिक, सामाजिक, स्वभावगत, शैक्षिक, नैतिक, बौद्धिक एवं समग्र) का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पना :– अनुसूचित जनजाति एवं गैर अनुसूचित जनजाति की छात्राओं के आत्मप्रत्यय (शारीरिक, सामाजिक, स्वभावगत, शैक्षिक, नैतिक, बौद्धिक एवं समग्र) में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।

उपकरण :– आत्मप्रत्यय प्रश्नावली – डॉ. राजकुमार सारस्वत

विधि :– सर्वप्रथम होशंगाबाद जिले में स्थित माध्यमिक स्तर के विद्यालयों की कक्षा दसवीं में अध्ययनरत् 100 छात्राओं (50 अनुसूचित जनजाति एवं 50 गैर अनुसूचित जनजाति) का चयन उद्देश्यपूर्ण न्यादर्श विधि द्वारा कर उन पर 'आत्मप्रत्यय प्रश्नावली' का प्रशासन किया गया एवं प्राप्तांकों के आधार पर मास्टर शीट तैयार की गई। मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रांतिक अनुपात परीक्षण के द्वारा आंकड़ों का विश्लेषण किया गया प्राप्त परिणामों के आधार पर निष्कर्ष निकाले गये।

परिणामों का विश्लेषण :– परिकल्पना : अनुसूचित जनजाति एवं गैर अनुसूचित जनजाति की छात्राओं के आत्मप्रत्यय (शारीरिक, सामाजिक, स्वभावगत, शैक्षिक, नैतिक, बौद्धिक एवं समग्र) में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।

तालिका

अनुसूचित जनजाति एवं गैर अनुसूचित जनजाति की छात्राओं के आत्मप्रत्यय संबंधी तुलनात्मक परिणाम

आत्मप्रत्यय के घटक	समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात मान	सार्थकता
शारीरिक	अनुसूचित जनजाति	50	27.88	6.15	2.06	0.05 स्तर पर सार्थक
	गैर अनुसूचित जनजाति	50	25.16	7.03		
सामाजिक	अनुसूचित जनजाति	50	22.62	6.73	3.44	0.01 स्तर पर सार्थक
	गैर अनुसूचित जनजाति	50	27.44	7.29		
स्वभावगत	अनुसूचित जनजाति	50	24.82	6.79	1.28	0.05 स्तर पर असार्थक
	गैर अनुसूचित जनजाति	50	26.58	6.91		
शैक्षिक	अनुसूचित जनजाति	50	26.22	7.19	0.83	0.05 स्तर

	गैर अनुसूचित जनजाति	50	27.38	6.83		पर असार्थक
नैतिक	अनुसूचित जनजाति	50	26.34	6.37	0.42	0.05 स्तर पर असार्थक
	गैर अनुसूचित जनजाति	50	25.82	6.11		
बौद्धिक	अनुसूचित जनजाति	50	24.70	6.85	2.53	0.05 स्तर पर सार्थक
	गैर अनुसूचित जनजाति	50	28.02	6.23		
समग्र	अनुसूचित जनजाति	50	152.58	31.81	1.20	0.05 स्तर पर असार्थक
	गैर अनुसूचित जनजाति	50	160.40	33.15		

स्वतंत्रता के अंश – 98

0.05 स्तर के लिये निधार्रित न्यूनतम मान – 1.98

0.01 स्तर के लिये निधार्रित न्यूनतम मान – 2.63

उपरोक्त सारणी मे प्रदर्शित परिणामों से स्पष्ट है कि अनुसूचित जनजाति एवं गैर अनुसूचित जनजाति की छात्राओं के शारीरिक, सामाजिक व बौद्धिक आत्मप्रत्यय में सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक अंतर है, क्योंकि इनके लिए प्राप्त क्रांतिक अनुपात के मान क्रमशः 2.06, 3.44, 2.53 स्वतंत्रता के अंश 98 पर सार्थकता के 0.05, 0.01, 0.05 स्तर के लिये निर्धारित न्यूनतम मान 1.98, 2.63, 1.98 की अपेक्षाकृत अधिक हैं जबकि स्वभावगत, शैक्षिक, नैतिक एवं समग्र आत्मप्रत्यय में सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक अंतर नहीं है, क्योंकि इनके लिए प्राप्त क्रांतिक अनुपात के मान क्रमशः 1.28, 0.83, 0.42, 1.20 स्वतंत्रता के अंश 98 पर सार्थकता के 0.05 स्तर के लिये निर्धारित न्यूनतम मान 1.98 की अपेक्षाकृत कम हैं।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि अनुसूचित जनजाति एवं गैर अनुसूचित जनजाति की छात्राओं के शारीरिक, सामाजिक व बौद्धिक आत्मप्रत्यय में सार्थक अंतर पाया गया तथा अनुसूचित जनजाति की छात्राओं में शारीरिक आत्मप्रत्यय, गैर अनुसूचित जनजाति की छात्राओं से बेहतर पाया गया जबकि गैर अनुसूचित जनजाति की छात्राओं में सामाजिक व बौद्धिक आत्मप्रत्यय, अनुसूचित जनजाति की छात्राओं से बेहतर पाया गया। अनुसूचित जनजाति एवं गैर अनुसूचित जनजाति की छात्राओं के स्वभावगत, शैक्षिक, नैतिक एवं समग्र आत्मप्रत्यय में सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

निष्कर्ष :– अनुसूचित जनजाति एवं गैर अनुसूचित जनजाति की छात्राओं के शारीरिक, सामाजिक व बौद्धिक आत्मप्रत्यय में सार्थक अंतर पाया गया जबकि स्वभावगत, शैक्षिक, नैतिक एवं समग्र आत्मप्रत्यय में सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भार्गव, महेश (1997) ''आधुनिक मनोविज्ञान परीक्षण एवं मापन'', हर प्रसाद भार्गव, 4/230 कचहरी घाट, आगरा, ग्यारहवां संस्करण
2. सिंह, अरूण कुमार (2005) ''शिक्षा मनोविज्ञान'', भारती भवन पब्लिशर्स, पटना
3. वालिया, जे.एस. (2005) ''शिक्षा मनोविज्ञान की बुनियादें'', पाल पब्लिशर्स, जालंधर
4. कल्याणी, देवी टी. एवं माधुरी लता बी. (2004) ''अनुसूचित जनजाति एवं गैर अनुसूचित जनजाति के किशोरावस्था के विद्यार्थियों के आत्मप्रत्यय का अध्ययन'', आई. जे.पी.ई. (इंडियन जनरल ऑफ सॉयकोमेट्री एंड एजूकेशन), जनवरी 2004, वाल्यूम 35 (1) पेज नं. 21–25

5- **Banui, Kuotsu (1992)** A study of the values of college students in Nagalend in relation to there self-concept, Ph.D. Edu. North-Eastern Hill Univ. In Fifth Survey of Educational research (1988-92) Vol. - II, Pg. No. 1334.

6- **Henry, Sapnaa and Mishra, Mukti (2006)** "Self-Concept of Tribal and Non-Tribal College Girls", Praachi Journal of Psycho-Cultural Dimensions, Meerut, April 2006, Vol. 22 (1), Pg. No. 62-66

7- **Shrivastav, Neelam and Choudhary, Swati (2012)** A Study of Self-Concept, Personality and Moral Values of Adolescent. Research Scapes, Volume 1, Issue - 3, July-September 2012, Page No. 100-102.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

विनीता शुक्ला
शोधार्थी, शिक्षा संकाय, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल
डॉ. ज्योत्सना खरे
प्राचार्य, एन. ई. एस. महाविद्यालय, होशंगाबाद

प्रस्तुत शोध पत्र में अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। प्रारंभिक न्यादर्श के रूप में 300 छात्राओं का चयन कर उन छात्राओं पर 'अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी व्यक्तित्व मापनी' का प्रशासन किया गया। अंतिम न्यादर्श के रूप में प्राप्त 137 छात्राओं पर 'व्यक्तिगत मूल्य प्रश्नावली' का प्रशासन किया गया। प्राप्त परिणामों के अनुसार अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं के मध्य सामाजिक, प्रजातांत्रिक व सुखवादी मूल्यों में सार्थक अंतर पाया गया जबकि धार्मिक, सौंदर्यात्मक, आर्थिक, ज्ञान, शक्ति, पारिवारिक प्रतिष्ठा व स्वास्थ्य मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

मनुष्य जीवन पर्यन्त सीखता रहता है तथा उसके अनुभवों में निरन्तर वृद्धि होती रहती है। जैसे–जैसे मनुष्य परिपक्व होता जाता है वह ऐसे अनुभवों को प्राप्त करता है जो उसके व्यवहार को निर्देशित करते हैं, इन्हें मूल्य कहा जाता है। वर्तमान शिक्षा पद्धति में मूल्यों की महती आवश्यकता है, तथा विद्यार्थियों के जीवन में मूल्यपरक शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि मूल्यपरक शिक्षा विद्यार्थियों को वह अवसर प्रदान करती है, जिससे वे मानवता के सामने वर्तमान में उपस्थित सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, नैतिक और आध्यात्मिक मसलों पर सोच विचार कर सकें व राष्ट्रीय विकास में योगदान कर सकें।

आज इम सांस्कृतिक हलचल और मूल्यों के अकाल व अभाव के दौर से गुजर रहे हैं। आधुनिक युग में लोग भौतिक सुख–सुविधाओं के आगोश में इतने अधिक लिप्त हो गये हैं कि सामाजिक जीवन से सत्यनिष्ठता, नैतिकता आदि की भावनाओं का लोप होता जा रहा है इस चारित्रिक पतन का कारण बचपन से ही मूल्यों का आत्मसात् न होना है। यदि बचपन से ही मूल्यों की स्थापना व्यक्ति मे हो जाये तो वह सम्पूर्ण जीवनपर्यन्त इन मूल्यों व संस्कारों का परिपालन कर समाज मे आदर्श व्यक्ति की पहचान बना सकता है। उपरोक्त सभी बातों को ध्यान में रखते हुए मूल्यों का अध्ययन करना बहुत ही सामयिक प्रतीत हो रहा है। अतः शोधकर्ता ने उपरोक्त सभी बातों को ध्यान में रखते हुए अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन विषय का चयन शोधकार्य हेतु किया है।

मूल्यों से संबंधित पूर्व में भी कुछ शोध कार्य किये गये हैं जैसे गर्ग (1983) ने अपने अध्ययन में पाया कि माता–पिता की अभिवृत्तियों का प्रभाव उनके बालकों के मूल्य विकास पर पड़ता है। भाटिया (1986) ने अपने अध्ययन में पाया कि बदलते परिवेश का प्रभाव मूल्यों पर भी पड़ता है। जगदीश व सिंह (2003) ने अपने अध्ययन के निष्कर्षतः पाया कि उच्चतर माध्यमिक स्तर व स्नातक स्तर की छात्राओं के सैद्धांतिक, आर्थिक, सामाजिक मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं पाया गया जबकि आर्थिक, राजनीतिक एवं धार्मिक मूल्यों में सार्थक अंतर पाया गया। उपाध्याय (2009) के अध्ययन से ज्ञात हुआ कि कार्यरत व अकार्यरत माताओं के बच्चों के सामाजिक मूल्यों में अंतर नही पाया गया, जबकि प्रजातांत्रिक मूल्यों मे सार्थक अंतर पाया गया तथा अकार्यरत माताओं के बच्चों में प्रजातांत्रिक मूल्य, कार्यरत माताओं के बच्चों की तुलना में उच्च पाए गये। तिवारी, महेन्द्र कुमार (2014) के अध्ययन से ज्ञात हुआ कि सरस्वती विद्यामंदिर में अध्ययनरत छात्रों में उच्च सामाजिक मूल्य, छात्राओं में अति उच्च सामाजिक मूल्य जबकि विद्यार्थियों में उच्च सामाजिक मूल्य पाये गये।

उद्देश्य :– अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं के धार्मिक, सामाजिक, प्रजातांत्रिक, सौंदर्यात्मक, आर्थिक, ज्ञान, सुखवादी, शक्ति,

पारिवारिक प्रतिष्ठा एवं स्वास्थ्य मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पना :– अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं के धार्मिक, सामाजिक, प्रजातांत्रिक, सौंदर्यात्मक, आर्थिक, ज्ञान, सुखवादी, शक्ति, पारिवारिक प्रतिष्ठा एवं स्वास्थ्य मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।

उपकरण :–

1. अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी व्यक्तित्व मापनी – डॉ. आर. ए. सिंह
2. व्यक्तिगत मूल्य प्रश्नावली – डॉ. (श्रीमती) जी. पी. शैरी एवं आर.पी. वर्मा

विधि :– सर्वप्रथम होशंगाबाद जिले के हाईस्कूल स्तर के विद्यालयों की सूची प्राप्त की गई तथा इस सूची में से यादृच्छिक प्रतिचयन विधि द्वारा 06 विद्यालयों का चयन किया गया तथा इन विद्यालयों की कक्षा 10वीं में अध्ययनरत 300 छात्राओं का चयन प्रारंभिक न्यादर्श के रूप में साधारण यादृच्छिक विधि द्वारा कर उन छात्राओं पर 'अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी व्यक्तित्व मापनी' का प्रशासन किया गया तथा 'अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी व्यक्तित्व मापनी' के प्राप्तांकों के आधार पर अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाली 137 छात्राओं का चयन अंतिम न्यादर्श के रूप में किया गया। अंतिम न्यादर्श के रुप में चयनित इन 137 छात्राओं पर 'व्यक्तिगत मूल्य प्रश्नावली' का प्रशासन किया गया। इस मापनी में दिये गये सभी दस मूल्यों का अलग–अलग फलांकन किया गया। प्राप्तांकों के आधार पर मास्टर शीट तैयार की गई। मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रांतिक अनुपात परीक्षण के द्वारा आंकड़ों का विश्लेषण किया गया प्राप्त परिणामों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गये।

परिणामों का विश्लेषण :–

तालिका

माध्यमिक स्तर की अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं के व्यक्तिगत मूल्यों पर पारिवारिक वातावरण के प्रभाव संबंधी तुलनात्मक परिणाम

मूल्य	व्यक्तित्व का प्रकार	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात मान	सार्थकता
धार्मिक	अंतर्मुखी	48	13.63	3.07	1.09	0.05 स्तर पर असार्थक
	बहिर्मुखी	89	14.26	3.53		
सामाजिक	अंतर्मुखी	48	13.94	3.21	2.55	0.05 स्तर पर सार्थक
	बहिर्मुखी	89	15.52	3.88		
प्रजातांत्रिक	अंतर्मुखी	48	14.21	3.93	2.31	0.05 स्तर पर सार्थक
	बहिर्मुखी	89	15.69	4.03		
सौंदर्यात्मक	अंतर्मुखी	48	12.96	2.97	0.47	0.05 स्तर पर असार्थक
	बहिर्मुखी	89	13.21	3.05		

आर्थिक	अंतर्मुखी	48	15.63	3.85	1.06	0.05 स्तर पर असार्थक
	बहिर्मुखी	89	14.91	3.69		
ज्ञान	अंतर्मुखी	48	16.27	3.29	0.72	0.05 स्तर पर असार्थक
	बहिर्मुखी	89	15.85	3.15		
सुखवादी	अंतर्मुखी	48	14.23	3.52	2.07	0.05 स्तर पर सार्थक
	बहिर्मुखी	89	12.97	3.17		
शक्ति	अंतर्मुखी	48	12.69	2.89	0.89	0.05 स्तर पर असार्थक
	बहिर्मुखी	89	13.16	3.19		
पारिवारिक प्रतिष्ठा	अंतर्मुखी	48	13.04	3.11	0.31	0.05 स्तर पर असार्थक
	बहिर्मुखी	89	12.87	2.82		
स्वास्थ्य	अंतर्मुखी	48	13.92	3.35	0.34	0.05 स्तर पर असार्थक
	बहिर्मुखी	89	14.13	3.77		

स्वतंत्रता के अंश – 135 0.05 स्तर के लिये निधार्रित न्यूनतम मान – 1.98

उपरोक्त सारणी में प्रदर्शित परिणामों से स्पष्ट है कि अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं के मध्य धार्मिक, सौंदर्यात्मक, आर्थिक, ज्ञान, शक्ति, पारिवारिक प्रतिष्ठा व स्वास्थ्य मूल्यों में सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक अंतर नहीं है, क्योंकि इन मूल्यों के लिए पाप्त क्रांतिक अनुपात के मान क्रमशः 1.09, 0.47, 1.06, 0.72, 0.89, 0. 31, 0.34 स्वतंत्रता के अंश 135 पर सार्थकता के 0.05 स्तर के लिये निर्धारित न्यूनतम मान 1.98 से कम हैं जबकि सामाजिक, प्रजातांत्रिक व सुखवादी मूल्यों में सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक अंतर है, क्योंकि इन मूल्यों के लिए प्राप्त क्रांतिक अनुपात के मान क्रमशः 2.55, 2.31, 2.07 स्वतंत्रता के अंश 98 पर सार्थकता के 0.05 स्तर के लिये निर्धारित न्यूनतम मान 1.98 से अधिक हैं।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं के मध्य धार्मिक, सौंदर्यात्मक, आर्थिक, ज्ञान, शक्ति, पारिवारिक प्रतिष्ठा व स्वास्थ्य मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं पाया गया जबकि सामाजिक, प्रजातांत्रिक व सुखवादी मूल्यों में सार्थक अंतर पाया गया तथा बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं में सामाजिक, प्रजातांत्रिक मूल्य अंतर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं की तुलना में बेहतर पाए गए परंतु अंतर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं में सुखवादी मूल्य बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं की तुलना में बेहतर पाए गए।

निष्कर्ष :– अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं के मध्य धार्मिक, सौंदर्यात्मक, आर्थिक, ज्ञान, शक्ति, पारिवारिक प्रतिष्ठा व स्वास्थ्य मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं पाया गया जबकि सामाजिक, प्रजातांत्रिक व सुखवादी मूल्यों में सार्थक अंतर पाया गया तथा बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं

में सामाजिक, प्रजातांत्रिक मूल्य अंतर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं की तुलना में बेहतर पाए गए परंतु अंतर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं में सुखवादी मूल्य बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओं की तुलना में बेहतर पाए गए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गुप्ता, एस. पी. (2005) ''सांख्कीय विधियां'' शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
2. पाण्डेय, रामशकल (2000) : मूल्य शिक्षा के परिप्रेक्ष्य, आर.लाल बुक डिपो, मेरठ।
3. पाण्डेय, रामशकल (2008) : धर्म दर्शन और शिक्षा, आर.लाल बुक डिपो, मेरठ।
4. शर्मा, आर.ए. (1995) : मानव मूल्य एवं शिक्षा, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।
5. तिवारी, महेन्द्र कुमार (2014) ''सरस्वती विद्या मंदिर के विद्यार्थियों में पाये जाने वाले सामाजिक मूल्यों का अध्ययन'', सामाजिक शोध योजना, वॉल्यूम 2, अंक 3, वर्ष 2, जुलाई 2014, पेज नं. 99–101
6. **Jagdish & Singh, V.P. (2003)** "A Emerging value pattern among female students", Journal of Value Education, N.C.E.R.T. New Delhi, Vol. III, No. 1, January 2003, Pg. No. 74-79
7. **Upadhyaa, Anjana (2009) "**A Comparative study of value patterns fof childeren of working an Non Working Educated Mothers", Research Link - 62, Vol - VIII (3), May 2009, Pg.No. 133-134

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन

संगीता गलफट
शोधार्थी, शिक्षा संकाय, आर.के.डी.एफ. विश्वविद्यालय, भोपाल
डॉ. आशीष बाजपेयी
प्राध्यापक, वेदिका कॉलेज ऑफ एजुकेशन, आर.के.डी.एफ. विश्वविद्यालय, भोपाल

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। इसके लिये बैतूल जिले के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र में स्थित माध्यमिक विद्यालयो की कक्षा 10 वीं में अध्ययनरत 200 विद्यार्थियों का चयन किया गया। शैक्षणिक उपलब्धि के मापन के लिए कक्षा 10 वीं की बार्षिक परीक्षा के प्राप्तांक मूल प्राप्तांक के रूप में लिए गये। प्रदत्तों के विश्लेषण के लिए क्रांतिक अनुपात परीक्षण का प्रयोग किया गया। शोध परिणामों से यह ज्ञात हुआ कि माध्यमिक स्तर के शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि, ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों से उच्च पायी गयी।

मुख्य शब्द :– माध्यमिक स्तर, शैक्षणिक उपलब्धि, शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र मानवजाती के सम्पूर्ण विकास तथा प्रगति में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है। आज सम्पूर्ण विश्व यह स्वीकार करता है कि हमारे भविष्य को आकार देने में शिक्षा की स्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका है, तब यह अपेक्षा करना स्वाभिक है कि शिक्षा के माध्यम से ही ऐसी मानव जाती का निर्माण किया जा सकता है जो कि विज्ञान एवं तकनीकी के इस युग में उच्च उर्जे का ज्ञान हासिल कर सके और इस प्रकार ज्ञान आधारित समाज का निर्माण हो सके। कोई भी सामान्य बालक सीखने का जन्मजात गुण रखता है, साथ ही उसमें वातावरण के साथ समायोजन की भी नैसार्गिक प्रकृति भी पाई जाती है, वातावरण में उपस्थित विभिनन कारकों के प्रभाव से बालक के व्यक्तित्व का निर्माण व उसके भावी जीवन की दिशा निर्धारित होती है। व्यक्ति तथा वातावरण के बीच अंतःक्रिया के फलस्वरूप व्यक्ति नए व्यवहार सीखता है। अनुभव के आधार पर इन व्यवहारों में स्थाई परिवर्तक होते हैं, यही स्थाई परिवर्तक सीखना या अधिगम कहलाता है। किसी विद्यार्थी ने एक निश्चित समय में किसी विषय में कितना सीखा या कितना अधिगम हुआ यही उसकी शैक्षिक उपलब्धी कहलाती है।

विद्यार्थी की सम्पूर्ण शिक्षा के माध्यम से ही राष्ट्र प्रगति के पथ पर अग्रसर हो सकता है। देश की प्रतिष्ठा एवं विकास का दायित्व इन्हीं भावी कर्णधारों के कंधों पर निर्भर है, परन्तु इसके लिए हमें इन भावी कर्णधारों का सर्वांगीण विकास करना है, जिसमें शिक्षा की सर्वप्रमुख भूमिका है। अतः इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु शोधार्थी ने माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करने का प्रयास इस अध्ययन द्वारा किया है।

प्रस्तुत शोध से संबंधित पूर्व में भी कुछ शोध कार्य किये गये हैं जैसे – सारस्वत, अनिल (1980) ने अपने अध्ययन में पाया कि छात्र–छात्राओं तथा शहरी, ग्रामीण विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि सार्थक रूप से भिन्न पाई गई। कुमार, राजीव (1989) ने पाया कि शैक्षिक उपलब्धि तथा बुद्धि के मध्य सार्थक सहसंबंध है, ग्रामीण तथा शहरी विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्य कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया तथा शैक्षिक उपलब्धि के निर्धारण में जिज्ञासा एवं बुद्धि महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। गर्ग, चित्रा (1992) ने अपने अध्ययन के निष्कर्षतः पाया कि हाईस्कूल की परीक्षा में उत्तीर्ण होने वाले विद्यार्थी, अनुत्तीर्ण होने वाले विद्यार्थियों की तुलना में अधिक बुद्विमान, अभिभावकों द्वारा बेहतर रूप से स्वीकृत तथा सामाजिक व आर्थिक रूप से बेहतर समायोजित पाये गये। अनुत्तीर्ण विद्यार्थियों की, उत्तीर्ण विद्यार्थियों की तुलना में अभिभावकों द्वारा अधिक उपेक्षा करना पाया गया। शहरी क्षेत्र में उत्तीर्ण तथा अनुत्तीर्ण विद्यार्थियों की बुद्धि मे अंतर नहीं पाया गया। ग्रामीण क्षेत्र में उत्तीर्ण

विद्यार्थी, अनुत्तीर्ण विद्यार्थियों की तुलना में अधिक बुद्विमान पाये गये। गर्ग, वी.पी. तथा चतुर्वेदी, सीमा (1992) ने अपने अध्ययन के निष्कर्षतः पाया कि शहरी तथा ग्रामीण दोनों ही क्षेत्रों में बुद्धिलब्धि तथा शैक्षणिक प्रदर्शन के मध्य रेखीय संबंध प्राप्त हुआ। शहरी तथा ग्रामीण दोनों ही क्षेत्रों में शैक्षणिक प्रदर्शन का सामाजिक व आर्थिक स्तर के साथ रेखीय संबंध प्राप्त हुआ। ग्रामीण विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि, शहरी विद्यार्थियों की तुलना में निम्न पायी गयी। त्रिपाठी, कुमुद (2003) ने अपने अध्ययन के निष्कर्षतः पाया कि शैक्षणिक उपलब्धि पर अभिप्रेरणा का प्रभाव अधिक पड़ता है एवं शैक्षणिक उपलब्धि पर लिंग एवं परिवेश का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। कुमार, मनीष (2008) ने निष्कर्ष स्वरूप पाया कि शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि एवं पारिवारिक अनुशासन ग्रामीण क्षेत्र की तुलना से अधिक पाई गई। साठे, वी.यू. एवं अंसारी, एफ. (2012) ने अपने अध्ययन के निष्कर्षतः पाया कि शहरी विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि एवं समायोजन के विभिन्न घटकों–गृह तथा परिवार, सामाजिक, व्यक्तिगत तथा संवेगात्मक, शैक्षणिक, स्वास्थ्य के मध्य सार्थक सह संबंध पाया गया । ग्रामीण विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धी एवं समायोजन के गृह तथा परिवार, व्यक्तिगत तथा संवेगात्मक, शैक्षिक के मध्य सार्थक सहसंबंध पाया गया जबकि ग्रामीण विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धो तथा समायोजन के सामाजिक एवं स्वास्थ्य घटकों के बीच सार्थक सह संबंध नहीं पाया गया।

परिणामों का विश्लेषण :–

उद्देश्य :– माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पना :– माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।

उपकरण :– प्रस्तुत शोध में शैक्षणिक उपलब्धि के मापन के लिए सत्र 2016–17 में म.प्र. माध्यमिक शिक्षा मण्डल द्वारा आयोजित कक्षा 10 वीं की बार्षिक परीक्षा के प्राप्तांक मूल प्राप्तांक के रूप में लिए गये हैं।

विधि :– पस्तुत शोध कार्य हेतु बैतूल जिले के माध्यमिक विद्यालयों की कक्षा दसवीं में सत्र 2016–17 में अध्ययनरत् 200 विद्यार्थियों का चयन यादृच्छिक न्यादर्श विधि द्वारा किया गया, जिसमें 100 विद्यार्थी शहरी क्षेत्र के (50 छात्र एवं 50 छात्राएं) तथा 100 विद्यार्थी ग्रामीण क्षेत्र के (50 छात्र एवं 50 छात्राएं) थे। इन विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि के मापन के लिए म.प्र. माध्यमिक शिक्षा मण्डल द्वारा आयोजित कक्षा 10 वीं की बार्षिक परीक्षा के प्राप्तांक मूल प्राप्तांक के रूप में लिए गये। मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रांतिक अनुपात परीक्षण के द्वारा आंकड़ों का विश्लेषण किया गया एवं प्राप्त परिणामों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गये।

तालिका

माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि संबंधी तुलनात्मक परिणाम

समूह	निवास क्षेत्र	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात मान	'पी' मान
1) छात्र	शहरी	50	329.64	67.85	2.41	< 0.05
	ग्रामीण	50	298.92	59.23		

2) छात्रा	शहरी	50	341.58	63.47	2.24	< 0.05
	ग्रामीण	50	315.24	53.97		
विद्यार्थी	शहरी	100	335.61	66.39	3.26	< 0.01
	ग्रामीण	100	307.08	57.21		

स्वतंत्रता के अंश – 98, 198 0.05, 0.01 स्तर के लिये निधार्रित न्यूनतम मान – 1.98, 2.60

उपरोक्त सारणी में प्रदर्शित परिणामों से स्पष्ट है कि माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि संबंधी तुलनात्मक परिणामों से स्पष्ट होता है कि इन तीनों समूहों के लिये प्राप्त क्रांतिक अनुपात के मान क्रमशः 2.41, 2.24 एवं 3. 26 स्वतंत्रता के अंश 98 व 198 पर सार्थकता के 0.05, 0.01 स्तर के लिए न्यूनतम निर्धारित मान क्रमशः 1.98 व 2.60 से अधिक हैं।

अतः उपरोक्त परिणामों के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि में सार्थक अंतर पाया गया तथा शहरी क्षेत्र के छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि, ग्रामीण क्षेत्र के छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों से उच्च पाई गई।

निष्कर्ष :– माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि में सार्थक अंतर पाया गया तथा शहरी क्षेत्र के छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि, ग्रामीण क्षेत्र के छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों से उच्च पाई गई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गैरैट, ई. हेनरी (1995) : शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकीय प्रयोग, ऊषा राजकुमार कल्याणी पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
2. गुप्ता, मधु (2000) : शिक्षा संस्कार एवं उपलब्धि, क्लासिक पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।
3. गुप्ता, एस.पी. (2007) : आधुनिक मापन एवं मूल्यांकन, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
4. कुमार, मनीष, (2008) ''ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में स्थित उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के पारिवारिक अनुशासन एवं उनकी शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन'', जर्नल ऑफ रिसर्च एण्ड एक्सप्लोरेशन इन टीचर एजूकेशन (एजूक्वेश्ट), वाल्यूम (1), अप्रैल 2008, पृष्ठ क्रमांक 59–65
5. सारस्वत अनिल (1980) ''विभिन्न विद्यालयीन परिवेश के किशोरों की शैक्षिक उपलब्धि, उपलब्धि अभिप्रेरणा तथा व्यवसायिक आकांक्षा पर एक अध्ययन", फिफ्थ सर्वे ऑफ एजुकेशन रिसर्च, वाल्यूम (2), पेज नं. 1911
6. Buch, M.B. (1988-92) : **Fifth Survey of Research in Education,** National Council of Education Research and Training, New Delhi, Vol. II
7. **Garg, Chitra, (1992)** "A study of family relations, socio-economic status, intelligence and adjustment of failed high school students", Ph.D., Edu. Hemwati Nandan Bahuguna Garhwal Univ., In Fifth Survey of Research in Education. (19892), Vol II, Pg. No. 1874.
8. **Garg V.P. and Chaturvedi, Seema (1992)** "Intelligence and socio-economic status as correlates of academic performance: Some field evidences", Indian Educational Review, Vol. 27(3): 107-10, In Fifth Survey of Research in Education. (1988-92), Vol II, Pg. No. 1875

9. **Kumar, Rajeev (1989)** ''Children's cuviosity, intelligence and scholastic achievement'', Ph.D., Edu. Agra Univ. Forth Survey of Edu. Research, Vol. II, Page No. 1884
10. **Sathe, V.U. and Anjsari, F. (2012)** ''Study of academic achievement and selected adjustment factors of rural adolescent students in pune district'', Asian journal of psychology and education, vol45, No. 7-8 , year 2012, Page no. 23-32.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

ECOMMERCE AND ITS APPLICATIONS IN INDIA

Narita Ahuja
Assistant Professor, Department of Commerce, NBGSM College, Maharishi Dayanand University

ABSTRACT :- The purpose of the paper is to annotate the words Ecommerce and Ebusiness in India. According to reports published by International Monetary Fund (IMF) and Central Statistics Office (CSO), India is among the fastest growing economies of the world. Among several factors, a conscious patronization of online commerce, and an emergence of retail as a dominant market segment have contributed to the unprecedented growth of ECommerce in India. For the financial year 2016-17, ECommerce sales reached the US $16 billion with a projection of a seven fold growth within the next two fiscals as estimated by Morgan Stanley. By 2020 online commerce sales is expected to cross $120 billion.

Ecommerce :- Electronic commerce is the application of communication and information sharing technologies among trading partners to the pursuit of business objectives. E-Commerce can be defined as a modern business methodology that addresses the needs of organizations, merchants, and consumers to cut costs while improving the quality of goods and services and increasing the speed of service delivery. E-commerce is associated with the buying and selling of information, products and services via computer networks. Key element of e-commerce is information processing.

E-commerce not necessarily mean conducting commerce through the Internet alone, but also mean other forms of electronic communication. Actually, the roots of e-commerce lie not in the Internet, but in other forms of electronic communication. Technologies like Electronic Data Interchange (EDI) and Electronic Funds Transfer (EFT) predate the advent of e-commerce using the Internet and put the foundations for the growth of e-commerce we see today. The point here is that these older and high-powered technologies have been used to connect one business house to one another business. The protocols used for communication between the business houses were point-to-point. But the recent advances accomplished in e-commerce allows for a one-to many or many-to-many approach and thus help to expand greatly any single business to any number of businesses throughout the world.

Its wide range of activities for the consumer marketplace can be broadly classified into

- **Entertainment** :- Movies on demand, Video cataloging, interactive ads, multi-user games, on-line discussions
- **Financial services and information** :- Home banking, financial services, financial news
- **Essential services**: Home shopping, electronic catalogs, telemedicine, remote diagnostics
- **Educational and training**: Interactive education, video conferencing, on-line database.

Ecommerce is categorized into **six major** types they are:

1. **Business-to-Business** :- Business to business electronic commerce (B2B) typically takes the form of automated processes between trading partners and is performed in much higher volumes than business to consumer (B2C) applications. For example, a company that makes chicken feed would sell it a chicken farm, another company, rather than directly to customers.

Business to business electronic commerce, also known as E-Business, is experiencing an explosive growth rate on the Internet. Companies of all sizes and types are now mutually buying and

selling products and services on the Internet. The original first stage of commerce on the Internet was that of E-commerce, which is business to consumer activities. Business to Business goes well beyond that popular form of consumer purchasing. It is intended to bring "Just in Time" concept to a greater height which allow businesses to coordinate with its business associate for real time transaction and improving efficiency and productivity for both organisations. B2B also offers unique benefits such as less human intervention, less overhead expenses, fewer inadvertent errors, more efficiency, more advertising exposure, new markets and new physical territories equate to an intelligent method of mutual business. It is a win-win situation for both buyer and seller.

2. **Business-to-Consumer** :- While the term e-commerce refers to all online transactions, B2C stands for Business to Consumer and applies to any business or organisation that sells its products or services to consumer over the Internet for their own use.B2C is basically a concept of online marketing and distributing of products and services over the Internet. It is a natural progression for many retailers, or marketer who sells directly to the consumer. The general idea is, if you could reach more customers, service them better, and make more sales while spending less to do it that would be the formula of success for implementing a B2C ecommerce infrastructure.

When most people think of B2C e-commerce, they think of Amazon.com, the online bookseller that launched its site in 1995 and quickly took on the nation's major retailers.

3. **Business-to-Administration** :- The B2A category covers all transactions that are carried out between businesses and government bodies using the Internet as a medium. This category has steadily evolved over the last few years. An example of a B2A model, is that of Accela.com, a software company that provides round the clock public access to government services for asset management, emergency response, permitting, planning, licensing, public health, and public works.

It refers to the service delivery by government to business enterprises (for which A2B would make more sense), or concerned with regulation by government of business enterprises.

4. **Consumer-to-Consumer** :- An often overlooked category of market spaces is the use of electronic tools to support transactions between individuals. Some of these are conventionally economic in nature as in 'classified advertisements' and auctions of personal possessions. Others involve 'indirect or deferred reciprocity'. Thanks to the Internet, intermediary companies have fostered more C2C interaction. Some examples of C2C include eBay, an online auction site, and Amazon, which acts as both a B2C and a C2C marketplace. EBay has been successful since its launch in 1995, and it has always been a C2C.

5. **Consumer-to-Business** :- C2B model, also called a reverse auction or demand collection model in which consumers (individuals) create value and businesses consume that value. For example, when a consumer writes reviews or when a consumer gives a useful idea for new product development then that consumer is creating value for the business if the business adopts the input. Excepted concepts are crowd sourcing and co-creation.

A consumer posts his project with a set budget online and within hours companies review the consumer's requirements and bid on the project. The consumer reviews the bids and selects the company that will complete the project.

6. **Consumer-to-Administration** :- The Consumer-to-Administration model encompasses all electronic transactions conducted between individuals and public administration.

C2A examples include applications such as e-democracy, e-voting, information about public services and e-health. Using such services consumers can post concerns, request feedback,

or information (on planning application progress) directly from their local governments/ authorities.

Both models involving Public Administration (B2A and C2A) are strongly associated to the idea of efficiency and easy usability of the services provided to citizens by the government, with the support of information and communication technologies. Government to government (G2G), Government to Business (G2B), Administration to employees (A2E), Government to Citizen (G2C) are the other forms of ecommerce that involve transactions with the government from procurement to filing taxes to business registrations to renewing licenses. There are other categories of ecommerce out there, but they tend to be superfluous.

E-Business :- Electronic business (e-b) represents transformation of an organisations business and functional processes through the application of technologies, philosophies and computing paradigms of the new digital economy. E-business includes

- Merchandise planning and analysis
- Order entry
- Fulfilment
- Warehousing
- Inventory management
- Customer service
- Knowledge management
- Customer Relationship management (CRM)
- Other logistics.

Definition :- Electronic business is a term now used broadly for the act of doing business using the internet and other electronic means to conduct business as defined by Mike Cunningham.

Electronic business is any internet initiative – tactical or strategic that transforms business relationships, whether those relationships be business-to-consumer, business-to-business, or even consumer-to-consumer. Four most important properties of success in E-business are :

- Leadership
- Competencies
- Governance
- Technology

E-business can comprise a range of functions and services, ranging from the development of intranets and extranets to e-service, the provision of services and tasks over the Internet by application service providers. Today, as major corporations continuously rethink their businesses in terms of the Internet, specifically its availability, wide reach and ever-changing capabilities, they are conducting e-business to buy parts and supplies from other companies, collaborate on sales promotions, and conduct joint research.

IBM was one of the first companies to use the term when, in October 1997, it launched a thematic campaign built around e-business.

Electronic commerce vs Electronic Business :- Ecommerce is use of electronic transmission medium that caters for **buying and selling** of products and services. In addition, Ebusiness also includes the **exchange of information** directly related to buying and selling of products. Where Ecommerce is subset of Ebusiness and on the other hand Ebusiness is superset of Ecommerce.

Following is the further differentiation between Ecommerce and Ebusiness which are considered to be similar.

Ecommerce involves commercial transactions done over internet.	Ebusiness is conduct of business processes on the internet.
Ecommerce usually requires the use of just a Website.	Ebusiness involves the use of CRM's, ERP's that connect different business processes.
Ecommerce covers outward facing processes that touch customers, suppliers and external partners.	E-business covers internal processes such as production, inventory management, product development, risk management, finance etc.
Ecommerce is narrower concept and restricted to buying and selling.	It is a broader concept that involves market surveying, supply chain and logistic management and using Data mining.
It is more appropriate in B2C context.	It is used in the context of B2B transactions.
Example- Buying of pendrive from Amazon.com is considered Ecommerce.	Example- Using of Internet by Dell, Amazon for maintaining business processes like Online customer support, email marketing, supply chain management.

Applications of Ecommerce :- Applications of ecommerce and its development is an unavoidable factor in the present day today life.

Ecommerce is an area which is used in various fields of business like wholesale, retail as well as manufacturing unit. Ecommerce is a subset of the e-business that concerns commerce. The activity of the exchange of goods and services with some or the other kind of payment methods can be intended as commerce. Ecommerce world is an application of information sharing among business trading basically online commercial transaction with clients.

Ecommerce development and its applications is an unavoidable sector in the present day today life. Given below are the most common ecommerce applications.

***Retail & wholesale :-** There are numerous applications for retail as well as wholesale in case of ecommerce. Here comes e-retailing or may be called as online retailing. This refers to the selling of goods and other services through electronic

stores from business to consumers. These are designed and equipped using shopping cart model and electronic catalog.

***Marketing :-** Using web and ecommerce, data collection about the following are possible Preferences Behaviour Needs Buying patterns.

The marketing activities like price fixing, product feature and its enhancement, negotiation, and the relationship with the customer can be made using these.

***Finance** :- Ecommerce is being used by the financial companies to a large extent. By the name finance we know that there will be customers and transactions. The customers can check the balance in their savings account, as well as their loan account. There are features like transferring of money from and to their own accounts, paying of bills online and also e-banking. Online stock trading is also another feature of ecommerce.

***Manufacturing** :- Ecommerce is included and used in the chain operations (supply) of a company. There are companies that form electronic exchange. This is by providing buying and selling items together, trading market information and the information of runback office like inventory control. This is a way that speeds up the flow of finished goods and the raw materials among the business community members.

***Auctions :-** Ecommerce customer to customer is direct selling of goods among customers. It includes electronic auctions that involve bidding system. Bidding allows prospective buyers to bid an item. In Airline Company they give bidding opportunity for customers to quote the price for a seat on specific route, date and time.

***Entertainment** :- Ecommerce application is widely used in entertainment area also for video cataloging, multiplayer games, interactive ads and for online discussion.

***Education :-** In educational training also ecommerce has major role for interactive education, video conferencing, online class and for connecting different educational training centers.

The Indian scenario of Electronic Commerce and Electronic Business :- Inspite of numerous advantages, ecommerce still has a number of hurdles to cross over before it truly revolutionises business. These hurdles are most difficult and herculean in a country like India, where computing itself is taking roots gradually. The primary cause of this being that the number of computers per person in India is too small for e-commerce to make an impression. To deal electronically, the basic requirement is to have a computer or a device that can fulfil the requirements for dealing with online transactions. The second major problem is that even those who have computers do not have access to the Internet. The internet is the medium that can really propel e-commerce. In India, with a population of nearly a billion, not even a million have access to the Internet. E-commerce is carried out largely through credit cards, which are commonplace in India. Most of the people are not comfortable with idea of using credit cards itself.

The other problem of buying from a catalogue is that it does not have the direct impact to generate desire and trigger the consequent purchase. Also, the possibility of bargaining doesn't carry forward to 'Net shopping'; which dissuades most Indian consumers.

In this context while the cyber laws are getting ready to be enacted, the credit card agencies are yet to develop a system of accepting usage to the Internet. Since this is an established mode of usage abroad, it is only a matter of time that the facility would be available in India also. In the meantime, Indian companies can still trade with buyers outside. It is felt by experts that B2B commerce though it is in an embryonic stage, its pace of penetration is tremendous. There is a significant change in the attitude of Indian business from previous years to the present stage.

Companies like Maruti Udyog, Henkel, Bajaj Auto, TVS electronics and Samsung electronics have started B2B transactions with their suppliers. COMPAQ, Citibank, ICICI and FMCG companies like HLL and Godrej have implemented some form of E-business. With the rapid expansion of Internet, global electronic commerce is set to play very important role in the 21st century. The E-commerce technologies currently being used in India are E-mail, Internet, Web Access and Web sites. The technologies are gaining momentum and for future implementation periods include :

- Intranets
- Extranets
- Electronic Funds Transfer
- E-kiosk
- E-cash
- Interactive voice responses

The three principal driving factors for this growth in eCommerce sector of India are:

- Participation of niche companies in online trading
- Unmatched FDI (foreign direct investment)
- Uniform GST (Goods and Services Tax)

Conclusion :- The world seems to be watching on excitedly as India fast becomes a major e-commerce player. There is everything to play for in this industry, but many brands are in need of a little guidance. The dramatic growth of Indian e-commerce will no doubt have been heavily influenced by Narendra Modi's demonetisation of the Indian economy, which left many people with little choice but to shop online.

Establishing and growing an e-commerce store is challenging, regardless of where in the world you are. However, with brilliant prospects for Indian e-commerce in sight, it is important, now more than ever, to give your online brand a digital tune-up or get yourself set up in the right way. Here's some advice for you:

1. **Adopt a multichannel strategy** :- The term 'multichannel' is so much more than just a buzzword. It is vital to offer your shoppers a seamless experience regardless of device. It's official: the day of the desktop is over, and your e-commerce store needs to be optimised for viewing on any platform to meet the needs of the modern consumer.

2. **Let the brand's personality shine bright** :- To differentiate yourself from the likes of Amazon and now Alibaba, you should consider offering an insight into your brand's conception, values, and staff members, in order to give it a human face.

3. **Social media: a powerful tool** :- It's no secret that social media is one of the most powerful selling tools available to any company. In fact, according to EY, we are now seeing some brands disclose that they are spending over 31 percent of their marketing budget on social media.

Café Coffee Day has mastered the use of the Twitter feed. The café chain regularly posts promotional deals and gets involved with hashtags such as World Poetry Day with creative, shareable copy that gets customers talking about their brand.

Thus, ecommerce can be very effective if properly handled here.Like any other business,you have to take due care of customer service and marketing of your site. A surfer can never buy things through your site if he never visits it in the first place. So, you have to generate traffic to your site by providing something good and original to the visitor. Ecommerce allows you to add an entirely new sales channel to your company or organisation. Potentially, it can open up the world as a potential market but don't expect fabulous returns right from the beginning. Even giants like Amazon.com are showing losses.

Like in any business, plan your goals, develop exciting and innovative marketing strategies, provide competitive prices and don't be discouraged by initial failure. If you live by this

mantra, you could very well be on the road to future.

References :-

- Books: Ecommerce by Renu Gupta.
- Ecommerce concepts, models and strategies by CSV Murthy.

Online :-

- https://yourstory.com/2017/03/e-commerce-india/
- http://www.civilserviceindia.com/subject/Management/notes/e-business-architecture.html
- http://www.conceptsimplified.com/compare/difference-between-ebusiness-and-ecommerce/
- http://www.businessnewsdaily.com/5084-what-is-c2c.html

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

महाराजा यशवन्तराव होलकर (द्वितीय) के काल में स्थानीय स्वशासन : इन्दौर नगर

डॉ. उषा देवड़ा
एम.ए. इतिहास (गोल्ड मेडलिस्ट), सहायक आपूर्ति अधिकारी, इन्दौर (मध्यप्रदेश)

महाराजा सवाई यशवंतराव होलकर (द्वितीय) के काल में नगरपालिका अधिनियम में सारभूत संशोधन किये गये वर्ष 1928–30– सभी नगर पालिकाओं के प्रशासन में एकरूपता लाने की दृष्टि से सन् 1928 में नगर पालिका अधिनियम में सारभूत संशोधन किये गये। संशोधित संविधान के अनुसार सन् 1930 में निम्नांकित संशोधन किये गये –

अ. 30 सदस्यों की एक नगर पालिका परिषद बनाई गई

ब. 09 पार्षदों की एक स्थाई समिति रखी गई जिसमें 06 सदस्य परिषद द्वारा तथा 03 सदस्य शासन द्वारा नियुक्त किये गये थे।

स. इसमें शासन द्वारा नियुक्त एक नगर पालिका आयुक्त हाता था, जिसे कार्यपालक शक्तियॉ प्रदान की गई। नगर पालिका का एक प्रेसीडेन्ट (अध्यक्ष) होता था जो शासन द्वारा नियुक्त एक शासकीय कर्मचारी होता था। इस नगर पालिका में एक वाइस प्रेसीडेन्ट (उपाध्यक्ष) भी होता था, जिसकी नियुक्ति परिषद के सदस्यों में से ही एक वर्ष क लिए की जाती थी। परिषद का कार्यकाल 3 वर्ष का होता था।

इन्दौर नगर पालिका की सीमाऐं तीन बार बढ़ाई गई :– इन्दौर नगर पालिका की सीमाऐं तीन मर्तबा बढ़ाई गई और सन् 1930 में उसका क्षेत्रफल 8.28 वर्गमील था। पालिका की सीमाओं का पहली बार विस्तार वर्ष 1901–02 में किया गया था। दूसरा सीमा विस्तार सन् 1909 में पुनः किया गया और तीसरी बार सीमाऐं 1920 में विस्तारित की गई।

संयोगितागंज नगर पालिका, वर्ष 1931 :– 1 अगस्त 1931 को संयोगितागंज नगर पालिका के होलकर राज्य के अन्तरित किये जाने के साथ ही जिले में नगर पालिकाओं की संख्या बढ़कर चार हो गई। संयोगितागंज नगर पालिका का कारबार उसके प्रत्यावर्तन के पूर्व इन्दौर रेसीडेन्सी बाजार कार्यालय द्वारा प्रबंधित होता था। संयोगिता गंज नगर का ही एक भाग था तथापि 01 अगस्त को उसके प्रत्यावर्तन के बाद महाराजा के शासन ने यह निश्चय किया कि उसके भावी प्रशासन के लिए की जाने वाली व्यवस्थाओं के प्रश्न पर पूर्णतया विचार किये जाने तक उसका कार्य निष्प्रभावी इन्दौर रेसीडेन्सी बाजार में प्रवृत्त प्रक्रिया के आधार पर ही चलाया जाए।

संयोगितागंज नगर पालिका में 4 सदस्य थे, जिनमें 2 निर्वाचित तथा 2 नाम निर्दिष्ट होते थे। सन् 1931 में उसकी जनसंख्या 10,805 थी। होलकर शासन ने इस नगर पालिका को 1 अक्टू., सन् 1933 से इन्दौर शहर की नगर पालिका के साथ समायोजित करने का आदेश दिया।

तद्नुसार संयोगितागंज नगर पालिका 11 नवम्बर को भंग कर दी गई और इसकी समिति क 4 सदस्य इन्दौर शहर की नगर पालिका की परिषद के सदस्य हो गये।

इन्दौर जिले की तीन नगर पालिकाओं – देपालपुर, गौतमपुरा तथा पेटलावद की स्थिति, वर्ष – 1995 –

नगर पालिका का नाम	सदस्यों की संख्या	जनसंख्या	प्राप्ति रू. में	व्यय रू. में
देपालपुर	11	2546	3957	1646
गौतमपुरा	10	3600	5985	3992
पेटलावद	14	2707	2223	1937

स्थानीय स्वशासन, वर्ष 1939 की स्थिति :– वर्ष 1939 के दौरान इन्दौर नगर में तीन नये विकसित क्षेत्र अर्थात मनोरमागंज, स्नेहलतागंज तथा दक्षिणी तुकोगंज नगर सुधार न्यास के अधिकार क्षेत्र से पूर्णतः हटाकर नगर पालिका को अंतरित कर दिये गये। इस प्रकार नगर का कुल क्षेत्रफल बढ़कर 9.8 वर्गमील हो गया था।

स्थानीय स्वशासन इन्दौर – 1939 के निर्वाचन की नई व्यवस्था :– ई. 1936 तक इन्दौर नगर में काफी राष्ट्रीय जन जागृति व्याप्त हो चुकी थी, जिसका श्रेय प्रजामण्डल को जाता है। प्रजामण्डल के सदस्येां ने सीमित दायरे में नगर पालिका के द्वारा जनहित की ओर यथासंभव ध्यान दिया किंतु शासकीय हस्तक्षेप के कारण अधिक कुछ करने की गुंजाइश नही रही।

दिनांक 27 मार्च 1939 से नया संशोधित नगर कानून प्रभावशील हुआ, जिसके द्वारा नगर पालिका परिषद के सदस्येां की संख्या 34 कर दी गई। जिनमें 22 निर्वाचित, 8 नियोजित (शासकीय अधिकारी) तथा 4 गैर सरकारी नामजद सदस्य थे। परिषद को तीन चौथाई या 25 सदस्यों के बहुमत से अपना सभापति चुनने का अधिकार प्राप्त हुआ। मकान मालिक और एक निश्चित कर देने वाले को मत देने का अधिकार मिला जिससे मतदाताओं के क्षेत्र में वृद्धि हुई।

इन्दौर नगर पालिका :– 1940 से 1947 तक की विकास यात्रा – पानी के मीटर लगाने के प्रश्न पर सदस्यों में मतभेद उसी मध्य नगर पालिका इन्दौर के विकास कार्यों में लगी रही। पानी के मोटर लगाने के प्रश्न पर मतभेद होने से प्रजामण्डल के सदस्यों ने त्यागपत्र दे दिये। तब 4 मार्च 1941 को उनके रिक्त हुये स्थानों पर चुनाव हुए। प्रजामण्डल ने अपने पुराने व्यक्तियों को ही अपना उम्मीदवार बनाया। इस निर्वाचन में 'होलकर राज्य प्रजा संघ', प्रजामण्डल के विरोध मं सामने आया। संघ को जिताने के लिए शासकीय राजतंत्र तथा पूंजीपति वर्ग ने खूब जोर लगाया किंतु प्रजामण्डल के सदस्य पुनः चुनकर आये।

27 मई, 1945 को इन्दौर नगर पालिका के आम चुनाव हुए – श्री नरहरि गणेश कोठारी पालिका के पहले सभापति बनाए गये।

सन् 1945 में होलकर शासन ने नगर पालिका अधिनियम में और परिवर्तन किये, जिसके तहत् आम चुनाव हुए। अब संशोधित कानून के अनुसार परिषद् के सदस्यों (पार्षदों) की संख्या 36 हो गई। जिसमें 22 निर्वाचित और शेष नामजद रहे।

इस आम चुनाव में प्रजामण्डल ने 22 निर्वाचित स्थानों में से 21 पर अपने व्यक्ति खडे किये, उनमें से 8 तो निर्विरोध आ गये और शेष 13 में से 11 भारी बहुमत से विजयी हुए। इस प्रकार नगर पालिका पर प्रजामण्डल का पुनः कब्जा हो गया।

23 जून 1945 ई. को परिषद के हुए चुनाव में प्रजामण्डल के प्रत्याशो श्री नरहरि गणेश कोठारी सभापति बनाये गये। नगर पालिका के इतिहास में ये जनता के प्रथम सभापति थे। सन् 1947 में प्रारम्भ में नियमानुसार हुए चुनाव में श्री वी.वी. सरवटे नगर पालिका परिषद् के दूसरे सभापति चुने गये। भारत के स्वतंत्र होने और इन्दौर राज्य में उत्तरदायी शासन स्थापित होने तक यह परिषद ही कार्य करती रही।

इन्दौर नगर पालिका–वित्तिय साधन :– सन् 1868 में जब इन्दौर नगर पालिका की स्थापना के समय से ही उसे होलकर राज्य की ओर से 12,000/– रूपये का अनुदान दिया जाता था तथा नगर में स्थित किराये के मकानों पर भी 'कर' प्राप्त होता था, जिससे उसकी अनुमानित वार्षिक आय 36,000/– रूपये थी। सन् 1906 में नगर पालिका की सभी करों से प्राप्त वार्षिक आय 40,000/– रूपये थी। इन्दौर राजधानी होने के कारण होलकर महाराजा ने जलापूर्ति, सड़कों, पुलों, बाजारों के निर्माण तथा नई–नई घनी बस्तियों के लिए विशेष अनुदान देते रहें। सन् 1947 तक इन्दौर नगर पालिका की आय 17 लाख रूपये थी, जो कि वर्ष 1940 की आय के दुगने से भी अधिक थी।

विभिन्न करो से प्राप्त आय के स्त्रोत :– इन्दौर नगर पालिका (नगर सेविका) को विभिन्न करों से आय प्राप्य होती थी, कराधान ही उसकी आय का प्रमुख साधन था, ये कराधान इस प्रकार थे

1. आक्ट्रॉय कर
2. व्हील टेक्स

3. हाउस टेक्स (सम्पत्ति कर)
4. जल कर
5. तख्ता कर
6. कान्जरवेन्सी टेक्स
7. मनोरंजन कर
8. परफार्मेन्स कर
9. सायकल कर
10. हेकनी केरेज टेक्स
11. बैलगाड़ी व ठेलागाड़ी टेक्स
12. प्रायव्हेट तांगा व बग्गी कर
13. पशु कर।

स्थानीय स्वशासन के इतिहास में होलकर नरेशा की छत्रछाया में इन्दौर नगर पालिका ने विकास की एक अति लम्बी यात्रा पर चलकर अपने कीर्तिमान सौपाना को पूर्ण किया और अपने अथक परिश्रम और सेवाभाव से इन्दौर नगर को एक आश्चर्यजनक स्वरूप प्रदान किये है। सभी मोर्चे पर उसके कार्य स्तुत्य है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. होलकर राज्य की प्रशासनिक रिपोर्ट, 1931, पृ. 60 व 90
2. पी.एन श्रीवास्तव – इन्दौर, जिला गजेटियर, वर्ष 1974, पृ. 457, 458, 463
3. इन्दौर एक झलक (प्रकाशक नगर सेविका इन्दौर) वर्ष 1952
4. गंगाराम तिवारी – इन्दौर राज्य स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास, वर्ष 1974 – पृ. 99

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

मानव सभ्यता में हिन्दी साहित्य और कहानी का विकास

नरेन्द्र कुमार उरमलिया
एम. ए. (हिन्दी, संस्कृत, बी.एड.) प्रेम नगर कटंगी, जबलपुर (म.प्र.)

मानव सभ्यता के विकास का अध्ययन तथा कहानी के विकास का अध्ययन करने पर यह पता लगता है कि दोंनो का विकास लगभग साथ साथ हुआ है। विश्व के कथा साहित्य की जो झांकी हमने प्रस्तुत की है उसके यदि मूल की खोज की जाए तो निश्चित ही भारतीय कथा साहित्य उसका आधार होगा। भारतीय कथा साहित्य की मौलिक तथा प्राचीनता को सब विद्वान स्वीकार करते हैं। यहां की कहानियां समय–समय पर पश्चिमी देशों में लिखित तथा मौलिक रुप में फैलती रही है।

''ऋग्वेद में जो कि विश्व की प्राचीनतम पुस्तक मानी जाती है, कहानी का रुप देखन मिलता है। ऋग्वैद का यम–यमी, संवाद, उर्वशी–पुरुरवा' संवाद ब्राह्मण ग्रंथों तथा उपनिषदों में कुछ कहानियां विस्तार से दी गई है। महाभारत में गंगा के अवतरण, ययाति, शकुन्तला, नल आदि की कथाएं है। वैदिक संस्कृत के पश्चात लौकिक संस्कृत के पश्चात लौकिक संस्कृत में भी कहानी कला पुष्ट हुई है। पाली, प्राकृत तथा अपभ्रंश काल में भी कहानी की विकास सरिता लगातार बहती ही रही है। बौद्धों की जातक कथाएं, जैन पुराकथाएं, वृहत्कथा, कादम्बरी, स्वप्नवासवदत्ता आदि कहानियां इस धारा की जीवन्तता का प्रमाण है।

मध्यकाल आते आते पंचतंत्र की प्रसिद्ध कहानी 'कर्टक और दमनक' का अनुवाद 'कलिला और दिमना' नाम से अरबी में हुआ। मध्यकाल में मुस्लिमों का शासन रहा। जिसके फलस्वरुप लैला मजनू, शीरी फरहाद आदि की कहानियां लिखी गई।

हिंदी साहित्य के आदिकाल, भक्तिकाल एवं रीतिकाल के धरातल से होती हुई यह कथा सरिता आधुनिक काल तक आ पहुंची। इसी काल में गद्य ने अत्यधिक उन्नति की इसलिए इसे गद्य काल भी कहा जाता है।

हिंदी कहानी का विकास :– हिंदी गद्य की शुरुआत के साथ हिंदी कहानी का भी प्रादुर्भाव माना जा सकता है। ''आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने जिसे गद्य का प्रथम उत्थान कहा है वह भारतेंदु युग मे संपन्न हुआ है। हिंदी कहानी का आरंभ भी इसी युग से हुआ। भारतेंदु का एक अदभुत अपूर्व स्वप्न' निबंध और कहानी दोनों का समन्वय है। कहानी का सूत्रपात इंशा अल्लाखां' द्वारा रचित रानी केतकी की कहानी से हुआ जो 19 वी शताब्दी के आरंभ में लिखी गई रचना काल प्रमुख पत्रिकाओं जैसे 'कविवचन सुधा 1867 ने हिंदी कहानी के प्रारंभिक काल को गति प्रदान की। उन्नीसवी सदी के आरंभ में तीन महारथियों ने प्रवेश किया। ये हैं– लल्लुलाल 'प्रेमसागर', सदल मिश्र 'नासिकेतोपाख्यान', इंशाअल्लाखां 'रानी केतकी की कहानी'। इसके अलावा 'राजा शिव प्रसाद' 'भारतेंदु हरिश्चन्द्र' तथा पं. गौरीदत्त शर्मा 'आदि ने भी हिंदी कहानी के विकास मे अपना योगदान दिया।

पर मौलिक कहानी के परिप्रेक्ष्य में चर्चा की जाए तो 1900 ई. के आसपास से आज तक के काल को हम सुविधा की दृष्टि से चार कालों में बांट सकते हैं।

1. पूर्व प्रेमचंद्र युग, सन 1900 से 1914
2. प्रेमचंद युग, सन 1914 से 1936
3. प्रेमचंदोत्तर युग, सन 1936 से 1947
4. स्वातंत्रयोत्तर युग सन 1947 से आज तक

कुछ विद्वान इसे प्रयोगकाल ''सन् 1900–1910'' विकास काल सन '1910–1930' , उत्कर्ष काल 'सन 1930–1947' तथा स्वातंत्रयोत्तर 'सन 1947 से अब तक' में विभाजित करते हैं।

पूर्व प्रेमचंद्र युग :– मौलिक कहानी के विवाद का अंत अभी तक हुआ नहीं है। कुछ विद्वान 'इंशाअल्ला खां' की 'रानी केतकी की कहानी' को तो कुछ विद्वान अन्य को हिंदी की पहली मौलिक

कहानी मानते हैं। कुछ भी हो हिंदी की मौलिक कहानियों की सिलसिलेवार शुरुआत तो सन 1900 के आस पास ही ठहरती है। इसी काल में 'सरस्वती' तथा सुदर्शन' ने प्रकाशित होकर कहानी के विकास को पंख लगा दिए। इसी काल में प्रकाशित कहानियां ही मुख्य रुप से पहली मौलिक कहानी कहलाने की होड़ में हैं।

हिंदी साहित्य का इतिहास में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कुछ कहानियों के रचनाकाल का उल्लेख किया है जिनका प्रकाशन 'सरस्वती' में भी किया गया था–

- 'इंदुमति ''किशोरी लाल गोस्वामी'' सं. 1957 अर्थात सन 1900
- 'गुलबहार ''किशोरी लाला गोस्वामी'' सं. 1957 अर्थात 1902
- 'ग्यारह वर्ष का समय ''आचार्य रामचंद्र शुक्ल'' सं 1960 अर्थात 1902
- 'पंडित और पंडितानी ''गिरिजादत्त बाजपेयी'' सं. 1960 अर्थात सन 1903
- 'दुलाईवाली ''बंग महिला'' सं. 1964 अर्थात सन 1907

इसी मौलिकता के संदर्भ में आचार्य शुक्ल ने लिखा है– ''यदि मार्मिकता की दृष्टि से भावप्रधान कहानियों को चुने तीन मिलती हैं – 'इंदुमति किसी बंगला कहानी का छाया नहीं है। तो हिंदी की यही पहली मौलिक कहानी ठहरती है। इसके उपरान्त 'ग्यारह वर्ष का समय फिर 'दुलाई वाली' का नंबर आता है। दूसरी और यह भी कहा जाता है'' कि यह ''इंदुमति'' पूर्णतया मौलिक कृति नहीं कही जा सकती क्योंकि इस पर 'शेक्सपियर के प्रसिद्ध नाटक टैम्पैस्ट' की बहुत छाप है। पूर्व प्रेमचंद्र काल में अनुदित तथा मौलिक कहानियां लिखी गई।

संदभ ग्रथ सूची :–

- हाकिम कथा मुक्ति : अखिलेश
- हिंदी कहानी की विकास यात्रा : डॉ ब्रह्मस्वरुप शर्मा, पृ. 159
- ब्लैक होल : संजीव
- रास : मैत्रेयी पुष्पा : हंस, दिसंबर 1994
- तिरबेनी का तड़पन्ना प्रेतमुक्ति : संजीव
- गांठ ताला बंद है : क्षितिज शर्मा 1992

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

ग्राम पंचायत में पंचायती राजव्यवस्था एवं लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण

श्रीमति वर्षा श्रीवास्तव
केशरवानी महाविद्यालय जबलपुर म.प्र.

ऐतिहासिक परिचय :– पंचायती राज दक्षिण ऐशियाई देश– मुख्य रुप से भारत, पाकिस्तान बंग्लादेश, और नेपाल की राजनैतिक व्यवस्था है यह भारतीय उपमहाद्वीप की अति प्राचीन पद्धति स्थानीय स्वशासन का रुप है। पंचायत शब्द पंच अर्थात पांच एवं संस्कृति विद्यमान रही है जो मूलतः पंचायत पद्धति द्वारा संगठित एवं संचालित है ग्राम जितने सुसंगठित सुव्यस्थित एवं समउन्नत बनेंगे। ग्राम से ही राष्ट का निर्माण होता है। पंचायत, मानव समाज की आदि संस्थाओं में एक बुनियादी संस्था है। महात्मा गांधी ने कहा था कि जब पंचायत राज्य बनेगा तब लोकमत सब कुछ करवा लेगा। सुधरा हुआ गांव चारों तरफ बिल्कुल साफ सुथरा होगा। उनके मकान उनकी सड़के उनके आस–पास का वातावरण और उनके खेत साफ एवं स्वच्छ होंगे।

पंचायती राज की परिकल्पना ग्रामीण भारत में रहने वाले विशाल जन समूह को एक ऐसा आधार प्रदान करने के लिए की गई है, जिस पर संपूर्ण विकास का ध्यान केंद्रित रखते हुए समन्वित समाजवादी प्रजातंत्र की नयी इमारत खड़ी की जा सकती सके। इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए भारतीय स्वतंत्रता के बाद पंचायती राज के ढांचे को विकसित किया गया। भारत एक ग्राम्य प्रधान देश है, यहां की जनसंख्या का दो तिहाई भाग देश के लगभग आठ लाख गांवो में निवास करती है। जहां कृषि एवं परंपरागत उद्योग धंधे ही उनके जीवनयापन का मुख्य साधन है। भारत के आर्थिक विकास, गांव की वजह से ही सही, अर्थों में भारत का विकास है। ग्रामीण क्षेत्रों में कार्य करने के लिए परंपरागत तरीकों में एक अमूल्य परिवर्तन ग्रामों के आर्थिक सामाजिक विकास के रुप में सामने आये हैं। साथ ही ग्रामीण जनता के रहन–सहन के स्तर में वृद्धि के साथ साथ राजनैतिक चेतना भी जाग्रत हुई है।

गांवो की छोपड़ियों में रहने वाली हमारी देश की जनता को, बुनियादी सुविधाओं को उपलब्ध कराना हमारी सरकार का फर्ज है। इसी को दृष्टिगत रख 73 वां संवैधानिक संशाधन कर पंचायती राजव्यवस्था को समूचे देश में लागू किया गया।

पंचायती राज अर्थात ग्राम समिति का शासन, भारत के राज्यों में यह व्यवस्था त्रिस्तरीय है, प्रथम गांव, द्वितीय तालुका, और तृतीय जिला पंचायत जिला स्तर पर होती है। इस व्यवस्था में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि ग्रामीण विकास कार्यकम को ज्यादा महत्वपूर्ण बनाने के लिए गांवो के प्रत्यैक व्यक्ति इसमें भाग लें।

पंचायती राज व्यवस्था के तहत देश की ग्राम पंचायतों को गांवो की विकास योजना बनाने और उसको कार्यान्वित करने का कार्य प्रदान किया गया है।

देश की अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र में रहती है। ग्रामीण जनता के भूमि सुधार, लघु सिंचाई, ग्रामीण आवास ग्रामीण सड़कों, शिक्षा एवं जैसे विकास कार्यकमों को अपनी आवश्यकतानुसार कियान्वित कर सकती है।

देश की अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र में रहती है। आजकल पंचायती राज के विषय में प्रायः इसके आकार, संगठन, कर्तव्य और अधिकार और इनसे भी आगे बढ़कर इसकी क्षमता और उद्देश्यों के विषय में तरह–तरह के सिद्धान्त और व्यक्त किये जाते हैं।

पंचायती राज के आकार के विषय में यह सर्वमान्य हो चुका है इस त्रिस्तरीय ढांचे का रुप दिया जाय। अर्थात ग्राम या ग्रामों के समूह को मिलाकर स्थापित ग्राम पंचायत, विकासखण्ड और जिला ये तीन स्तर पंचायती राज के मूल आधार है।

पंचायती राज के वर्तमान स्वरुप का विश्लेषण करने से पता चलता है कि सभी लोग

इसके ग्राम स्तर के अधिकार और कर्तव्यों के विषय में एक मत है अर्थात ग्राम या पंचायत के स्तर पर ऐसे अधिकार और कर्तव्य इन संस्थाओं को देना जिससे कि ये संस्थायें ग्राम पंचायत के अंतर्गत आने वाली संस्थायें आत्म निर्भर होकर अपना काम चला सके।

पंचायती राज के अधिकार और कर्तव्यों के विषयों में साधारणतः लोगों की राय है कि विभिन्न स्तर की संस्थाओं को ऐसे सभी अधिकार व कर्तव्य सौंप दिये जाय जिनका प्रबंध सभी प्रकार के विकास से संबंधित हो।

भारत में पंचायती राज व्यवस्था बहुत प्राचीन पद्धति है। वैदिक युग में भी हमं इसका उल्लेख मिलता है। भारत में प्राचीन काल से ही यह मान्यता रही है कि पंच परमेश्वर द्वारा किया गया न्याय ही सर्वश्रेष्ट एवं सर्वोपरि है पंचों की वाणी में ईश्वर की वाणी होती है। प्राचीन काल से ही हम देखते हैं कि ग्रामीण विवादों को निपटानें के लिए जनता अपने में से जिन पांच समझदार अनुभवी एवं योग्य व्यक्तियों को चुन लेती थी, उन्हें पंच कहा जाता था। ऐसा माना जाता है कि भारत के ग्रामीण समाज गणराज्य के समान है। ये सभी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं करते हैं।

गांव की विशेषता में एक बात यह भी कही गयी है कि जहां कृषि कार्य किया जाता है। एवं जो क्षेत्र कृषि समृद्ध है वह ही गांव है। वर्तमान में तो जनसंख्या एवं सुविधाओं को आधार मानकर गांव घोषित किया जाता है।

प्राचीन भारत में गांवो को अपना एक महत्वपूर्ण स्थान था, उसका प्रमुख कारण संगठित एकता को माना जा सकता है जो पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से स्थापित की गई थी। ये पंचायते प्रजातंत्र की प्रथम पाठशाला होती है। पंचायत राज संस्थाये लोकतंत्र की नींव है।

स्वतंत्रता के पश्चात हमें यह अवसर मिला है कि हम अपने देश में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण के स्वपन्न को साकार कर सके। गांधी जी की मान्यता थी कि ''यदि हम यह चाहते हैं और मानते हैं कि गांवो को न केवल जीवित रहना चाहिए बल्कि उनको बलवान एवं समृद्ध बनाना चाहिए। तो हमारे दृष्टिकोण में गांव की प्रधानता होनी चाहिए।

भारत में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण का सजीव एवं साकार स्वरुप पंचायती राज व्यवस्था स्वतंत्रता के पश्चात ही दृष्टिगोचर हुआ लेकिन सकी परिकल्पना को स्वतः भारत की उपज कहना तर्क संगत प्रतीत नहीं होता। पंचायत राज की परिकल्पना, स्वरुप एवं उसके माध्यम से ग्रामीण विकास की अवधारणा आजकल की बात नही अपितु इसका इतिहास वैदिक काल से भी पूर्व का है। हम देखते हैं कि 73 वां सवेंधानिक संशोधन पंचायती राज संस्थाओं की विकास यात्रा में एक महत्वपूर्ण सोपान है। किंतु 73 वां संविधान संशोधन पंचायती राज संस्थाओं की विकास यात्रा का अंतिम चरण नहीं है। संस्थाओं की कार्यकुशलता एवं उन्हें उर्जावान बनाये रखने हेतु दृढ़ इच्छा शक्ति एवं ईमानदारी पूर्वक किये गये प्रयत्न भी आवश्यक है। वर्तमान समय में पंचायती राज व्यवस्था स्थानीय प्रशासन का एक अभिन्न अंग बन गया है। इस व्यवस्था का उदभव कब हुआ? इसका तात्कालिक स्वरुप क्या था, कहना काफी कठिन है। यह अनुमान अवश्य किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

- जैन, डॉ. एम.एस. आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ–271.
- जिला शिक्षा केंद्र पी.एस.एम. परिसर, नार्थ सिविल लाईल म.प्र.
- जौहरी, बी.पी. पाठक. पी डी– भारतीय शिक्षा का इतिहास, पृष्ठ–404–405
- यादव सुमन, लेखिका म.प्र. महिला एवं बाल विकास विभाग से जुड़ी ह कुरुक्षेत्र मई, 2011, पृष्ठ–19.
- म.प्र. शासन प्रशासकीय प्रतिवेदन 2012–13, पृष्ठ–141.
- मुकेश माहेश्वरी, मध्यप्रदेश ज्ञान शिक्षा एवं स्वास्थ्य पृष्ठ–218.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

मैत्रेयी पुष्पा की कहानियों में चित्रित सांस्कृतिक मूल्यबोध

संजय कुमार पांडे
एम.ए. (हिन्दी साहित्य, अंग्रेजी साहित्य, शिक्षा) डी.एड., बी.एड.

मैत्रेयी पुष्पा जी के अनुसार – ''हम न तो देवी है, न राक्षसी, न साध्वी, न कुल्टा। हम जो भी है, उसी रूप में देखा जाए। पुरूष के नजरिये से नहीं, बल्कि मनुष्य के नजरिये से। 21वीं सदी में औरत स्वयं तय करेगी कि उसे अपना जीवन कैसे चलाना है? अपने जीवन को किसे सौपना है? लड़की पैदा हो या लड़का? एक हो या दो? ये या ऐसी सारी वर्जनाओं और भय से मुक्त होकर वह स्वयं तय करेगी। जब इस समान धर्मा संस्कृति पर विचार होगा तब निश्चय ही स्वस्थ साहित्य का सृजन होगा। सही मायनों में आजादी आयेगी और तभी स्त्री के अपने आइने खुलेंगे।

पुष्पा जी ने अपने कथा साहित्य में ग्रामीण परिवेश का और उसमें रहने वाली नारी का चित्रण किया है। इन्होनें अपने उपन्यासों में ग्रामीण समाज का चित्रण जिस तरह चित्रण किया है उसी तरह उनकी कहानी संग्रह की लेखनी में मिलता है। उनकी कहानी चिन्हार की लगभग सभी कम्पनियों ग्रामीण औश्र शहरी समाज में भरी है चिन्हार की कहानियों के नारी–पात्र शहर में रहने पर भी उनका लगाव गांव से रहता है अपना–अपना आकाश की कैलाशो देवी, शहर में रहते हुए अपने बेटों के अत्याचारों से तंग आकर बिना किसी को बताये गांव चली जाती है। दोनों बेटे कार लेकर थाने की ओर भागे। लूल्लू–मुंह थामे, जब देख रहा था ओ म नही मन अनुमान लगा रहा था कि अब तक तो अम्मा जी गांव पहुंच चुकी होगी।

1. जातिगत भेदभाव के स्थान पर समत्व की भावना पर बल :– मैत्रयी जी ने अपने कहानी साहित्य अंतर्गत 'हम बच्चो की कहानी' में ग्रामीण परिवेश में फैली छुआछूत व जातिप्रथा का न केवल चित्रण किया वरन् उसके स्थान पर इंसानियत की तवज्जो देने का प्रयास किया है। ''मेरे साथी ने स्कूल में जब अपना नाम एदल सिंह लिखाया तो गांव के लड़कों में खलबली सी मच गई, क्योंकि प्राइमरी के मास्टर जी ने तो रजिस्टर में उसका नाम एदल्ला लिखा था, जिस नाम से वह गांव में पुकारा जाता था। इस नये स्कुल के रास्ते कुछ लड़के एदल सिंह से बिगड़ पड़े। उक ने ऊंची आवाज मैं कहा–''जा साले एदल्ला। हमतुझे कभी भी एदल सिंह नहीं कहेंगे। तू कल ही अपना नाम कटवा, साला चमार, सिंह बनता है। सिंह माने जानता हैं जाट या ठाकुर।''

मैत्रीय जी ने ग्रामीण क्षेत्र में फैली छुबाछूत जातिभेद को समाप्त करने व इसके स्थान पर स्नेह व समतापूर्ण वातावरण निर्माण की विचारधारा को बल दिया है।

बाबा ने पूछ लिया–आज गुड़ नहीं खाया लाली?

''बाबा एदल्ला नहीं आया आज।'' मैंने अनायास ही कह दिया।

बाबा मुझे देखते रह गए, जैसे मैंने कोई अपराध किया हो, और वे सजा तलबीज रहे हों। अपने बच्चो को सजा देना, वह भी एक नीच जात के बच्चे के कारण, नहीं बाबा ने मुझे सजा नहीं दी। एदल्ला को मुंह भरकर गाली दी–''साला ढेढ़ की औलाद। गुड़ की दो भेली हजम कर गया। चमार चूहरे बड़ी जात के भोले बालकों को बहलाकर खाते–पीते रहते है। खबरदार जो अब उसे मोहल्ले में आने दिया।

2. प्रेम :– मैत्रेयी ने कहानियों में भारतीय संस्कृति के अनुरूप प्रेम का दर्शन स्पष्ट परिलक्षित होता है। कहानी 'बहुत पहले का चलन' में निश्छल प्रेम की चर्चा करते हुये मैत्रेयी जी लिखती है।

''कहा जाता है, इस अतरपुर गांव की लड़कियां अक्सर ऐसा ह गजब करती है। शरबत पिलाते समय बिना बोले ही कौल–करार करा लेती है। बातें आंखों से करती है। क्योंकि उनके पास निश्छल आंखें है। फिर किसी का क्या दखल।

मैत्रेयी जी ने यहां ग्रामीण परिवेश में व्याप्त प्रेम स्नेह की चर्चा करती है। जिन्हें शुद्ध प्रेम से वास्ता है, प्रेम के अतिरिक्त अन्य कुछ भी बहुमूल्य नहीं।

''बढ़ी ठगनी लड़कियां है। लड़के का पिता गुस्से से थूक छोड़ते हुये बोला–एक बूढ़ी आगे आई, जिसने हल्दी के छींटे देकर सफेद सफेद साड़ी पहनी हुयी थी बोली, गुस्सा मत खाओं, शरबत पीकर ठंडे हो लो। ऐसी लड़कियां शहर में नहीं मिलती होंगी, तभी तो तुम्हारा लड़का हमारे गांव तक आया है। तुम देन–देन कर रहे हो, प्यार–मुहम्मत इससे बहुत पहले का चलन है।

पुष्पा जी ने अपनी कहानियों में प्रेम को केवल अपने कथा पात्रों द्वारा व्यक्त ही नहीं कराया बल्कि प्रेम को एक हौंसले के अस्त्र के रूप में प्रस्तुत किया है। कहानी '1857 एक प्रेमकथा' में गंगिया बेडिनी द्वारा रज्जो को व्यंग्यात्मक लहजे में किन्तु संबल प्रदान करने वाली जो बातें कही गई है। आज रज्जो उन्हीं बातों के चिंतन में पूर्ण रूपेण डूबकर सोच रही हैं

गामीण परिवेश व नारी शिक्षा :– भारतीय समाज में स्त्री का महत्वपूर्ण स्थान है। सच्चे अर्थ्ज्ञ में स्ची के बिना समाज की कल्पना नहीं की जा सकती है। इस देश में हिन्दु समाज में स्त्रियों की स्थिति काफी उच्च रही है। प्राचीन विधिवेता मनु ने तो यहां तक कहा है कि –यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'। अर्थात् जहां नारियों की पूजा होती है वहां देवताओं का वास होता है। उन्हें शक्ति, ज्ञान और सम्पत्ति की प्रतीक माना गया है और इसी कारण दुर्गा सरस्वती एवं लक्ष्मी के रूप में उनकी पूजा होती है हमारी संस्कृति में पुरूष के अभाव में स्त्री के अभाव में पुरूष को अपूर्ण माना गया है। किन्तु वास्तविकता के धरातल पर स्थिति कुछ और ही है। मध्यकाल हिन्दू धर्म एवं संस्कृति की रक्षा के नाम पर स्त्रियों पर अनेक प्रतिबंध लगाये गये, उन्हें अधिकारों से वंचित कर दिया गया। इन पर कई निर्योग्याएं लाद दी गयी। इस समय स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नहीं रहा। स्त्रियों का कार्य क्षेत्र केवल चार दीवारी तक सीमित हो गया। यही हाल ब्रिटिशकाल में भी रहा।'' ''स्त्रियों को सामाजिक क्षेत्र, पारिवारिक क्षेत्र, आर्थिक क्षेत्र तथा राजनीतिक क्षेत्र में कोई अधिकार प्राप्त नहीं थे यहां तक कि उन्हें शिक्षा प्राप्त करने का भी अधिकार नहीं था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी यही स्थिति बनी रही। नारी जाति पर तमाम प्रतिबंध व बंदिशे लागू रहीं यहां तक कि शिक्षा के संबंध में विशेष रूचि नहीं रही। खासतौर से ग्रामीण क्षेत्र में। नारी शिक्षा के प्रति न तो रूचि रही न ही जागरूकता। शनैः शनैः स्त्रियों की स्थिति में कांतिकारी परिवर्तन आया। साथ ही स्त्री शिक्षा का प्रसार हुआ है। पूर्व समय में न तो माता–पिता लड़कियों को शिक्षा दिलाने के पक्ष में थे और न ही शिक्षा की दृष्टि से समुचित सुविधायें उपलब्ध थी। सन् 1882 में पढ़ी लिखी स्त्रियों की कुल संख्या 2045 थी, जो सन् 1971 में 4 करोड़ 94 लाख तथा 2001 में 12.96 करोड़ से अधिक हो गयी। बावजूद इसके हमारे देश में ग्रामीण परिवेश आज भी स्त्री शिक्षा के संदर्भ में पीछे है। मैत्रेयी जी ने अपनी कहानी ''बेटी'' में इसी भेदभाव पूर्ण व्यवहार बेटा व बेटी के भेद को लेकर चर्चा की है।

''अरी, बिटिया, क्या कहती हो, वह लड़की जात, कहां जाएगी और करेगी पढ़ लिखकर। तुम्हारी बात और है वसुधा, अकेली औलाद, बेटा–बेटी तुम्ही हो अपनी मां की, सो जिंदगी भर पढ़ों तो कोई कुछ कहने वाला नहीं बाप न भइया।

सेवा सुश्रुषा :– मैत्रेयी जी के कथा पात्र मानवीय मूल्य को सर्वोपरि मानते है कहानी 'बेटी' में पारिवारिक परिवेश के उस दृश्य में ''चुप होती है, कि नहीं। बहुत जबान चल गई है तेरी। तू लड़कों की बराबरी करती है। बेटे तो बुढापे की लाठी हैं हमारी, हमें सहारा देंगे। तू पराये घर का दलिद्दर है।

इसमें मुन्नी का पढ़ने की जिद में उसकी मां का किया गया भेदभावपूर्ण व्यवहार परिलक्षित होता है, कि मां पांच बेटों को पढ़ा सकते है एक बेटी को नहीं। किन्तु मुन्नी पारंपरिक ढग से लड़की होने के नाते घर की सारी जिम्मेदारी निभाती है। वह रात दिन सेवा सुश्रुता करती।

''मुंह अंधेरे भाईयों के लिये पराठें सेंकती रही, उन्हें स्कूल भेजती रहीं, उनके कपड़े धोती रही, पिता के साथ खेत में काम कराती रही और बासी–फूसी रोटी खाकर चंद्रकला सी बढ़ती रही।''

नारी के संपूर्ण समर्पण व सेवा के बाद भी पुरूष समाज द्वारा उसका शोषण बदस्तूर नारी है। पुरूष मानसिकता भी वही की वही है। ''स्त्री व्यक्तित्व के तो बड़े से बड़े गुब्बारे को नैतिक स्वाबलम्बन की छोटी सी सुई से फोड़कर धवस्त किया जा सकता है। बड़ी से बड़ी सती साध्वी को आप चरित्रहीन कहिये और गोली मार दीजिये। समाज आपकी मर्दानगी के साथ होगा।

मैत्रेयी ने अपनी कहानियों में विविध मूल्यों का बोध पात्रों के माध्यम से कराया है। इनके ये पात्र जहां एक ओर अपने अधिकारों के प्रति संघर्षशील है वहीं दूसरी ओर कर्तव्यशील भी है। हमारी संस्कृति में संस्कार एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तगत होते हैं। इसी प्रकार मां का प्रथम कर्तव्य है कि वह अपनी लड़की को गृह कार्यो में निपुण करें, ताकि वह परिजनों की सेवा सुश्रुषा कर सकें।

संदर्भ सूची :–

1. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य की भूमिका।
2. डॉ. विजय बहादुर सिंह (संपादक) – मैत्रेयी पुष्पा स्त्री होने की कथा
3. डॉ. मनोहर देवलिया (संपादक) – स्वतन्त्रयोत्तर हिन्दी महिला का लेखन – उपलब्धियां और संभावनाएं
4. नारी मुई गृह सम्पत्ति नासी मूड़ मुड़ारा भये सन्यासी – तुलसी।
5. चतुरसेन शास्त्री, भारतीय संस्कृति का इतिहास।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

भारतीय कृषि एवं नई तकनीकी का अध्ययन

डॉ. प्रीति राजपूत
अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय दमुआ जिला–छिंदवाड़ा (म.प्र.)

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। विगत वर्षो में आर्थिक नियोजन के फलस्वरूप तीव्रगति से औद्योगिकीकरण हुआ है इसके उपरांत भी भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान बना हुआ है। आज भी देश की 70 प्रतिशत जनसंख्या अपनी अजीविका के लिये कृषि पर निर्भर करती है तथा राष्ट्रीय आय का (जी.डी.पी.) 19 प्रतिशत कृषि क्षेत्र से उत्पादित होता है। अतः स्पष्ट है कि आज भी देश की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है।

अध्ययन मे पूर्ववर्ती अध्ययन का अनुशीलन में शोध से संबंधित साहित्य और उसके पुनरावलोकन के अभिप्राय तथा उसकी सार्थकता व महत्व को चित्रित किया गया है। एग्रो इकोनॉमिक रिसर्च सेन्टर फॉर मध्यप्रदेश, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय जबलपुर (2000) में शोध शीर्षक "Economics of pulses production and identification of constrints in raising their production in Madhya Pradesh" से ज्ञात हुआ है कि मध्य साठ के दशक के दौरान नई कृषि प्रोद्योगिकी के द्वारा अनाज के उत्पादन में अधिक वृद्धि हुई चावल और गेंहू के उत्पादकता में भारी वृद्धि हुई।

बी.बी. मोहंती (2009) ने अपने शोध शीर्षक "Regional Disparity in agriculture development of Maharashtra" में पिछले तीन दशको में महाराष्ट्र में कृषि की विकास प्रक्रिया में क्षेत्रीय असमानता को जानने का प्रयास किया है। हालांकि विदर्भ की तुलना में मराठवाड़ा क्षेत्र में कृशि विकास में बेहतर सुधार हुआ है।

शोध अध्ययन की शोध प्रवधि के अंतर्गत :– शोध अध्ययन का क्षेत्र प्रकृति उद्देश्य, मान्यताऐं शोध अध्ययन की संपूर्ण योजना तथा रूपरेखा प्रस्तुत की गई है।

1. सैद्धान्तिक दृष्टिकोण :– यह अध्ययन कृषि विकास में विद्धमान असमानताओं को मात्रात्मक रूप से स्पष्ट करने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। जिसके आधार पर विभिन्न विकसित क्षेत्रों को चिन्हित किया गया है।

2. प्रायोगिक दृष्टि– यह अध्ययन नीति निर्धारण एवं कृषि के विकास के लिये एक अनुकूल व्यू रचना के निर्माण में सहायक है।

अध्ययन के उद्देश्य :– प्रस्तुत शोध अध्ययन की प्रकृति वर्णनात्मक अन्वेषणात्मक एवं व्याख्यात्मक तीनों ही प्रकार की धाराओं का संगम है। वस्तुतः शोध अध्ययन को मार्गदर्शी आधार प्रदान करने वाले उद्देश्य इस प्रकार है।

1. भारतीय कृषि में नई तकनीको की प्रगति में क्षेत्रोय विषमताओं को ज्ञात करना।

2. भारत के विभिन्न राज्यों में कृषि उत्पादकता में वृद्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।

3. अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर भारतीय कृषि के संतुलित विकास हेतु भावी नीतिगत सुझाव प्रस्तुत करना।

भारतीय कृषि में तकनीकी परिवर्तन एवं कृषि–उत्पादन – के अंतर्गत आर्थिक विकास एवं तकनीको परिवर्तन भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्व कृषि म तकनीकी परिवर्तन की कमिया, तकनीको परिवर्तन पर शोध की आवश्यकता संबंधी बातों को स्थान दिया गया है।

आर्थिक विकास और और प्रगति के लिये कृषि का विकास एक अनिवार्य शर्त है। रेग्नर नर्क्से का कथन है कि ''कृषि पर आधारित अतिरिक्त जनसंख्या को वहां से हटाकर नये आरंभ किये गये उद्योग में लगाया जाना चाहिए। इससे एक ओर कृषि उत्पादन वृद्धि होगी और दूसरी ओर अतिरिक्त श्रम शक्ति का उपयोग

करके नयी औद्योगिक ईकाइ की स्थापना की जा सकेगी।''

कृषि में तकनीकी परिवर्तन का तात्पर्य कृषको द्वारा उत्पादन में उस तकनीकी को अपनाना है जिसे अनुसंधान द्वारा विकसित किया गया हो एवं जिससे कृषको को उत्पादन विविधता के साथ–साथ पूर्व से अधिक उत्पादन प्राप्त होता है इस दृष्टि से सिंचाइ सुविधाओं, उन्नत किस्म के बीज, रासायनिक उर्वक, कीटनाशक रासायनों, उन्नत कृषि यंत्रों एवं उपकरणों के व्यापक उपयोग को कृषि उत्पादन में महत्वपूर्ण तकनीकी परिवर्तन माना जाता है।

आर्थिक विकास एवं तकनीकी परिवर्तन– आर्थिक नियोजन के प्रारंभिक वर्षों में कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिये संस्थागत परिवर्तन भूमि सुधार, सिंचाई सुधार के विस्तार आदि पर विशेष ध्यान दिया गया है इसके अंतर्गत कृषि करने वाले काश्तकारो को कृषि की उन्नत तकनीकी की जानकारी दी गई तथा दश को खाद्यान में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने एवं कृषि उत्पादन मे वृद्धि के लिये नई–नई तकनीकी सुझाव दिये गये। मृदा वैज्ञानिकों ने रासायनिक उर्वरको के उपयोग में वृद्धि का सुझाव दिया पौध विशेषज्ञों ने फसलों की उन्नत किस्मों को अपनाने की सलाह दी। परन्तु ये सभी सुझाव एकांकी थे और उसमें सामंजस्यता का अभाव था। 1966–67 में भारत में हरित क्रांति की शुरूआत हुई हरित क्रांति का अभिप्राय देश के सिंचित एवं असिंचित कृशि क्षेत्रों में अधिक उपज देने वाले बीजों के उपयोग से फसल उत्पादन में वृद्धि हुई।

निष्कर्ष :– भारतीय कृषि में तकनीकी परिवर्तन में शासकीय प्रोत्साहन एवं अनुदान के संबंध में कृषि विकास में अन्तराज्यीय विषमताओं को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते है। परंतु वर्तमान आर्थिक सुधारों के संदर्भ में जहां कृषि विकास संबंधी अनुदान एवं कल्याण कार्यक्रमों में अच्छा प्रतिफल प्राप्त नहीं हो रहा है। अतः यह संभव है कि इससे अंर्तराज्यीय असंतुलन बढ़ जाये परिणामतः आय अर्जन एवं वितरण संबंधी विषमताओं में वृद्धि संभव हो सकती है।

अध्ययन से स्पष्ट है कि पिछड़े क्षेत्रों में ही अंर्तक्षेत्रीय विषमताऐं बढ़ रही है अतः इन क्षेत्रों में व्रहत स्तर पर बेहतर योजना की आवश्यकता है ताकि विभिन्न राज्यों के संसाधन, क्षमताऐं, आवश्यकताऐं, एवं समस्याऐं निर्धारित की जा सकें और संसाधनों तथा क्षमताओं का पूर्णतः उपयोग किया जा सकें। हमें एक ऐसी सशक्त कृषि विकास योजना की आवश्यकता है जिसका निर्माण व्यापक एवं संभावित रूप रेखा से प्राकृतिक एवं सामाजिक, आर्थिक आयामो को ध्यान में रखकर किया गया हो ऐसी ही योजना, कृषि विकास की दर मे अत्याधिक वृद्धि कर सकती है।

सुझाव :– कृषि से संबंधित नीतियों का उद्देश्य यह होना चाहिए की क्षेत्र विशेष में उपलब्ध सीमित प्राकृतिक संसाधनों एवं आधारभूत सुविधाओ का अनुकूलतम उपयाग हो।

भारतीय कृषि विकास के लिये कृषि संबंधी नीतियों में यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि विभिन्न नीतियों एवं योजनाओं में निवेश व निष्पादन के मध्य समन्वय में व्यवस्थित क्रमबद्धता हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Tata services limited – statistical outline of India 2010-11, Bombay 9

2. Agro Economic Centre for Madhya Pradesh JNKVV Jabalpur "Economics of pulses production and identification of production"

3. Mohanty B.B. "Regional Disparity in Agricultural development of Maharashtra" Economics and political weekly (EPW) Page No.63-68, year Feb,7 2009

4. Agrawal AN and Singh S.P. "Economics of under development," oxford university press, Bombay 1973

5. Bajpai Brijesh K. "Regional disparities in agricultural productivity, an outcome of based infrastructure – A Study" Agriculture situation in India, Vol. No.39, Pg. No.79-82 year 1984

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

भारतीय कृषि में आधुनिकीकरण के विभिन्न आयाम

डॉ. रामकृष्ण पटेल
सहायक प्राध्यापक, गोविन्दराम सेकसरिया अर्थ–वाणिज्य (स्वशासी) महाविद्यालय, जबलपुर

भारत गांवों का देश है तथा देश की दो–तिहाई से अधिक जनसंख्या गांवों में ही निवास करती है जिनकी जीविका का, यहां तक की देश की संपूर्ण ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मूल आधार कृषि है, इसलिए कृषि का विकास किए बिना भारत के समग्र विकास की कल्पना नहीं की जा सकती। अतः स्वाधीनता के बाद भारत के रणनीतिकारों ने भारतीय राष्ट्र के पुनर्निमाण तथा देश के सर्वांगीण विकास के लिए जो रणनीति बनाई उसमें कृषि एवं ग्रामीण विकास को प्राथमिकता सूची में स्थान दिया।

स्वतंत्रता पश्चात् जब भारत सरकार द्वारा पंचवर्षीय योजनाएँ लागू की गई तब कृषि विकास की ओर प्रमुखता से ध्यान दिया गया। तदनुसार 1960–1970 के दशक में भारत में परम्परागत कृषि के स्थान पर आधुनिक तकनीकी आधारित कृषि का श्रीगणेश हुआ। कृषि विकास को गति प्रदान करने के उद्देश्य से कृषि क्षेत्र में आधुनिक तकनीकों, विधियों, उन्नत बीजों, रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों के साथ ही साथ शक्ति चालित मशीनों व यंत्रों का उपयोग किया गया। इसके परिणामस्वरूप भारत में कृषि क्रांति का सूत्रपात हुआ। आरंभ में आधुनिक तकनीकी का प्रयोग कुछ जिलों में मार्गदशी परियोजना के रूप में किया गया। तत्पश्चात, अधिक उपजाऊ किस्म के उन्नत बीजों के कार्यक्रम को इसके साथ जोड़ दिया गया और इस विकास रणनीति का पूरे देश भर में विस्तार करने का लक्ष्य तय किया गया। यद्यपि इसे हरित क्रांति की संज्ञा दी गई तथापि इसे भारतीय कृषि का आधुनिकीकरण और यंत्रीकरण के नाम से अधिक प्रसिद्धि प्राप्त हुई।

कृषि आधुनिकीकरण के अंतर्गत कृषि विधियों में सुधार को दो रूपों में अपनाया जा सकता है– प्रथम, कृषि में आधुनिक रासायनिक उर्वरकों–कीटनाशकों और उच्च उत्पादकता वाले उन्नत किस्म के बीजो का उपयोग एवं द्वितीय, परंपरागत कृषि औजारों के स्थान पर शक्ति चालित आधुनिक कृषि यंत्रों, मशीनों आदि का उपयोग यथा– ट्रेक्टर, थ्रेसर, हार्वेस्टर, सिंचाई–पंपसेट, ट्यूबवेल एवं स्पिंकलर सिस्टम इत्यादि।

वस्तुतः कृषि आधुनिकीकरण के रूप में कृषि–यंत्रीकरण का अभिप्राय कृषि क्षेत्र में यांत्रिक शक्ति से परिचालित कृषि औजारों या मशीनों से है। जब कृषि कार्य करने हेतु ऐसी मशीनों या उपकरणों का उपयोग किया जाता है जो स्वचालित होती हैं अर्थात् डीजल, पेट्रोल या विद्युत शक्ति आदि से चलती हैं तो इसे कृषि यंत्रीकरण कहते हैं। यहाँ पर मूल बात मशीनों के प्रयोग के साथ यांत्रिक शक्ति (ऊर्जा) की सहायता लेने से है। यदि मशीन या उपकरण मानव या पशु शक्ति द्वारा चलाए जाते हैं, तो वास्तविक अर्थ में यह कृषि यंत्रीकरण नहीं कहा जा सकता, किंतु यदि मशीनें किसी ऊर्जा जैसे– डीजल, पेट्रोल या विद्युत शक्ति आदि से चलाई जाती हैं तो इसे कृषि यंत्रीकरण कहा जाता है।

भारतीय कृषि में तकनीकी परिवर्तन :– भारतीय कृषि में तकनीकी परिवर्तन का प्रथम चरण 1960 से प्रारंभ होता है, जब फोर्ड फाउन्डेशन के विशेषज्ञ दल के सुझावों के आधार पर भारत में चुने हए सात राज्यों के सात जिलों में गहन कृषि तकनीक कार्यक्रम प्रारंभ किया गया। इस कार्यक्रम को गहन कृषि तकनीक कार्यक्रम IADP (Intensive Agriculture District Programme) के नाम से जाना जाता हैं। कार्यक्रम का विवरण निम्नानुसार है –

सारणी क्रमांक 1
आईएडीपी कार्यक्रम के अनुसार चयनित राज्य एवं निर्धारित फसलें

क्र.	जिले का नाम	राज्य	फसलें
1	थंजावुर	तमिलनाडू	चावल
2	पश्चिम गोदावरी	आंध्र प्रदेश	चावल
3	शहाबाद	बिहार	गेहूँ, चावल, चना
4	रायपुर	म.प्र. (अब छत्तीसगढ़)	चावल
5	अलीगढ़	उत्तर प्रदेश	बाजरा, मक्का, गेहूँ, मटर, जौ
6	लुधियाना	पंजाब	मक्का, कपास, गेहूँ, चना
7	पाली	राजस्थान	बाजरा, ज्वार, गेहूँ, जौ

Source:- http://www.gktoday.in/intensive-agriculture-development-program.

इस कार्यक्रम का उद्देश्य खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि करना और तीव्र आर्थिक विकास के लिए आधार तैयार करना था। यह कार्यक्रम चार सुधारों (फसलों की उन्नत किस्में, रासायनिक उर्वरकों के उपयोग में वृद्धि, उत्तम सिंचाई व्यवस्था और कृषि की उन्नत रीतियों) का एक समन्वित कार्यक्रम था। अतः इसे पैकेज प्रोग्राम कहा जाता है।

भारतीय कृषि में तकनीकी परिवर्तन इसमें निहित कुछ तत्वों के कारण महत्वपूर्ण हो जाता है एवं इनके विषय में संक्षिप्त जानकारी आवश्यक है जो निम्नानुसार प्रस्तुत की गई है –

(1) सिंचाई, (2) अधिक उपजाऊ किस्म, (3) रसायनिक उर्वरक, (4) कीटनाशक रसायन एवं (5) कृषि में यंत्रीकरण।

(1) सिंचाई :– कृषि तकनीक में सिंचाई महत्वपूर्ण घटक है। अधिक उपजाऊ किस्म के बीज एवं रासायनिक उर्वरकों के उपयोग से पर्याप्त जलपूर्ति द्वारा ही भूमि की उत्पादकता में वृद्धि की जा सकती है। अतः भारतीय आर्थिक नियोजन में सिंचाई क्षमता के विकास एवं उसके अनुकूलतम उपयोग को सर्वाधिक प्राथमिकता दी गई है।

कृषि उत्पादकता को प्रभावित करने वाले तत्वों में सिंचाई के साधनों का विशेष महत्व है। बी.डी. धवन के अनुसार 1983–84 में सिंचित भूमि पर उत्पादकता लगभग 22 क्विंटल प्रति फसल हैक्टेयर थी, जबकि असिंचित भूमि पर यह मात्र 9 क्विंटल प्रति फसल हेक्टेयर थी। इस प्रकार सिंचित और असिंचित भूमि की प्रति हैक्टर उत्पादकता में 13.3 क्विंटल का अन्तर था। बाद के एक अध्ययन में बी.डी. धवन ने अनुमान लगाया कि 1992–93 में सिंचित भूमि पर कृषि उत्पादकता असिंचित भूमि की तुलना में 2.3 गुना अधिक थी। इन तथ्यों से यह सिद्ध होता है कि सिंचाई सुविधाओं के प्रसार द्वारा कृषि उत्पादन और उत्पादकता में काफी वृद्धि की जा सकती है।

(2) अधिक उपजाऊ किस्म कार्यक्रम :– अधिक उपजाऊ किस्मों के विकसित होने से भारतीय कृषि तकनीक में नया अध्याय प्रारंभ हुआ है। इन किस्मों को संकर किस्म (भ्लइतपक टंतपमजपमे) या संकर बीज नाम से जाना जाता है। इन किस्मों की खोज भारत एवं विदेशों में किये गये सतत् वैज्ञानिक अनुसंधानों का परिणाम है। इसमें सर्वाधिक योगदान मैक्सिको की संस्था (International Center For Wheat and

Improvement) ने गेहूँ की उन्नत किस्मों एवं फिलीपीन्स की संस्था IRRT (International Rice Research Indtitute ने चावल की उन्नत किस्मों को विकसित करने में दिया।

(3) रासायनिक उर्वरक :– भारत में खाद्यान्न उत्पादनों की वृद्धि में रासायनिक उर्वरकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। भूमि पर निरन्तर कृषि करने से उसमें नाइट्रोजन व फास्फोरस की कमी हो जाती है। रसायनिक उर्वरकों के उपभोग से भूमि की उर्वरक शक्ति पुनः बढ़ जाती है। भारत में पूँजीवादी कृषि के विकास के साथ–साथ उर्वरकों के उपयोग में तेज वृद्धि हुई है। 1952–53 में भारत में उर्वरकों का उपयोग कम था। 1966 से नई कृषि तकनीकी को अपनाने से उर्वरकों के उपयोग में तेजी से वृद्धि हुई।

(4) कीटनाशक रसायन :– कीटनाशक एक रसायन है जिसका उपयोग फसलों को कीड़े–मकोड़े, इल्लियों, टिड्डियों एवं चूहां आदि से सुरक्षित रखने के लिए किया जाता है। राष्ट्रीय व्यवहारिक आर्थिक शोध परिषद् (छब्।म्त्) के एक अनुमान के अनुसार भारत के कुल खाद्यान्नों का 10 प्रतिशत भाग कीड़े–मकोड़े द्वारा खेत में ही तथा 10 प्रतिशत खाद्यान्न गोदामों में कीटों व चूहों द्वारा नष्ट किया जाता है। कीटनाशकों के माध्यम से फसलों की सुरक्षा संभव है।

(5) कृषि यंत्रीकरण :– भारतीय कृषि में तकनीकी परिवर्तन की सफलता में आधुनिक कृषि यंत्रों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। बीज–रसायन तकनीकी के अन्तर्गत् अधिक उपजाऊ किस्मों के बीज के साथ–साथ रसायनिक उर्वरकों, कीटनाशक रसायनों एवं सिंचाई साधनों के उपयोग से कृषि उत्पादकता में वृद्धि प्राप्त की गयी। कृषि उत्पादकता की इस वृद्धि में आधुनिक कृषि यंत्रों का भी योगदान रहा है। आधुनिक कृषि यंत्रों व उपकरणों जैसे – ट्रेक्टर, थ्रेसर, हार्वेस्टर, कम्बाईन, कल्टीवेयर, सीड–ड्रिल आदि के उपयोग से कृषि कार्यों को कम लागत, कम श्रम व कम समय में व्यवस्थित रूप से सम्पन्न किया जा सकता है। इससे समय, श्रम व धन की बचत होती है और कृषक वर्ष में दो या तीन फसल उत्पादित करने में सक्षम रहता है।

तकनीकी परिवर्तन के प्रभाव :– जनसंख्या वृद्धि के कारण खाद्यान्नों की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए, औद्योगिक विकास का आधार तैयार करने हेतु, कृषि अधीन क्षेत्र को बढ़ाने के लिए तथा गहन खेती करने के लिए कई तकनीकी कदम उठाये गये। कृषि अधीन क्षेत्र को बढ़ाने के लिए सिंचाई सुविधाओं के विकास कार्यक्रम बनाये गये। जहां तक गहन खेती का संबंध है, एक पैकेज कार्यक्रम के रूप में 1966 में देश के चुने हुए क्षेत्रों में नई कृषि तकनीकी लागू की गई। देश में अन्य क्षेत्रों में इस कार्यक्रम के प्रसार हेतु उच्च उत्पादकता वाले बीजों के उत्पादन कार्यक्रमों पर तथा उर्वरकों व कीटनाशक दवाइयों की आपूर्ति पर विशेष ध्यान दिया गया। इन प्रयासों के परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता में काफी वृद्धि हुई।

भारतीय कृषि में तकनीकी परिवर्तन के परिणामस्वरूप चहुंमुखी प्रगति हुई है। नई तकनीकी अपनाने से प्रायः सभी फसलों की उत्पादकता में वृद्धि प्राप्त को गई है। नयी तकनीकी अपनाने से ही भारत खाद्यान्नों में आत्मनिर्भर हो गया है। तिलहन उत्पादन में हुई उल्लेखनीय वृद्धि से खाद्य तेलों का संकट भी कम हुआ है। अब कृषक वर्ष में दो या अधिक फसलें उत्पादित करने लगा है। नयी तकनीक के इन सभी लाभों के पश्चात् भी इसको कुछ कमियां हैं।

कृषि में तकनीकी परिवर्तन की कमियां :–

(1) उच्च संसाधन लागत :– कृषि की नयी तकनीक में कृषि साधन अधिक मंहगे होते हैं और इनमें विशेषकर रासायनिक उर्वरक, सिंचाई पंप एवं कीटनाशक आदि शामिल हैं। पर्याप्त वर्षा न होने पर ये और अधिक मंहगे हो जाते है। आधुनिक कृषि में बड़े कृषक इन कृषि साधनों का अधिक उपयोग करके अधिक प्रतिफल प्राप्त करते हैं परंतु लघु कृषकों को समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

(2) ग्रामीण गरीबों को कम लाभ :– कृषि की नयी तकनीकी से ग्रामीण क्षेत्र के गरीब वर्ग के लोगों को बहुत कम लाभ प्राप्त हुआ है। नयी तकनीकी से लघु कृषकों, बटाईदारों एवं भूमिहीन कृषकों की आर्थिक स्थिति या तो अप्रभावित रही है या

पूर्व से दयनीय हो गयी है। इन वर्षों में कृषि साधनों की कीमतों में तीव्र वृद्धि हुई है। फलस्वरूप लघु कृषकों को पाप्त होने वाले वास्तविक प्रतिफलों में कमी आयी है। दूसरी ओर बड़े कृषकों द्वारा मुजारों (Tenant) को भूमि से बेदखल करना आदि कारणों से लघु कृषकों को भूमिहीन कृषकों को श्रेणी में आना पड़ रहा है। फ्रेंकल ने भी इस विचार का समर्थन किया है कि नयी तकनोकी से लघु कृषकों की स्थिति दयनीय हुई है।

(3) क्षेत्रीय असमानताओं में वृद्धि :– कृषि की नयी तकनीकी से क्षेत्रीय विषमताओं में वृद्धि हुई है। उदाहरण के लिए हरितक्रांति के पश्चात् हरियाणा के दक्षिणी क्षेत्र की तुलना में उत्तरी क्षेत्र का कृषि की दृष्टि से आर्थिक विकास तीव्र हुआ है। उत्तरी भाग में उन्नत कृषि यंत्रों का अधिक उपयोग होने से कृषकों की आय में तीव्र वृद्धि हुई है। अतः नई तकनीकी के उपयोग से क्षेत्रीय असमानताएँ बढ़ी हैं।

तकनीकी परिवर्तन एवं कृषि उत्पादन :– कृषि में तकनीकी परिवर्तन का तात्पर्य कृषकों द्वारा उत्पादन में उस तकनीकी को अपनाना है जिसे अनुसंधान द्वारा विकसित किया गया हो एवं जिससे कृषकों को उत्पादन विविधता के साथ–साथ पूर्व से अधिक उत्पादन एवं आर्थिक प्रतिफल प्राप्त होता है। इस दृष्टि से सिंचाई सुविधाओं, उन्नत किस्मों के बीज, रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशक रसायनों, उन्नत कृषि यंत्रों एवं उपकरणों के व्यापक उपयोग को कृषि उत्पादन में महत्वपूर्ण तकनीकी परिवर्तन माना जाता है। ''कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए भूमि ही आधारभूत साधन है परन्तु यह सीमित मात्रा में उपलब्ध है।

कृषि के क्षेत्र में उत्पादन वृद्धि एवं खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता का लक्ष्य तकनीकी परिवर्तन की सफलता पर निर्भर करता है। तकनीकी परिवर्तन के माध्यम से वर्तमान लागतों से उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है या लागतों को घटाकर उत्पादन का वर्तमान स्तर प्राप्त किया जा सकता है। कृषि क्षेत्र में भी नयी तकनीकी, प्रति इकाई लागतों में कमो करके उत्पादन का वर्तमान स्तर प्राप्त करने में योगदान दे सकती है। जीव रसायन तकनीकी एवं यांत्रिक तकनीकी ने कृषि साधनों की विद्यमान लागतों पर उत्पादन वृद्धि प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की है। इससे आदान–प्रदान संबंधों में सुधार हुआ है।

भारतीय किसानों द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले औजार और उपकरण सामान्यतः पुराने तथा आदिकालीन हैं जबकि पश्चिमी देशों के किसान उन्नत तथा आधुनिक फार्म–मशीनरी का प्रयोग करते हैं। कृषि के यंत्रीकरण के फलस्वरूप, इन देशों में भी कृषि क्रान्ति हुई है, जिसकी तुलना 18वीं शताब्दी में हुई औद्योगिक क्रान्ति से की जा सकती है। कृषि के यंत्रीकरण के कारण उत्पादन में वृद्धि हुई और लागत में कमी। इसके अतिरिक्त कृषि मशीनरी द्वारा बंजर भूमियों को काश्त योग्य बनाया जा सका। इसलिए तो पश्चिमी देशों की समृद्धि का मुख्य कारण कृषि के यंत्रीकरण को ही समझा जा सकता है। सामान्यतः यह विश्वास सुदृढ़ हो गया कि कृषि के यंत्रीकरण के बिना प्रगतिशील कृषि संभव नहीं।

पश्चिमी देशों, विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका और भूतपूर्व सोवियत संघ में जहां कृषि का विस्तृत रूप में यंत्रीकरण किया गया है, कृषि उत्पादन कई गुना बढ़ गया है। उदाहरणार्थ अमेरिका में 12 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है, परंतु कृषि उत्पादन इतना बढ़ चुका है कि संयुक्त राज्य अमेरिका अन्य देशों को भी कृषि–वस्तुओं का निर्यात करता है। चूँकि कृषि की मुख्य समस्या उत्पादन को बढ़ाना है, इसलिए कृषि के यंत्रीकरण की पुष्टि करना युक्तिसंगत ही है। परंतु प्रयोग की दृष्टि से भी, यंत्रीकरण के लिए काफी क्षेत्र उपलब्ध है। उदाहरणार्थ, ट्रैक्टरों द्वारा बड़े पैमाने पर जंगल साफ किये जा सकते हैं, व्यर्थ भूमि को पुनः काश्त योग्य बनाया जा सकता है और इसी प्रकार भू–रक्षण आदि में सहयाग प्राप्त हो सकता है। ट्रैक्टरों के अतिरिक्त, पंपिंग सेटों तथा नलकूपों के लिए काफी क्षेत्र विद्यमान है। इसी प्रकार तेल निकालने, गन्ने से रस प्राप्त करने आदि के लिए डीजल इंजन तथा बिजली से चलने वाली अन्य मशीनों का प्रयोग किया जा सकता है। भारत में कृषि कार्य के लिए ट्रैक्टरों, तेल–इंजनों, सिंचाई के पंपसेटों जो चाहे डीजल से चलाए जाएँ या बिजली से, का प्रयोग किया गया है। इसके अतिरिक्त ट्यूबवैल भी

अधिक मात्रा में लगाए गए हैं। इस प्रकार कृषि में पशुओं या मानव शक्ति का प्रतिस्थापन संचालन शक्ति द्वारा किया गया है जिससे प्रति हैक्टर कृषि–क्षेत्र उपभोग बढ़ा है।

सारणी क्रमांक 2 – भारत में कृषि यंत्रीकरण एवं कृषि क्षेत्र उपभोग

क्र.	साधन	1960.61	1970.71	1980.81	1992.93	2001.02	2009.10
1.	ट्रैक्टरः (कुल संचयी योग) (लाख)	0.31	1.0	4.7	18.0	24.2	35.10
2.	तेल इंजनः (कुल संचयी योग) (लाख)	2.30	15.6	29.0	52.0	71.6	90.34
3.	कुल कृषि क्षेत्र (लाख हैक्टेयर)	1528	1658	1750	1830	2015	2354

आरेख क्रमांक 1
भारत में कृषि यंत्रीकरण (संख्या लाख में)

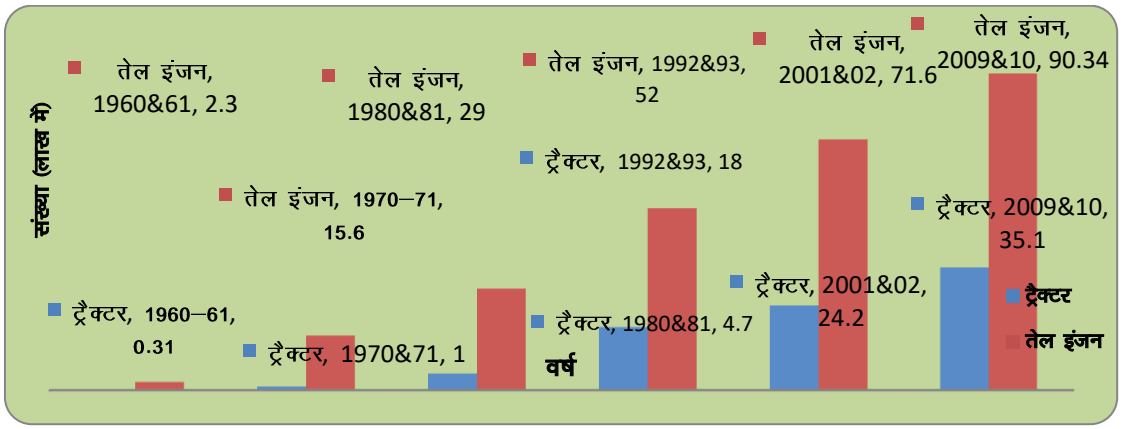

आरेख क्रमांक 2
भारत में कृषि क्षेत्र उपभोग (लाख हेक्टेयर)

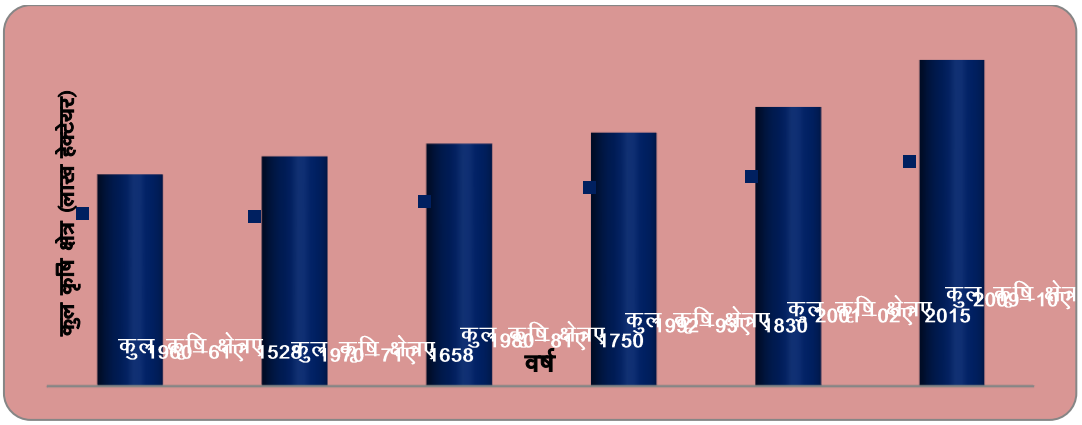

उपयुक्त सारणी एवं आरेखों में दिए गए आँकड़ों से पता चलता है कि कृषि यंत्रीकरण में काफी प्रगति हुई है। उदाहरणार्थ, ट्रैक्टरों की संख्या जो 1960–61 में केवल 0.3 लाख थी, बढ़कर 1980–81 में 4.7 लाख हो गई परंतु यह 1992–93 तक बढ़कर एकदम 18 लाख हो गई। इसी प्रकार तेल–इंजनों की संख्या जो 1961 में 2.3 लाख थी, बढ़कर 1992–93 में 52 लाख हो गई। बिजली चालित सिंचाई पंपसेटों व ट्यूबवैलों की मात्रा 1960–61 में 2 लाख से बढ़कर 1970–71 में 13.54 लाख और 1992–93 में एक दम बढ़कर 96.2 लाख हो गई। इसस कृषि के अधीन निश्चित सिंचाई प्राप्त क्षेत्र में काफी वृद्धि हुई है। इन सब यंत्रीकरण के साधनों के परिणामस्वरूप प्रति हजार हैक्टेयर कृषि–क्षेत्र के लिए संचालन शक्ति के उपभोग में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है।

यंत्रीकरण की इस प्रगति की समीक्षा के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त होते हैं–

1. चाहे परम रूप में यंत्रीकरण का विकास बड़ा प्रभावी प्रतीत होता है, यह सापेक्ष रूप में इतना प्रभावशाली नहीं है, विशेषकर जब इसकी तुलना उन्नत देशों में यंत्रीकरण के साथ या भारतीय कृषि क्षेत्र के आकार के संदर्भ में की जाए।

2. जो यंत्रोकरण भारतीय कृषि क्षेत्र में हुआ भी है, वह मुख्यतः समृद्ध किसानों तक ही सीमित है। छोटे किसान जो भारतीय किसान जनसंख्या का मुख्य भाग है, यंत्रीकरण की प्रक्रिया से अछूते ही रहे हैं। यह बात निंदनीय है क्योंकि इसके परिणामस्वरूप किसान जनसंख्या में असमानता में वृद्धि हुई है।

यंत्रीकरण की प्रक्रिया का अभिप्राय उत्पादन की तकनीक में परिवर्तन से है अर्थात् यह श्रम–प्रधान रहने की अपेक्षा पूँजी प्रधान बन जाती है। भारतीय कृषि के विकास की वर्तमान अवस्था में जबकि बहुत अधिक मात्रा में बेरोजगार श्रम उपलब्ध है, यंत्रीकरण में जल्दबाजी करने से अवांछनीय आर्थिक विकृतियाँ और सामाजिक तनाव उत्पन्न हो जाते हैं किंतु इस संबंध में एक उल्लेखनीय अपवाद है– सिंचाई का विद्युतीकरण– न कि डीजलीकरण जो सबसे अधिक अभिनन्दनीय माना जाना चाहिए।

संदर्भ :–

- अजय वर्मा, श्रीकांत चितले, छत्तीसगढ़ में कृषि यंत्रीकरण, योजना मासिक पत्रिका, योजना भवन, नई दिल्ली, मार्च 2000
- V.T. Raju, "Impact of the new Agricultural Technology on Income Distribultion and Employment", National Publishing House, Year – 1982.
- A.R. Bigrami, "An Introduction to Agricultural Economics" Himalya Publishing House, Year - 1996
- B.D. Dhawan, "Indian Irrigation An Assessment" Economic and Political Weekly, Year - 7 May 1964.
- R.N. Ghosh, "Agriculture in Economic Development" Vikas Publishing House Pvt. Ltd. Year-1997.
- F.R. Frankel, "India's Green Revolution Economic Gain and Political Costs", Bombay, Year-1977.
- G.S. Bhalla "Changing Agrarian Structure in India", Meenakshi Prakashan Delhi, Year-1974.
- D.S. Sidhu and A.J. Singh, "Technological Changes in India in Agricultural Development since independence" by M.L. Dantwala, Year-1986.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

स्थानीय स्वशासन की अवधारणा

डॉ. अशोक नायक
सहायक प्राध्यापक, नवयुग कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय जबलपुर

स्थानीय स्वशासन अर्थात् ''प्रजातंत्र के प्राण।'' वर्तमान प्रजातंत्र के युग में स्थानीय स्वशासन के माध्यम से ही लोकतंत्र को सम्पूर्ण सफल किया जा सकता है। भारत में इसका महत्व प्राचीन काल से ही विद्यमान है। उच्चतम भारतीय आदर्शों का स्मरण कराती वैदिक कालीन अनेक उक्तियाँ हमें दृष्टव्य होती हैं। वैदिक काल में यह सर्वमान्य नियम प्रचलित था कि कुटुम्ब के लिए व्यक्ति स्वयं का बलिदान कर दे, ग्राम के लिए कुटुम्ब, जनपद के लिए ग्राम का एवं विश्वात्मा के लिए सम्पूर्ण पृथ्वी का, इस प्रकार हमारी ग्रामीण प्रथा सार्वभौमिक व दानयुक्त भावना को साथ लेकर अग्रसर हुई और शनैः–शनैः उसका विकास न्याय प्रक्रिया की एक इकाई के रूप में पंचायतों के गठन द्वारा हुआ। इन पंचायतों की वास्तविक व्यख्या करने से स्पष्ट हो जाता है कि हमारी संस्थाओं का रूपांतरण आबादी से युक्त नगरों में हो चुका है और वे ही इन नगरों में नगर निगम अथवा महानगर पालिका के रूप में विद्यमान हैं।

स्थानीय स्वशासन के महत्व तथा भूमिकाओं का उल्लेख केवल लोकतंत्र के प्रशिक्षण आधार के रूप में ही नहीं किया जा सकता, बल्कि आधुनिक इतिहास से ज्ञात होता है कि सुदृढ़ तथा सफल लोकतंत्र हेतु स्थानीय शासन की शक्ति विशेष महत्व रखती है। यहां लोकतंत्र का पहला सबक सिखाया जाता है। यहां पर लोग इसकी गतिविधियों में भाग लेकर अपने को शासित करना सीखते हैं। स्थानीय करों को चुका कर तथा इसके बेहतर उपयोग की अपेक्षा के माध्यम से जनता वित्तीय उत्तरदायित्व को भी निभाती है। इससे उनके अन्दर आदर्श एवं जिम्मेदार नागरिक बनने की प्रेरणा मिलती है। जनता स्थानीय इकाईयों पर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु दबाव डालती है और इसकी असफलता पर अपनी बेबाक टिप्पणी करती है। साथ–साथ भ्रष्टाचार पर भी लोग अपनी पैनी नजर रखते हैं। सूचना का अधिकार इस दिशा में एक अच्छा विकल्प सिद्ध हो रहा है। इस तरह एक वास्तविक लोकतंत्र स्थानीय स्तर पर जनसहभागिता के बिना कार्य नहीं कर सकता।

आधुनिक काल में अत्यधिक केन्द्रित तथा जटिल शासन के प्रशासन में जनता तथा शासन में घनिष्टता अधिक नहीं है। स्थानीय शासन के माध्यम से लागों में शासन में संलग्नता की भावना आती हैं। लोकतंत्र के सफलता पूर्वक संचालन के लिए यह आवश्यक है कि राजनैतिक सत्य तथा उत्तरदायित्व को व्यापक बनाया जाय। अत्यधिक केन्द्रीकरण न केवल निरंकुशता को जन्म देता है बल्कि इसकी परिणति लालफीताशाही तथा प्रशासनिक अकुशलता के रूप में देखने को मिलती है। इस प्रकार प्रशासनिक कुशलता तथा अर्थ व्यवस्था के आधार पर भी स्थानीय शासन के अस्तित्व हेतु एक अनिवार्य राजनीतिक वांछनीयता दृष्टिगोचर होती है। यदि केवल केन्द्रीय सरकारे एवं राज्य सरकों सभी कार्य, रक्षा, आर्थिक विकास, मुद्रा स्फोति नियंत्रण स्वच्छता, संरक्षण और सफाई कार्य करें तो परिणाम, अव्यवस्था होगी।

स्थानीय सत्ताओं द्वारा कुछेक सेवाओं के प्रबंधन से उल्लेखनीय लाभ है। प्राथमिक शिक्षा, पार्क तथा पुस्तकालयों का प्रबंध, प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल, महामारियों की रोकथाम तथा नियंत्रण सड़क सफाई स्वच्छता, पेयजल आपूर्ति आर्दि कार्य जो, लोगों के दैनिक जीवन से सीधे संबंधित है, इन कार्यो को स्थानीय इकाईयां अधिक कुशलता से सम्पादित कर सकती हैं। केन्द्र सरकार की अपेक्षा स्थानीय इकाईयां अधिक सजग होती है क्योंकि वे अपने मतदाताओं के विश्वास को सतत् बनाये रखना चाहती है।

स्थानीय स्वशासन के माध्यम से लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का उद्देश्य सहभागी ढांचे के अंतर्गत सामाजिक, आर्थिक विकास की प्रक्रिया को ओर तेज गति प्रदान करता रहा है।

स्थानीय स्वशासन के अंतर्गत पंचायती राज के मुख्य उद्देश्य अग्रलिखित हैं।

1. शक्तियों का केन्द्र राज्य, राज्य से जिला, जिला से ब्लाक तथा ब्लाक से गांवों का विकेन्द्रकरण करना जिससे देश में एक व्यापक लोकतांत्रिक आधार प्रदान किया जा सके।
2. लोकतंत्र में जनसहभागिता को और अधिक प्रभावी बनाकर भविष्य के लिए देश में नेतृत्व के प्रशिक्षण का आधार प्रदान करना।
3. ग्रामीण लोगों को अपने मामलों में नियोजन व प्रशासन हेतु अवसर प्रदान करना।
4. गांव के लोगों में नियोजन चेतना जाग्रत करना जिससे स्थानीय आर्थिक तथा मानवीय संसाधनों का समुचित उपयोग किया जा सके।
5. लोगों में सामुदायिक भावना का बोध कराना, आत्म निर्भरता तथा लोगों में आत्म उपयोगी संस्कारों का विकास करना।
6. ग्रामीण मामलों/शहरी मामलों के प्रबंधन में समाज के पिछड़े समुदायों को भागीदारी का अवसर प्रदान करना।
7. ग्रामीण/शहरी तत्व को केन्द्रीय तथा राज्य विकास विभागों के समक्ष प्रस्तुत करना। 73 वें संवैधानिक संशोधन के तहत अब शहरी/ग्रामीण पंचायतों का कार्यक्षेत्र और अधिक विस्तृत कर दिया गया। अब ये संस्थायें विकास संबंधी कार्यकलापों के अतिरिक्त सामान्य प्रशासन में भी एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगी। संक्षेप में इस प्रकार के बदलाव से निम्नलिखित लाभ होंगे :–

1. वर्तमान सेवा उपलब्धता का आंकलन,
2. क्रियान्वयन में आने वाली बाधाओं और अड़चनों की पहचान,
3. अवरोध तथा अड़चनों के निराकरण की परख,
4. सेवा लक्ष्यों का निर्धारण।

जन सहयोग, जनजाग्रति व जन सहभागिता जैसे महत्वपूर्ण पहलू पंचायती राज कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं के निराकरण में मद्द देंगे तथा साथ ही ग्रामीण/शहरी विकास के लाभों को जरूरमंद लोगों तक पहुंचाया जा सकेगा। विभिन्न योजनाओं के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि जन सहयोग पर आधारित योजनायें अधिक स्थायी और प्रभावी रही है योजनाओं के गठन, क्रियान्वयन तथा इनकी प्रबंध में सहभागिता से विकास को अधिक सार्थक बनाया जा सकता है।

भारत में स्थानीय स्वाशासन की जड़ बहुत प्राचीन है। आज का स्थानीय शासन हमारे सम्मुख पुरातन समय से आया है। प्राचीन भारत में विभिन्न प्रकार की स्थानीय शासन संस्थायें थी। नगर स्तरीय, नगर पालिका सरकार तथा ग्राम स्तरीय, पंचायत दोनों ही प्राचीन संस्थायें हैं। ये संस्थायें उस समय के छोटे गणराज्यों के समान कार्य करती थीं। उनके अधिकारों की प्रकृति अधिक विस्तृत थी, जिनके अंतर्गत औद्योगिक, वाणिज्यिक, प्रशासनिक सामाजिक तथा यहां तक कि धार्मिक क्रियाकलाप भी आते थे।

भारतीय स्थानीय शासन की जड़े यद्यपि प्राचीन है, परन्तु उनकी वर्तमान संरचना पूर्व के ब्रिटिश शासन की देन है। भारत में इस रूप स्थानीय स्वशासन, जिसमें प्रतिनिधि संगठनों, जो कि मतदाताओं के प्रति उत्तरदायी हो, स्थानीय प्रशासन तथा करों के आरोपण के अधिकारों का प्रयोग करते हो, लोकतंत्र की प्रशिक्षण शालाओं के रूप में कार्य कर रहे हो, तथा जनता और प्रांतीय/केन्द्रीय सरकार के मध्य कड़ी के रूप में हो, ब्रिटेन की देन है। भारत में अंग्रेजों के आने से पूर्व स्थानीय शासन का प्रतिनिधि स्वरूप शायद ही था। अधिकांश इसमें शासकों द्वारा नामित व्यक्ति थे। अंग्रेजों ने भी प्रारम्भ में स्थानीय स्तर पर स्वशासन का पक्ष नहीं लिया था। परन्तू बाद में जब उन्हें महसूस हुआ कि स्थानीय स्तर पर लोगों को प्रतिनिधित्व देकर कर लगाना एवं उन्हें एकत्र करना अत्यधिक सरल होगा तब उन्होंने स्वशासन का पक्ष लिया। यही नहीं, नगर पालिका तथा पंचायत राज संस्थाओं की मूल संरचना का विकास ब्रिटिश काल में ही हुआ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् स्थानीय शासन की मूल संरचना न्यूनाधिक रूप से पूरे देश में एक समान रही है। इस कारण सभी राज्यों में ग्रामीण एवं नगर स्तरों पर स्थानीय शासन की पृथक संरचना देखने को मिलती है। ग्रामीण स्तर पर ग्राम पंचायत, मध्य स्तर तथा जनपद स्तरों पर पंचायती राज व्यवस्था थी। नगर स्तर पर बड़े शहरों में नगर निगम अथवा महानगर पालिकायें है। और उनके नीचे नगर पालिकायें, अधिसूचित

क्षेत्र तथा नगर क्षेत्र पाये जाते रहे है। इनके अतिरिक्त उन क्षेत्रों में, जहां सैनिक निवास करते हैं, छावनो बोर्डो की व्यवस्था है। जबलपुर में भी छावनी बोर्ड है।

समस्त भारत में स्थानीय स्वशासन की मूल संरचना एक समान होते हुए भी इसमें कार्यप्रणाली अंतर्गत अनेक प्रकार के अंतर रहे है। यह अंतर सामान्यतः इन आधारों पर रहे हैं –

- राज्यों में इस आधार पर अंतर रहे हैं कि उनके द्वारा स्थानीय शासन की कितनी इकाईयाँ अपनायी गयी हैं। इस प्रकार जहाँ अनेक राज्यें ने पंचायत राज की त्रि–स्तरीय व्यवस्था को अपनाया, वही अन्य राज्यों में द्वि–स्तरीय अथवा केवल एक ही स्तर रहा है। इसी प्रकार, जहाँ सभी राज्यों में नगर निगम तथा नगर पालिकायें पायो जाती रही है, किन्तु नगर शासन की अन्य इकाइयाँ जैसे अधिसूचित तथा नगर क्षेत्र केवल कुछ ही राज्यों में पायी जाती है।
- स्थानीय इकाईयों की शासकीय परिषदों के गठन की विधि भी अलग–अलग राज्यों में अलग–अलग रही है। यह अंतर प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित परिषदों से लेकर अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित तथा मनोनीत संस्थाओं तक रहा है।
- स्थानीय परिषदों के कार्यकाल में भी अंतर पाया जाता है। जहाँ अधिकांश राज्यों में स्थानीय निकाय 5 वर्ष के लिए गठित किये जाते रहे है, वही अन्य राज्यों ने 4 अथवा 2 वर्ष के कार्यकाल को अधिक पसंद किया। अंत में, स्थानीय इकाईयों में उनके अधिकारों, उनके वित्तीय स्त्रोतों तथा राज्य नियंत्रण की सीमा में भी राज्य में अंतर मौजूद है। यह अंतर इसलिए रहा है क्योंकि 73 वें तथा 74 वें संविधान संशोधनों तक कोई ऐसा राष्ट्रीय कानून नहीं था, जो कि राज्यों पर बंधन लगा सके। अतः राज्यों ने अपनी परिस्थितियों एवं पूर्व इतिहास के आधार पर ऐसी व्यवस्था अपनायी, जो कि उसके लिए उपयुक्त थी।

सामान्यतः वित्तीय स्त्रोत आदि उस राज्य सरकार द्वारा निर्धारित किये जाते हैं जिनसे ये संबंधित हैं। समय–समय पर केन्द्र सरकार ने भी स्थानीय स्वशासन के संगठन और कार्य विधि में रूचि दिखायी। यही रूचि इसने स्थानीय शासन की तात्कालिक परिस्थिति का अध्ययन करने के लिए विभिनन समितियाँ अथवा अध्ययन दल गठित करके की है, जिन्होंने और अधिक सुधार के लिए अपनी सिफारिशें दी है। अभी तक केन्द्र सरकार की इन समितियों/अध्ययन दलों की सिफारिशें राज्यों पर बाध्यकारी नहीं रही है। इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण 1957 के बलवंतराय मेहता समिति के प्रतिवेदन से दिया जा सकता है जिसका कि उल्लेख अगले अध्याय में किया गया है, यह प्रतिवेदन केन्द्र सरकार द्वारा राज्यों को लागू करने के लिए भेजा गया था, परन्तु प्रत्येक राज्य ने इसको अपनी इच्छानुसार लागू किया। यह मानकर कि राज्यों को ऐसी सिफारिशें भेजने से कोई लाभ नहीं होता, इसी समस्या को ध्यान में लाते हुये 1992 में केन्द्र ने दो विस्तृत संवैधानिक संशोधन 73 वाँ पारित किया, जो कि ग्रामोण और नगर स्तरों पर स्थानीय शासन की संरचना के बारे में मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। ये संशोधन राज्यों पर बाध्यकारी है, जो कि इनको लागू करने में अपनी स्वेच्छा का प्रयोग नहीं कर सकते हैं।

भारत में अभी तक स्थानीय इकाइयाँ बहुत प्रभावी नहीं रही है। केवल कुछ अपवादों को छोड़कर स्थानीय निकायों के निर्वाचन कभी भी समय पर नहीं हुये। इसके अतिरिक्त समय–समय पर वैधानिक रूप से निर्वाचित संस्थओं को अधिक्रमित अथवा विघटित कर दिया गया, अक्सर ऐसे आधारों पर जिन्हें वैधानिक कहना कम और राजनीतिक कहना अधिक उचित हागा। स्थानीय निकायों के पास आय के पर्याप्त स्त्रोत नहीं रहें। और अंत में, समय के साथ स्थानीय निकायों में लोगों की अरूचि बढ़ती गयी।

भारत में स्थानीय शासन को अब संवैधानिक मान्यता प्राप्त हो गई है। भारतीय संविधान में 73 वाँ संशोधन पंचायती राज व्यवस्था को न केवल मान्यता प्रदान करता है, बल्कि उसकी संरचना, निर्वाचन विधि, अधिकारों तथा वित्तीय स्त्रोतों की अभिवृद्धि का भी वर्णन करता है। यह संशोधन सभी राज्यों पर बाध्यकारी है ओर इसलिए सभी राज्यों ने उसे कार्यान्वित कर दिया है। इसी प्रकार भारतीय संविधान का 74 वाँ संशोधन जिसकी विस्तृत व्याख्या इस अध्ययन के अध्याय–चार में की गई है, नगरीय

शासन की संरचना, इसके गठन की विधि इसके अधिकार तथा राजस्व के स्त्रोतों की व्यवस्था करता है। इसे भी राज्यों ने तत्संबंधी कानून पास करके लागू कर दिया है।

भारत में स्थानीय शासन कठोर राज्य नियंत्रण में रहा है। 74वें संशोधन के पूर्व राज्य नियंत्रण की प्रकृति अत्यधिक विस्तृत थी। राज्य सरकार अपनी इच्छा से स्थानीय इकाइयों की स्थापना कर सकती थी और उन्हें समाप्त भी कर सकती थी। स्थानीय इकाईयों के अधिकारों का निर्धारण राज्य सरकार किया करती थी। वे अपने वित्तीय स्त्रोतों के लिए राज्य सरकार पर निर्भर थी। राज्य राज्य सरकार की जब इच्छा होती थी, स्थानीय निकायों के निर्वाचन करवाती थी। 74 वें संविधान के द्वारा स्थानीय शासन की मूल संरचना परिभाषित कर दी गयी है, उनके अधिकार स्पष्ट कर दिये ये है और उनके स्त्रोत बता दिये गये है परन्तु कोई भी राज्य सरकार अभी भी अपनी इच्छा से स्थानीय निकायों को विघटित कर सकती है, नियंत्रण मात्र इतना है कि विघटन की तिथि से 6 माह के अंदर ही नये निर्वाचन सम्पन्न कराने होंगे। इसे भी एक महत्वपूर्ण सुधार कहा जा सकता है फिर भी नगर निगम को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है जिसे निम्नखित रूप में देखा जा सकता है।

आज नगरीय स्वशासन से संबंधित विभिन्न संस्थाओं को निम्नांकित कठिनाईयों या समस्याओं का सामना करना पड़ता है,

1. स्वशासन की स्थानीय संस्थाओं के प्रति जनता ने उदासीनता का दृष्टिकोण अपना लिया है। इसका प्रमुख कारण यह है कि जनता इन संस्थाओं में सेवा के प्रति समर्पण की भावना की कमी पाती है।
2. इन संस्थाओं में चुने हुए सदस्य सामान्यतः अपने व्यक्तिगत स्वार्थ या दलगत लाभ के कार्यो में लगे रहते हैं। इनमें से अधिकांश सदस्यों के लिए जनहित विशेष महत्व नहीं रखता। यही कारण है कि इन संस्थाओं के द्वारा अपने दायित्वों का निर्वाह ठीक प्रकार से नहीं हो पाता।
3. आम जनता का काफी बड़ा भाग अशिक्षा और अधिकारों के प्रति जागरूकता के अभाव में नगर की समस्याओं में किसी प्रकार की कोई रूचि नहीं ले पाता है। इस प्रकार नगर प्रशासन के सुधार कार्यो में सामान्य जनता की उदासीनता पाई जाती है।
4. स्थानीय स्वशासन से संबंधित संस्थाओं की वित्तीय स्थिति प्रायः संतोषजनक नहीं होती है। वित्तीय कठिनाइयों के कारण ये संस्थाएँ सार्वजनिक कार्यो के प्रति अपने दायित्वों का निर्वाह ठीक प्रकार से नहीं कर पाती हैं।

स्थानीय स्वशासन की नगरीय संस्थाएँ दलगत राजनीति में डूबी हुई हैं। कोई दल या समूह अच्छे से अच्छा काम करे तो भी विरोधी दल के लोग सहयोग देने के बजाए नकारात्मक रूख अपना लेते हैं, यदि स्थानीय संस्थाएँ सार्वजनिक हित में कोई नया कर आरोपित करनाया कर वृद्धि करना चाहे तो जनता की दृष्टि सहयोगात्मक नहीं होती। जनता सुविधाएँ सभी चाहती है, परन्तु नये करों का विरोध अवश्य करती हैं।

संदर्भ :–

- केडिया कुसुमलता, लोकल फाइनेंस इन एन इंडियन स्टेट, उप्पल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1986
- बघेल, डी.एस., ''नगरीय समाज शास्त्र'', म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल,
- सिंह अवधेश कुमार, ग्रामीण विकास में पंचायती राज, विकास परिचर्चा, अंक 3–4, जून–जुलाई 1994–95
- बर्थवाल सी.पी., स्थानीय स्वशासन, सुलभ प्रकाशन, लखनऊ

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

The Basic Process of career decision making

Dr. Vineeta Pandey
Associate Professor, laxmi bai sahu ji collage Jabalpur

Introduction :- The basic process of decision making is possible to be analyzed in terms of three periods vi; fantasy, tentative, and realistic, ranging from age 10 to age21. These periods are differentiated by the way in which the individual "translates" his impulses and needs into an occupational choice. The changes take place during the maturation process along the lines of increasing realism with due consideration of reality factors, a more developed time perspective, and independence from adults.

If you delay the decision-making process you may find yourself:

- In a career that doesn't fit with your values, interests, personal attributes, and skills
- Completing a degree that you have no interest in
- Feeling your work lacks meaning or challenge
- Feeling caught between life and work values
- Thoughtful decision making paves the way to a satisfying career choice. The more focused you are, the less onerous the process will be. The decision-making process can be used for making many types of career-related choices, including:
- Which training/educational program to pursue
- which occupational field to enter
- which paid/volunteer experience would be most satisfying
- whether to change occupations and/or fields
- Whether to start a small business

Steps to career decision making :- The five steps to career decision making are :

- Create a vision
- Make an initial decision
- Set a goal
- Develop an action plan
- Take action

The Fantasy Period (6-11Years) :- The major feature of the early fantasy choices is their arbitrariness and lack of reality orientation. These choices are based on the child's desire for "function pleasure" i.e. to engages in work because the particular activity is conceived to be pleasurable. A little later, the emphasis on "results of work in terms of the advantages accruing to the individual himself /herself or to others close to him become important. there is also around this time the awareness in the child that he will have to work when grow up. There are pressures from parents and others to be concerned with the future. The child turns to parents for help, which is an important forward step in getting over the previously nurtured fantasy choices and wishes. Very often the child may not be satisfied with the solution offered and then he shows further signs of maturity to think that he must do something about it. He then, enters the period of tentative choices.

The Period of Tentative Choices (11-17years) :- During this period of pre-adolescence and early adolescence, one is in search for an appropriate basis for one's choice and actively considers the factors that are important. During this time there is a change in time perspective. In the fantasy period, the future was simply "not now; later". The perspective now gets sharpened to recognize a continuum between present and future. There is greater realization of permanence of career decision making.

The tentative stage is divided into sub stages of interest, capacity, value, and transition. The interest stage is the time around eleven and twelve years when the child is beginning to recognize the need to identify a career direction. At first likes and dislike serve as the major basis for

choice. There is gradual awareness, however, that interests are changing. There is gradual awareness, however, that interests are changing. This is evidence of having gained some perspective on time and there is also the recognition of the need to assume independence from father is decision making though feelings of ambivalence prevail and decisions are difficult to make. In the capacity stage the preadolescent around the age of thirteen and fourteen starts weighing the capacitates. There occurs an intensification of trends already present. There is also the recognition of the need for testing their capacities in the areas of their interests. A future self image emerges and there is a decrease in the degree of father identification as an influence in career choices. Closely associated is the further sharpening of time perspective and thoughts about career planning are focused on specific periods during educational career. Educational process assumes a greater role in the preparation for work.

In the value stage around fifteen-sixteen years. adolescents become aware, for the first time, of the factors of goals and values. Of special importance now is the idea of service to society and the signs of choosing careers for humanitarian reasons show up. There is greater perception and conception of various life styles associated with different careers. Adolescents' expression of choices of careers of careers have frequent references to life styles and satisfactions and returns derived from work such as friendships, job stability, prestige, money etc .the emphasis on intrinsic values shows to emotional need closely related to interests. the earlier concern for permanent career now gets converted into a board framework for a life plan. thus, at the value stage , for the first time ,all the elements essential to the decision making process are brought into focus. the final stage of the period of tentative choices is the transition stage ,there is a general claiming and end of the turmoil of early adolescence. career planning is now more and affected by reality considerations. the individual begins to face the necessity to make immediate, concrete, and realistic decisions about vocational future keeping in view the consequences of the decisions He enjoy relatively .

The realistic period (18-21) years :- This period ranges approximately between ages 18 and 21 or a little longer. By this time biological maturation has nearly been completed. The career choices now run through three sub stages of exploration, crystallization, and specification. During the exploration stage there is a marked concern with being introspective and reviewing the experience of the period of tentative choice, and to have a deeper insight into major needs and desires. There is also the realization of the irreversibility of choices once made. Hence the individuals want to discover as much as possible about themselves and about the world of work. The behavior becomes increasingly "reality oriented". There is a degree of intellectual and emotional maturity accompanied by an intense desire to test their basic interests and values and to link choices with these interests, capacities, and values.

During the next stage i.e. the crystallization stage, there is the quality of acceptance in contrast to the uncertainties and confusion of exploration stage. Most individuals by now are able to move toward a positive solution regarding vocational objective and develop a sense of commitment towards it. they are now in a position to synthesize many forces, internal and external , that have a bearing on the decision. For some, there is a stage of pseudo crystallization, in which they think and act as if they have crystallized their decision, but in reality they have not analyzed the essential element of the decision .At time it may result from emotional involvement with some person engaged in the chosen occupation. The crystallization stage is the culmination of the process of career decision making though some further refinement may take place at the specification stage.

Conclusion :- The stage of specification represents a process of closure in the selection of the specific

field of specialization within the chosen career or occupation. Specification stage is characterized by the individual's willingness to confine to a narrow field and be able to resist deflection from it when confronted by a very attractive alternative.

References :-

Devove, M.W. (1985). process of career decision making. Educational Research Quarterly 3 PP 10-14.

Sarason, I, G. (1985). Test Career decision making: Theory research and applications. PP 62-67.

Oberaya KC (2006). Gudiance & Counselling Radha prakashan.PP 64-68.

www.google.com

www.cdm.org

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

मध्यप्रदेश का प्रथम पर्यटन नगर शिवपुरी : अतीत के झरोखे में

राजरत्न उके, कटनी मध्यप्रदेश

शिवपुरी को मध्यप्रदेश का प्रथम पर्यटन नगर कहलाने का गौरव प्राप्त हैं। शिवपुरी नगर मध्यप्रदेश के बुन्देलखण्ड अंचल का एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक पर्यटन स्थल हैं। यह, वर्तमान शिवपुरी जिले का मुख्यालय भी हैं। यह नगर समुद्र सतह से 1515 फीट की ऊँचाई पर स्थित हैं। भौगोलिक दृष्टि से यह $25^0 26'$ उत्तरी अक्षांश एवं $77^0 41'$ पूर्वी देशांश के मध्य तक विस्तृत हैं। इस नगर में शिवजी के अनेक मंदिर हैं। सम्भवतः यही कारण है कि इस नगरी का नाम शिवपुरी हो गया।

अतीत में यह नगर दीर्घावधि तक ग्वालियर के सिंधिया शासकों के शासनाधीन रहा। शिवपुरी के प्राकृतिक सौन्दर्य एवं अनुकूल स्वास्थ्यवर्धक जलवायु के कारण सिंधिया शासकों ने इसे अपनी ग्रीष्मकालीन राजधानी के रूप में विकसित किया। शिवपुरी के आरम्भिक इतिहास के बारे में तथ्यों का अभाव दृष्टिगत होता है। मुगलकाल में शिवपुरी नगर अपने सघन वनों के लिए प्रसिद्ध था। तब यहां के सघन वन मुगल सम्राटों के शिकारगाह हुआ करते थें। उस समय शिवपुरी के समीपवर्ती जंगला में हाथी बहुतायत में पाये जाते थें। मुगल सम्राट अकबर 1561 ई0 में मालवा (माण्डू) से लौटते समय यहॉ हाथियों का शिकार करने के लिए ठहरा था। अकबर यहॉ से अपनी हस्तिशाला के लिए हाथियों का विशाल झुण्ड साथ ले गया था।[1]

सत्रहवीं शती ई0 में शिवपुरी नगर नरवर के कछवाहा शासको के शासनाधीन था। 1804 ई0 में शिवपुरी नगर को ग्वालियर के सिंधिया शासको ने कछवाहों से हस्तगत कर लिया था। तब सिंधिया ने शिवपुरी का प्रशासन जादों सा0 इंगले को सौप दिया था।[2]

1817 ई0 में सम्पन्न एक संधि के तहत शिवपुरी नगर अग्रेजो के नियंत्रण में आ गया। किन्तु 1818 ई0 में यह पुनः सिंधिया को प्राप्त हो गया।[3] 1857 ई0 के विद्रोह के दौरान शिवपुरी नगर में ग्वालियर रियासत की सेना तैनात की गयी, जिसमें दूसरी रिसाला और तीसरी पल्टन शामिल थी।[4]

1857 ई0 के विद्रोह के प्रमुख महाविद्रोही तात्या टोपे को शिवपुरी नगर के समीप पाडौन के जंगलो से 7 अप्रैल 1859 ई0 को गिरफ्तार किया गया था।[5] तत्पश्चात् उन्हे शिवपुरी लाया गया। 15 अप्रैल 1859 ई0 को शिवपुरी में तात्या टोपे का मुकदमा सुनने के लिए एक सैनिक न्यायालय का गठन किया गया। कैप्टन बाग उक्त न्यायालय का प्रिसाइडिंग ऑफिसर था।[6] तीन दिन चली कार्यवाही के पश्चात् चौथे दिन न्यायालय ने उन्हे फॉसी की सजा सुना दी। तात्या टोपे को फॉसी दिये जाने का दृश्य बड़ा ही हृदय विदारक था। ''18 अप्रैल 1859 ई0 के दिन फॉसी स्थल के चारों और सैनिक तैनात किये गये। शाम को 07 बजे तात्या टोपे को उस स्थल पर लाया गया। फॉसी के तख्ते के पास उसकी बेड़िया और हथकड़ियॉ अलग कर दी गयी। तख्ते पर पहुॅचने के लिए जो सीढ़िया बनाई गयी थी उन पर वह फूर्ति से चढ़कर तख्ते पर पहुॅचा और फॉसी के फन्दे में उसने खुद की गर्दन फसा दी, तख्ता खींच दिया गया और उसका शरीर देखते ही देखते निर्जीव हो गया। देखने वाले सिहर उठे, दर्शको मे कुछ महिलाये भी थी। उनमें से एक ने तात्या टोपे के कुछ बाल काट लिये। जो बाद में लंदन के ब्रिटिश म्यूजियम में उसकी पोशाक तथा अन्य वस्तुओ के साथ सुरक्षित रखे गये हैं।[7]

शिवपुरी पर सिंधिया शासको के आधिपत्य के पश्चात शिवपुरी एक नगर के रूप में तेजी से विकसित हुआ। तब सिंधिया शासकों के द्वारा शिवपुरी में कई नवीन निर्माण करायें गये। बीसवीं शती ई0 के पूर्वाद्ध तक शिवपुरी एक नगर के रूप में विकसित हा चुका था।

1916 ई0 में शिवपुरी नगर के समीपवर्ती जंगलों में भारत के तत्कालीन वाइसराय द्वारा 01 दिन में 08 शेरों का शिकार किये जाने का उल्लेख मिलता हैं।[8] तदन्तर शिवपुरी 1947 ई0

तक ग्वालियर के सिंधिया राज्य का अभिन्न अंग बना रहा।

शिवपुरी नगर के प्रमुख दर्शनीय ऐतिहासिक पर्यटन स्थल : –

जीजा बाई (सख्या राजे) की छत्री :– जीजा बाई ग्वालियर के शासक जयाजी राव सिंधिया की पत्नी थी। जीजा बाई के निधनोपरान्त उनके पुत्र और ग्वालियर के तत्कालीन शासक माधोराव सिंधिया ने शिवपुरी नगर में उनकी छत्री (समाधि) का निर्माण कराया था।[9] जीजा बाई की छत्री सरोवर के एक किनारे पर स्थित हैं। इसका निर्माण विशेष किस्म के पत्थरों से किया गया हैं। छत्री का शिखर एवं शिखर के चारों कोनो पर निर्मित छोटे–छोटे मण्डप हिन्दू तथा इस्लामिक स्थापत्य शैली के सुंदर सम्मिश्रण को अभिव्यक्त करते हैं।

माधोराव सिंधिया की छत्री :– माधोराव सिंधिया ने 21 अगस्त 1921 ई0 को जीजा बाई की छत्री की मूर्ति स्थापना के समय अपने हृदय के उद्‌गारो को प्रकट करते हुए कहॉ था कि ''मुझे मरी माता से पृथक न किया जावे''।[10] माधोराव सिंधिया के निधनोपरान्त उनकी इच्छानुसार शिवपुरी में जीजा बाई की छत्री के सम्मुख ही उनकी छत्री का निर्माण किया गया। यह ईमारत कौन्सिल ऑफ रीजेन्सी (1925–1936 ई) काल में निर्मित की गयी थी, इस छत्री के प्रमुख वास्तुकार मोहम्मद असगर अली खॉ इन्जीनियर थें।[11] यह स्मारक चमकीले सफेद संगमरमर से निर्मित है, इस छत्री के निर्माण में हिन्दू तथा मुस्लिम स्थापत्य शैलियों का अनूठा सम्मिश्रण दृष्टिगत होता हैं। इस छत्री का बाह्य भाग पित्राद्‌यूरा शैली में निर्मित हैं।[12] छत्री के बाह्य भाग में पच्चीकारी का बेल–बूटेदार काम दृष्टिगत होता हैं। पार्श्व भाग में संगमरमर की सुंदर जालियॉ निर्मित की गयी हैं। भूमि से शिखर की ऊॅचाई 70 फीट हैं। मध्य में 18ग्35 का एक मण्डप हैं। छत्री के चारो कोनो पर एक समान बुर्ज हैं। इस छत्री के निर्माण में संग अबरी, संग खट्‌टू तथा जैसलमेर एवं बेल्जियम का संगमूसा जैसे मूल्यवान पत्थरों का प्रयोग हुआ हैं।[13] छत्री के भीतर एक कक्ष में शिवजी ओर नन्दी की मूर्ति स्थापित हैं। सामने की ओर माधोराव सिंधिया का सुंदर स्टेच्यू निर्मित हैं।

माधवविलास प्रसाद :– यह महल सिंधिया शासको द्वारा निर्मित किया गया था। यह ईमारत औपनिवेशिक स्थापत्य कला का एक उत्कृष्ट नमूना हैं। इसके निर्माण में गुलाबी रंग के पत्थरों का प्रयोग हुआ हैं। यह ईमारत अपने लौह स्तंभो, संगमरमरी फर्शो, शानदार छज्जो और गणपति मण्डप के कारण प्रसिद्ध हैं।

जार्ज कैसल :– यह गढ़ीनुमा स्थापत्य संरचना हैं। जो माधव राष्ट्रीय उद्यान के एक ऊॅचे शिखर पर स्थित हं। समुद्र तल से इसकी ऊॅचाई 484 मीटर हैं। इस दुर्ग का निर्माण 1911 ई0 में हुआ था।[14] इस आलीशान दुर्ग के निर्माण का इतिहास बड़ा रोचक है। 1911 ई0 में ब्रिटेन के राजा जार्ज पंचम का भारत आने का कार्यक्रम था। भारत भ्रमण यात्रा के दौरान उनका शिवपुरी के जंगलो में शिकार करने एवं वहॉ पर एक रात्रि व्यतीत करने का कार्यक्रम था। ग्वालियर के तत्कालीन शासक जियाजीराव सिंधिया ने शिवपुरी के जंगलो में उनके एक रात्रि प्रवास के निमित्त इस आलीशान दुर्गनुमा महल का निर्माण करवाया था। शिवपुरी प्रवास के दौरान जार्ज पंचम ने यहॉ पहुॅचने के पहले ही रास्ते में एक बाघ का शिकार कर लिया, अतः उनका यहॉ रात्रि विश्राम का कार्यक्रम निरस्त कर दिया गया।[15] यह दो मंजिला दुर्ग शिवपुरी के पत्थरों से बना हैं। इसके फर्श में इटली की टाईल्स एवं दरवाजे तथा खिड़कियों में बैल्जियम के कांच लगाये गये थे। इसके परिसर में उस समय आकर्षक फव्वारे लगाये गये थें। और ऊॅचाई तक पानी पहुॅचाने की व्यवस्था भी की गयी थी।

शिवपुरी नगर में समृद्ध ऐतिहासिक धरोहर एवं प्राकृतिक सौंदर्य का अनूठा सम्मिश्रण दृष्टिगत होता हैं। सिंधिया शासको द्वारा निर्मित छत्रियॉ एवं महल अतीत की पुण्य स्मृतियों का स्मरण कराते हैं। और सख्या सागर झील से घिरे माधव राष्ट्रीय उद्यान का प्राकृतिक सौन्दर्य यहॉ आने वाले हर पर्यटक का मन मोह लेता हैं।

मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम द्वारा वर्तमान में इस नगर को एक महत्वपूर्ण पर्यटन स्थल के रूप में विकसित किया जा रहा हैं।

मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम द्वारा वर्ष 2007 से क्रुज बोट द्वारा माधव राष्ट्रीय उद्यान के भ्रमण की सुविधा उपलब्ध करायी जा रही हैं।[17]

संदर्भ ग्रंथ :–

1. श्रीवास्तव, आर्शीवादी लाल, मुगलकालीन भारत, (1526–1803 ई0), शिवलाल अग्रवाल एण्ड कंपनी, आगरा 3, 1968, पृष्ठ 139।
2. मजूपुरिया, संजय, शिवपुरी – नरवर–चन्देरी का दिग्दर्शन, ग्वालियर, 1992 पृष्ठ 2।
3. वही, पृष्ठ 2।
4. वही, पृष्ठ 2।
5. शुक्ल, परशुराम, तात्या टोपे बुन्देलखण्ड में, स्वराज संस्थान संचालनालय, भोपाल, 2006, पृष्ठ 83–84।
6. वही, पृष्ठ 85।
7 वही, पृष्ठ 86।
8. डिस्कवरिंग मध्यप्रदेश, मध्यप्रदेश स्टेट टूरिज्म डव्ल्हपमेंट कार्पोरेशन, भोपाल, 2008 , पृष्ठ 372।
9. मजपुरिया, संजय, पूर्वोक्त, पृष्ठ 3।
10 वही, पृष्ठ 3।
11 वही, पृष्ठ 4।
12. डिस्कवरिंग मध्यप्रदेश, पूर्वोक्त, पृष्ठ 374।
13. मजपुरिया, संजय, पूर्वोक्त, पृष्ठ 3।
14. डिस्कवरिंग मध्यप्रदेश, पूर्वोक्त, पृष्ठ 372।
15. ही, पृष्ठ 372।
16. ''पर्यटन स्थल में तब्दील हुऑ जार्ज कैसल किला'', नवदुनिया , भोपाल, शनिवार, 3 जनवरी 2009 पृष्ठ 12।
17.''क्रूज बोट से झील की सैर'' पर्यटन डाइजेस्ट, त्रैमासिक पत्रिका, भोपाल, वर्ष 2, अंक 7, मार्च 2007 पृष्ठ 17।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Mother Daughter Relationship in the Novels of Manju Kapur

Bhavna Sharma
Research Schola, Department of English, Rani Durgavati Vishwavidyalaya, Jabalpur M.P. (India)

An effective communication of human experiences is the very basis of literature. Indian writing in English, an integral part of English literature, with its immense and notable contributions, has served as an important medium of human thoughts and expressions. The cohort of women writers, especially women fiction writers have delineated the various aspects of human life through a keen understanding of human relationships. As parent child relationship is central to all the human relationships it has been the main subject of exploration of the women fiction writers. Contemporary writing chiefly encompasses the works of these women fiction writers. Anita Desai, Kamala Markandaya, Shashi Deshpande, Suchita Malik, and Manju Kapur are some of the contemporary women writers who have explicitly dealt with the theme of the parent child relationship. As women, they are able to manifest both reverence and dedication for the mother daughter relationship. Thus, this paper makes a sincere attempt to delineate the manifold aspects of the mother daughter relationship in the novels of a well-known contemporary women writer, Manju Kapur.

Manju Kapur has written six novels: Difficult Daughters, A Married Woman, Home, The Immigrant, Custody and Brothers. The protagonists of Manju Kapur are radical women who choose to break the conventional barriers and defy the path laid down by their mothers in the quest of their self-identity. This search presents them with many problems in their life, especially in their familial relationships: "All protagonists in the fictional works of Kapur are women. . . . All of her protagonists struggle to take charge of their own lives. In the course of this struggle they suffer and their lives become difficult to live with" (Nitonde)

Orthodox society is strictly patriarchal and in case of Indian families husbands regulate the patriarchal norms through their wives. Hence, it is the responsibility of the mothers to endow their daughters with the complete understanding of the conformist beliefs and conventions. Being influenced by the radical changes which are witnessed by the society owing to the advent of new technology and developments in the economic, political and social spheres, the daughters challenge the restrictions which are imposed on them by their mothers. This serves as the main reason behind the complicated relationship between the mothers and daughters in the novels of Kapur.

Difficult Daughters (1998), the first novel by Manju Kapur presents the complex mother daughter relationship between three generations of women: Kasturi, Virmati and Ida. Kasturi is traditional woman who sacrifices her whole life to prove herself as an ideal wife, daughter and mother. Therefore, when her daughter challenges the beliefs which are staunchly supported by Kasturi through her willingness to establish her identity through education, she overtly criticizes Virmati's decision: ''Leave your studies if it is going to make you so bad-tempered with your family. You have forgotten what comes first" (Kapur, Difficult 21). Virmati's love affair with a married man, Harish who is an English professor further facilitates her quest for individuality through higher education and career. These unforeseen developments in the life of Virmati engenders as a difficult daughter in the eyes of her family. In view of the profundity of her romantic relationship, Virmati rebels against her whole family and

marries her lover. This defiance sours her relations with her family, especially her mother, who is unable to tolerate the implications of Virmati's transgression. Although Virmati is repentant for her misconduct, but being extremely furious with her daughter, Kasturi remains hostile with her:

'Mati – Mati –' chocked Virmati. 'I shouldn't have'
'Why are you telling me you shouldn't have?' . . .

Virmati looked at her mother's face. The eyes were cold and narrow, the brows contorted with rage. There was implacable hostility there. She thought she should die with the pain she felt.

'I shouldn't have come,' she managed bitterly. 'I should have known what to expect.' (220)

When Virmati becomes mother, she shares the fulfilment of the similar expectations from her daughter, Ida as Kasturi had wanted from her. Despite of being a defiant daughter, she becomes a conservative mother because she realizes that it is necessary for the survival of the latter in the patriarchal society. Ida turns out to be a difficult daughter who completely breaks the barriers and repudiates the time-honoured institution of marriage by taking divorce from her husband, Prabhakar because he forces her into an abortion, a fact which is hidden from Virmati: "Ida . . . represents total disregard and revolt against the existing norms of the society" (Goel 275). Thus, Virmati becomes utterly disturbed and blames her daughter for her insecure future as a divorcee and childless woman, while Ida blames her mother and herself for the ensuing dejection. This strained relationship between Virmati and Ida is made evident by the writer through the eyes of the latter: "My mother spent the period after my divorce coating the air I breathed with sadness and disapproval. . . . I was nothing, husbandless and childless. I felt myself hovering like a pencil notation on the margins of the society . . . I was engulfed by melancholy, depression and despair" (279).

A Married Woman (2002), the second novel by Kapur, describes the mother daughter relationship between Sita and Astha. Sita is a conformist Hindu woman for whom the marriage of her daughter in accordance to the long-established principles is the main objective in life. It is towards this end that she incorporates strict discipline to ensure the chastity of her daughter throughout her childhood and adolescence. While Astha, owing to her maturational changes, repudiates the wishes of her mother and indulges in romantic pursuits: "Astha has her own dreams and desires. She has her own romantic world" (Patel 51). It is Astha's arranged marriage with an eligible boy named, Hemant Vadera which helps to diminish the problems between her and her mother. After the death of Sita's husband, yet again, complications are created between the mother and daughter. In adherence to her belief in the conformist principles, Sita distances herself from Astha and keeps the expectations of her son-in-law ahead of her daughter. She detaches herself from the world her daughter accepts a solitary life in an ashram in Rishikesh. As far as Astha is concerned, she due to her modern outlook could not relate with the perverse decision of her mother. The writer has shed light on this misunderstanding between the two in the following lines of the novel: Of course you will come and live with us, Ma,' said Astha. . . . 'I am thinking of moving to Rishikesh.' 'Rishikesh? You are going to live there all your life?' Astha was appalled.

'Aree, who knows how long one is going to live? The atmosphere should be pure, one should lead a life of virtue and truth, where and how does not matter. (A Married 85-86)

Home (2006), the third novel by Kapur, skilfully traces the account of the protagonist Nisha's relations with her mother, Sona and surrogate mother, Rupa. Sona, being engrossed in the traditional value system is biased for her son, Raju and remains apathetic towards her daughter Nisha. She could not realize the trauma through

which Nisha undergoes because of being sexually abused by her cousin, Vicky in the young age. While Rupa, the sister of Sona and a childless woman, is able to empathize with the suffering of Nisha and accept her as her own daughter when she is sent to her house in the face of the inability of the latter's family to comprehend the reason behind her agony. This distinction between the two is highlighted in the novel through the eyes of Nisha's father, Yashpal: Every time his daughter came home, he noticed how happy she looked. He . . . watched her climb into Rupa's lap when Vicky was there, and observed his wife preoccupied with her son. . . ." (Kapur, Home 72). After few years, Nisha is called back to her home by her family. Sona wanted that Nisha should get well settled in her own home by getting married: "For Sona, the true happiness for a girl lies in her own family" (Vashist 5). Accordingly, she wants that Nisha should shine in her marital home through the art of domesticity and service and observance of Hindu rituals. However, when she finds her daughter lacking in these aspects, because of her modern bent of mind which she has acquired from her aunt, she becomes utterly dejected with Sona and Rupa:

Sona grumbled. 'You take half an hour to peel ten potatoes. How will you manage in your future home?' 'Masi [aunt] said there is always time to learn cooking, but only one time to study.' Nisha tried defending herself. . . . That Masi of yours has ruined your head. What does a girl need with studying? Cooking will be useful her entire life. . . . The mother's anger rose. . . . Spoilt you, do you hear? (Kapur, Home 125)

After reaching college, Nisha becomes engaged with a boy named, Suresh. Her love affair creates fissures in her relations with her conservative family, especially with her mother because Suresh belongs to a poor and low caste family. Sona accosts her for her misbehaviour thus, "Answer me, said her mother, icy-voiced, stony-faced. . . You have been deceiving your parents? . . . Sona raised her hand to strike her" (194). Nisha's family severs all the ties between her and her lover and looks forward to an eligible match for her who could fulfil their expectations of a high caste family with an affluent background. As Nisha's marriage gets delayed due to inadvertent reasons, her mother blames her self-assertion for her uncertain future. It is only after arranged marriage with a widower named Arvind that Nisha could gain the acceptance of her mother.

The Immigrant (2008) which is the fourth novel by the writer delineates the intricate mother daughter relationship between the characters Shanti and Nina. Shanti and Nina are bound in an intimate relationship after the death of Shanti's husband. They both want happiness and contentment for each other. This closeness between the two gets marred because Nina's marriage gets inadvertently late. Shanti vociferously gets engaged in finding a good match for her daughter who could recuperate the blissful life which Nina had enjoyed in the presence of her IFS father. On account of futile love affair with her teacher, Rahul and her unmarried status at the age of thirty, Nina resents her mother quest for her happiness and security. When the marriage proposal of an Indian born dentist named Ananda who is settled in Canada and possesses all the qualities which Shanti wanted in her son-in-law, she persuades Nina to marry him at any cost. Nina, who does not want to leave her mother and motherland and go and settle in a far-off land with a stranger, is reluctant to accept this offer. This leads to an argument between Nina and Shanti: "Mr Batra (sic) [Shanti] was jubilant. With such a background, how could her daughter not be happy, how could she not? . . . Nina . . . murmured . . . , So eager to send your daughter ten thousand miles away?" (Kapur, The Immigrant 53-54). However, eventually Nina agrees for the marriage and this raises her status as the model daughter.

After her marriage, Nina follows the traditional path laid by her mother and this helps her to establish good relations with her husband. Gradually, her unfocused life bereft of career and

children engenders her as desolate and depressed and to "fill the loneliness she yearns for a child but is unable to conceive" (Maitra and Dubey 397-98). Being influenced by the advice of her mother she seeks medical help for her condition but Ananda takes it as the intrusion into his privacy and this creates problems in her marital relationship. In view of the infidelity of Ananda and Nina their marriage suffers but Nina maintains the status quo to remain faithful to the expectations of her mother. However, after her mother's death she chooses a different path and breaks her marriage to procure for herself the same contentment which her mother had tried to provide but along with completely embracing her immigrant identity.

Custody (2012), the fifth novel by the writer traces the journey of the mother daughter relationship by exploring the subjects of marriage, divorce and custody. The ambivalent relationship between the protagonist Shagun and her mother, Mrs Sabharwal is the highlight of the book. The cordial relations which Shagun shares with her mother because of her adherence to the conventional path become difficult because of her unfaithfulness towards her husband, Raman and the decision to neglect the future of her two children Arjun and Roohi and terminate her marriage: People do get divorced, you know, Ma. . . . Are you mad? You want to destroy your home? . . . Really, Mama,' said Shagun, 'what do you want me to do? . . . You want me to kill myself, then you will be happy?' . . . The older generation were hopeless. Abruptly she [Shagun] got up and slammed the door to her childhood bedroom. Mrs Sabharwal watched sadly. (94-95)

"Shagun fought for the freedom she had long wanted but it was at the cost of her children and a happy married life. She dares to come out of the protective environment of the peaceful family setup" (Maji 2). Afterwards, it is Shagun's remarriage with her lover, Ashok which helps to establish harmony between her and her mother. Nevertheless, the battle of custody for her children which Shagun has to fight with Raman after her divorce remains a source of grief for her mother.

The convoluted relations between Mrs Rajora and her daughter, Ishita is the another highlight of the book. Although Ishita follows the path lay down by her family by having an arranged marriage with Suryakant but her infertility sours her relations with her in-laws and her marriage ends up in divorce. This creates fissures in her relations with her mother as a divorcee and childless woman, Ishita makes unconventional choices by seeking adoption and having a clandestine relationship with Raman. Mrs Rajora tries to placate Ishita to share the truth of her love affair with her but Ishita who is not sure about the future of her romantic relationship because of Raman's indecision does not disclose her feelings in front of her mother: "Beta, . . . I only want to be sure that you are not doing anything to harm yourself. 'Mummy please. There is nothing to tell. I am not doing anything to ruin my life. . . . (Kapur, Custody 282). Ultimately, it is the fulfilment of desires of her mother by Ishita through her remarriage with Raman which helps to diminish the remoteness between her and Mrs Rajora.

Brothers (2016), the sixth novel by Kapur presents the mother daughter relationship between Mrs Ahlawat and Tapti. After the death of her husband, Mrs Ahlawat, being a strong follower of patriarchy, Mrs Ahlawat chooses to raise her daughter with utmost care and consideration. Therefore in case of the suspicion that Tapti has crossed the line, Mrs Ahlawat strictly questions her morality. It is Tapti's marriage with Mangal who is a prosperous business man and brother of an eminent politician, Himmat which establishes harmonious relations between the mother and daughter: "She [Tapti] glanced at her mother and smiled. . . . Mrs Ahlawat looked around her with satisfaction" (Kapur, Brothers 240-41). Although Mrs Ahlawat sympathises with her daughter's bad marriage resultant of the orthodox mindset and neglecting nature of Mangal, but when Tapti transgresses by having an extramarital affair and neglecting the secure future of herself and her two daughter: Mridula and Mansi, Mrs Ahlawat becomes disenchanted with her daughter. This discord between the mother and daughter is highlighted by the writer in the following lines of the novel: "The mother's dire predictions were relentless, dangerous, you don't know what you are doing, though your husband is difficult, this not the way,

honour, children, shame, disclosure, almost certain. . . . Denial does not stem the plaintive tide, but neither does Tapti corroborate her mother's assumptions" (331). Despite her independent nature, eventually Tapti consents with the wishes of her mother and accepts her marriage and ends her romantic relationship.

Works Cited :-

Goael, Mona. "An Anlaysis of Mother Daughter Relationship in Difficult Daughters." The Criterion: An International Journal in English (2014): 273-278. Web.

Kapur, Manju. Difficult Daughters . New Delhi : Faber, 2010. Print.

Nitonde, Rohinidas. In Search of a Feminsit Writer. New Delhi: Patridge, 2014. Print.

Patel, Rupal S. "Feminsit Perspective of Manju Kapur's A Married Woman." Arts Artium: An International Peer Reviewdcum Referred Journal of Humanities and Social Sciences (2016): 50-55. Web.

Pew, Maji. "Feminsim in Manju Kapur's Custody ." The Criterion: An International Journal in English (2013): 1-6. Web.

Vashist, Shivani. "Manju Kapur's Search for Hime: A Shuttle from Difficult ." Lapiz Lazuli: An Internationa Literary Journal (2011): 1-7. Web.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

William Butler Yeats : His Poetic Theory

Dr. Pratibha Rajpoot
Guest Lecturer (English), Govt. Degree College, Amarwara, Chhindwara (M.P.)

'Symbolism' is a word very much popular literary device in the modern world and American poetry. In the 19th Century there was a reflection of American literature in the literary movements. In the same century there is a rise of symbolism. The use of symbols, signs, metaphors and similes to create images in the works of literature all over the world. W.B. Yeats, who was on eminent poet off the age, use the technique to in his poetry, to depict the real. It is an acceptable technique and medium to express and interpret the Materialistic realities of life and the mysteries of human existence. On the surface there might be merely plain and simple narration or description and poem may be enjoyed as such. But a careful reading reveals the hidden and deeper meaning when interpreted symbolically, the scope widens and the full implications of what W.B. Yeats says are about. The literary creations seek its portray human experiences in its variety and depth symbols are noted for their wide range and penetrative quality as well as the variety of meaning, suggestions and evocations to assess the hidden realities of life.

The French symbolist movement is recognized as an important part of intellectual and artistic ancestry of the modernists movement in the 20th century. The pivot concerns of the symbolist movement is were 'Soul' inwardness, the mystic the mysterious and the arcane detached from all that was public institutionalized. Yeats to whom Symons dedicated his book on symbolism took it up and added Celtic glamous. Moving with times Yeats ceases to be an Irish Pre-raphaelites and becomes symbolist that he be called a Pre-raphaetites turned into a symbolist.

Yeats intension is to set up a golden bridge between the past and the present because this unification, as he thought, would enable the Irish writers to cross over the barren centuries of Irish literature. He so asked. "Can were not write and persuade others to write histories and romances of the great Gaelic men of the past until there has been made a golden bridge between the old and the new. "He is in belief that imaginative literature wholly", and all literature in some degree, exist to reveal a more divine world than ours and to make our ploughing and sowing our spinning and weaving more easy and more pleasant or event to give us good opinion of ourselves by glorifying our past or our future.[27] Yeats observed that imagination played a vital role in literature because in his words, " imagination is the means whereby we communicate with God, [28] To him "great literature is always great because the writer was thinking of truth and like and beauty more than of literary form and literary fame". [29]

Yeats never opposed of utilization of literature but he believed that literature created for some eternal spiritual purpose can be used for political ends. For him the literary creation is unconscious but the power of literature is inborn. His new was that if literature has to retain its freshness and invigorating power, it should flow spontaneously and involuntarily from the inmost depth of the poet's heart. He himself said : " All art is founded upon personal vision…. And all bad art is founded upon impersonal types and images." [28] By impersonal types and images he said of those images not born out of the poet's personal experiences and thought.

According to his theory literature should avoid both the 'rough and ready concept of morality of the age and dictates of the so-called upholders of moral conducts and preaches. He once wrote. "Literature must take the responsibility of its power and keep all its freedom it must be like the spirit and like the wind that blows where it listeth it must claim its right to pierce through every crevice of human nature and to describe the relation of the soul and the heart to the facts of life and of low…. If must be as incapable of telling a lie as nature." 39

Yeats interpreted 'art for art's sake'. He believed the writers expresses his feeling, "as the bird expresses itself when it sings. The bird was not trying to preach any body, the bird did not moralize to anyone; it gave no lessons, it merely sang its song. All artists are precisely the same. 'Arts for Art's sake' meant art far the sake of sincerity, for the sake of simply of natural speech coming from some simple, natural child like soul."[40] He also said that ' bird like song with pure joy, only comes out of things that have never been indentured to any cause." [41] Yeats theory of literature, indeed, consisted of the 'utile' and the ' dulce' conscience of mankind and of the spirit of freedom. He wrote in" To the Ruse upon the Rood of time".

" I find under the boughs of love and hate,
In all poor foolish things that live a day,
Eternal beauty wandering on her way.

In Yeats theory of literature moods played a vital role because they have spiritual elements and emanate from the universal soul. To him, these needs are in deed, the state of poetical inspiration. He wrote in his essay 'Mood' literature differs from explanatory and scientific writing in being wrought about a mood or a community of moods, as the body is wrought about an invisible Soul : and if it uses argument, theory, erudition, observation, and seems to grow hot in assertion or denial it does so merely to make us partakers at the banquet of moods." [72] He thought that the chief value of the moods lies in the fact that they, being aroused by the imagination can free the man of letters particularly the poets from realism and rationalism. He did not forget to affirm" imagination is God in the world of art." [73]

Yeats said about the purpose of literature is that bringing the soul of man to God is equivalent to revealing the purpose set before the working mind- and this purpose is the profane perfection of mankind. For Yeats the imagination creations of the vegetable universe was only valuable. He found the key to all human experience in what has been described variously as the imagination of the power of symbolization. As the appeal of the works of art is universal, literature must represent an imaginative unity. According to him. He believed that nation with great emotional in intensity might give to all those separated elements and to all that love and melancholy, as mythological coherence that may lead to the creations of all kinds of literature that in its turn effect the Unity of Being and the Unity of culture. He confessed " the end of art is ecstasy and that cannot exist without pain. It is a sudden sense of power and peace that comes when we have before our mind's eye a group of images which obeys which leaves us free, and which satisfies the needs for our soul. But we must believe in it and we lift out a single painful fact we would be unable to believe in those images." [79]

He saw some common ground between magic and poetry. He thought that magic gave access to vision through magical symbols and poetry was revelation of truth availed in vision. He got this faith from magic that mortal mind could transcend its limit and for temporarily converse with greater mind. It was his observation that the power of both magic and poetry laid in symbols and symbolic images without which neither poetry not magic could be effective. His study of theosophy his entry into the movement of Madame Blavatsky led him to combine myth and antiquity. From this movement against orthodox religion, which was disorted by priest and also by the refection of science and materialism he

developed his theory of myth according to which "the fairies are the lesser spiritual moods of that universal mind, wherein every mood is soul and every thought a body." [12] The revival of Irish mythology, legends, and folklore in his writings is not our to his interest in nationalism. It is only because of his quest of poetic truth.

He did not want to escape from the society. He actually wished to observe and understand it from different angle. As he wanted to create a structure or basic and fundamental ideology that may serve as a foundation of the edifice of life he was in favour of the reunification of the heart and the head, of imagination and reason. His deep interest in pure philosophy is found in his theory of poetry. To him poetry without some philosophy of life was not sublime poetry and at the same time poetry means to propogate ideas was not worthy of the name of poetry.

Yeats emphasized that the meaning of symbol is that it is communication between soul and Being. He said" I believed that all men will more and more reject the opinion that poetry is a criticism of life' and be more and more convinced that it is a revelation of a hidden life and they may even come to think painting, poetry and music, the only means by conversing with eternity left man to earth." So poetry is revelation of hidden life, mysterious disembodied invisible and infinite. His concept of poetry comes of his particular attitude towards life not of the rejection of life. Yeats viewed that the poet rising above the circumstances and externalities looking away from superficial realities, comes closer to reality and reveals the profounder truth.

Yeats come to conclusion that poetry to be genuine must be rich in significance profound in emotions and suggestive in meaning and that poetry without symbols, which alone are capable of tending richness and enriching suggestiveness is insignificant and meaningless. His theory of poetry is guided by his concept of symbols. His ideas on the nature of symbols, necessity for symbols, source of symbols and the place of symbols in poetry are represented in his three essays-" Necessity of symbolism', symbolism and painting, and the symbolism of Poetry.' According to him- A symbol is indeed the only possible expression of some invisible essence a transparent lamp without a spiritual flame." [54]

Symbolism is the area of interest to anthropologists because therefore part of raw material for comparative study of processes of human thought and actions. Tattooing is eastern societies is adornment of human body and people work it with pride while in western countries tattoo is believed to be stigma, symbol stand for another. Symbols are essentially words, which are not merely connotative but also evocative and emotive.

The theory of symbolism is not that simple in the modern complex scientific age. It gained multi-dimensional power and importance to influence the artist in different fields. Particularly its literary value increases so much that being a philosophy, it gained more success in the technique meaning thereby it flourished as a technique broader terms in literature. Thus, symbolism in modern literature is the symbolist theory of knowledge put into practice.

References : -

1. A commentary on the collected poems of W.B. Yeats. A Norman Jeffares- Published by Macmillan and Co. Ltd. 1924
2. W.B. Yeats - Essay and Introduction - London and Published by Macmillan and Co. Ltd. 1964
3. Yeats and Irish 18 Century Dublin, - Faulkner Peter, Delmen Press 1965
4. Outline History of English Literature - Hudson- 1981
5. W.B. Yeats and His World - By Micheal Mac Liammair and Eavan Thames and Hudson Ltd. London 1918.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

सागर क्षेत्र में मध्यम वर्गीय प्रवृत्तियाँ एवं विकास (1818ई.–1947ई.)

संतोष कुमार चौबे
अतिथि विद्वान–सर हरीसिंह गौर महाविद्यालय लक्ष्मीपुरा, (नाईट कॉलेज) सागर म.प्र.

भारतीय मध्यम वर्ग का जन्म पाश्चात्य जगत के संपर्क के परिणाम स्वरुप हुआ जो ब्रिटिश शासन के दौरान संभव हो सका है। सर्वप्रथम बंगाल पर सबसे अधिक पाश्चात्य संपर्क का प्रभाव पड़ा इसके पश्चात् दूसरे प्रेसीड़ेंसी नगरों, प्रांतीय राजधानियों तथा संभागीय और जिला मुख्यालयों में इसका विस्तार धीरे–धीरे हुआ। सन 1818 ई. में सागर क्षेत्र को ब्रिटिश साम्राज्य ने अधिग्रत किया और सागर क्षेत्र प्रत्यक्ष रूप से ब्रिटिश शासन के अंतर्गत आया, इसके साथ ही सागर क्षेत्र में पाश्चात्य सभ्यता का प्रचार एवं प्रसार होना प्रारंभ हुआ। प्रस्तुत शोध पत्र में इस पाश्चात्य संपर्क के प्रभाव से किस प्रकार एक नया वर्ग (मध्यम वर्ग) का जन्म एवं विकास हुआ तथा उसकी प्रवित्तियों का निर्धारण हुआ एवं उसका क्या प्रभाव पड़ा इसका विवेचन किया गया है।

इंग्लैंड में गौरवपूर्ण क्रांति के पश्चात् एक विशिष्ट प्रकार के उदारवाद का जन्म हुआ जो न तो क्रांतिकारी था और ना ही औपचारिक था। भारत वर्ष में जो उदारवाद आया था। वह ब्रिटिश किस्म का उदारवाद था। यह अवश्य है कि, औपनिवेशिक जगत के वातावरण में इसने एकदम भिन्न स्वरूप ग्रहण कर लिया था।[1]

भारत में उदारवादी विचारों के साथ ब्रिटिश संस्थाएं भी स्थापित हुई। ये संस्थाएं एवं व्यवस्थाएं इस प्रकार थीं– नवीन मुद्रा व्यवस्था, नयी नियम पद्धति, नयी भूमि व्यवस्था, यातायात एवं तकनीकी, नई न्याय प्रणाली और नवीन शिक्षा पद्धति। इस व्यवस्थाओं ने भारत में आधुनिक नगरों को जन्म दिया। यह नगर ही भारतीय मध्यम वर्ग के जन्म एवं विकास में सहायक रहे। इस प्रकार आधुनिक भारतीय मध्यम वर्ग का विकास नयी परिस्थितियों में आगे बड़ा जो ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन के अंतर्गत विकसित हुई थी। ये स्थितियां थी– सरकार का उदार तथा संवैधानिक रूप तथा विधि का शासन, व्यक्तिगत संपत्ति की तथा कृषि वर्गों के अधिकारों की सुरक्षा, शिक्षा की नयी पद्धति एवं एक निरंतर शांति का युग, यद्धाव्यम की नीति और रोजगार तथा सामाजिक सुधार की उदारवादी नीति।[2]

नवीन मध्यम वर्ग :– पाश्चात्य संपर्क के कारण जन्मी नवीन सामाजिक आर्थिक व्यवस्था का प्रभाव नवीन नगरों पर पड़ा। इन नगरों की प्रमुख विशेषता थी–प्रगति और परिवर्तनशीलता। इन नगरों एवं नागरिक जीवन का नेता मध्यम वर्ग था इस मध्यम वर्ग ने नए विचार व द्रष्टिकोण ग्रहण किये और उस नयी सभ्यता का प्रतीक तथा विचारक बना जो पाश्चात्य संपर्क तथा स्वदेशी परम्परा की मिली जुली सभ्यता से अंकुरित हुई थी।

औपनिवेशिक मध्यम वर्ग का आदर्श था– ब्रिटेन का विक्टोरिया कालीन उदारवाद, संसदीय जीवन एवं कार्यक्रम, उसका साहित्य तथा उसकी आंदोलन की पद्धति, वह उनसे प्रेरणा लेता था। वस्तुतः वह उनको देखकर चकित सा होता था किन्तु वह उदारवाद स्वयं मानकहीन था। वस्तुतः फ्रांस की राज्यक्रांति के पाश्चात् पाश्चात्य उदारवाद मानकहीन हो चला था। अस्तु, औपनिवेशिक उदारवाद का मानक स्वयं मानकहीन था।[3] यही मानकहीन उदारवाद भारतीय मध्यम वर्ग का आदर्श था।

इसी पाश्चात्य उदारवाद के विद्यार्थी होने के कारण भारतीय मध्यम वर्ग ने उदारवादी पेशों को अपनाया था। इन उदारवादी पेशों को अपनाना औपनिवेशिक मध्यम वर्ग की विवशता थी, कारण पराधीन देश में इन पेशों को अपनाने के अलावा मध्यम वर्ग के सम्मुख और कोई विकल्प नहीं था। बी.बी. मिश्रा ने भारतीय मध्यम वर्ग के ग्यारह (11) समुदाय बताये हैं।

1. ऐसे लोग जो कि, विजारत, उद्योग एवं मुद्रा के स्वामी,

2. इन व्यवसायों से संबंधित उच्च वैतनिक कर्मचारी,
3. अन्य वाणिज्य, व्यापार राजनीतिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक संस्थाओं के उच्चपदाधिकारी,
4. उच्च सरकारी कर्मचारी,
5. वकील, डॉक्टर, अध्यापक, पत्रकार, कलाकार, गायक, धर्मप्रचारक,
6. मध्यम श्रेणी के काश्तकार,
7. खुशहाल दुकानदार एवं बड़े होटलों के स्वामी तथा पदाधिकारी,
8. बड़ी–बड़ी– जमींदारियों के कर्मचारी,
9. ऐसे विद्यार्थी जो कि उच्च शिक्षण संस्थाओं में कार्य करते हों,
10. ऐसे लोग जो कि विभिन्न पेशों में लेखक का कार्य करते हों तथा
11. माध्यमिक शिक्षा संस्थाओं के अध्यापक और स्थानीय संस्थाओं के उच्च कर्मचारी तथा सामाजिक और राजनीतिक कार्यकर्ता।[4]

भारतीय मध्यम वर्ग की प्रवित्तियाँ तथा विशेषताएं तर्क बुद्धि से जुड़ी हुई थीं तर्क बुद्धि के कारण ही नवीन मध्यम वर्ग ने परम्परा अंधविश्वास और सत्ता के विषय पर प्रश्न किया और इनका विरोध किया। इसी कारण पुरोहितशाही की सत्ता पर उन्होंने सर्वप्रथम प्रहार किया तत्पश्चात शीघ्र ही प्रशासनिक तथा राजनीतिक विषय, इस मध्यम वर्ग की छान–बीन के विषय बने। सामाजिक क्षेत्र में तर्क बुद्धि ने ही उन्हें रुदिग्रस्त व अमानवीय प्रथाओं, परम्पराओं को समाप्त करने के लिए आंदोलन करने को प्रेरित किया और ये विशेषताएं नवीन भारत की विशेषताएं बनी।

भारत वर्ष में सब जगह पुनर्जारण एक साथ नहीं हुआ उसी प्रकार मध्यम वर्ग का जन्म और विकास भी अलग–अलग समय एवं परिस्थितियों में हुआ। इसका प्रमुख कारण यह था कि, भारत वर्ष के सभी क्षेत्र पाश्चात्य सभ्यता के साथ भिन्न–भिन्न काल में संपर्क आये थे। जैसे–जैसे ब्रिटिश शासन का संपर्क प्रादेशिक क्षेत्रों में हुआ, पाश्चात्य सभ्यता का भी प्रसार उन क्षेत्रों में बढ़ता गया। और इस संपर्क की गति के अनुसार ही इन प्रादेशिक क्षेत्रों में क्रमशः पुनर्जागरण होता गया।

सागर क्षेत्र के संदर्भ में :– सागर जिले में पुनर्जागरण के जन्म एवं प्रसार का विश्लेषण करने से यह स्पष्ट होता है कि यह क्षेत्र बम्बई प्रेसीड़ेंसी (महाराष्ट्र) एवं उत्तर पश्चिम प्रांत (वर्तमान उत्तर प्रदेश) की पुनर्जागरण की प्रवित्तियों से प्रभावित था। सागर क्षत्र के मध्यम वर्ग की वैसी ही प्रवित्ति बनी जैसे कि उक्त क्षेत्रों के मध्यम वर्ग की थी। यही कारण है कि सागर क्षेत्र के मध्यम वर्ग ने अखिल भारतीय स्तर के मध्यम वर्ग की भांति उदारवादी चिंतन का अनुकरण करते हुए उदारवादी, पेशों को अपनाया तथा भारतीय पुनर्जागरण का अनुकरण करते हुए यहाँ का मध्यम वर्ग रुढ़ियों एवं सत्ता का विरोधी बना रहा। मध्य प्रांत का हिंदी भाषा का क्षेत्र का मध्यम वर्ग (सागर का मध्यम वर्ग) उतना उग्र ना हो सका जितना कि इस प्रांत के मराठी भाषी क्षेत्र का मध्यम वर्ग (विशेषकर 1919 के पूर्व)।

मध्य प्रांत के मराठी भाषो क्षेत्र के मध्यम वर्ग के स्वरूप को निर्धारित करने में वहां की आर्थिक एवं सामाजिक संरचना का बहुत बड़ा योगदान रहा। मराठी भाषी क्षेत्र की आर्थिक संरचना का मुख्य आधार कृषि था परंतु वहां की काली मिट्टी कपास के लिए बहुत उपयुक्त थी। जिससे सूती कपड़ा उद्योग के लिए बहुत प्रोत्साहन मिल सका। इस स्थितियों में मध्य प्रांत के मराठी भाषी क्षेत्र में नगरीकरण की प्रक्रिया बड़ी फलतः यहाँ मध्यम वर्ग का विकास तीव्रता से हुआ। मराठी भाषी क्षेत्र में महाराष्ट्रियन ब्राम्हण, शहरी मध्यम वर्ग में प्रमुख स्थान रखते थे। मध्य प्रांत के मराठी भाषी क्षेत्र की तुलना में हिंदी भाषी क्षेत्र की सामाजिक एवं आर्थिक दशा ने इसे राजनीतिक दृष्टि से कम सक्रिय बनाया था। हिंदी भाषी क्षेत्र की भौगोलिक एवं प्राकृतिक स्थिति यहाँ के मध्यम वर्ग की प्रवित्ति के निर्धारण में बहुत बड़ी मात्रा में उत्तरदायी रही। यह क्षेत्र कृषि प्रधान था। नर्मदा घाटी में गेंहू, मध्य पहाड़ी क्षेत्र में, मिश्रित फसलों तथा छत्तीसगढ़ में धान की खेती होती थी। इस क्षेत्र के बहुत से नगर प्रशासनिक एवं व्यापारिक केंद्र थे लेकिन इस क्षेत्र में जबलपुर, कटनी तथा बुरहानपुर ही ऐसे नगर थे जहाँ औद्योगिक गतिविधियां थी। जबलपुर में कताई एवं बुनाई की मिल, आटा मिल व शराब बनाने का धंधा, वर्क कारखाना रेलवे तथा इंजीनियरिंग वर्कशॉप, प्रिंटिंग प्रेस, गन कैरिज

फैक्ट्री[5] कटनी में सीमेंट वह पेंट फैक्ट्री[6] तथा बुरहानपुर में कपड़ा मिल थी। अतः औद्योगीकरण की बहुत अधिक संभावना ना होने के कारण हिंदी भाषी क्षेत्र में नगरीकरण की प्रविति्त मराठी भाषी क्षेत्र की अपेक्षा धीमी रही[7]

हिंदी भाषी क्षेत्र के सागर के मध्यम वर्ग के निर्धारण में भी यहाँ की आर्थिक एवं सामाजिक संरचना का बहुत बड़ा योगदान रहा। सागर क्षेत्र के मध्यम वर्ग के स्वरूप एवं विशिष्टता के निर्धारण में भी यहाँ की आर्थिक एवं सामाजिक संरचना उत्तरदायी रही। सागर की अर्थव्यवस्था पूर्णतः कृषि पर आधारित थी। यहाँ की कृषि की संरचना में मालगुजरों तथा महाजनों का प्रभुत्व रहा[8] सागर क्षेत्र की खुरई तहसील में लंबे समय तक महाजनों का प्रभुत्व रहा। सन 1911–16 के बंदोबस्त में उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार इस तहसील के 548 गाँवों में 189 गांव पांच बड़े महाजनों के अधीन थे[9] इनमें से एक ऐसा महाजना भी था जिसके अधीन 84 गांव थे[10] इसके अतिरिक्त सागर की अर्थव्यवस्था में दैनिक दिनचर्या वाले छोटे उद्योग जैसे– जेवर बनाने के कार्य, तांबे और पीतल के बर्तन बनाने का कार्य, लुहारी का कार्य, बढ़ई का कार्य, मिट्टी के बर्तन बनाने के कार्य आदि थे[11]। सन 1850 में गढ़ाकोटा को सागर क्षेत्र में ''सूती वस्त्र के प्रमुख भंडार'' के रूप में मान्यता दी गई थी।[12] इसके अतिरिक्त यहाँ के बीड़ी उद्योग को एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था परंतु ये उद्योग आधुनिक पूँजीवादी व्यवस्था के अंतर्गत स्थापित उद्योगों से बिल्कुल भिन्न थे। अतः यहाँ का मध्यम वर्ग औद्योगिक सभ्यता से जन्मे मध्यम वर्ग से एकदम भिन्न था।[13]

सागर के औद्योगिक विकास के न होने में सबसे बड़ी बाधा थी, तीव्र गति के यातायात के साधनों का न होना। मध्य प्रांत के हिंदी भाषी क्षेत्र में जबलपुर, रायपुर और बिलासपुर को इस प्रकार का लाभ प्राप्त था। इन नगरों की भौगोलिक और प्राकृतिक स्थितियों ने इन्हें बड़े नगरों के रेलमार्ग से जोड़ा। जबलपुर, इलाहाबाद से दक्कन की तरफ जाने वाले रेलमार्ग पर स्थित था।[14] इसके अतिरिक्त जबलपुर, सागर एवं नर्मदा तथा जबलपुर संभाग का मुख्यालय था। मुख्यालय नगर होने के कारण यहाँ सरकारी कार्यालय, केंटोमेंट आदि स्थापित हुए फलतः जबलपुर पाश्चात्य संपर्क के लाभों से लाभान्वित हुआ। इन लाभों से सागर क्षेत्र वंचित रहा। इस कारण सागर का मध्यम वर्ग औद्योगिकता की ओर न सोच सका।

औद्योगिक विकास के अतिरिक्त पाश्चात्य शिक्षा का विकास एवं प्रगति मध्यम वर्गीय समाज के लिए आवश्यक पूर्वावस्था मानी जाती है। सागर क्षेत्र में पाश्चात्य शिक्षा का प्रचार सन 1827 में संभव हो सका। जब जेम्स पैटन ने सागर नगर में कुछ पाश्चात्य ढंग के विद्यालय स्थापित किये। इनमें कटरा, गोपालगंज एवं चमेली चौक के विद्यालय प्रमुख थे।[15] परंतु पैटन के सागर छोड़ते ही उसके द्वारा स्थापित विद्यालय कुशल निर्देशन व धन के आभाव में टूटने के कगार पर पहुंचने लगे तभी ऐसी स्थिति में कृष्णराव रिंगे[16] नामक एक संभ्रांत युवक ने जिन्होंने पैटन से अंग्रेजी सीखी थी इन संस्थाओं की व्यवस्था देखनी आंरभ की[17] इतना ही नहीं रिंगे ने अपने घर में आधुनिक शिक्षा प्रणाली का विद्यालय भी आंरभ किया जो कालांतर में हाई स्कूल में परिणित हो गया था[18] शिक्षा के इस प्रचार प्रसार का परिणाम यह हुआ कि इस क्षेत्र में सामाजिक–सांस्कृतिक एवं राजनीतिक चेतना का विस्तार होने लगा। इस चेतना के परिणामस्वरूप मध्यम वर्ग का जन्म हुआ। इस मध्यम वर्ग का एक अग्रणी नेता कृष्णराव रिंगे को कहा जा सकता है, कारण रिंगे ने एक छोटे से नगर सागर में पाश्चात्य संपर्क को आत्मसात करके उसे प्रोत्साहित करने का काम किया था।[19] इतना होने पर भी उच्च शिक्षा के लिए सागर क्षेत्र के नव युवकों को प्रांत के दूसरे भागों यानि जबलपुर और नागपुर तथा दूसरे प्रांतों के उच्च शिक्षा केंद्रों में जाना पड़ता था। यह स्थिति 1945 तक रही, जब 7 जुलाई सन 1945 में हिन्दू कॉलेज की स्थापना क्षत्रिय स्वर्णकार एजूकेशन सोसाइटी के प्रयासों से हुई।[20] इस कॉलेज की स्थापना से सागर के नव युवकों के लिए उच्च शिक्षा का मार्ग प्रशस्त हुआ। उच्च शिक्षा के कार्य को आगे बढ़ाने में डॉ. हरिसिंह गौर का उल्लेखनीय योगदान था। डॉ. गौर ने 18 जुलाई 1946 में सागर विश्वविद्यालय की स्थापना की।

उपरोक्त उदाहरणों से सागर क्षेत्र के मध्यम वर्ग जो देश के प्रमुख वर्ग की तुलना में कम उग्र था, ने अखिल भारतीय स्तर के मध्यम वर्ग की प्रवित्तियों को आत्मसात किया था। ये प्रवित्तियां थी– व्यक्तिवाद, प्रगति, परिवर्तन और संचयशीलता। सागर क्षेत्र के मध्यम वर्ग ने अपने समस्त क्रियाकलापों में व्यक्ति को महत्व दिया। इस वर्ग ने अपने सीमित साधनों एवं पुरातन वातावरण वाले समाज में समस्त कार्य में व्यक्ति को ध्यान में रखा। साथ ही इस क्षेत्र को प्रगति का मार्ग दिखाकर परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त किया। यहाँ के मध्यम वर्ग ने आधुनिक शिक्षा को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई चाहे वे कृष्णराव रिंगे हों या डॉ. हरिसिंह गौर हों।

सागर क्षेत्र के मध्यम वर्ग के अग्रणी नेताओं में डॉ. हरीसिंह गौर, के.एन. रोहण(एडव्होकेट), रामभरोसे गुजरिया, बी.एल. सराफ(एडव्होकेट) मास्टर बलदेव प्रसाद(पत्रकार), डॉ. जी.डी. मुखारिया(चिकित्सक), रामलाल बड़ोनिया(सेवानिवृत्त इंसपेक्टर ऑफ स्कूल), मोतीलाल पंडया(बैंकर), के.पी. जडिया(एडव्होकेट), बद्री प्रसाद सोनी, आर.आस. पंडया, के.डी. मेहता, शिवप्रसाद सोनी, आदि ने संग्रहशील प्रवृत्ति का उदाहरण नगरवासियों के समक्ष रखा। सागर के मध्यम वर्ग ने धन संग्रह से ही (सागर विश्वविद्यालय–डॉ. हरीसिंह गार विश्वविद्यालय[21]) तथा हिंदू कॉलेज की स्थापना करके सागर वासियों के लिए नगर में उच्च आधुनिक शिक्षा का मार्ग प्रशस्त किया। यह उनकी प्रगति शीलता का सूचक है।

सागर क्षेत्र के मध्यम वर्ग की सामाजिक संरचना में एकरूपता नहीं थी जैसे कि– मध्यम प्रांत के मराठी भाषी मध्यम वर्ग में थी। हिंदी भाषी क्षेत्र के प्रमुख नगर जबलपुर के मध्यम वर्ग की ही भांति, सागर के मध्यम वर्ग में समाज के विभिन्न एवं वर्णों एवं भारत वर्ष के विभिन्न प्रांतों से आये हुए वासी थे। सागर के मध्यम वर्ग में ब्राम्हण (जिझौतिया, सनाढ्य) राजपूत, यादव सोनी(सुनार) गुजराती[22] मुख्य रूप से खेडाबाल, जैन, वैश्य, कायस्थ, महाराष्ट्रियन(करहणे ब्राम्हण) आदि प्रमुख थे। सागर का मध्यम वर्ग विभिन्न जाति और अन्य प्रांतों से आये हुए लोगो से बना हुआ था, इस कारण इनकी वैचारिक, सामाजिक, आर्थिक पृष्ठभूमि एक दम पृथक थी। इस कारण सागर क्षेत्र के मध्यम वर्ग में समरूपता नहीं पाई जाती।

सागर की आर्थिक संचरना कृषि प्रधान थी, कृषि के अलावा अन्य व्यवसाय भी इस क्षेत्र की आर्थिक एवं सामाजिक संरचना में अहम् भूमिका निभाते थे। अतः यहां भी अखिल भारतीय स्तर के मध्यम वर्ग की भांति, मध्यम वग, दो भागों में विभक्त था– भूमि से जुड़ा मध्यम वर्ग और नगरीय मध्यम वर्ग।

भूमि से संबंधित मध्यम वर्ग– जिसमें जमींदार, जागीरदार और संपन्न किसान आदि आते हैं। यह मध्यम वर्ग के अन्य प्रकारों की तुलना में अधिक जटिल और अगतिशील होता है जैसे व्यवसायिक मध्यम वर्ग, औद्योगिक मध्यम वर्ग और शिक्षित मध्यम वर्ग में अधिक द्रुत परिवर्तन हो सकते हैं परंतु ऐसे द्रुतपरिवर्तन भूमि से संबंधित मध्यम वर्ग में संभव नहीं है। भूमि में संबंधित मध्यम वर्ग में गतिशीलता का समावेश तब हुआ जब यहां अंग्रेज आये। अंग्रेजों के आगमन के बाद भू–संबंधी नीतियों में परिवर्तन हुए इसके साथ ही भूमि से संबंधित मध्यम वर्ग के जीवन में भी द्रुत परिवर्तन होने प्रारंभ हुए उनमें इसी परिवर्तन की धारा ने उनके अंदर गतिशीलता जो जन्म दिया तथा उन्हें राष्ट्रीय आंदोलन की ओर प्रेरित किया। राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेकर उन्होंने इस क्षेत्र को राष्ट्रीय आंदोलन की मुख्य धारा से जोड़ा। कुछ माल गुजार सागर शहर में आये और इस प्रकार से नगरीय मध्यम वर्ग का उदय हुआ।

निष्कर्ष :– पाश्चात्य संपर्क के कारण जन्मे मध्यम वर्ग में जिस प्रकार अखिल भारतीय स्तर पर अपना योगदान दिया उसी प्रकार सागर क्षेत्र में भी इस वर्ग ने अपने स्तर पर योगदान दिया। यह योगदान अखिल भारतीय स्तर पर हुए योगदानों के समतुल्य तो नहीं कहा जा सकता क्योंकि इस क्षेत्र (सागर क्षेत्र) की आर्थिक सामाजिक संरचना भिन्न प्रकार की थी। फिर भी जिस अनुपात में पाश्चात्य संपर्क इस क्षेत्र में होता गया उसी अनुपात में ही इस क्षेत्र के मध्यम वर्ग ने भी सागर क्षेत्र को सक्रियता प्रदान की तथा भारत में राष्ट्रीय आंदोलनों में सक्रिय रूप से भाग लेकर

भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति में सहायक बना। इस प्रकार इन मध्यम वर्गीय प्रवित्तियों ने अखिल भारतीय स्तर पर निर्मित इन मध्यम वर्गीय प्रवित्तियों के साथ अपना ताल–मेल मिलाते हुए इस क्षेत्र की आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक स्थितियों को अपने विकास में बाधक नहीं बनने दिया तथा इस क्षेत्र को अखिल भारतीय स्तर की मध्यम वर्गी प्रवित्तियों के समान बनाने का प्रयास किया और इस क्षेत्र को विकास के मार्ग पर निरंतर आगे बढ़ाते हुए देश की स्वतंत्रता प्राप्ति में सहायक बना और इस सीमित साधन वाले सागर क्षेत्र में कई अविस्मरणीय कार्य किये।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. गणेश प्रसाद, नेहरु :, स्टडी इन कोलोनियल लिवरलिज्म, नयी दिल्ली, 1976 पृ–1
2. बी.बी. मिश्रा, द इंडियन मिडिल क्लासेज देयर ग्रोथ इन मार्डन टाइम्स, लंदन, 1961, पृ–69
3. गणेश प्रसाद, नेहरु और राष्ट्रीय मानक, मुक्तधारा, 15 नवंबर 1969, दिल्ली, पृ–19
4. बी.बी. मिश्रा, पूर्वोक्त, पृ–106
5. मध्य प्रदेश डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, जबलपुर 1968, पृ–245
6. वही पृ–259–60
7. आभा नवनी, नेचर ऑफ पॉलिटिकल लीडरशिप इन महाकौशल मध्य भारती 40, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर, 18 जुलाई 1995–17जुलाई 1996, पृ–151–52
8. आभा नवनी, भारतीय राष्ट्रवाद का स्थानीय स्वरूप, सागर 1919–23, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में सागर संभाग का योगदान (राष्ट्रीय संगोष्ठी) 21–22 फरवरी 2007 डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर मध्य प्रदेश
9. रिपोर्ट ऑन द रेवेन्यू सेटलमेंट ऑफ सागर डिस्ट्रिक्ट 1911–16 पृ–32–33
10. फोरकास्ट रिपोर्ट ऑन द रि–सेटलमेंट ऑफ सागर डिस्ट्रिक्ट 1910, पृ–15
11. गजेटियर ऑफ इंडिया, मध्य प्रदेश, सागर, भोपाल 1967, पृ–191
12. वही पृ–191
13. आभा नवनी, भारतीय राष्ट्रवाद का स्थानीय स्वरूप, पूर्वोक्त
14. 1867 में ईस्ट इंडियन रेलवे ने जबलपुर को कलकत्ता से जोड़ा तथा तीन वर्ष पश्चात् इंडियन पेनिंसुला रेलवे ने जबलपुर को कलकत्ता से बम्बई के मुख्य मार्ग में रखा। गजेटियर ऑफ इंडिया, जबलपुर, भोपाल 1994, पृ–79
15. गजेटियर ऑफ इंडिया, सागर भोपाल, 1967, पृ–422–23
16. वही पृ–424
17. वही पृ–424
18. वही पृ–424–25
19. आभा नवनी, सागर में मध्यम वर्ग और अब्दुल गनी, मध्य भारती अंक 53 मार्च 2003, डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर पृ–49
20. हिन्दू कॉलेज मैगजीन, अप्रैल 1945–46 पृ–10
21. डॉ. लक्ष्मीनारायण दुबे, विश्व की दृष्टि में सागर विश्वविद्यालय और उसके संस्थापक डॉ. हरिसिंह गौर, जबलपुर 1972, पृ–113
22. संवत् 1875 में खेडावाल लोगों ने व्यापार सराफा, आदि व्यवसाय के लिए हटा सागर क्षेत्र में आना प्रारंभ किया तथा यहां पर स्थाई रूप से निवास करने लगे। नर्मदा क्षेत्रीय खेडावाल समाज पत्रिका, सितंबर 1993, लेखक वैनीशंकर तिवारी, संपादन–रमेशचंद दुबे, भोपाल म.प्र.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

History of Ujjain

Shiraz Akhter
Ph.D. (Scholar), Department of History, Faculty of Social Science, Barkatullah University, Bhopal (M.P.),
Research Centre Govt. Hamidia Arts & Commerce College, Bhopal

Abstract :- Ujjain, lying on the Malwa tract of central India, then known as Avanti, has been the seat of religion and culture from the ancient period, and is also a pilgrimage place. The name of Ujjain is frequently met with in almost all the Buddist and Brahminical records. The present study is about the history of Ujjain.

Keywords :- Ujjain, Sipra, Singhast, temples.

Introduction :- Towards the end of seventh century B.C. the region covered by the modern Ujjain, district was included in the powerful kingdom of Avanti, with Ujjayini, Pali Ujjani of inscriptional prakirit, as it is capital. This time history of Avanti assumes a more or less definite shape. History of Avanti commences with the rise of the important royal dynasty of the so called Pradyotas called after the name of the founder of the dynasty king Pradota.[87]Including Avanti there where powerful kingdoms of Magdha, Kosala and Vatsa. Each of these four important royal dynasties strove hard to established its supremacy and embarked aggrandizement at the cost of their minor states, monarchical or republican. Though many of these states had matrimonial alliances among themselves some of them have evil designs, against each other. The alliances did not prevent the outbreak of mutual hostilities. The king Pradyota of Avanti was powerful and was contemporary of Lord Buddha. In his time Avanti became a powerful and flourishing kingdom and the city of Ujjain rose to a great prominence. His full name was Chanda Prodyota Mahasena. His name and power was much dreaded by then kings so much so that king Ajatashatru measures to fortify his capital Rajgriha as he apprehended invasion by Prodyota.[88]

The ancient city of Ujjaini was an important halting place of ancient trade route connecting Rajgriha the ancient capital of Magdha with Pratisthan (modern paithan) in Aurangabad district of (Maharashtra) in Dakshinpath from Seventh century B.C. It was also a great centre of Buddhism.[89] And Jainsim during the life time of the Buddha and Mahavira.[90]

The city abounds in numerous temples of ancient origin which have made it a pilgrim centre and holy place. The Mahakal temple which contains one of the twelve Jyotirlingas is considered one of the most sacred temples in the country. According to tradition, Lord Krishna, in his childhood, along with his elder brother Balrama and dear friend Sudama and many others had been the student of Maharishi Sandipani. The place at the Sipra bank, where Krishna used to wash his slate are known as Ankpat (Ank-pat, washing of numbers.)[91] Sipra is also known as Avanti Nadi. The sacred village of Sipra near Dewas, the Holy town Ujjain and Mahidpur are situated on its bank. The river is said to have sprung from the blood of Vishnu, the god in most worshiped form of a man. Throughout its course the river is marked by sacred spot, the reputed

[87] R.C.Majumdar,Ancient India,New Delhi,1960 P 95.

[88] Vijay Kachroo, Ancient India, Hari Anand Publication Pvt. Ltd. New Delhi, p. 169, The Age of Imperial Unity, Bombay, 1953, Bhartiya Vidya Bhawan, p.14.

[89] B.C. Law, Ujjaini in Ancient India, Gwalior, 1944, p.32

[90] Ibid, p.39

[91] Samarendra Narayan Arya, Pub. Munshiram Manoharlal Pvt. Ltd. New Delhi, pp. 42-43: Haribhau Upadhyay, Abhinandan Granth, p. 202

haunts of Rishis, or the scenes of miraculous incidents around which a whole epic of tale and legend has grown up.[92] The festival of Singhast which is brought to Ujjain in the month of the March.[93] A great one month long fair also known as Kumbh mela on the banks of the sacred river Sipra. Sadhus from all over India came with their Akhadas or assemblage for bathing and performed Puja. Lakhs of people enjoy this occasion, which is the specialty of the state. There are other three places in the country like Allahabad, Haridwar and Nasik having privilege of organizing Kumbh in rotation, one after the other in every three years and Sadhus from all over India congregate and takes sacred dip in the Holy water.[94]

Conclusion :- Ujjain is having its great importance in ancient history not only in one way but there were many things related with from ancient times till date was developed and is developing but, it is our duty to save these historical places and its monuments also, because if we do not do so we will only find these things in books, not in reality so save Sipra and save its Holy water.

Reference :-

- R.C. Majumadar, Ancient India, New Delhi, 1960 p 95.
- Vijay Kachroo, Ancient India, Hari Anand Publication Pvt. Ltd. New Delhi, p. 169.
- The Age of Imperial Unity, Bombay, 1953, Bhartiya Vidya Bhawan p.14.
- B.C. Law, Ujjaini in Ancient India, Gwalior, 1944, p.32
- Samarendra Narayan Arya, Pub. Munshiram Manoharlal Pvt. Ltd. New Delhi. Pp. 42-43
- Haribhau Upadhyay, Abhinandan Granth, p. 202
- Imperial Gazetteer of India, Vol. XXXIII, New Edition, Edinburg, 1908, p. 14.
- Report of the Political Administration of the Territories within the central India agency for 1884-85 (Foreign Department) N. A.I. (Bhopal)p.4.
- Hari Bhau Upadhyay Abhinandan Granth, p. 202; An Interview with an old gentleman of Ujjain who told about Sipra Nadi, its facts and its significances.

[92] Imperial Gazetteer of India, Vol. XXIII, New Edition, Edinburg, 1908, p.14.
[93] Report of the Political Administration of the Territories within the central India agency for 1884-85 (Foreign Department) N.A.I. (Bhopal) p.4.
[94] Hari Bhau Upadhyay Abhinandan Granth, p. 202; An Interview with an old gentleman of Ujjain who told about Sipra Nadi, its facts and its significances.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Section 377 of Indian Penal Code and Status of Homosexuality in India

Akshay Jain
Research Scholar, Department of Political Science & Public Administration, Dr. Harisingh Gour University, Sagar

Introduction :- The twentieth century witnessed the emergence of many major issues including the issues of the rights of homosexual people. Many big and small movements were launched in the favour of homosexual rights and demand was raised to eliminate those laws which criminalize homosexuality. The issue of homosexuality is based on social, religious and cultural norms therefore this issue is always full of controversy. Many countries of the world criminalized homosexuality through laws. These laws are under influence of social, cultural and religious norms and values. However, colonization also played dominant role to criminalized homosexuality because, through colonization, laws against homosexuality were made in various colonies that were based on the Christian norms of Europe.

Homosexuality in India is an offence under section 377 of Indian Penal Code. This law has been made in colonial India which is continue till today along with many other remains of the British Raj in India. Many scholars and queer rights activists have been criticizing this law and appealed to repeal or reinterpret it. In India, homosexuality was always prevalent as they claim (It can be noticed in the art, literature, mythology and culture). Many of them claim that homosexual behaviour was always the part of Indian culture and society and the attitude of Indian civilization was never intolerant towards it. However, Devdutta Pattanaik opines that it was acknowledged but not approved (Pattanaik, 2000).

The supporters of homosexual rights in India dismiss the argument that recognizes it as a "western evil". They, by proving many references, assert that it was its criminalization not homosexuality that came from the West. In the last few decades, the demand for the rights of homosexuals has been consolidated in India though it was confined to metropolitan cities. However, this issue got some place in media and public discussion in India in the last two decades.

Technical Aspects of the Statute :- Laws are the authoritative commands of the sovereign which include coercion. In modern political system, there are systematic and secular structures and procedure of legislation however they are always in the close connection with set social and cultural norms. Homosexual acts which are denied by society and culture were criminalized through laws which were the product of these modern political structures. Hence, anti –homosexual attitude of society and culture had been manifested through laws. In India, however, things were not as simple. The multicultural characteristics of Indian society were not as harsh towards homosexual acts as it was in Britain. That was the reason of absence of any such law in Indian system which criminalized homosexual acts with the provision of harsh punishment. Homosexual acts were criminalized in the British period after the implementation of Indian Penal Code. Systematic codification of laws with modern outlook begins in India in British Raj and Indian Penal Code was the greatest effort of this process. This penal code dealt with many aspects of crime and punishment and tried to establish symmetry with British laws. It excluded matters related to marriage, adoption, inheritance etc. and left them with personal laws based on religious traditions in India.

In 1834 the first law commission in India was established in the chairmanship of Thomas Babington Macaulay. The Indian Penal Code was drafted by the commission in 1860. Section 377 of this code criminalizes "carnal intercourse against the order of nature" even based on consent.

Relations based on homosexuality generally fall under the undefined umbrella section 377 of Indian Penal Code. The section reads:

Unnatural offences :- Whoever voluntarily has carnal intercourse against the order of nature with any man, woman or animal shall be punished with imprisonment for life, or with imprisonment of either description for term which may extend to ten years, and shall also be liable to fine.

Explanation :- Penetration is sufficient to constitute the carnal intercourse necessary to the offense described in this section.

This section of Indian Penal Code is vague, ambiguous and undefined. It does not elaborate its technical terms. It keeps sexual acts into the categories of natural and unnatural however it does not elaborate what are the criteria of natural or unnatural sexual acts. There is no description of order of nature, carnal intercourse and penetration. Therefore, it gives adequate power to police and magistrate to define and implement it on the basis of their discretion.

Laws are well defined from the time they are drafted. They particularize the technical aspects but section 377 does not particularize unnatural sexual acts and sodomy. However this statute has been projected as the anti-sodomy and the law against homosexuality in India. As a piece of legislation, section 377 applies a vague offence – without defining what "carnal inter- course" or "order of nature" are – to the general public at large, the only criteria being "penetration". It is a separate issue that the Indian courts over the decades have interpreted and constantly re-defined "carnal intercourse" read conjunctively with the "order of nature" – to include other non-procreative sexual acts. Therefore, it is not only a law used against the act of sodomy but also it includes sexual activities apart from anal sex to oral sex, mutual masturbation, etc. (Gupta, 2006).

This statute is applicable homosexual as well as heterosexual relations. However, over the years, the general offence of sodomy became a specific offence of homosexual sodomy, a significant distinction although never reflected in the Indian law has subsequently been read through in certain later cases by the Indian courts (Gupta, 2006). The attitude of courts has been quite negative towards the act of sodomy based on homosexual relations particularly whereas complaints based on act of sodomy in heterosexual relations are quite negligible. The courts associate the particular sexual act with certain kind of people, hence; they recognize sexual acts of homosexuals against the order of nature on the basis of this statue.

Section 377's predecessor in Macaulay's first draft of penal code was clause 361, which made the provision of severe punishment for touching another for the purpose of unnatural lust (Puri, 2016:49-60). Macaulay was not in the favour to conduct any discussion on such a heinous crime because he believed that even discussion on such a degradable crime would raise public immorality (Gupta 2006). Therefore, it is correct to say that clause 361 was completely the product of Macaulay's discretion. Lack of debate or discussion caused vagueness and ineffectiveness of the language of the proposed law that was also continued in the newly drafted section.

Colonial Influence in the Origin of this Law :- Section 377 must be understood within the context of the consolidation of empire in India via increasing militarization by the British Imperial Army (Vanita & Bhaskaran 2002: 16). An apprehension was expressed by some administrators and historians that the act of sodomy might encourage in the Imperial army in the absence of their wives. Therefore, unofficial and unregulated brothels were turned into officially regulated brothels for the Imperial Army. In the mid-1850s state-regulated brothels were established by the company where Indian women who were indulging in this job had to register and undergo regular medical exams (Vanita & Bhaskaran 2002: 17).

These state regulated brothels were pri-marily for the use of white people, although

Indians could use them while whites were on morning parade (Hyam 1990: 116).

Establishment of these official brothels was definitely a controversial decision; however this step was presented as a safety valve to avoid the apprehension of unnatural sexual acts in the Imperial Army. In 1894, Viceroy Elgin claimed that having no prostitutes would lead to "even more deplorable evils . . . there is already an increase in unnatural crimes" such as homosexual activity (Hyam 1990: 101). It is generally believed that availability of opportunity to fulfill normative heterosexual desires may cure men who have been indulged into "unnatural sexual acts". In October 1893 an advice column in Sanjibani, a Bengali weekly edited by Keshab Chandra Sen and Krishna Kumar Mitra, suggests that Indian schoolboys engaging in "unnatural and immoral habits" be cured by visits to prostitutes. Therefore, to protect soldiers from unnatural crimes" such as homosexual activity the need for anti sodomy law was realized (Vanita & Bhaskaran 2002: 17).

Section 377 and Controversy :- Section 377 of Indian penal code has been widely criticized in the last two and a half decades. This statute has been projected as a law against the basic notion of human rights and the fundamental rights given by the Constitution of India. However, the initial debate of this section emerged with the discovery of HIV AIDS.

In 1994, some homosexual sexual activities were reported in the male wards of the Tihar Jail, New Delhi. While the survey report of the World Health Organisation in 55 prisons in 31 countries said that there was a higher rate of HIV transmission among prisoners than among the general population (Joseph 1996). These challenging reports circulated apprehension that led to a survey coordinated by Indian Medical Association president Dr. K. K. Aggarwal. The survey found that two-thirds of Tihar prisoners had participated in "homosexual activity (Vanita & Bhaskaran 2002: 15). After this survey some doctors and activists demanded the distribution of condoms to all prisoners to prevent the threat of HIV AIDS. The Tihar jail authority did not accept this demand and denied any homosexual activity in the prison. It resisted condom distribution on the grounds that it would amount to legalizing homosexual activity. Meanwhile, a Public Interest Litigation (ABVA vs. Union of India and Others) was filed by ABVA in the Delhi High Court in April 1994 (Narrain & Bhan, 2005: 9-10). The petition urges that Section 377 should be repealed because it is unconstitutional. It violates right of privacy: fundamental right of life and liberty under Article 21 of the Constitution and is recognized by the 1948 International Convention on Human Rights; Article 14 of the Constitution as it discriminates against persons on the basis of their sexual orientation. Further, the petition says, Section 377 passed by the British in all its colonies including India, is archaic and absurd because having been drafted in 1833 and condoms be made available free of cost in the jail (Fernandez 2002: 165).

After filing this PIL, an advocate Janak Raj Jai filed a reverse petition to seek ban to supply condoms to the Tihar prisoners. He said in his petition that it would be violation of section 377 of Indian Penal Code. He also raised the issue of ethics and morality and opined that the 'immoral' act of homosexuality is not half as widespread in the jail as is projected, that moral instruction, rather than condoms, is the crying need of the hour (Joseph 1996). He also claimed that decriminalizing homosexuality would upset Mahatma Gandhi, as he was not in the favour of wasting the "male white fluid" (Vanita & Bhaskaran 2002: 15). However, the role of the government was almost passive in this controversy. It did not say anything about the constitutional validity of Section 377 and left this issue to the judiciary to decide.

Decriminalization and Criminalization of Homosexuality in the Courts :- In 2003, Naz Foundation (India) filed a petition in Delhi High Court to repeal section 377 and to decriminalize

consent based homosexuality among adults. Primarily, the High Court rejected the petition however it had to reconsider it after the direction of the Supreme Court. The High Court, in its judgment, located rights to dignity and privacy within the right to life and liberty guaranteed by Article 21 (under the fundamental Right to Freedom) of the Constitution of India and held that criminalization of consensual gay sex violated these rights. The Court also held that Section 377 offends the guarantee of equality enshrined in Article 14 (under the fundamental Right to Equality) of the Constitution because it creates an unreasonable classification and targets homosexuals as a class. The Court held that the word "sex" includes not only biological sex but also sexual orientation, and therefore discrimination on the ground of sexual orientation is not permissible under Article 15 (Naz Foundation v. Govt. of NCT of Delhi, 2009). The Court also noted that the right to life under Article 21 includes the right to health, and concluded that Section 377 is an impediment to public health because it hinders HIV AIDS prevention efforts (Naz Foundation v. Govt. of NCT of Delhi, 2009).

After this historical decision, fifteen Special Leave Petitions (SLPs) were filed in the Supreme Court against it. The Court accepted the petitions which were usually based on religious faith and cultural values. Finally, on 11th December 2013, the Court upheld the validity of Section 377 of the Indian Penal Code and overturned the decision of the Delhi High Court. Thus, homosexuality was considered as an offense again. The court stated that judicial intervention was not required in this case and left it to the Parliament because legislation belongs to the Parliament not to the judiciary. The Supreme Court gave following reasons in the support of this decision:

There is a presumption of constitutionality as far as a law passed by the parliament is concerned. The Indian Penal Code is amended many times after the Independence. However, Section 377 remained untouched. This shows that the parliament did not think it proper to delete or amend the section (Suresh Kumar Koushal vs. Naz Foundation, 2013).

The doctrine of severability (where a part of a section can be struck down in so far as it is inconsistent with the constitution) cannot be applied in this case. The part relating to homosexuality cannot be struck down without affecting the whole section which is the only section which covers paedophilia and tyke sexual abuses.

Section 377 is gender neutral and neither condones nor mandates the treatment meted out by the police to the LGBT community. It does not make a classification between homosexuals and heterosexuals. Further, it does not infringe the right to life guaranteed under Article 21 (Suresh Kumar Koushal vs. Naz Foundation, 2013).

Transgender and Section 377 :- Whereas the Supreme Court kept the personal life of Gender and Sexual Minorities in a tough situation by criminalizing homosexuality, it comparatively showed modest and enabling attitude towards transgender in particular. Supreme Court recognised them as “the third gender”. The court considered them as socially and educationally backward class (National Legal Services Authority vs. Union of India, 2014), it directed the centre and state government to take appropriate action to uplift their status and to prevent discrimination. However, transgender people, in general, are the part of queer identity. Their case becomes quite complex especially in India because they share common sexual practices as a homosexual. Due to cultural factors, most of the transgender manifest their identity as Hijra. Hijra lack the artificial vagina. They remove their male genital in the castration ritual but without making artificial vagina (Talwar, 1997: 73). From this aspect, their sexual activity falls under the section 377. Their marriage also does not fall under any marriage law

in India since all deal with the marriage between the people of binary gender.

Conclusion :- Section 377 of the Indian Penal Code is one of the most controversial statutes of Indian Penal Code that has been widely criticized. Critics and experts always raised question on its relevance. Those who are against this statute have recognized this as the statute of middle age and hence, not belong to modern era. They also raise the issue of human rights violation, police atrocity, and social stigma against the homosexual people in India through this law. This section is also problematic for HIV Prevention pregrammes. However, laws in most of the cases are the reflection of society, culture and attitudes, therefore section 377 is not just a law against homosexuality in India, in fact, section 377 exist in Indian Penal Code due to anti-homosexual attitude of society and its elites.

Section 377 has also been used against paedophilia and child molestation. Therefore it provided safeguard for children, but it is not child specific law therefore unable to deal with child sex abuse seriously. In 2012, the Protection of Children from Sexual Offences Act (POCSO Act) was passed that provided wider security for children from child sex abuse. After introduction of this law, questions were raised again against the validity of section 377. In February 2016 the Supreme Court accepted curative petition against its judgment that criminalized homosexuality in 2013. Supreme Court also raised the hope of LGBT right activists through its decision on right to privacy in August 2017.

Reference :-

- Pattanaik, D. (2000). Did Homosexuality exist in ancient India? Retrieved November 19, 2017, from http://devdutt.com/articles/applied-mythology/queer/did-homosexuality-exist-in-ancient-india.html
- Gupta, A. (2006, November 18). Section 377 and the Dignity of Indian Homosexuals. Retrieved March 10, 2016, from http://www.epw.in/system/files/pdf/2006_41/46/Section_377_and_the_Dignity_of_Indian_Homosexuals.pdf
- Puri, J. (2016). SEXUAL STATES: governance and the struggle to decriminalize homosexuality in india. S.l.: ORIENT LONGMAN.
- Bhaskaran, S. (2002). The Politics of Penetration: Section 377 of the Indian Penal Code. In R. Vanita (Ed.), Queering India: same-sex love and eroticism in Indian culture and society (pp. 15-29). New York : Routledge.
- Hyam, Ronald. Empire and sexuality: the British experience. Manchester University Press, 1990.
- Joseph, S. (1996, August 17). Gay and Lesbian Movement in India. Retrieved March 12, 2016, fromhttp://www.epw.in/system/files/pdf/1996_31/33/perspectives_gay_and_lesbian_movement_in_india.pdf
- Narrain, A., & Bhan, G. (Eds.). (2005). Because I have a voice: queer politics in India. New Delhi: Yoda Press.
- Fernandez, B. (2002). Humjinsi: a resource book on Lesbian, Gay and Bisexual Rights in India. India: India Centre for Human Rights and Law.
- Naz Foundation vs. Govt. of NCT of Delhi (Delhi High Court July 2, 2009).
- Suresh Kumar Koushal vs. Naz Foundation (December 11, 2013).
- National Legal Services Authority vs. Union of India (April 15, 2014).
- Talwar, R. (1999). The third sex and human rights. New Delhi: Gyan Pub. House

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

GENDER IDENTIFICATION: AN ASSESSMENT OF THE ATTITUDE OF SCHOOL TEACHERS TOWARDS GENDER ROLES

Anupriya Dixit
JRF (Department of Sociology), Mata Jijabai Government Girls P.G. College, Moti Tabela Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore

ABSTRACT :- This paper light on the assessment of the attitude and belief system of teachers towards the conventional gender roles of senior section of a private school of Indore city. The researcher has endeavored to reveal the degree of teacher's affinity towards the gender roles that are commonly associated with the conventional stereotypical setup of society, chiefly visible in Indian families as the pattern of authority, division of labor in family, sharing and division of responsibilities of family, patterns of leadership, level of accomplishments at one's workplace, mutual consent during sexual activities, right of education, prioritization of career and education based on gender, presence of various bias related to menstrual hygiene and segregation, etc. Primary data, for this purpose, has been conducted by filling out a questionnaire survey 20 respondents (teachers) out of which 5 are females and 15 are males of senior section of a private school. This is supremely significant to gain knowledge of the degree of influence of these stereotypes on a student's psychology and value system when imparted through teachers before attempting to make amends in the education system to ensure a gender neutral environment.

Key words :- Gender Identification, Belief system, Gender Roles, Division of Labor

INTRODUCTION :- Sex is a biological fact. Gender, however, is a social construct. Gender is the range of characteristics pertaining to, and differentiating between masculinity and feminity. Depending on the context, these characteristics may include biological sex (i.e. the state of being male, female, or an intersex variation which may complicate sex assignment), sex based social structures (including gender roles and other social roles) or gender identity.[95] In every society, a set of gender categories exist. These gender categories are used as a base for construction of social identity of an individual which is relative to the others members of society. Every gender is associated with certain gender roles and expectations that an individual of a particular gender has to adhere to. These roles and expectations are taught to an individual through socialization. Gender identity is one's personal experience of one's own gender[2] Gender identity refers to an individual's personal sense of identity as masculine or feminine, or some combination thereof. One's innermost concept of self as male, female, a blend of both or neither – how individuals perceive themselves and what they call themselves. One's gender identity can be the same or different from their sex assigned at birth.[3]. The sociology of gender examines how society influences our understandings and perception of differences between masculinity (what society deems

[95] Udry, J. Richard. 1994. The Nature of Gender. Demography. 31(4); 561-573

2. Morrow. F. Deana and Lori Messinger. (2006). Sexual Orientation and Gender Expression in Social Work Practice. 8. ISBN 0231501862

3. Campaign, Human Rights. "Sexual Orientation and Gender Identity Definitions - Human Rights Campaign

4. Campaign, Human Rights. "Sexual Orientation and Gender Identity Definitions - Human Rights Campaign"

5. Sadker, D. Sadker, M. (1994) Failing at Fairness: How Our Schools Cheat Girls. Toronto, ON: Simon & Schuster Inc

appropriate behavior for a "man") and femininity (what society deems appropriate behavior for a "woman"). [4]. There are distinct expectations for boys and girls in society and any diversion from these on the part of child is discouraged. Children are taught this reality at a very young age. This notion has been confirmed on the basis of enormous cross cultural studies that usually by the age of two or three children are made aware of their gender roles. At four or five, most children are firmly entrenched in culturally appropriate gender roles. This learning takes place through the process of socialization in which they are taught in a certain manner that is in accordance and conformity to the values, beliefs and attitudes of society. Since, school is the second most important agency of socialization, it is important to evaluate the presence of gender bias in various entities of a school namely teachers, staff, clerical department etc. Since teachers are the direct agents of communication with students, they play a pivotal role in the gender socialization of students. Many studies have confirmed this such as a study conducted by Sadekar and Sadekar noted four types of teacher responses to students: teacher praises, providing positive feedback for a response; teacher remediates, encouraging a student to correct or expand their answer; teacher criticizes, explicitly stating that the answer is incorrect; teacher accepts, acknowledging that a student has responded. The Sadkers found that boys were far more likely to receive praise or remediation from a teacher than were girls. The girls were most likely to receive an acknowledgement response from their teacher. (Sadker, 1994) These findings are confirmed by a 1990 study by Good and Brophy that "...noted that teachers give boys greater opportunity to expand ideas and be animated than they do girls and that they reinforce boys more for general responses than they do for girls." (Marshall, 1997)"Sitting in the same classroom, reading the same textbook, listening to the same teacher, boys and girls receive very different educations." (Sadker, 1994) In fact, upon entering school, girls perform equal to or better than boys on nearly every measure of achievement, but by the time they graduate high school or college, they have fallen behind. (Sadker, 1994) Sadker, D., Sadker, M. (1994) Failing at Fairness: How Our Schools Cheat Girls. Toronto, ON: Simon & Schuster Inc"Over the course of years the uneven distribution of teacher time, energy, attention, and talent, with boys getting the lion's share, takes its toll on girls." (Sadker, 1994)"Until educational sexism is eradicated, more than half our children will be shortchanged and their gifts lost to society." (Sadker, 1994)[5]The socialization of gender within our schools assures that girls are made aware that they are unequal to boys. Every time students are seated or lined up by gender, teachers are affirming that girls and boys should be treated differently. When an administrator ignores an act of sexual harassment, he or she is allowing the degradation of girls. When different behaviors are tolerated for boys than for girls because 'boys will be boys', schools are perpetuating the oppression of females.Teachers socialize girls towards a feminine ideal. Girls are praised for being neat, quiet, and calm, whereas boys are encouraged to think independently, be active and speak up. Girls are socialized in schools to recognize popularity as being important, and learn that educational performance and ability are not as important. "Girls in grades six and seven rate being popular and well-liked as more important than being perceived as competent or independent. Boys, on the other hand, are more likely to rank independence and competence as more important." (Bailey, S. (1992) How Schools Shortchange Girls: The AAUW Report. New York, NY: Marlowe & Company (Gender Bias in Educationby Amanda Chapman of D'Youville College)

It is utmost important that the educators are free from the bias of gender. Therefore, an evaluation of their percpective is required if we want to look out for ways to prevent imparting of gender biased education to the students. Thus, an effort has been put by the researcher to evaluate the attitude of senior teachers towards conventional gender roles.

PURPOSE OF STUDY :- In this study, the aim is to assess and analyze the presence of degree of bias of senior section teachers of a private school towards conventional gender stereotypes.

AREA AND METHODOLOGY OF STUDY :- With a view to obtain firsthand information, a field survey of a private school of Indore city (Shiv Convent School) was conducted and 20 teachers of senior section (5 females and 15 males) as well as 15 teachers have been selected as samples. Conclusions have been drawn on the basis of analysis of primary data collected from respondents using a questionnaires whereas various research papers and thesis have been used as a secondary source of data collection.

INTERPRETATION AND ANALYSIS :-

Table shows an evaluation of response of conventional gender stereotypes among the teachers.

S. No	BASIS	AGREE		DISAGREE		TOTAL (%)
		MALE (no and %)	FEMALE (no and %)	MALE (no and %)	FEMALE (no and %)	
1	The job of a father is to earn money and that of a mother to look after household	14	4	1	1	100
2	There are less women than men technology sector	10	5	5	0	100
3	There are less men than women in the arts sector	12	4	3	1	100
4	It is the duty of a man to participate in the household chores	2	3	13	2	100
5	Having a male or a female principal makes no difference	7	2	8	3	100
6	Boys are prioritized over girls to receive further education in difficult financial situations in family	13	5	2	5	100

7	In employment, more attractive women get better chances	14	1	1	4	100
8	Indians prefer to work with a male boss	14	3	1	2	100
9	The world will be a better place when women leadership	8	4	7	1	100
10	A wife does not need to work if her husband is working	12	2	3	3	100
11	Textbooks in India talks more about boys than girls*	9	5	6	5	100
12	Textbook in India contains more pictures and references of boys than girls	10	4	5	1	100
13	A woman shouldn't work if her work obstructs the proper upbringing of the baby	15	3	0	2	100
14	A man is equally responsible for taking care of his baby	4	2	11	3	100
15	A man is equally responsible for the household chores	2	1	13	4	100
16	A housewife does not need permission by her husband if she wants to go out	6	3	11	2	100
17	A woman should never deny sex to her husband	12	2	3	3	100

18	A housewife does not need permission by her husband if she wants to work	4	2	11	3	100
19	Community leaders must include women	10	5	5	5	100
20	A women is impure in her periods and should be isolated	14	5	1	0	100

Following conclusions can be drawn from the analysis of the above table :

1. Most of the teachers including both male and female are believers in the conventional division of labor in family. Most of them (93.3% male and 80% female) are of the opinion that a man's primary job is to earn money and a woman should look after the family. It means thar although they do not mind a diversion in these duties but a complete exchange of household duties is not acceptable.
2. Majority of them believe that there is a dominance of men and women in technology and arts sector respectively which reinforces the notion that math is for boys and arts is for girls.
3. Majority of male teachers (86.66%) disagree that doing household chores is a part of a man's duty while around 60% female teachers support the notion of household chores being a part of a man's job. This variation of expectations is creating discord between the members of the family.
4. All female teachers believe that the gender of a superior, boss or principal is independent of their professional performance whereas male teachers give precedence to a male superior.
5. There is unanimity among the teachers (86.6% males and 100% females) on the belief that a boy's education is often prioritized over a girl's in case of a financial crisis within a family.
6. Majority of males teachers believe that a woman's beauty and charm play a major role in her academic success whereas female teachers didn't find a correlation between the two.
7. Majority of teachers (66.66% males and 100%) females agree that textbooks inn India contains more pictures and references of boys than girls especially in case of math and science textbooks, boys are depicted as doers of everything whereas girls are either out of picture or shown as a bystander.
8. Majority of teachers (100% males and 60%) females agreed that a woman shouldn't work if it obstructs the upbringing of her children. This reinforces the popular belief that it is a woman's job to raise the children.
9. Majority of teachers (86.66% males and 80% females) disagreed that a man is equally responsible for the household chores.
10. Majority of teachers (93.33% males and 100%) conformed to the menstrual taboos prevalent in Indian society. They agree that a woman is impure during her periods and shouldn't enter the kitchen or worship area.

CONCLUSION :- It is evident from the analysis and interpretation of above data that teachers are deeply influenced by the conventional gender

stereotypes existing in our society, However, there is a slight improvement due to spread of education and awareness, that has affected the teachers in altering some of the stereotypes regarding work culture and behavior, patterns of leadership, division of duties and responsibilities in a household but majority of stereotypes regarding conventional figure of authority in family, the notion of subordination and permissibility of doing a job, taboos associated with menstruation ,sexual consent have become a part of their value system. Although girls were found to be less attached to the stereotypes as compared to boys but there is a long way for them as well to become a gender neutral individual. A gender neutral education policy and curriculum is the need of the hour along with application of gender neutral educators.

REFERENCES :-

1. Anna Reimondos and Peter McDonald.Gender and Reproductive Health Study Attitudes to gender roles among school students Ariane Utomo, Iwu Dwisetyani Utomo.
2. Prior. Sarah. (2012)Schooling Gender:Identity Construction in High School.Arizona State University
3. Behera, Binita. (2002). Schooling and the Construction of Gender Identities: A Study of a Co-Educational School in Orissa, Jawaharlal Nehru University.
4. Campaign, Human Rights. "Sexual Orientation and Gender Identity Definitions - Human Rights Campaign
5. Mishra, and others. (2012). Socialization and gender bias at the household level among school attending girls in a tribal community of the Kalahandi district of eastern India. Anthropological Notebooks. Slovene Anthropological Society. 18:2
6. Morrow. F. Deana and Lori Messinger. (2006).Sexual Orientation and Gender Expression in Social Work Practice. 8. ISBN 0231501862

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Siachen : Search for Peaceful Solutions

Ajaz Ahmad Khan
Research Scholar Ph.D. SoS in Political Science Vikram University Ujjain (M.P.)
Dr. Virendra Chawre
Lecturer, SoS in Political Science Vikram University Ujjain (M.P.)

As comes to pass in just about all disputes and disagreements among nations, sundry endeavours come into existence by dint of intervention of allies, friends and just pure good doers to conclude with the peaceful resolutions. These are over and over again well-meaning attempts however some are demonstrably linked to agendas out of sight. Some of the proffered solutions are well founded on technical facts, but fail to take into account the cultural and political context in which the conflict is being played out. However, some other conclusions are desperately out of touch with realism. Some others are products of vertical unawareness. There are yet others which attempt to apply old patterns to new variances and novel divergences, on the hypothesis that if they worked elsewhere, they can be used all over the place. There are also those who accept as true that if a part of the predicament is resolved, it would solve the large problem as well.

The prime quandary with the Siachen issue has been that with the passage of time there has been a long-lasting change in the context of the disagreement. On the preliminary theater, it was an imprudent comeback by one side to the action of the other. For the reason that it was Pakistan that argued a large swathe of what India reflects on its territory. Indian forces were in the area of Karakoram pass since 1947. On the contrary, India avers that the Line of Control should make longer north from NJ 9842 along the Saltoro range. It, for that reason, emphasizes that after the Simla Agreement, it has power over the Karakoram cut-off point from Sia-Kangri to the Karakoram pass. What's more, it throws out the agreement of 1963 by which Pakistan relinquished the Indian Territory in the area to China. It views the Line NJ 9842 Karakoram pass as invalid and worthless and pencilled in devoid of rhyme or reason. Pakistan claims it drew the line by joining NJ 9842 which it shares with India at one end by the Simla Agreement and the Karakoram pass shared with China at the other end by the 1963 conformity.

India crossed the threshold of the Siachen glacier area, where it had not okayed its own mountaineers to clamber, after Pakistan consented to far-off mountaineers into the region. Pakistan dreaded an Indian wisecrack by occupying the main passes on the Saltoro range and from then on graphed to occupy them itself. The Indian side learnt of Pakistan's plans and pre-empted it by dispatching its military to the passes first. Subsequently, the conflict has been about retaining control over the Saltoro range. In the course of action, the militaries of India and Pakistan have demonstrated a good number of surprising skills in fighting. To state that the conflict costs each side a great deal in terms of men and material and raises their defence costs is an understatement.

The uppermost battlefield in the world, the Siachen Glacier has witnessed conflict between India and Pakistan for more than two decades, so far costing hundreds of casualties caused mostly by adverse climatic conditions and harsh terrain rather than military skirmishes. This is not to mention the continuing conflict's enormous drain on the national exchequers of both sides not withstanding mutual acknowledgment of the conflicts colossal costs in terms of men and material, several rounds of

negotiations have failed to yield any substantial result a situation primarily due to the long history of mutual distrust and antagonism.

A way out to the conflict cannot be found unless India and Pakistan both want one. One can start by asking if either side wants a solution. A solution to a military conflict can come about due to either military or political compulsions. If one or both sides face a military outcome they cannot live with, the conflict can be ended by mutual consent. If the military position of either side does not pose a threat, the positions can be disengaged. If the territory in difference of opinion does not have a major premeditated consequence, a solution can be reasonable. There is wide accord on the limits of strategic improvement which accrues from a major and expensive military presence on the Saltoro. There is a growing body of military opinion that the strategic value of holding defences in the Saltoro is not matched by the effort required for it.[1]

"Lt-Gen. (Retd) I.S. Gill, wrote, the amounts of money wasted by both sides is very large indeed. There is nowhere that either side can go in this terrain. You cannot build roads on glacier, which are moving rivers of ice. We have no 'strategic tactical advantage' in this area and nor can Pakistan. Ask any officer who has been on the Glacier what Pakistan will do if we pull out and he will tell you at once that Pakistan will do the same. We must withdraw immediately and unilaterally and save wastage of money which we cannot afford-estimated at Rs 30,000 crores since 1985."[2]

A similar opinion was expressed in the news magazine India Today. It termed the military commitment in Siachen as a ambassadorial catastrophe a waste of such degree that it should be evoked as a crime not in favour of humanity. It called for a negotiated solution of what it termed a preposterous war. On the foundation of a survey-the numbers surveyed were not disclosed-the magazine offered a solution. Siachen veterans (were) views that India, which dominates the heights and has proved its military incomparability in the region, can have enough money for a one-sided withdrawal. In all likelihood, the Pakistan will go behind the suit.[3]

Lt-Gen. (Retd) M. L. Chibber who launched India's pre-emptive operations in Siachen in 1984, had earlier written confirming that the glacier has no strategic significance.[4]

He is now of the opinion that in view of Pakistan's involvement in inciting violence in Jammu and Kashmir, Siachen can no longer be a starting point for negotiations between India and Pakistan. An interesting dialogue on the possibility of a solution based on mutual pull back is reported by Lt-Gen. (Retd.) Jahan Dad Khan of Pakistan. He had asked General V. N. Sharma at an informal gathering about the likelihood of a solution. The former Indian Army Chief is reported to have said, 'India is prepared to pull out from Siachen if you are prepared to maintain in same number of troops on the glacier as India is doing.[5]

This quote may have been inadequately phrased by Lt-Gen. Khan, but unmistakably conveys the Indian sentiment that there should be a measure of reciprocity if a solution is to come about. On the other hand, there is also a strong opinion against an Indian pull out. Maj-Gen. (Retd.) Shiv Sharma, who was the Commanding General in Siachen in 1984, is of the opinion that a pull out is unacceptable and dangerous.[6]

It is apparent that neither India nor Pakistan secures a strategic advantage by contesting the possession of the Saltoro range. Neither also faces a military threat to the territory it occupies in Jammu and Kashmir from over the Saltoro range India and Pakistan therefore portray the issue in terms of political or non-military compulsions. A strategic veneer is given to what is actually a political necessity for continuing the conflict. In a media article also put out on the Indian Embassy Washington DC website, the argument is put forth that China will be able to manage the Indo-Pak conflict to Pakistan's

advantage if India accepts the line Nj 9842-Karakoram pass. The article asks,

"Can there be any doubt that Pakistani control of the strategically important (Karakoram) pass would be China managed? By the same token, can there be any doubt about the importance of India retaining firm control of the Siachen glacier? And, considering the stake for Beijing, can there be any doubt about where Beijing's active sympathy must lie in Pakistan's Siachen-targeting Kargil adventure? . . . a peaceful resolution of the Siachean situation . . . is hardly feasible without Islamabad's liberating itself from abject waiting on China-based on whatever notion".[7]

The argument put out in this article makes the solution of the Siachen issue conditional on the most unlikely prospect of Pakistan changing its relationship with China. Obviously, the author is willing to add more difficult riders to the Siachen solution in order to offset the growing opinion on the area's limited strategic value.

If India and Pakistan are both unwilling to search for ways to end the conflict, there could be other possible means to limit or contain it. In the seventh round of talks in 1998, India had offered a ceasefire as a first step to reduce the dangers of the conflict getting out of hand. Pakistan turned down the proposal. It later turned out that Pakistan had plans to widen the conflict in new ways. It had probably planned to start a limited conflict on the Line of Control, seize some valuable territory and then seek a bargain on Siascen in lieu of returning the territory. The pointless conflict in Kargil a year later was yet to take place. During the Kargil conflict, Pakistan had quite categorically linked its intrusion into Indian Territory with India's entry into the Siachen-Saltoro sector. Pakistan's Foreign Minister Sartaj Aziz was quoted to have said in London that the Nawaz Sharif government would appeal to the 'mujahidin' to pull back, 'only if India agrees to revert to the 1972 positions on the Line of Control when the Shimla Agreement was signed'. An Indian Ministry of External Affairs official responded by saying; 'We reject the linkage between Kargil and the Siachen Glacier completely'.[8]

Over the years, some other ways of minimizing the dangers of the Siachen conflict from enlarging into a large military operation over a wider area have been examined. The possibility of introducing Confidence-Building Measures (CBMS) in South Asia and particularly in the Indo-Pak stand-off has been assiduously pursued in the west.

The Washington, DC based Henry L. Stimson Centre led by Michael Krepon, has encouraged this process over the years through its valuable studies. Its efforts have been instrumental in creating awareness about the CBMS in the subcontinent. There have also been other attempts to find ways to build confidence between adversaries, in a situation almost devoid of mutual trust and confidence.

CBMS are mutually agreed and verifiable measures which antagonist adopt and adhere to, in order to avoid conflict. Such measures over time create an environment of confidence and help to resolve the causes of the conflict. CBMS are worked through carefully planned stages of conflict avoidance, confidence-building, and, finally, of strengthening peace. CBMS have been called a post-Cold War growth industry.[9] They involve prior information of military movement and man oeuvres, establishment of hotlines between senior commanders, open skies accords by which one side can fly its observation aircraft over the other's territory and the presence of neutral observers CBMS are primarily military measures to create and sustain confidence between antagonistic militaries. They prevent the risks inherent in hair-trigger alerts, in action resulting from misperceptions of each other's intentions and dangers arising out of the two sides not being in communication with each other. These measures presuppose a political

commitment to peace and stability. If the political leadership is determined to keep peace as in important factor towards reducing tensions and continuing to negotiate towards a solution, CBMS ensure that military forces do not disturb the equilibrium by hasty and dangerous actions through errors of judgment.

The Indian experience with CBMS has been unique in some ways. India has operated CBMS with Pakistan for some decades. There is a hotline between Directors General of Military Operations of the two countries. The two armies face each other directly and in some cases are positioned 'eyeball to eyeball' all along the Line of Control. There are agreements by which the two countries are supposed to inform each other of major military exercises and about aircraft flying near the borders. The military commanders in the field meet each other when required. There are annual meetings between senior officers of the paramilitary forces. When there is serious violation of ground rules between the two armies, these are settled quickly by local commanders. There is a commendable degree of cooperation between the two armies in disaster relief and on humanitarian issues, e.g. on casualty evacuation and floods. The existence of these CBMS has however not prevented conflict from continuing on the Line of Control and beyond it on the Saltoro. India also works similar CBMS on the disputed borders with China. The Indian experience of CBMS with the Chinese is positive and constructive to the extent that in the last few years it has been possible to pull back some of the forces.

Why is that a similar set of CBMS work quite adequately on one front and not on another? The answer lies in the political commitment to maintaining peace and tranquillity. On the India-China frontier neither side particularly the political leadership desires a military conflict. In fact each side makes a special effort to ensure that disagreements and accidental skirmishes are quickly and effectively resolved. While the two militaries closely watch each other's moves on the border's confidence levels on containing the conflict potential remain high. The political imperative for peace prevails on the military CBMS between India and China.

On the India-Pakistan side, confidence-building measures have neither kept peace nor built confidence. The political imperative for peace is low. Neither side has found advantage in laying the foundation of military peace. The militaries on the ground can and often do put an end to skirmishes, put ongoing conflicts are continued because they are found to be expedient in domestic politics. The conclusion is clear enough. CBMS are merely instruments which can be useful if there is the necessary political will to make them work. In the absence of the political imperative for peace, CBMS do not by themselves deliver the results. On the other hand the political propensity to start and sustain a conflict can lead to the misuse of CBMS to conceal hostile acts and intentions behind a screen of technical explanations. An additional reason for the ineffectiveness of CBMS between India and Pakistan has been the absence of an inspection and verification regime. Inspections and challenge inspections are at the heart of the CBMS concept. India and Pakistan have put into place a series of CBMS but have not agreed and are unlikely to agree to inspections and verifications in the foreseeable future.

In the light of the Indian express of CBMS it is interesting to examine those CBMS which have been recommended by well meaning analysts. One solution offered is to return to the 1989 agreement. The author of this proposal feels that there is no disagreement on the mode of monitoring or on the positions to which forces would withdraw. It is further recommended that the '1992 Open Skies Treaty… might be emulated to advantage in a defined zone, such as the Siachen area … agreement on open skies in the Siachen glacier region would help enormously in generating the mutual trust needed to put this issue to res.' The author wraps it up by saying,

'Siachen issue is ripe for settlement. The mechanics are all but agreed. Only a political decision to execute the plans remains to be taken.'[10]

It is obvious that the proposals made by A. G. Noorani are predicated on the two side's willingness to end the conflict. That political imperative for peace is the vital but missing ingredient in the proposals. As has been –indicated earlier, the breakdown of talks in 1989 or in 1992 was not on account of any flaw in the solutions but because of the political fears of various governments.

The problem with the idea of CBMS is that there is the risk of treating them as the solution rather than as means to finding a solution. As in all conflicts, solutions are not difficult to find. The logic of a solution poses less of a difficulty than its emotional and psychological dimensions. If logic were all, most conflicts around the world would not have begun and those that did would have long been resolved.

An otherwise well-argued case for disengagement is expounded in a paper from the Cooperative Monitoring Centre at the Sandia National Laboratories in the US.[11] The main argument of the Occasional Paper is that, a peacefully negotiated settlement of the Siachen conflict appears essentially logical since the glacier's inhospitable terrain will continue to deter Indian and Pakistani attempts at acquiring military predominance.

The political compulsions which thwarted the many rounds of negotiations on Siachen are mentioned in the paper. However, in the face of this quite formidable evidence of political unwillingness by both sides, the authors recommend measures which can lead to a settlement.

The two steps or stages commended are: (1) an accord to de-escalate hostilities and (2) an understanding to disengage military forces or an agreement to demilitarize the area. De-escalation is to involve prior notification of troop notification, flights or logistic convoys a hotline link and observation posts to monitor ceasefire accord. Disengagement is explained as including CBMS like prior notification over flights and flag meetings between local military commanders. Disengagement is termed as a conflict resolution threshold, a step ahead of the conflict management step of de-escalation. Demilitarizing is explained as the complete vacation of troops and stores from the entire area destruction of all stores, posts, bases and prohibition on patrolling and aerial reconnaissance. The paper predicates its proposals on a series of multi-tiered verification measures like aerial sensing, satellite imaging, ground and optical sensors and other technical means.

The Cooperative Monitoring Centre brought out another paper which examined technical means for confidence-building on the Sino-Indian border areas.[12] The paper identifies applicable cooperative monitoring techniques and develops models for possible application on the Sino-India border. It takes into account the 1993 and 1996 Sino-Indian agreements on maintaining peace along the Line of Actual Control and the existence of CBMS which have worked effectively. The authors use two sample locations of Spanggur Lake and Spanggur Gap to offer three models to reinforce confidence between the two countries and their militaries in order to prevent conflict through misunderstanding.

The Short-Term Model includes flag meetings between local military commanders, installation of reliable communications and shared collection and dissemination of data for weather and disease-cum-disaster relief. The Medium-Term Model involves information on military exercises, flights by military aircraft and disengagement from forward posts. The use of modern technology is recommended for this model. The Long-Term model incorporates more intrusive forms of cooperative monitoring. It includes ground

sensors, aerial surveillance and limited on site inspections to jointly monitor selected garrisons for levels of forces and military equipment. The Sandia Laboratories has also mooted a proposal for creating a bilateral or international Endeavour in the form of a Siachen Science Centre.[13]

The three examples given above share a common base of beliefs. They use the same tools e.g., ceasefire, disengagement, demilitarizing, surveillance, open-skies arrangements, sharing of information and monitoring through verification by using the latest technical means. Collectively, they run through the gamut of CBM instruments which have been known and used to far. If CBMS have not worked between India and Pakistan the fault does not lie in the CBMS but elsewhere. It has been aptly said the confidence is the product of much broader patterns of relations than those which relate to military security. In fact, the latter have to be woven into a complex texture of economic, cultural, technical and social relations if the military factor is to be contained from dominating international relations.[14]

If CBMS are not linked to the issues which J.J. Holst refers to, as is evident between India and Pakistan it merely amounts to using the form without obtaining the substance of the CBM concept. There is consequently a belief that CBMS only help in creating a façade of good intentions. Pakistan's military ruler General Pervez Musharraf in an interview given to The Hindu said that CBMS only serve a cosmetic purpose. A UN report points to this by indicating that 'The existing record of CBMS is ambiguous. CBM in some context have proved feasible and beneficial, where as in South Asia there is a certain disaffection with the very notion of CBMS.'[15]

An examination of the reasons for their limited success has shown how essential is the political imperative for peace. The International Institute for Strategic Studies at London concluded that CBMS are only as strong as the fundamental political will for compromise that lies at the heart of any successful negotiations. Without pre-existing détente, CBMS can be of little value. They cannot create détente and under certain circumstances, they can even reduce movement in this area.[16]

In the specific context of Indo-Pak hostility, a qualitatively different recommendation is about introducing CBMS that are suited to the South Asian environment. The success of any CBMS however depends up on removing the perceptual blockage and the enemy myth which prevents the two states from negotiating on a non-zero basis.

The failures of CBMS in military, economic and diplomatic areas in the past has led the authors of the paper to emphasize a wholly non-military CBM for South Asia. They are convinced that, 'the real route to confidence building lies in encouraging people to people interaction.'[17]

Before the Kargil War, the late J.N. Dixit once observed: "India should have shown more flexibility. The dispute should be solved in stages. Both sides should move back and sign a standstill agreement not to go up again. Then progress can be made towards a solution."[18]

Kent L. Biringer argues that India might eventually withdraw from here. He says, 'The high cost in financial and human terms of continuing this confrontation makes it an excellent candidate for cooperation while minimizing strategic or military disadvantage.'[19]

G. Parthasarthy, former high commissioner to Pakistan and a security expert, argues strongly against the economic logic for withdrawal, saying India has borne the burden for so long and can continue to do so indefinitely and any country that sees territorial integrity in economic terms will cease to exist.[20]

Indian defines secretary Ajit Kumar said a ceasefire in Siachen was necessary in order to address the altered military situation in the area

and to "freeze" troop positions of both sides in order to defuse tensions.[21]

A senior Pakistani diplomat speaking at a press conference after the November 6, 1998, talks said a ceasefire in the region would bring no peace and tranquillity unless the troops were disengaged.[22]

The search for solution to the Siachen conflict cannot be confined merely to installing CBMS. India and Pakistan need to demonstrate a measure of military pragmatism and political confidence. There is need for transparency on both sides and willingness to meet the concerns of the other. This requires the two countries to make concessions in accepting a military disengagement and in discarding political and territorial mindsets. Pakistan has in the past come forward with proposals on mutual withdrawal which in fact amounted to an Indian pull back. India viewing the proposal as disingenuous asked that both sides indicate the military positions from which they could pull out as part of the disengagement. Pakistan considered it as an Indian attempt to legitimize its dominant position on the Saltoro to bargain for a new delimitation of the Line of Control beyond NJ 9842. General Zia offered a No-War Pact and Indra Gandhi responded with a Treaty of Peace. Pakistan claimed territory on the basis of its having had control over Baltistan and the Sino-Pakistan boundary agreement of 1963. India rejected both arguments and referred to the mutually agreement formulation of the Line of Control alignment, 'thence north to the glaciers'.

India offered a ceasefire and Pakistan turned it down. Pakistan linked its actions in Kargil (1999) to Indian actions in Siachen (1984). India said it occupied the Saltoro to prevent Pakistan from doing the same. This measure-counter measure approach to conflict resolution is unworkable.

It has been suggested that India should pull out unilaterally from the Saltoro, after informing the UN of the positions it had held since 1984. If Pakistan then occupies the heights, it should be treated as an infringement and India can then take any military measure it chooses. This recommendation though well meant disregards the real possibility of Pakistan occupying the vacated area since it was not party to any agreement to India on the issue. That eventuality would create its own dynamic of a reaction by India either on the Saltoro or elsewhere. That would prove to be a recipe for another conflict whose outcome can only be dangerous and unpredictable.

A limited withdrawal by India has also been talked about anywhere India retains its position on and around the key passes, but vacates all other position unilaterally. It is felt that Pakistan's occupation of the areas vacated by India would be a costly endeavour and could be punished through artillery and if needed aerial bombardment. The problem with this proposal is that it will only succeed in escalating the conflict. The example of Kargil is relevant in the context of the unilateral and bilateral initiatives which can be thought of. There was the beginning of the political imperative for peace operating in the Lahore process in 1999. The two Prime Ministers were apparently convinced of the peace imperative. The military in Pakistan as in now widely agreed, was not convinced of its relevance and scuttled the peace initiative by its actions in Kargil.

It is clear that only a comprehensive package where both sides agree to disengage forces and move back to mutually decided, equidistant and non-threatening positions backed by the undertaking not to conduct any kind of military mountaineering or other kind of activity in the designated area would have a chance to succeed. This requires both countries to be transparent by indicating their current and future positions on ground and maps by agreeing to and abiding by joint verification processes and by using other well-known technical and human measures which are the part of CBM process. All this can

only come to pass with the political imperative for peace impacting on the military in Pakistan and the political leadership whether ruling or in opposition of India. The prospect of that happening depends largely on the confidence of the political leadership in both countries in being able to come to terms with the ultimate round reality of the Siachen-Saltoro dispute.

The ground actuality is that the variance is likely to keep on for the foreseeable future if not reciprocally settled. The only upshot would be of both sides progressing to risk a generously proportioned inconsistency of expending human and material resources and worst of all gratuitously wasting the lives of soldiers in good faith.

References :-

1. Indian Express, 7 November 1989, assessed that most Siachen veterans say both sides should stop the conflict and pull out from the area.
2. Lt-Gen. Gill, I.S. (1997) 'Pull-out from Siachen,' letter to the Editor of the Hindu, 5 March.
3. Sidhu W. P. S. (1992) 'Siachen: The Forgotten War,' India Today, 31 May.
4. 'Solving Siachen,' (1989) editorial in Times of India, 14 June, and 'Siachen Solution Will Help India, Pak,' (1989) Times of India, 13 June.
5. Lt-Gen. (retd.) Khan Jahan Dad, 'Pakistan-Leadership Challenges,' (1999) OUP, Pakistan.
6. Maj-Gen. (retd.) Sharma Shiv, 'Siachen: A Fresh Perspective', (1993) Defence Today, New Delhi, August.
7. Puri Rakshat, "Strategic Importance of Siachen," (1999) Hindustan Times, 7 July.
8. Hindustan Times, (1999) 'Pak Backtracks, Links Pull-out to Siachen,' 8 July.
9. Krepon, McCoy, and Rudolph, (Eds). (1993). A Handbook of Confidence Building Measures for Regional Security, the Henry L. Stimson Centre, Washington DC, September.
10. Krepon, M. and Sevak, A., Manohar, (Eds). (1996) Noorani A.G. 'CBMS for the Siachen Glacier, Sir Creek, and Wular Barrage,' IN Crisis Prevention, Confidence Building, and Reconciliation in South Asia, New Delhi and in Occasional Paper 16 of same title from the Henry L. Stimson Centre, Washington DC, April 1994.
11. Ahmad Samina and Sahni Varun, (1998) 'Freezing the Fighting: Military Disengagement on the Siachen Glacier,' CMC Occasional Paper/1, Cooperative Monitoring Centre, Sandia National Laboratories, Springfield, VA, US, March.
12. Sidhu W.P.S. and Yuan Jing-Dong (1999) 'Cooperative Monitoring for Confidence Building: A Case Study of the Sino-India Border Areas,' Sandia National Laboratories, CMC Occasional Paper, August 13.
13. Bringer Kent L. (1998) 'Siachen Science Centre: A Concept for Cooperation at the Top of the World,' Sandia National Laboratories, March.
14. Holst Johan Jorgen (1983) 'Confidence-Building Measures: A conceptual Frame Work,' Survival, Volume 25, No. 1 Jan/Feb.
15. 'Trust and Confidence-Building Measures in South Asia': Report of UNIDIR Conference held on 23-24 November 1998 in Geneva, http:/www.unorg.ch/unidir/Etcbm.htm
16. Desjardins Marie-France (1996) 'Rethinking Confidence-Building Measures,' Adelphi Paper 307, IISS, London, OUP.
17. Yasmeen Sameena and Dixit Abha (1995) 'Confidence-Building in South Asia,' Occasional Paper 23, the Henry L. Stimson Centre, Washington, DC, September.
18. Musharraf Pervez, (2006) 'In the Line of Fire: A Memoir (New York: Free Press).
19. Biringer Kent L., (1998) 'Peace Dividend: Siachen Science Club,' Himal, II, 2, December.
20. Interview with the Author, (2009) New Delhi, March.
21. Staff Reporter, (1998) 'Pakistan Rejects India's Siachen Ceasefire Plan,' The Hindu, November 7.
22. Matinuddin Kamal, (1998) Breaking the Ice on Siachen,' News, November II.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

भारत में रेलवे का आरंभ स्वर्तंत्रता पूर्व एवं पश्चात्

अभिलाषा मिश्रा
शोधार्थी, जबलपुर

भारतीय रेलवे का परिचय – भारतीय रेलवे देश का एक मात्र ऐसा विशाल सार्वजनिक उपक्रम का नियोक्ता है जिसमें विभिन्न स्तर के 17 लाख से अधिक कर्मचारी कार्यरत् हैं, जिनके विभिन्न विभाग तथा विभिन्न श्रेणियाँ हैं। प्रत्येक विभाग का दायित्व है कि वह अपने अधिकार में कार्यरत् कर्मचारियों की समस्याओं का निराकरण शीघ्र अतिशीघ्र करें।

भारतीय रेल को दशा की जीवन रेखा कहा जाता है। विचार करें तो यह बात उतनी ही सत्य है, क्योंकि हमारे देश में परिवहन का सबसे बड़ा साधन रेलवे द्वारा ही सम्भव हो पाता है। रेलवे ने हमारे राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन को बहुत अधिक प्रभावित किया है। दशा को एक सूत्र में बांधकर बिना किसी बाधा के यात्रियों और माल को देश के एक छोर से दूसरे छोर तक ले जाने की व्यवस्था रेलों द्वारा ही संभावित हुई है। रेलों ने आम आदमी की यात्रा को सरल व सुगम बनाया है। राष्ट्र के आर्थिक ढांचे को एक स्वरूप देने व्यापार को समूचे देश में फैलाने आपदाओं के समय सेवा कार्य करने रोजगार के अवसर सुलभ कराने उद्योगों का पूरे देश में विकास करने कोयला, लोहा, चाय व लकड़ी जैसे उद्योगों के प्रसार देश भर में कीमतों को एक पैमाने पर रखने गाँव व शहरों के विकास आदि में रेलों ने जबरदस्त काम किया है। शिक्षा का विस्तार हुआ, दूरियाँ सिमट गईं। साहित्य संगीत लोकगीत फिल्मों को भी रेलों ने अछूता नहीं छोड़ा। जब हमारे जनजीवन पर रेलें इस कदर छायीं हुई हैं, अतः उन्हें देश की जीवन रेखा कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा।

केन्द्रीय सरकार भारतीय रेलों की सम्पत्ति की स्वामी है। हमारे देश मं रेलगाड़ी चलाने का प्रस्ताव 1844 में आर.एम.स्टीफेंसन ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी को किया। कम्पनी ने इसे स्वीकार कर 1849 में कोलकाता से राजमहल की ओर 100 मील तक रेल निर्माण और संचालन का ठेका ईस्ट इण्डिया कम्पनी रेलवे कम्पनी को दे दिया गया। उसी वर्ष एक और ठेका मुम्बई से कल्याण के लिये ग्रेट इण्डिया पेनिन्सुलर रेलवे कम्पनी को दिया गया। सर्वप्रथम मुम्बई–ठाणे लाइन का उद्घाटन 16 अप्रैल 1853 को हुआ।

भारतीय रेल एशिया का सबसे बड़ा नेटवर्क है तथा एकल प्रबंधनाधीन, यह विश्व का सबसे बड़ा रेल नेटवर्क है। यह 150 वर्ष से भी अधिक समय से भारत के परिवहन क्षेत्र का मुख्य संघटक रहा है। यह विश्व का सबसे बड़ा नियोक्ता है। जो कि देश की मूल संरचनात्क एवं आधारभूत आवश्यक्ताओं को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। साथ ही बिखरे हुए क्षेत्रों का एक साथ जोड़कर देश की राष्ट्रीय एकता का संवर्धन करने में प्रमुख भूमिका निभा रहा है।

प्रशासनिक सुविधा एवं देश के परिचालन की सुविधा की दृष्टि से रेलवे को 17 क्षेत्रों (जोन्स) में बांटा गया है। क्षेत्रीय रेलों को भौगौलिक आधार पर मंडलों (डिवीजन) में बांटा गया है। मंडलों का प्रधान होता है – मंडल रेल प्रबंधक (डिवीजनल रेल मैनेजर) जो वरिष्ठ प्रशासनिक ग्रेड का होता है। उसका सहयोगी एक अवर रेल प्रबंधक होता है। वर्तमान में 59 मंडल हैं।

भारतीय रेलवे केन्द्र सरकार का ऐसा विभाग है जिसका संचालन रेल राज्य मंत्री के मार्गदर्शन के अनुसार किया जाता है। भारतीय रेलवे के समस्त कार्यों का क्रियान्यवयन ''भारतीय रेलवे बोर्ड'' के द्वारा संचालित किया जाता है। भारतीय रेलवे में नीति निर्धारण व प्रबंधन कार्य भारतीय रेलवे बोर्ड अध्यक्ष सहित 6 सदस्यों द्वारा सम्पन्न किया जाता है। रेलवे बोर्ड को व्यापक अधिकार प्रदत्त हैं। ताकि वह समस्त रेलवे जोन्स – मेट्रो रेल कोलकाता, उत्पादन इकाईयों का निर्माण संगठन और अन्य रेल स्थापनाओं का प्रभावी ढंग से संचालन करा सके। रेलवे जोन्स

आदि में आम तौर पर महाप्रबंधक पदस्थ किया जाते है। रेल मंत्रालय के 4 सहायक संगठन अर्थात् इरकान, प्राइट्स, कांकर और क्रिस। भारत समेत विदेशों में भी विषेश कार्यों को सम्पन्न कराते हैं। इस प्रकार ये सभी भारतीय रेलवे के विकास और प्रगति में सहायक है। भारतीय रेलवे द्वारा प्रतिवर्ष 4 करोड़ रूपए की आय भारत सरकार को प्राप्त होती है। इसमें लगभग 17 लाख स्थाई कर्मचारी तथा 2 लाख अस्थाई कर्मचारी कार्यरत् हैं। ऑफिसर स्टाफ अनुपात (41:122) है। प्रति कर्मचारी प्रतिवर्ष 4,24,808 रूपए रेलवे का खर्च होता है। भारतीय रलवे द्वारा प्रतिदिन (4, 318) लाख टन माल की ढुलाई होती है। देश में कुल (12,700) ट्रेनें चलती हैं। भारतीय रेलवे की लंबाई 1,07439 किलोमीटर है।

परिचालन और प्रबंध की दृष्टि से रेलों को नौ क्षेत्रों में बांटा गया है। क्षेत्रीय रेल का मुख्य प्रशासनिक अधिकारी महाप्रबंधक होता है। क्षेत्रीय रेलों का विवरण निम्नलिखित रूप से प्रदर्शित है।

विभिन्न रेलवे जोन (मंडल)का विवरण

स्थापना तिथि	रेलवे	प्रधान कार्यालय	रूट किलोमीटर
14–4–1951	दक्षिण रेलवे	चेन्नई (मद्रास)	5145
05–11–1951	मध्य रेलवे	मुम्बई (सी.एस.टी)	3905
05–11–1951	पश्चिम रेलवे	मुम्बई (चर्च गेट)	6509
14–04–1952	पूर्व रेलवे	कोलकाता (फेयरली प्लेस)	2414
14–04–1952	उत्तर रेलवे	नई दिल्ली	6935
14–04–1952	पू.उ.रेलवे	गोरखपुर	3634
01–08–1955	द.पू.रेलवे	कोलकाता (गार्डन रीच)	2635
15–01–1958	पू.उ.सीमा रेलवे	मालीगांव (गुवाहाटी)	3758
02–10–1966	द.म.रेलवे	सिकंदराबाद	5749
01–10–2002	उ.प.रेलवे	जयपुर	5535
01–10–2002	पू.म.रेलवे	हाजीपुर	3557
01–04–2003	पू.तटीय रेलवे	भुवनेश्वर	2568
01–04–2003	द.प.रेलवे	हुगली	3107
01–04–2003	प.म.रेलवे	जबलपुर	3965
01–04–2003	उ.म.रेलवे	इलाहाबाद	3151
01–04–2003	द.पू.म.रेलवे	बिलासपुर	2448
29–12–2010	कोलकाता मेट्रो रेलवे	कोलकाता	20

वर्तमान में 59 मंडलों के विवरण इस प्रकार हैं :–

पश्चिम रेलवे	:	पश्चिम मुम्बई, सेंट्रल बड़ौदा, रतलाम, राजकोट, भावनगर, अहमदाबाद
मध्य रेलवे	:	मुम्बई, सीएमटी, भुसावल, नागपुर, सोलापुर, पुणे
पूर्व रेलवे	:	हावड़ा, सियालदह, आसनसोल, मापदह
उत्तर रेलवे	:	दिल्ली, मुरादाबाद, फिरोज़पुर, लखनऊ, अंबाला
पू.उ.रेलवे	:	आईजट नगर, लखनऊ, वाराणसी
पू.उ.सीमा रेलवे	:	कटिहार, अलिपुरद्वार जंक्शन, लाम्डिंग, तिनसुकिया, रंगिया

दक्षिण रेलवे	:	चेन्नई, पालघाट, मदुरै, तिरूचिरापल्ली, तिरूअनंतपुरम्
द.पू.रेलवे	:	खड़कपुर, आद्रा, चक्रधरपुर, रांची
द.म.रेलवे	:	सिकंदराबाद, हैदराबाद, विजयवाड़ा, गुंटकल, नांदेड़

नये क्षेत्र और उनके अधीन मंडल :–

पूर्व तटीय रेल भुवनेश्वर	–	खोरदा रोड, वालटेयर, सम्बलपुर
द.प.रेलवे हुबली	–	बंगलूरू, मैसूर, हुबली
प.म.रेल जबलपुर	–	जबलपुर, भोपाल, कोटा
उ.म.रेल इलाहाबाद	–	इलाहाबाद, झांसी, आगरा
द.पू.म.रेल बिलासपुर	–	नागपुर, बिलासपुर, रायपुर
उ.प.रेल जयपुर	–	जोधपुर, बीकानेर, जयपुर, अजमेर
पू.म.रेल हाजीपुर	–	सोनपुर, समस्तीपुर, दानापुर, मुगलसराय, धनबाद

स्वतंत्रता पूर्व रेलवे की स्थिति :–

19वीं सदी के मध्य तक भारत में परिवहन के साधन अत्यंत धीमी गति हुआ करते थे। बैलगाड़ी और तांगों तक यातायात सीमित था। ब्रिटिश शासन को यह महसूस हुआ कि अब अगर ब्रिटिश मार्ग को भारत में बड़े पैमाने पर खपाना है तो उद्योगों के लिए यहाँ से कच्चे माल को प्राप्त करना है जिसके लिये यातयात हेतु आसान, सस्ती तीव्र प्रणाली का विकास आवश्यक है। इस आवश्यकता के कारण इन्होंने नदियों में स्टीमर चलाए। सड़कां का सुधारीकरण आरंभ किया। कोलकाता से दिल्ली तक ग्रांट फंक रोड पर 1939 में काम आरंभ हुआ और 1950 के दशक में पूरा हुआ। सड़कों द्वारा देश के प्रमुख नगरों, बंदरगाहों और मंडियों को जोड़ने के लिए प्रयास किए गए। दरअसल यातायात में वास्तविक सुधार रेलों के आरंभ के बाद ही को पाया।

जॉर्ज स्टीफेंसन का बनाया हुआ पहला रेल इंजन इंग्लैण्ड में 1814 में पटरियों पर चलाया गया। वहां 1830 से लेकर 1840 के दशकों के मध्य में रेलों का तीव्र गति से विकास हुआ। इसी समय में भारत में भी रेल लाइनों को बिछाने का कार्य तीव्र गति से प्रारंभ किया गया। ब्रिटिश उद्योगपतियों को यह आशा थी कि इस प्रकार देश के दूरदराज के इलाकों के विशाल बाजार उनकी पकड़ से बाहर थे। जो उन्हें अब मिल जायेंगे तथा भूखी मशीनें तथा उनके चलाने वालों के लिये भारतीय कच्चेमाल तथा खाद्य सामग्री का निर्यात आसान हो जाएगा। ब्रिटिश बैंकरों और निवेश कर्ताओं को भी यह लगा कि उनकी अतिरिक्त पूंजी सुरक्षा के साथ भारत में रेलों के विकास पर लगाई जा सकती है। ब्रिटिश इस्पात उत्पादकों को लगा कि उनके उत्पादों को जैसे पटरियों, इंजनों, डिब्बों एवं दूसरी मशीन आदि का विक्रय बढ़ सकता है। इस दृष्टिकोण को भारत सरकार ने जल्दी ही स्वीकार कर लिया। क्योंकि उसे रेलों के रूप में एक और अच्छी बात भी नज़र आई कि सैनिको की भर्ती और आवाजाही तेजी तथा आसानी से हो सकेंगी और इस प्रकार से एक प्रभावी आर कुशलतम ढंग से देश का प्रशासन चलाना एवं आंतरिक विद्रोह तथा बाहरी हमलों से शासन की सुरक्षा करना संभव हो सकेगा।

भारत में रेल लाइन बिछाने का सर्वप्रथम सुझाव मद्रास में 1831 में आया। इसमें रेल के डिब्बों को खींचने के लिए घोड़ों का उपयोग किया गया। भारत में भाप से चलने वाली रेलों का प्रथम प्रस्ताव इंग्लैण्ड में सन 1834 रखा गया।

इंग्लेण्ड के रेलवे प्रमोटरों, पूंजीपतियों, भारत से व्यापार कर रहे व्यापारिक घरानों तथा कपड़ा उत्पादकों से इस प्रस्ताव को तगड़ा

राजनीतिक समर्थन मिला। यह तय हुआ कि भारत में प्राईवेट कम्पनियों रेल लाइन बिठाकर रेलों को चलाएं। इस हेतु भारत सरकार ने जमानत दी कि इन कम्पनियों को उनकी पूंजी पर कम से कम 5 प्रतिशत लाभ मिलेगा। मुम्बई और ठाणे के बीच पहली रेल लाइन यातायात के लिए 16 अप्रैल 1853 में खोल दी गई। सन् 1849 में भारत के गवर्नर जनरल बनने वाले लार्ड डलहौजी भारत में तीव्रगति से रेलवे लाइन बिछाने के पक्के समर्थक थे। सन् 1853 में लिखे एक प्रसिद्ध नोट में उन्होंने रेलवे विकास हेतु एक व्यापक कार्यक्रम समक्ष प्रस्तुत किया जिसमें चार प्रमुख ट्रंक लाइनों के एक जाल का प्रस्ताव रखा गया जिसके द्वारा देश के विभिन्न भागों को जोड़ा जा सके। यही जाल बिछता गया और दिन–प्रतिदिन इसका विस्तार होता गया।

अंग्रेजों की दूरदर्शिता यह थी कि यातायात व्यवस्था के लिए संचार व्यवस्था का होना भी आवश्यक है। जिसके कारण उन्होंने एक कुशल और आधुनिक डाक प्रणाली और तार की व्यवस्था की शुरूआत की। पहली तार लाइन का आरंभ 1853 में कोलकाता और आगरा के बीच आरंभ किया गया। तार व्यवस्था को केवल डाक विभाग तक सीमित न रखकर रेलों के संचालन हेतु एक स्टेशन से दूसरे स्टेशन तक सूचनाएं पहुंचाने के उद्येश्य से रेलवे में अलग से स्वतंत्र रूप से रेलवे में तार व्यवस्था आरंभ कर दी गई। तार भेजने हेतु तार बाबू के पद अलग से बनाए गए।

19वीं शताब्दी का 5वां दशक भारत हेतु विशेष महत्वपूर्ण रहा है। भारत के तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड डलहौजी भारत में संचार एवं रेल व्यवस्था लाने का निर्णय ले चुके थे। वही दिन था 16 अप्रैल 1853 का। जिस दिन मुम्बई बोरी बंदर से ठाणे के मध्य पहल रेलगाड़ी चलाई जा रही थी। इस गाड़ी के तीन लोगो थे – साहब, सुल्तान और सिन्ध। 34 किलोमीटर की इस अद्भुत यात्रा का चार सौ यात्रियों ने 14 कोचों में बैठकर इस अद्भुत यात्रा का आनंद लिया जिसमें कुल 1 घंटे 45 मिनिट का समय लगा। जिसके पश्चात् भोपाल की बेगम नवाब ने अपनी रियासत में रेलवे लाइन डलवाना शुरू कर दिया। साथ ही जी.आई.पी रेलवे भी अपनी रेलवे लाइन मनमाढ़ तक ले आई। यह वह समय था जबकि भोपाल से आगे की लाइन का निर्माण कार्य प्रारंभ किया गया था। इंडियन मिड लैण्ड कम्पनी ने बुंदेलखण्ड को रेल से परिपूर्ण बनाने का बीड़ा उठा लिया। इसके साथ–साथ कई रियासतें उनके साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल रही थी। यह सत्य है कि विकास की होड़ समय के साथ होती है, यही भारतोय रेलवे के साथ भी हुआ। 18वीं शताब्दी के सातवें दशक से शताब्दी के अंत तक भारत में अनेक रेल मार्ग बने। जिनमें 1878 में धौलपुर–आगरा, 1879 में ग्वालियर–हेतमपुर, 1881 में हेतमपुर–धौलपुर, 1884 में दिल्ली–मथुरा, 1885 में झांसी–कानपुर, 1889 में भोपाल–झासी, झांसी–ग्वालियर, झांसी–बांदा, मानिकपुर–बीना–सागर। 1898 में सागर–दमोह तथा 1899 में दमोह–कटनी तक की सौगात प्राप्त हुई। 1899 में इसी बीच महाराज ग्वालियर ने ग्वालियर–भिण्ड और ग्वालियर –शिवपुरी तथा 1909 ग्वालियर –श्योपुरकला। नैरोगेज लाइनें बिछाई तो ढालपुर–तांतपुर नैरोगेज लाइन डलवाई गई, तथा आगरा से ग्वालियर लाइन निर्माण का कार्य महाराज ग्वालियर ने शुरू किया जिसे बाद में आईएमआर द्वारा पूरा किया गया। 1900–1914 की अवधि में रेलवे का तीव्र गति से विकास हुआ। 1905 में रेलवे बोर्ड की स्थापना की गई एवं रेलों के मिर्माण में लगभग 450 करोड़ रूपये की पूंजी विनियोजित की गई। इस काल के 35285 मील रेल लाइनों की स्थापना हो चुकी थी। किन्तु प्रथम विश्वयुद्ध आरंभ होने के कारण रेलों का विकास अवरूद्ध हो गया जिसके साथ ही वित्तीय एवं प्रशासनिक कठिनाईयों के चलते समस्त विकास एवं आधुनिकीकरण योजनाओं का कार्यान्वयन रूक गया। प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति के पश्चात् 1920–1929 की अवधि में रेल यातायात का विकास तीव्रगति से हुआ। 1920 में एक वर्थ समिति का गठन हुआ जिसके द्वारा रेलवे के विकास के लिए पुनर्गठन, रेलभाड़ा निर्धारण सम्बन्धि रेट ट्रिगुनल का गठन रेलवे बजट का सामान्य बजट से पृथक्करण, सरकार द्वारा रेलवे प्रबंधन, रेलवे क्षीणता व संचित कोषों की स्थापना आदि जैसे महत्वपर्ण सुझाव दिये गये।

सर आक बर्थ की अध्यक्षता में बनी रेल जांच समिति में 1921 में अपनी रिपोर्ट में

सिफारिश की, कि सरकार कम्पनियों के ठेके समाप्त कर स्वयं निर्माण–संचालन का कार्य करे। 1924 में राष्ट्रीयकरण शुरू हुआ तथा रेलवे बजट को सामान्य बजट से अलग किया गया है। 1930 से 1939 के अवसान काल में रेलों का विकास होगा। तथा रेलों के समक्ष आर्थिक संकट आ गया। 1930 में 'पेजबुड' समिति का गठन किया गया जिसमें रेलवे व्यवस्था को कुशल एवं मितव्ययी बनाने के लिये कई महत्वपूर्ण सुझाव दिये। जैसे – धन व रक्षित की पर्याप्त व्यवस्था, रेल पथ व सड़क यातायात में समन्वय स्थापित करना। द्वितीय पुनर्गठन तथा साधनों का मितव्ययता पूर्ण प्रयोग करना आदि।

1939–40 में रेलों की लंबाई बढ़कर 41 हजार 156 मील हो गई। पुनः द्वितीय युद्ध महाकाल में रेलों के विकास व नवीनीकरण कार्य अवरूद्ध हुआ। रेल सेवाओं की मांग बढ़ी, किन्तु उनकी पूर्ति घट गई। जिससे रेलों को अधिक आय अर्जित करने का मौका मिल गया। 1942 में बीबीसोआईआर व एसआईआरआर और बीएसआर सरकार के पूरे अधिपत्य में आ गई।

स्वतंत्रता के पश्चात् रेलवे की स्थिति एवं विकास –

स्वतंत्रता के उपरान्त रेल यातयात की समस्याओं तथा उसके विकास कार्यक्रमों की ओर पर्याप्त ध्यान दिया गया। द्वितीय महायुद्ध तथा उसके उपरान्त देश विभाजन से रेल व्यवस्था में अनेक कठिनाईयाँ उत्पन्न हो गई थीं। विभाजन से 7000 मील लम्बाई में लाईनें तथा भारी मात्रा में रेल सामग्री पाकिस्तान के हिस्से में चली गई। इस विभाजन से रेल व्यवस्था को आघात लगा और रेलवे में अनेक प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न हो गई। रलवे की समस्याओं से संतोषप्रद समाधान खोजने में एवं कुशलता व मितव्ययता हेतु 1946 में ''के.सी.विनियोगी'' की अध्यक्षता में एक समिति को गठित किया गया, परंतु विभाजन के उपरान्त यह समिति 1948 में ''हृदयनाथ गुंजारू'' की अध्यक्षता में पुनर्गठित की गई। इस समिति ने रेलवे को पुनर्गठन कार्यक्षमता वृद्धि, वैज्ञानिक प्रबंधन व्यवस्था, विद्युतिकरण, अनुसंधान रेलवे द्वारा दिए गए अंशदान के स्थायीकरण, कर्मचारियों की दशा में सुधार संबन्धी अनेक महत्वपूर्ण सुझाव दिए। समिति ने रेलवे के पुनर्वर्गीकरण को 5 वर्श के लिए स्थगित करने का सुझाव दिया। सरकार ने सभी सुझाव स्वीकार किए परंतु पुनर्वर्गीकरण को स्वीकार करने का सुझाव अस्वीकार कर दिया गया।

भारत में प्रथम रेल 16 अप्रैल 1853 को 21 मील मार्ग पर मुम्बई से ठाणे तक चली थी। 15 अगस्त 1947 को यह मार्ग धीरे–धीरे बढ़कर 40524 मील हो गया। जिसमें से 6539 मील पाकिस्तान को शेष 33985 मील भारत को मिला। 1 अप्रैल 1951 प्रथम पंचवर्षीय योजना प्रारंभ की गई तब से अब तक 11 पंचवर्षीय योजना पूर्ण हो चुकी हैं तथा 3 वार्षिक योजनाएँ एक वर्ष की अवधि की एवं 12वीं पंचवर्षीय योजना के लगभग 3 वर्ष पूर्ण हो चुके हैं इस प्रकार इतने वर्षों के नियोजन कार्य में रेलों का काफी विकास हुआ है। इस काल में 7800 किलोमीटर नए रेल मार्ग बने तथा लगभग 13000 किलोमीटर रेल मार्ग को दोहरा किया गया।

स्वतंत्रता पश्चात् भारत में योजनाबद्ध विकास की नीति अपनाई गई। जिसमें रेलों के विकास के लिए योजना आयोग ने योजना तैयार की। देश के सर्वांगीण विकास के लिए रेलों का विकास करना अनिवार्य था। 1 अप्रैल 1951 को प्रथम पंचवर्षीय योजना प्रारंभ की गई। उस समय भारतीय रेल मार्ग की कुल लंबाई 53596 किलोमीटर थी जिसमें से 388 किलोमीटर लंब रेलमार्ग को विद्युतिकृत किया गया एवं रेलों के पास 8120 भाप इंजन, 17 डीजल इंजन, 72 विद्युत इंजन, 13022 यात्री डिब्बे, 460 बहुविद्युत इकाई कोच, 87 रेल कारें, 6059 अन्य वाहन तथा 205596 माल डिब्बे थे। उस समय तक रेलें प्रतिवर्ष लगभग 128 करोड़ योत्रियों तथा 9 कराड़ टन माल ढोती थीं। रमें 855 करोड़ रूपए की पूंजी लगी हुई थी।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. रेलवे सेवा नियम एवं कानून संहिता, बाहरी ब्रदर्स 2013
2. Annual Reports and Accounts of Indian Railways 2008-2009.

3. गुप्ता आर. ''भारतीय रेलवे'' रमेश पब्लिशिंग हाउस.
4. वार्ष्णेय डॉ.जे.सी. ''भारत में परिवहन'' पुस्तक सदन ग्वालियर.
5. ''भारतीय रेल एक परिचय'' उपकार प्रकाशन.

अन्य संदर्भ :–

1. भारतीय रेलवे की वार्षिक सांख्यिकीय रिपोर्ट.
2. जबलपुर डिवीज़न की वार्षिक रिपोर्ट.
3. भारतीय रेल मासिक पत्रिका.
4. विविध समाचार पत्र–पत्रिकाएँ
5. भारतीय रेलवे वेबसाइट : www.wcr.indianrailways.gov.in
6. ''भारतीय रेलवे पोर्टल''

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

भारतीय राजनीति में महिलाओं की भूमिका

डॉ. रंजना मिश्रा, पी.जी. कॉलेज, नरसिंहपुर
डॉ. अर्चना पाठक, हवाबाग कॉलेज, जबलपुर

प्रस्तावना :– भारतीय संविधान द्वारा महिलाओं को पुरूषों के समान राजनैतिक अधिकार, समानताएं और स्वतंत्रताएं प्रदान की गयी है। भारत के प्रत्येक स्त्री पुरूष की सकिय राजनीति में प्रवेश करने तथा देश की विधान निर्मात्री सभाओं का सदस्य बनकर नीति निर्माता के रूप में अपनी सेवाओं से देश को लाभान्वित करने की स्वतंत्रता है।

हमारे संवैधानिक विकास के कम में देश की आधी आबादी की भागीदारी केवल कुछ सम्पन्न वर्ग की महिलाओं अथवा राजवंशो की महिलाओं तक ही सीमित है। यदि किसी आम स्त्री ने अपने संवैधानिक अधिकारों का प्रयोग करते हुए सकिय राजनीति में कदम बढ़ाने का दु:साहस किया है तो उसे अवश्य अपने परिवार के किसी पुरूष के सहारे की बैसाखी को साथ में लेकर चलना पड़ा है।

आज भी सकिय राजनीति में तथा विधान मण्डलों में महिलाओं का प्रवेश उनकी स्वयं की इच्छा तथा निर्णय पर कम निर्भर करता है। उन्हें या तो उनके राजनीतिक व्यक्तित्व रखने वाले पिता या पति की मृत्यु के पश्चात् सहानुभूति के वोट बटोरने के लिए राजनीति में लाया जाता है। मध्यप्रदेश की राजनीति में महिलाओं की सकिय भागीदारी बांटने के उद्देश्य से पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं के लिये 33 प्रतिशत स्थान आरक्षित किए गये।

उसे पंचायत स्तर पर महिलाओं के राजनैतिक व्यक्तित्व के विकास का कारण नहीं बन पाई। अधिकांश पंच, सरपंच तथा जिला पंचायतो की पदाधिकारी बनी महिलाऐं घूंघट में रहकर अपने पति, पिता या पुत्र द्वारा लिये गये निर्णयों पर अंगूठा लगाती रही। देश एवं प्रदेश स्तर पर विधानमंडलो तथा संसद के चुनावों में महिलाओं की 33 प्रतिशत आरक्षण देने का मुद्दा आजकल बहुत चर्चा में है, परंतु महिलाओं की सामाजिक स्थिति में परिवर्तन के बिना तथा भारतीय समाज में स्त्रियों के संबंध में जो पारंपरिक मध्यकालीन विचारधारा व्याप्त है। उसमें परिवर्तन के बिना उन्हें आरक्षित करके भी सभा में उनकी स्वतंत्र तथा निष्पक्ष भागीदारी संभव नहीं है।

मध्यप्रदेश विधानसभा में महिला प्रतिनिधित्व का स्वरूप :– मध्यप्रदेश देश के हृद्य स्थल पर स्थित एक पिछड़ा राज्य है यहां की सामाजिक विचारधारा में नारियों को पुरूषों के समझ अधिकार प्रदान करने को बात स्वीकार नहीं है यद्यपि इस प्रदेश ने देश की राजनीति को रानी दुर्गावती व महारानी लक्ष्मीबाई से लेकर विमला वर्मा, उमा भारती, सुमित्रा महाजन तथा विजया राजे सिंधियां जैसी कुशल प्रशासक वीरांगनायें तथा राजनेता प्रदान की है। परंतु शिक्षा के निम्न स्तर तथा स्त्री साक्षरता के अत्यंत निम्न प्रतिशत होने के कारण यहां पर आम स्त्रियों की सामाजिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। विशेषकर ग्रामीण स्त्रियां तो आज भी स्वतंत्रता समानता और अधिकार जैसे शब्दों से अपरिचित है। यही कारण है कि देश की स्वतंत्रता के पचास वर्ष तथा मध्यप्रदेश की स्थापना के 40 वर्ष बीत जाने के बाद भी महिला प्रतिनिधियों की संख्या में कोई उल्लेखनीय वृद्धि नहीं हुई है। मध्यप्रदेश की कुल जनसंख्या 6,61,81,170 (1991) है जिनमें से 3,19,13,877 महिलायं है अर्थात् मध्यप्रदेश में महिला पुरूष अनुपात प्रति हजार पुरूषों पर 932 महिलाओं का है। पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं की कम संख्या होने का मुख्य कारण कन्याओं की हत्या तथा कुपोषण एवं उत्पीड़न व शोषण के कारण महिलाओं की अल्पायु में मृत्यु हो जाती है। यहां आज की आम परिवारों में कन्या के जन्म को अच्छा नहीं समझा जाता।

मध्यप्रदेश में साक्षरता की दर कुल 44.20 प्रतिशत है जिसमें से 58.42 प्रतिशत पुरूष साक्षर है तथा 28.85 प्रतिशत महिलाएं साक्षर है।

मध्यप्रदेश विधानसभा में महिलाओं के प्रतिनिधित्व का प्रतिशत सर्वाधिक 1957 के प्रथम आम चुनाव में रहा उस समय कुल विधान सभा सदस्यों का 10.7 प्रतिशत प्रतिनिधित्व महिलाओं के द्वारा किया गया। उसके पश्चात् कभी भी 10 प्रतिशत से अधिक महिलाएं चुनकर विधानसभा में नहीं गई। यद्यपि 1985 की भांति महिला विधायकों की संख्या 31 थी परंतु 1957 में कुल विधान सभा सीट 288 थी जो 1985 में बढ़कर 320 हो गई। अतः महिलाओं के प्रतिनिधित्व का प्रतिशत 9.1 प्रतिशत ही रहा है।

प्रदेश की स्वतंत्रता के पश्चात् स्त्रियों की शिक्षा में व्यापक प्रसार हुआ है तथा उससे स्त्रियों की साक्षरता के प्रतिशत में धीमी ही सही परंतु वृद्धि हुई है। स्त्रियों में जागरूकता बढ़ाने तथा उन्हें स्वावलंबी व शिक्षित करने की दिशा में व उनकी सामाजिक स्थिति में सुधार लाने के लिए सरकार द्वारा अनेक कानून व कल्याणकारी योजनाएं बनाई गई परंतु इन सबके बावजूद प्रदेश की सकिय राजनीति में महिलाओं की भागीदारी में उल्लेखनीय वृद्धि नहीं हुई।

विधानमंडल लोकतंत्र का आधार स्तंभ होता है। उसमें अपने प्रतिनिधित्व की पहचान बनाने तथा अपनी संख्या में वृद्धि करने में आज भी प्रदेश की आधी आबादी जागरूक उत्सुक तथा प्रयासरत नहीं दिखाई देती।

विधानसभा में महिलाओं के अल्प प्रतिनिधित्व के कारण :– देश की विकास कम पर यदि गौर किया जाये तो यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि प्रत्येक वह क्षेत्र जो कभी केवल पुरूष वर्चस्व का क्षेत्र माना जाता था वहां महिलाओं ने प्रवेश कर अपने कार्यो व उत्तरदायित्वों का सफलतापूर्वक निर्वाह कर अपनी कार्यक्षमता का लोहा मनवाया है, परंतु राजनीति के क्षेत्र में निर्णायक, सजग, कर्मठ और जागरूक महिला नेतृत्व अपवाद, स्वरूप ही है। लोकतांत्रिक संस्थाएं स्त्रियों की कार्यकुशलता क्षमता तथा धर्म के लाभ से क्यों वंचित है। विधानसभा में महिलाओं के प्रतिनिधित्व की वृद्धि के कार्य की प्रमुख बाधायें है। इन कारणों को मुख्य रूप से 5 भागों में बांटा जा सकता है –

1. मनोवैज्ञानिक कारण :–महिलाओं में बचपन से ही असुरक्षा एवं हीन भावना का विकास किया जाता है। इनके मन मस्तिष्क में यह बात बिठा दी जाती है कि बिना पुरूष के संरक्षण के वह कोई भी कार्य करने में असमर्थ है। उम्र बढ़ने के साथ–साथ महिलाओं में हीनता की भावना बढ़ती जाती है।

2. सामाजिक कारण :– भारतीय समाज एक परम्परावादी समाज है। यहां महिलाओं की स्वतंत्रता व समानता के अधिकारों की बाते तो बहुत होती है परंतु अधिकांश पुरूष एवं महिलाएं भी महिलाओं की परम्परावादी घरेलू छवि की ही अधिक पक्षधर होते है। यही कारण है कि सामाजिक दृष्टि से स्त्रियों के राजनैतिक जीवन में प्रवेश को बहुत अच्छा नहीं माना जाता इसलिए जब महिलाएं चुनाव में खड़ी होती है तो उन्हें मतदाताओं का यहां तक कि महिला मतदाताओं का भी वांछित समर्थन प्राप्त नहीं होता। लिंगभेद हमारी सामाजिक व्यवस्था का एक प्रमुख अंग है। परिवार में लड़की के साथ भेदभाव पूर्ण व्यवहार किया जाता है। यही कारण है कि राजनीति में महिलाओं का प्रवेश संयोगवश ही हुआ है कभी अपने नेता पति की मृत्यु के बाद या फिर किसी विशेष वर्ग या समुदाय की प्रतिनिधि होने के कारण यह निर्णय भी महिलाओं का अपना नहीं होता। इसलिए वे विधान सभाओं में पहुंचकर भी अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व नहीं बना पाती।

3. आर्थिक कारण : महिलाओं में आर्थिक निर्भरता का अभाव रहता है। वे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपने परिवार के पुरूषों पर निर्भर रहती है। यहां तक की जो महिलाएं कामकाजी है वे भी अपनी आय को व्यय करने में स्वतंत्र नहीं होती कुछ समय पहले तक के उत्तराधिकार से भी महिलाओं को वंचित रखा गया था। आज निर्वाचन में भाग लेना एक व्यय साध्य कार्य है सामान्य तौर पर विधायकों को चुनाव में जीतने के लिए 3 प्रकार के व्यय करने पड़ते है :–

अ. एक उम्मीदवार द्वार स्वयं व्यय किया गया धन।

ब. समर्थकों द्वारा व्यय किया गया धन।

स. उनके राजनैतिक दल द्वारा व्यय किया गया धन।

महिलाएं तीनों ही प्रकार के धन जुटानें में असमर्थ रहती है। स्वयं आर्थिक रूप से स्वावलंबी न होने के कारण वे अपना स्वयं का व्यय करने के लिए धन प्राप्त करने हेतु परिवार पर आश्रित होती है। महिलाओं का सार्वजनिक जीवन अधिक व्यापक नहीं होने के कारण उनके समर्थकों की संख्या भी कम होती है। जो समर्थक होते भी है उन्हें महिला उम्मीदवारों पर विश्वास नहीं होता यही कारण है कि मध्यप्रदेश की विधानसभा में अधिकांश महिला विधायक या तो राजवंश से संबंधित है या उच्च धनाड्य परिवारों से आम स्त्रियों के विधानसभा में प्रवेश अपवाद स्वरूप ही है।

4. राजनैतिक कारण :– वर्तमान स्त्री प्रतिनिध्यात्मक प्रजातंत्र में राजनैतिक दल निर्वाचन व्यवस्था की रीढ़ है। राजनीतिक दलों के समर्थन के अभाव में किसी भी प्रत्यासी का निर्वाचन में विजयी होना अत्यंत कठिन होता है महिला उम्मीदवार भी उसका अपवाद नहीं है। प्रायः हम देखते है कि हमारे समाज में राजनैतिक दल महिलाओं को अपना उम्मीदवार नहीं बनाते प्रत्येक राजनीतिक दलों के शीर्ष पदों पर प्रायः पुरूष विराजमान है, वे महिलाओं की सकिय राजनीति में सफलता को शंका की दृष्टि से देखते है। इसलिये वे महिलाओं को टिकट नहीं देते।

राजनीति में निरंतर बढ़ती जा रही हिंसा अपराधीकरण चरित्र हनन, वंशवाद, भ्रष्टाचार आदि के कारण भी आम शिक्षित तथा संभ्रान्त परिवारों की महिलायें सकिय राजनीति को अपना कार्यक्षेत्र बनाने में संकोच करती है।

5. शैक्षणिक कारण :– शिक्षा का सीधा संबंध जागरूकता से होता है। शिक्षा मनुष्य के अंदर स्वतंत्र निर्णय लेने का भाव तथा अपने अधिकारों के प्रति सजगता की भावना का विकास करती है। मध्यप्रदेश में महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति बहुत दयनीय है। प्रदेश की लगभग 71 प्रतिशत महिलायें निरक्षर है। उन्हें संविधान द्वारा प्रदत्त अपने अधिकारों का कोई ज्ञान नहीं है उनका यह अज्ञान उन्हें पराधीन और आश्रित बनाता है। अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों का शोषण व उत्पीड़न को वह अपनी नियति समझती है तथा उनके खिलाफ बनाये गये कानूनों का वैधानिक प्रावधानों से वह बेखबर रहती है। हिंसा, भ्रष्टाचार, अपराधीकरण और छल के दलदल में आकंठ डूबी राजनीति को वे अपना कार्यक्षेत्र नहीं बनाना चाहती।

मध्यप्रदेश की राजनीति में महिला प्रतिनिधित्व की संभावनाये यद्यपि वर्तमान समय में विधानसभा में महिलाओं का प्रतिनिधित्व अत्यंत कम है तथा सकिय राजनीति में उनके प्रवेश का कम अत्यंत मध्यम गति से आगे बढ़ रहा है परंतु इक्कीसवीं सदी के आने वाले वर्ष निश्चित रूप से स्त्रियों के चतुर्मुखी विकास का संदेश लेकर आयेंगे।

यदि पिछले विधानसभा चुनावों में महिला प्रत्याशियों की संख्या को देखा जाय तो उसमें निस्तर वृद्धि हो रही है। 1967 में कुल 19 महिलायें ही विधानसभा चुनाव के लिए खड़ी हुई थी। 1990 में उनकी संख्या बढ़कर 150 हो गई और 1993 के चुनाव में उनकी संख्या 167 हो गई। यह इस बात का प्रभाव है कि अब स्त्रियों की सकिय राजनीति में रूचि बढ़ रहो है और वे विधान निर्मात्री संस्थाओं में प्रवेशकर स्वयं देश के नीति निर्माण में सहयोग देना चाहती है।

स्वतंत्रता आंदोलन के पूर्व राजनीति में महिलाओं की भूमिका :– आज महिलाएं जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल रही हैं। कुछ क्षेत्र तो ऐसे है जिनमें महिलाओं की कामयाबी अलग से रेखांकित करने योग्य है कुछ लोग महिलाओं को इस 'सकियता' को आधुनिकता की देन मानते है, लेकिन इतिहास गवाह है कि महिलाओं ने हमेशा से ही प्रत्येक सामाजिक घटना में सकियता के साथ अपनी भागीदारी की है।

इतिहास के पन्ने पलटने पर पता चलता है कि भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन में भी महिलाओं ने अपनी अहम भूमिका निभाई थी। सन् 1857 के स्वाधीनता संग्राम से लेकर 1942 की जनकान्ति और फिर आजादी मिलने तक महिलाओं का स्वाधीनता आंदोलन में अमूल्य व सकिय योगदान रहा है। महिलाओं ने न सिर्फ पुरूषों के साथ अपितु कई मोर्चो पर उन्होंने स्वयं अंग्रेजो से लोहा लिया और सीने पर गोलिया खायी, गुलामी के दौर में कस्तूरबा जैसी महिला भी थी जिसके

कारण मोहनदास करमचंद नामक बैरिस्टर 'गांधी' बने तो, लक्ष्मीबाई जैसी वीरांगना भी थी जिसने अकेले अपने बल पर अंग्रेजो को लोहे के चने चबवा दिए थे। महिलाओं ने तब हर मोर्चे पर अपने तरीके से अपना योगदान दिया और उन्होंने मार्चे पर सशस्त्र संघर्ष में भी हिस्सा लिया था।

अंग्रेजो से आजादी की लड़ाई कई मोर्चो पर लड़ी गयी थी एक ओर जहां सशस्त्र संघर्ष का सहारा लिया गया तो दूसरी ओर लड़ाई का मैदान राजनीति में थी। स्वाधीनता संग्राम का अर्थ राजनैतिक क्षेत्र में विदशी साम्राज्य से टक्कर लेना ही नहीं अपितु जनसाधारण को इस संग्राम के लिए प्रेरित करना भी था और इसी काम को अंजाम दिया था। उस दौर की महिला राजनीतिज्ञों ने अरूणा आसफ अली, सरोजनी नायडू, एनी बेसेंट, मैडम भीकाजी कामा, कमला नेहरू, विजय लक्ष्मी पंडित, सिस्टर निवोदिया, कस्तूरबा गांधी, सुचेता कृपलानी और कमला देवी चट्टोपाध्याय जैसे ढेरो नाम है, जिन्होंने स्वतंत्रता पूर्व की राजनीति में सकियता के साथ भाग लिया था। 18वीं सदी के अंतिम दशकों से और उसी समय से महिलाओं ने इस महायज्ञ में अपनी शिरकत शुरू कर दी थी। उस समय हमारा समाज रूढ़िवादी परम्पराओं से बंधा हुआ था और सामाजिक रीति–रिवाज के कारण महिलाओं की स्थिति दोयम दर्जे की थी। लेकिन फिर भी वे घर परिवार छोड़कर आगे आयी और त्याग व बलिदान के साथ उन्होंने आजादी की लड़ाई में अपना योगदान दिया। प्रारंभिक दौर में भारतीयों ने पोलीगर विद्रोह रानी चेन्नमा संघर्ष बुन्देला विद्रोह और संथाल में महिलाओं ने पूरी शिद्दत के साथ अपनी शिरकत दी। संथाल विद्रोह के समय क्षेत्र के स्थानीय अंग्रेज प्रशासक ने भारत सरकार के गृह सचिव को वस्तुस्थिति बताते हुये लिखा था कि ''यह पुनर्जागरण पृथ्वी के उच्छवास की तरह उत्पन्न हुआ कोई दूरदर्शी भी इसका पूर्वानुमान नहीं लगा सकता था क्योंकि यह एक अप्रत्याशित घटना थी।'' किरायों की अत्याधिक मांग राजस्व कर्मचारियों की कठोरता तथा रेलवे प्राधिकारियों द्वारा उनके वेतन का भुगतान न करने के कारण यह कटु रोष उत्पन्न हुआ था और इसलिए 1855 में संस्थालों ने विद्रोह कर दिया। केवल कमान और तीरो से शस्त्रयुक्त ये संथाल बन्दूको एवं तोपो का मुकाबला कर रहे थे।

इन सभी उपरोक्त विद्रोहो में हजारों की संख्या में महिलाओं ने भी भाग लिया। उस समय भीमाबाई ने कर्नल मालकम के साथ बड़ी वीरता के साथ युद्ध किया और उसे गुरिल्ला युद्ध में बुरी तरह पराजित किया। 1824 में पुनः किन्तूर की रानी चेन्नमा ने इस संग्राम का श्रीगणेश किया और ईस्ट इंडिया कंपनी की सशस्त्र सेना का बहादुरी के साथ मुकाबला किया। सन् 1857 कांति, वर्षो की छटपटाहट विस्फोट के रूप में हमारे सामने आई और उसने भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी के पैर उखाड़ने और संवैधानिक तरीके से स्वतंत्रता का मार्ग प्रशस्त्र करने का बीड़ा उठाया।

1857 की कांति से पूर्व, 1757 की प्लासी की लड़ाई से लेकर 1856 तक जंगल महाल का विद्रोह संयासी विद्रोह, चुआड़, किन्टूर विद्रोह, बहाबी विद्रोह और संथाल विद्रोह आदि विद्रोह घटित हो चुके बैरकपुर के सैनिक तथा बहाबी विद्रोह में महिलाओं ने भाग नहीं लिया। परंतु इनके अतिरिक्त सभी विद्रोहों में महिलाओं ने नेतृत्व किया था।

संदर्भ :–

1. स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास, डॉ. शैलेन्द्र श्रीवास्तव, साहित्य निधि प्रकाशन, दिल्ली वर्ष 1994
2. भारतीय स्वाधीनता का इतिहास, निर्मल कुमार, समानांतर प्रकाशन, नई दिल्ली वष 1990
3. भारतीय शिक्षा और साक्षरता, राजेन्द्र मोहन भटनागर कल्याणी शिक्षा परिषद, दिल्ली, वर्ष 1998
4. भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास ताराचन्द्र प्रकाशन विभाग सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली, वर्ष 1969
5. शिक्षा में बदलाव का सवाल, अनिल सदगोपाल, ग्रंथ शिल्पी, दिल्ली वर्ष 2000
6. एक युग का अंत : इंदिरा गांधी, चन्द्रशेखर पंडित अनुवादक – वेणी माधव शर्मा, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, वर्ष 1977

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

भारतीय सीमेण्ट उद्योग

महेन्द्र कुमार रैना
अर्थशास्त्र विभाग शासकीय ठाकुर रणमत सिंह (स्वशासी) महाविद्यालय रीवा जिला–रीवा (म.प्र.)

भारतीय सीमेण्ट उद्योग देश के लगभग 21 राज्यों में फैला है। नवम्बर 2000 तक मध्यप्रदेश के विभाजन के पूर्व देश में सर्वाधिक सीमेण्ट उपकम मध्यप्रदेश में थे किन्तु विभाजन के उपरांत 10 सीमेण्ट उपकम ही मध्यप्रदेश में रह गये। वर्तमान में सीमेण्ट उपकमों की संख्या व उत्पादन क्षमता के विषय में देश का प्रथम सीमेण्ट उत्पादन राज्य आन्ध्रप्रदेश है।

देश में सीमेण्ट का उत्पादन सूखी, गीली व अर्द्ध शुष्क प्रकिया द्वारा होता हैं जिसमें कमशः 95 प्रतिशत सूखी का गीली 3 प्रतिशत तथा 2 प्रतिशत अर्द्ध सूखी का हिस्सा होता है। सीमेण्ट जगत में कुल 25 कम्पनियों के द्वारा स्थापित बड़े सीमेण्ट उपकमों में उत्पादन कार्य किया जा रहा है। सन् 2000–01 में सीमेण्ट उत्पादन में कमी दर्ज की गई तथा उसके बाद तीव्र गति से उत्पादन वृद्धि के नये आयामों को प्रतिस्थापित करते हुए भारतीय सीमेण्ट उद्योग विकास के पथ पर अग्रसर है। भारतीय सीमेण्ट उद्योग में प्रमुख सीमेण्ट उत्पादक समूहों में ए.सी.सी. समूह का प्रथम स्थान है, जिसकी उत्पादन क्षमता 18.23 मि. टन तथा उत्पादन 16.61 मि.टन. है, जो कि देश के कुल उत्पादन का 13.2 प्रतिशत है।

अन्य उत्पादक समूहों से संबंधित विवरण निम्न सारणी में प्रदर्शित है –

सारणी – 1

क.	समूह का नाम	उत्पादन क्षमता	उत्पादन	देश की कुल क्षमता	देश के कुल उत्पादन में भागीदारी (प्रतिशत में)
1.	जे.पी. सीमेण्ट लि.	05.60	05.43	03.73	4.3
2.	ए.सी.सी.	18.23	16.61	12.14	13.2
3.	एल.एण्ड टी.	17.00	12.92	11.32	10.3
4.	इण्डिया सीमेण्ट	08.81	06.51	05.8	5.2
5.	जे.के. ग्रुप	06.42	05.77	04.28	4.6
6.	बिरला लि.	04.78	05.02	03.18	4.0
7.	मद्रास सीमेण्ट	05.47	03.66	03.64	2.9
8.	गुजरात अम्बूजा	14.57	14.47	9.70	11.5
9.	जुआरी सीमेण्ट	03.40	02.53	02.26	2.0
10.	लफ्रेज	05.00	04.39	03.33	3.5
11.	सेन्चुरी टे.	05.90	06.07	03.93	4.8
12.	अन्य	40.35	29.04	27.21	23.7
13.	योग	150.14	125.56	100.00	100.00

Source : Cement Statistics C.M.A. Publication

देश की कुल सीमेण्ट उत्पादन क्षमता में प्रथम पांच समूह ए.सी.सी., एल.एण्ड.टी., ग्रासिम, अम्बूजा तथा इण्डिया सीमेण्ट का योगदान 72.72 मि. टन अर्थात् 48.5 प्रतिशत है तथा उत्पादन में 63.65 मि.टन. अर्थात् 50.7 प्रतिशत है। गत वर्षो सन् 2015 व 2016 में इनकी उत्पादन क्षमता में भागीदारी कमशः 496 व 48 प्रतिशत थी। विश्व के सीमेण्ट उत्पादक देशों में सीमेण्ट उत्पादन क्षमता व उत्पादन के क्षेत्र में चीन के पश्चात् भारत का नाम आता है, किन्त् सीमेण्ट उत्पादन लागत के मामले में भारत प्रथम स्थान पर है, क्योंकि यहां सीमेण्ट उत्पादन लागत 1200–1400

रूपये प्रति टन है। देश में प्रति व्यक्ति सीमेण्ट का उपभोग विश्व स्तर से कम है, किन्तु न्यूनतम उत्पादन लागत व विकास की अपार संभावनाओं को दृष्टिगत रखते हुये यह कहा जा सकता है कि, आगामी कुछ वर्षो में यह अंतर खत्म हो जाएगा।

म.प्र. की औद्योगिक स्थिति व प्राकृतिक खनिज सम्पदाएं सीमेण्ट उद्योग हेतु अनुकूल पर्यावरण का निर्माण करती है। चूंकि सीमेण्ट उत्पादन में चूना पत्थर सर्वाधिक मात्रा में प्रयुक्त होने वाला भारयुक्त खनिज है, जिसका परिवहन अत्याधिक व्यय साध्य है किन्तु यह प्रकृति का वरदान ही है कि मध्यप्रदेश में चूना पत्थर की खदानें रेल लाइन के निकट है, जिससे आवश्यक कच्चे माल व सीमेण्ट का परिवहन सरल हो जाता है। इसके साथ–साथ मध्यप्रदेश का देश के मध्य में स्थित होने का एक लाभ यह भी है कि महानगरों एवं औद्योगिक नगरों में जहां सीमेण्ट के लिए बड़े बाजार से रेल व सड़क मार्ग द्वारा सीधे संपर्क में है।

भारतीय आधारभूत उद्योगों के समूह में सीमेण्ट उद्योग का स्थान लौह एवं इस्पात उद्योग के उपरांत दूसरे स्थान पर आता है। भारतीय सीमेण्ट उद्योग प्रथम विश्व युद्ध (1914–18) के बाद ही विकास के पथ पर अग्रसर हुआ। प्रथम महायुद्ध के पूर्व सीमेण्ट का उत्पादन मात्र 1000 टन था जो युद्धोपरांत बढ़कर 84000 टन हो गया। तदुपरांत कुछ वर्षो के पश्चात् सीमेण्ट उद्योग पर संकट के बादल गहराने लगे, क्योंकि देश के अंदर एवं बाहर दोनों जगह से कड़ी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ा। इस दौर का सामना करने के लिए सन् 1938 में भारतीय सीमेण्ट उत्पादक संघ (ए.सी.सी.) का गठन किया गया जिसके प्रमुख उद्देश्यों में निम्न का समावेश किया गया। सीमेण्ट उद्योग की विदेशी प्रतिस्पर्धा से रक्षा करना, सीमेण्ट के उत्पादन एवं मूल्यों को नियंत्रित सीमेण्ट 1.5 लाख टन आयातित की गई वहीं 1940 में घटकर यह 21000 टन तक सीमित रह गई तथा कुछ वर्षो बाद भारत आत्मनिर्भर हो सीमेण्ट निर्यातक देशों की श्रेणी में शामिल हो गया।

भारत द्वारा 1970 से श्रीलंका, बांग्लादेश एवं पश्चिमी एशिया के कुछ देशों को सीमेण्ट निर्यात किया जा रहा है, जो विदेशी मुद्रा आय वृद्धि में सहायक है। 1978 में देश में सीमेण्ट की कमी को दृष्टिगत रखते हुये निर्यात प्रतिबंधित कर दिया गया और स्थिति सुधरने पर 1981 से पुनः निर्यात प्रारंभ कर दिया गया। भारत द्वारा विगत वर्षो में विभिन्न देशों को निर्यात की गई सीमेण्ट की स्थिति निम्न सारणी के माध्यम से प्रदर्शित है –

सारणी – 2

सीमेण्ट निर्यात विवरण (2011–2016)
(मात्रा Mnt. में)

वर्ष	2011 –12	1212– 13	2013– 14	2014– 15	2015 –16
मात्रा	3.12	4.112	4.14	4.19	6.13

भारतीय अर्थव्यवस्था में सरकार को राजस्व देने में सीमेण्ट उद्योग तृतीय स्थान पर है जिससे केन्द्र सरकार को लगभग 3500 करोड़ से भी अधिक राशि उत्पाद शुल्क के रूप में तथा 3200 करोड़ से अधिक राशि विकय कर के रूप में राज्य सरकारें प्राप्त करती है। इसके अतिरिक्त 1500 करोड़ के करीब अधिकार शुल्क, चुंगी के रूप में राजस्व सरकार को प्राप्त होता है। अतः केन्द्र व राज्य सरकारें कुल मिलाकर 83050 करोड़ रूपये राजस्व के रूप में विभिन्न मदों में संग्रहित करती है। भूमंडलीकरण के दौर में आर्थिक उदारीकरण के अंतर्गत सन् 2015 तक लगभग 100000 मिलियन से अधिक निवेश, सीमेण्ट उद्योग जगत् में हुआ था जो बढ़कर वर्तमान में लगभग 150000 मिलियन से अधिक हो चुका है।

अतः सीमेण्ट उद्योग के विकास की दर व निवेश की मात्रा को देखकर यह कहना उचित होगा कि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ सीमेण्ट उद्योग है क्योंकि एक ओर जहां स्वयं विकास के नित नवीन आयामों को प्रतिस्थापित कर सरकारी राजस्व की वृद्धि में सहायक है वहीं, दूसरी ओर

सीमेण्ट निर्माण से आवश्यक खनिज पदार्थो के उद्योग विकसित करने में भी पीछे नहीं है।

भारतीय सीमेण्ट उद्योग की दशा एवं दिशा :– भारतीय आधारभूत उद्योगों में सीमेण्ट उद्योग का स्थान लौह–इस्पात उद्योग के पश्चात् द्वितीय स्थान पर आता है। सीमेण्ट उद्योग की दशा व दिशा का वर्णन निम्न दो चरणों में किया जा रहा है :–

1. योजनाकाल के पूर्व (1914 से 1950)
2. योजनाकाल के दौरान (1951 से वर्तमान तक)

योजनाकाल के पूर्व –

भारतवर्ष में सीमेण्ट निर्माण हेतु सर्वप्रथम सन् 1904 में **South India Industrial Ltd.** की स्थापना द्वारा सीमेण्ट निर्माण हेतु प्रयास किया गया, किन्तु देश में सीमेण्ट निर्माण का सपना पूरा न हो सका। इस तरह प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व तक भारत में सोमेण्ट उत्पादन संभव न हो पाने के कारण आवश्यकता की पूर्ति हेतु सीमेण्ट का आयात 1.08 लाख टन किया जाता रहा परंतु महायुद्ध के प्रारंभ होने से आयात संभव न हो सका। यह एक प्रकार से भारत के हित में ही रहा। सन् 1913–16 के मध्य तीन सीमेण्ट कारखानों की स्थापना गई जो कमशः निम्नानुसार है : इण्डियन सीमेण्ट कंपनी, गुजरात पोरबंदर में टाटा एण्ट संस के प्रबंधन में कटनी सीमेण्ट उद्योग, कटनी सीमेण्ट उद्योग, कटनी में खटाई के प्रबंधन में बूंदी राजस्थान लखेरी में, किलिक निक्सन के प्रबंधन में। इस तरह 1914 में इण्डियन सीमेण्ट कंपनी लि.की स्थापना के साथ ही भारतीय सीमेण्ट उद्योग द्वारा उत्पादन में कामयामी हासिल कर नये युग की शुरूआत हुई। 1918 में प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति पर उक्त तीनों सीमेण्ट कम्पनियों में सीमेण्ट उत्पादन 85,000 टन तक जा पहुंचा।

युद्धोपरांत 1919–1924 के मध्य गुजरात, म.प्र. बिहार में जहां तीन नई इकाईयों की स्थापना की गई वहीं पुरानी तीनों इकाइयों का विस्तार भी किया गया। फलस्वरूप 1924 में सीमेण्ट की उत्पादन क्षमता बढ़कर 5,59,000 टन हो गई, वहीं सस्ती दर सीमेण्ट का आयात बदस्तूर जारी रहा। देश में सीमेण्ट की मांग में कमी तथा उपभोक्ताओं की देशी सीमेण्ट के प्रति उदासीनता के कारण उत्पादकों को सीमेण्ट लागत से कम दाम पर विकय करने के लिये मजबूर होना पड़ा जिससे भारतीय सीमेण्ट उद्योग गंभीर संकमण काल से गुजरने लगा।

सन् 1947 में स्वतंत्रता के पूर्व सीमेण्ट उद्योग की संख्या 24 थी परंतु स्वतंत्रता व विभाजन के पश्चात् 06 कारखाने पाकिस्तान चले जाने से शेष 10 रह गये जिनकी उत्पादन क्षमता 19.5 लाख टन थी जबकि वास्तविक उत्पादन 14. 5 लाख टन अर्थात् 75 प्रतिशत ही था। सन्1948 में पुनः ए.सी.सी. समूह व डालमिया जैन समूह में सन् 1938 की तरह आंतरिक प्रतिस्पर्धा शुरू हो गई। भारत में भारत काल के पूर्व सीमेण्ट उद्योग की प्रगति को निम्न सारणी द्वारा दर्शाया जा रहा है –

सारणी – 3

वर्ष	कारखानों की संख्या	(उत्पादन लाख टन में)
1914	01	0.1
1924	09	2.4
1937	11	17.0
1947	17	14.7
1950	22	27

स्रोत – भारत का आर्थिक सर्वेक्षण

योजनाकाल के दौरान सीमेण्ट उद्योग की प्रगति :– भारत में पंचवर्षीय योजनाओं में सीमेण्ट उद्योग विकास के पथ पर निरन्तर अग्रसर हुआ इसलिये सीमेण्ट उद्योग के विकास की आधारशिला पंचवर्षीय योजनाओं को माना जाता है। देश में सन्1951 में सीमेण्ट उद्योग की संख्या 23 थी जिनकी उत्पादन क्षमता 33.3 लाख टन थी तथा 1983 में संख्या बढ़कर 66 हो गई और उत्पादन क्षमता 350 लाख टन हो गई। दसवीं पंचवर्षीय योजना में सन् 2005 तक उपकमों की संख्या 128 तथा उत्पादन क्षमता 151.159 लाख टन हो गई। केन्द्र सरकार द्वारा सीमेण्ट उद्योग को बढ़ाया देने 18 जनवरी 1965 को भारतीय सीमेण्ट निगम स्थापित किया गया।

पंचवर्षीय योजनाओं में सीमेण्ट उद्योग की प्रगतिविवरण निम्न सारणी के माध्यम से प्रस्तुत है।

सारणी – 4
नियोजन काल में सीमेण्ट उद्योग की स्थिति (मात्रा मि.टन में)

सन्	योजना काल	उत्पादन क्षमता	उत्पादन
1950–1951	पूर्व	3.28	2.20
1955–1956	I	5.02	4.60
1960–1961	II	9.30	7.97
1965–1966	III	12.0	10.97
1973–1974	IV	19.76	14.66
1978–1979	V	22.58	19.42
1984–1985	VI	42.00	30.13
1989–1990	VII	61.31	45.42
1996–1997	VIII	105.26	76.22
2001–2002	IX	145.99	106.90
2030–2004	X	157.48	123.50
2004–2005	XI	166.74	132.58
2005–2006	XII	170.51	140.14
2006–2007	XIII	171.89	160.00
2007–2008	XIV	179.56	165.11
2009–2010	XV	182.24	178.00
2009–2010	XVI	189.37	179.67
2010–2011	XVII	192.74	183.92
2011–2012	XVIII	195.59	189.45

Source : Quarterly Journal C.M.A.publication

संदर्भ :

1. भारतीय अर्थव्यवस्था– सोलहवां संस्करण हिमालया प्रकाशन
2. गुप्ता आर.सी. – उद्योगों का संगठन एवं प्रबंध
3. सिन्हा व्ही.सी. – औद्योगिक अर्थशास्त्र
4. कुल श्रेष्ठ डॉ. आर.एस. – औद्योगिक अर्थशास्त्र, 2000
5. योजना मासिक पत्रिका, योजना भवन नई दिल्ली।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

भारत की दल व्यवस्था में जातीयता की भूमिका

डॉ.गुलराना परवीन
एम.ए., एम फिल, पी–एच.डी. (राजनीति विज्ञान)
नचिकेता इंस्ट्टीयूट इन्फारमेशन एंड मैनेजमेंट एंड टेक्नॉलाजी, जबलपुर

प्रस्तावना : गांधी जी राय के अनुसार – जातीवाद या जातीयता अंग्रेजी के कॉस्टमाइज का हिन्दी अनुवाद है। जातिवाद ने प्रारंभ से ही भारतीय राजनीति में ऐतिहासिक भूमिका निभाई है। इसने कभी राजनीति के प्रवाह को अपनी ओर मोड़ा है तो कभी स्वयं में समस्या बनकर राष्ट्रीय एकता के मार्ग में बाधा डाली है। यदि जातिवादी और क्षेत्रवादी प्रवृत्ति भारतीय राजनीति से समाप्त हो जाए तो निश्चित रूप से राजनीति भ्रष्टाचार एवं संकीर्णता को बड़े पैमाने पर दूर किया जा सकता है। जातिवादी र्प्रवत्तियों ने भारतीय संस्कृति और एकता को भी प्रभावित किया है। इधर हाल के वर्षों में जातिवादी दंगों ने सामाजिक सौहार्द की भावना को समाप्त कर दिया है। [96]

भारतीय राजनीति में जातीय आधार काफी मजबूत है। हालांकि आधुनिक जनतंत्रीय राजनीति में जातीयता का कोई स्थान नहीं होना चाहिए, परंतु भारतीय परिवेश में इसे शक्तिशाली राजनीतिक तत्व का दर्जा हासिल है। आमतौर पर लोग अपनी जाति और संप्रदाय से संबंधित व्यक्ति पर भरोसा करते है। इसका प्रमुख कारण यह है कि यदि राजनेताओं के चरित्र और राजनीतक निष्ठा पर ध्यान दिया जाये तो शायद कम ही लोग इस कसौटी पर खरे उतरेंगे। इसलिए आम व्यक्ति अपनी ही जाति के उम्मीदवार को वोट देना ज्यादा उचित समझते है।

भारतीय समाज की सरंचना जातीय व्यवस्था पर आधारित है। जिसे राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ती के लिए इस्तेमाल किया जाता है। परंतु समानता और आजादी के उच्च लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए जाति बंधन का त्याग जरूरी है। इस उद्देश्य को शिक्षा के प्रसार के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। भारत में जातियता एक पूर्ण व्यवस्था के रूप में विकसित हुई है। इसका आधार काफी मजबूत है। विशेषकर समाज में कार्य के बंटवारे के कारण भी इस प्रथा को बहुत बल मिला है। लोहार, बढ़ई, बुनकर आदि अपने व्यवसायों के कारण समाज में अपनी एक पहचान रखते है। उनका व्यवसाय यदि उन्हें समाज में स्थान दिलाने में सहायक है तो दूसरी ओर वह उनकी आर्थिक आवश्यकताओं का पोषक भी है।

जाति और उपजातियों के संबंध में आपस में इस प्रकार जुड़े हुए हैं कि उन्हें राजनीतिक स्तर पर अलग करके नहीं देखा जा सकता। परन्तु विभिन्न जातियों ने राजनीति को प्रभावित अवश्य किया है। इसके कई उदाहरण देखने को मिलते हैं। राजस्थान, पंजाब और हरियाण में जाट समुदाय के लोगों ने अपने समुदाय के लोगों को वोट देकर उन्हें सकीय राजनीति में स्थान दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जातियता के कारण उत्तर प्रदेश में ब्राम्हण, राजपूत, कायस्थ और हरिजन समाज के राजनीतिक स्तर में काफी परिवर्तन आया है। विशेषकर हरिजन और पिछड़ी जातियों ने राजनीतिक क्षेत्र में अपनी प्रतिबद्धता का परिचय दिया है। बहुजन समाज पार्टी ने अन्य राजनीतिक दलों की तुलना में बहुत कम समय में अनुसूचित जातियों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने में सफलता प्राप्त की है। जिसका परिणाम यह हुआ कि आज वह एक सशक्त राजनीतिक दल के रूप में यूपी, उत्तरांचल, पंजाब, हरियाणा और मध्यप्रदेश में अपनी उपस्थिति दर्ज कराने में कामयाब हुई है। शायद इन्हीं कारणों से रजनी कोठारी जैसे राजनीतिक विद्वान जाति को भारतीय राजनीति का महत्वपूर्ण अंग समझते हैं। डॉ. नालिनी रेवडीकर, डॉ. गोविंद प्रसाद शर्मा, डॉ. सीमा सोनी का विचार है कि–

संविधान ने यद्यपि धर्म एवं जाति निरपेक्ष राजनीतिक व्यवस्था कायम की है। यद्यपि देश के

[96] गांधी जी राय भारतीय शासन प्रणाली पृष्ठ 332

राजनीतिक, सामाजिक जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है, जो जातिवाद से प्रभावित न हो।

जातीय व्यवस्था को अस्वीकार तो नहीं किया जा सकता परंतु भारतीय परिवेश में राजनीतिक संस्कृति द्वारा इसकी एक दिशा अवश्य ही निर्धारित की जा सकती है। जिसका उद्देश्य भारतीयता की भावना को प्रोत्साहित करना हो सकता है। स्थानीय जन की आर्थिक समस्याओं के निवारण के लिए भी उनमें जागरूकता पैदा करना जरूरी ह। आपसी सहयोग और सोहर्दपूर्ण वातावरण में ही किसी समस्या को हल किया जा सकता है। जातियता के आधार पर समस्याओं को हल करने से समाज के अन्य वर्गों में अशांति और अविश्वास फैलता है। वर्तमान परिस्थितियों में समाज का स्वरूप काफी बदल गया है। विभिन्न धर्म और जातियों के लोग साथ–साथ रहते हैं, जिनकी आर्थिक समस्याएं करीब करीब एक सी होती है। अतः सबको साथ लेकर चलना जरूरी है। जाति, और धर्म के भेद को समाप्त करना संभव नहीं है, परंतु प्रत्येक नागरिक को यह ज्ञात होना चाहिए, कि राष्ट्रीयता का महत्व भी कुछ कम नहीं ह।[97]

रोनाल्ड सीगल ने जातिवाद पर लिखा है कि,

भारत के राजनैतिक दलों ने विभिन्न जातियों के मध्य पाई जाने वाली प्रतिस्पर्धा का बड़ा ही गलत लाभ उठाया है, जाति एवं राजनैतिक दल एक दूसरे पर अधिक निर्भर होते जा रहें हैं। जातियों के मध्य यह भावना उत्पन्न हो गई है कि यदि उनकी जाति ने राजनैतिक महत्व को अपने संगठन के कारण प्राप्त कर लिया तो उनकी राजनैतिक पहुंच बढ़ जाएगी और राजनीति, शैक्षणिक, व्यावसायिक तथा आर्थिक लाभों को प्राप्ति संभव हो जाएगी। [98]

जातियता और क्षेत्रीयता दोनों एक दूसरे की पूरक है, जातियता का प्रमुख कारण वर्ण भेद है। फिर उपजातियों के भद ने इस समस्या को और गहरा कर दिया है।

प्रोफेसर रजनी कोठारी के मत की विवेचना करते हुए प्रो. नंदलाल कहते हैं,

राजनीतिक प्रकिया का लक्ष्य सामाजिक व्यवस्था में विद्यमान ढांचों का चातुर्य के साथ प्रयोग करना होता है। जिससे कि समाज के विभिन्न वर्गों के समर्थन के माध्यम से शक्ति को सुनियोजित किया जा सके। जाति तथा भारतीय राजनीति के मध्य सुस्पष्ट संबंध का कारण यह बताया जाता है कि भारतीय सामाजिक व्यवस्था में जाति संगठनात्मक ढांचे की सर्व प्रमुख इकाई है, जिसमें व्यक्ति स्वेच्छानुसार रहना चाहता है, ऐसी स्थिति में राजनीति के पास मात्र एक विकल्प यह बचा रहता है कि वह इसी इकाई के माध्यम से अपने लक्ष्यों की पूर्ती का प्रयास करें। [99]

प्रोफेसर रजनी कोठारी के विचारों से सहमत होने के बाद भी प्रश्न यह उठता है कि यदि राजनीति के द्वारा जातियता के रास्ते पर चलकर ही राजनीतिक उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है। परंतु इसका अर्थ यह नहीं हो सकता कि जाति विशेष के हितों को ही महत्व दिया जाए। विशेष कर राजनीतिक दल जाति प्रेम में फंसकर अल्पसंख्यक वर्ग की समस्याओं को नजर अंदाज कर जाते हैं। जिस प्रकार भारत की सभी जातियां आर्थिक और सामाजिक स्तर पर प्रगति करना चाहती है, उसी प्रकार अन्य अल्प संख्यक वर्गों की जातियां भी प्रगति पथ पर अग्रसर होना चाहती है। यदि यह कहा जाए कि जातिवाद को राजनीतिक दलों ने सांप्रदायिकता का द्योतक बना दिया है तो शायद गलत न होगा। यदि राजनीतिक दल के लिए जातिवाद एक वैकल्पिक व्यवस्था है। तो अन्य अल्प संख्यक वर्गों में जहां जाति व्यवस्था नहीं है, उन तक पहुंचने के लिए राजनीतिक दलों के पास कौन सा रास्ता है? रंगनाथ मिश्रा कमीशन, और जस्टिस राजेन्द्र सच्चर, कमेटी की रिपोर्ट द्वारा राजनीतिक दलों के सामने अल्पसंख्यक समुदाय की आर्थिक और सामाजिक स्थिति का पूरा विवरण प्रस्तुत कर दिया गया है। इसके बाद सांप्रदायिक दलों के विरोध का कारण क्या है? क्या राजनीतिक दलों का यह नैतिक कर्तव्य नहीं है कि वह देश और समाज के प्रत्येक नागरिक के विषय में विचार

[97] डॉ.नलिनी रेवड़ीकर, डॉ. गोविन्द प्रसाद शर्मा, डॉ.सीमा सोनी भारतीय शासन एवं राजनीत पृष्ठ 163
[98] एचएस वार्डिया, आधुनिक भारत में सामाजक समस्याएं पृष्ठ 185
[99] नंदलाल राजनीत विज्ञान पृष्ठ 514

करें? नैतिकता और मानवता ही राजनीति का आधार न होने के कारण ही देश में सांप्रदायिकता को बल मिला है। जिससे कानूनी व्यवस्था भी प्रभावित हो रही है। देश की उन्नति और प्रगति में इस मानसिकता का त्याग जरूरी है।

संदर्भ ग्रंथ :

[1] गांधी जी राय भारतीय शासन प्रणाली पृष्ठ 332
[2] डॉ.नलिनी रेवड़ीकर, डॉ. गोविन्द प्रसाद शर्मा, डॉ.सीमा सोनी भारतीय शासन एवं राजनीत पृष्ठ 163
[3] एचएस वार्डिया, आधुनिक भारत में सामाजक समस्याएं पृष्ठ 185
[4] नंदलाल राजनीत विज्ञान पृष्ठ 514

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

''श्रीभार्गवराघवीयम् एवं भार्गवीयम् महाकाव्य आधुनिक काव्य जगत का दर्पण ''

डॉ. कोमल प्रसाद झारिया
एम.ए.,एम.फिल., पी.एच.डी. (संस्कृत साहित्य)
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म0प्र0)

भूमिका : श्रीभार्गवराघवीयम् एवं भार्गवीयम् महाकाव्य महाकवि जगद्गुरू स्वामि रामभद्राचार्य एवं डॉ. मिथिला प्रसाद त्रिपाठी द्वारा विरचित इक्कीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक काल मं उत्कृष्ट कथा के आधार पर प्रणीत महाकाव्य हैं। 21वीं शती की अरूणोदय बेला मं रचित संस्कृत साहित्याकाश का एक ऐसा दैदीप्यमान महाकाव्य रूपी सूर्य हैं, जिनकी प्रखर रश्मियों की चकाचौंध के समक्ष अद्यतन सम्पूर्ण संस्कृत काव्य जगद् धूमिल सा प्रतीक हो रहा है। ये दोनों रचनाकार धन्य हैं, जिन्होंने अपनी काव्य संरचना द्वारा भारत की चित्तभूमि को उर्वरक बनाया, इसी कम में श्रीभार्गवराघवीयम् एंव भार्गवीयम् महाकाव्य संस्कृत साहित्य के अमर ग्रन्थ के रूप मे हैं और भारत वर्श की जो साधना, अराधना और सकल्प है, इन्हीं का इतिहास इन दोनों विशालकाय काव्य प्रासादों के भीतर चिरकालिक सिंहासन पर विराजमान हैं। अतःइन महाकाव्यों का संक्षिप्त परिचय संम्भवतः दृश्टव्य है.

''तद् गुणौः कर्णामागत्य चापलाय प्रचोदितः।।'' रघु. महा. ।।

शोध पत्रः संस्कृत साहित्य की सुदीर्घ परम्परा में श्रीभार्गवराघवीयम, संस्कृत महाकाव्य का विशिष्ट स्थान है। 21वीं शताब्दी की प्रभात बेला में उदित होने वाले इस महाकाव्य में तेजस्विता, गम्भीरता तथा अद्वितीयता जैसे लोकोत्तर गुण स्वतः विद्वमान हैं। जगद्गुरू स्वामि राभद्राचार्य जी के कर्त्रृत्व में गुणों की व्यापकता, भावों की गूढ़ता एवं नवीनता, भाषा की प्रसन्नता एवं गम्भीरता, आचार्योचित मर्यादा, शास्त्रीय चिन्तन की प्रचुरता तथा सिद्धांत दृव्यवहार की समवेत चिन्तनधारा विलक्षणताएं पदे.पदे परिलक्षित होती हैं। अतः श्रीभार्गवराघवीयम् संस्कृत महाकाव्य इस श्रृंखला की एक महत्वपर्ण कडी है। यहाँ भाव पक्ष और कला पक्ष में सामांजस्य है। पद, वाक्य प्रबंधार्थ, गुण, अलंकार, रस आदि के रहते अनेक व्याकरणिक एवं लोकाचारगत् औचित्यपरक उपादानों का गुम्फन जहाँ एक ओर श्रीभार्गवराघवीयम् का वैशिष्ट्य निर्देशित कर रहा है वहीं दूसरी ओर एक सारस्वत साधक एवं महाकवि की शब्द ब्रह्मउपासना का भी पर्याप्त परिचय करा रहा हैं। महाकवि का वैदुश्य अत्यन्त व्यापक है। आपने जीवन की विविध उच्चावच स्थितियों एवं विषम परिस्थितियों का स्वयं अनुभव किया है। यही कारण है कि श्रीभार्गवराघवीयम् महाकाव्य में पदे–पदे वेद,दर्शन, व्याकरण, ज्योतिश, काव्यशास्त्र, अलंकार शास्त्र, छन्दशास्त्र नाट्यशास्त्र राजनीति, नीति एवं पुराणेतिहासादि का अगाध पाण्डित्य परिलक्षित होता है। श्री भार्गव-कृतराघवस्तवनम् एवं श्रीराधव परिणयः नामक 21सर्गों में निबंद्ध श्रीभार्गवराघवीयम् महाकाव्य में भार्गव और राघव अर्थात् श्री परशुराम और श्री राम से संबंद्ध संपूर्ण इतिवृत्त को महाकवि ने अपने जिस आध्यात्मिक दृमौलिक चिन्तन एवं विलक्षण प्रतिभा के द्वारा अत्यन्त नूतन आयाम दिया है, निःसंदेह वह संस्कृत जगत् के लिए सर्वथा नवीन मौलिक एवं मील का पत्थर है। महाकाव्य के प्रत्येक सर्ग मे 101 श्लोक हैं, सर्गान्त में महाकवि ने सर्गों की संख्या की गणना के लिए ज्योतिशीय अंकविद्या का आश्रय लिया हैं श्रीभार्गवराघवीयम् में महाकाव्य के संपूर्ण लक्षणों का आद्यान्त निर्वहण किया गया है। तथा कथा वैशिष्ट की दृष्टि से भी महाकाव्य की महत्ता स्वमेव सिद्ध है। इस महाकाव्य में नायक राम की महत्ता सम्पूर्ण काव्य में आद्यान्त निर्वहण किया गया है। यहाँ सहनायक परशुराम के नायकत्व के उत्कर्ष को लांघने में सर्वथा असमर्थ रहें हैं, किन्तु अन्त में श्रीपरशुराम जी का सम्पूर्ण तेज श्रीराम जी में समाहित हो जाता हैं तथा वे राम की स्तुति करते हुए महेद्र पर्वत की ओर चले जाते

हैं। रस निधान की दृष्टि से महाकवि ने श्रीभार्गवराघवीयम्, का अंगीरस वीर रस स्वीकारा है। महाकवि ने श्रृंगार रस का प्रयोग शास्त्रीय एवं सामाजिक रसानुभूति को उपयोगिता की दृष्टि से किया है। अर्थात्, लगभग 33 पारम्परिक एवं नवीन छन्दों का प्रयोग करके न केवल मूर्धन्य कवियों की अग्रिम पंक्ति में अपने को स्थापित किया है अपितु संस्कृत काव्यशास्त्र में एक नवीन मानक भी सुस्थिर किया है तथा संस्कृत साहित्य के अन्य कवियों की भाँति महाकवि ने अपने काव्य में लगभग सभी अलंकारों का प्रयोग किया है, तथापि कवि को अनुप्रास अत्यन्त प्रिय है। उनकी इस अनुप्रासप्रियता का दर्शन प्रायः प्रत्येक सर्ग में किंव पदे–पदे पारिलक्षित होता है। इस महाकाव्य में आद्योपान्त प्रकृति का व्यापक चित्रण मिलता है। प्रकृति के अनेक मनोरम रूपों उपवन, वन, पर्वत, सर, सरिता ,सागर, ऋतु, काल, दिन, रात्री आदि का विषद् एवं मनोहारी वर्णन महाकाव्य में सहज सुलभ है। महाकवि ने श्रीभार्गवराघवीयम् महाकाव्य में विविध सामाजिक दृश्यों, स्थितियों दृपरिस्थितियों तथा मानवीय मनोभावों को झकझोर देने वाली सूक्तियों का पदे–पदे प्रयोग अर्थान्तरन्यासों के माध्यम से करने क अत्यंत सफल प्रयास किया है। महाकवि जगद्गुरू स्वामी रामभद्राचार्य जी श्रीभार्गवराघवीयम् संस्कृत महाकाव्य की रचना करते हुए लिखते हैं–

''रामौ गायन् स्मरन रामौ रामभद्राचाह्वयो मुदा।
क्षपयिश्ये कलिं राममहाकाव्यापदेषतः ।।''श्रीभार्गवरा.1/10।।

अर्थात् मै स्वामि रामभद्राचार्य इन राम अर्थात् श्रीपरशुराम एवं प्रभु श्रीराम के चरित्रों से संबंध भार्गवराघवीयम् महाकाव्य की रचना के बहाने भगवान् श्री परशुराम एवं भगवान् श्री राम को गाता हुआ तथा उन्हीं दोनों अंश एवं अंशी श्री परशुराम एवं भगवान् श्रीराम का स्मरण करता हुआ खेल–खेल में प्रसन्नता पूर्वक कलि अर्थात् कलियुग से उत्पन्न दोषों एवं उनकी विडम्बनाओं को नष्ट कर लूँगा। अर्थात् श्रीभार्गवराघवीयम् महाकाव्य की रचना करके मैं कलिकाल की विभीषिकाओं से युक्त हो लूँगा। इस प्रकार यह श्रीभार्गवराघवीयम् संस्कृत महाकाव्य कुल 2121 श्लोकों से युक्त आधुनिक युग का एक बृहद् महाकाव्य है। डॉ. मिथिला प्रसाद त्रिपाठी द्वारा रचित भार्गवीयम् महाकाव्य भी 21वीं शताब्दी के महाकाव्यों में से एक बहुत ही महत्वपूर्ण महाकाव्य है जिसका अवलोकन करके और अनुकरण करके तथा इसका ज्ञान प्राप्त कर विद्वान् लोग अपने आप धन्य समझते हैं। अतः भार्गवीयम् महाकाव्य सम्पूर्ण भारत वासियों के लिए हितग्राही बन गया है, क्योंकि भारत वर्ष ऋषियों–मुनियों का जन्म स्थल है और इन्हीं ऋषि–मुनियां से सम्बंधित सम्पूर्ण भृगुवंशी ऋषियों का विस्तार से बड़ा ही मनोहर चित्रण प्रस्तुत किया गया है अतः यहाँ कि भूमि अत्यन्त पवित्र और पुण्य है। अर्थाथ् निःसंदेह भार्गवीयम् महाकाव्य में डॉ. त्रिपाठी जी ने एक महान् लक्ष्य प्राप्त करने का महत्वपूर्ण प्रयास किया है, और उसमें उन्हें सफलता भी प्राप्त हुई है, क्योंकि इस महाकाव्य की रचना का विषय कोई साधारण विशय नही है, बल्कि इसमें भृगुवंश जैसे श्रेष्ठ वंश का एवं इस वंश में उत्पन्न भगवान् परशुराम जी के सम्पूर्ण चरित्र का वर्णन किया गया है। अतः अत्यन्त संयम अथवा अत्यधिक काव्य कौशल द्वारा ही इस कविता को हास्यास्पद अथवा अनाकर्शक बनने से बचाया जा सकता है। इसलिए इस रचना में डॉ. मिथिला प्रसाद त्रिपाठी जी के महान् गुण सबसे स्पष्ट रूप में देखने को मिलते हैं। भार्गवीयम् महाकाव्य भी 32 सर्गों में निबद्ध हैदृ डॉ. मिथिला प्रसाद त्रिपाठी जी ने महाकाव्य के रचना के विषय में स्वयं लिखते हैं।

''स्मृत्वा मुहुर्भृगुकुलं प्रभवानुवृत्तम्

मोहाच्च संरचयिंतुं सममून्मनीशा।

यास्यामि काञ्चिदुपहासगतिं विचिन्त्य

नत्वा गुरून् विरचयामि च भार्गवीयम्।।''

भार्गवीयम् 1/6।।

अर्थाथ् भृगुकुल की उत्पत्ति कथा को बार.बार स्मरण करके मोहवश अपनी बुद्धि से रचना करने हेतु किस उपहास गति को प्राप्त होऊँगा ऐसा विचार कर गुरूओं को नमस्कार करके भार्गवीयम् की रचना करता हूँ। अतः इस महाकाव्य में कुल श्लोकों की संख्या 1691 हैं। यह भार्गवीयम् महाकाव्य अपनी सुन्दर भाव व्यंजना उदात्त एवं कोमल कल्पना तथा प्रांज्वल पद विन्यास के

कारण यह आधुनिक रूचि के विशेष अनुकूल है। निःसंदेह भार्गवीयम् महाकाव्य का सृजन मानवीय प्रेम को उदात्त भूमि पर प्रतिष्ठित करने के लिए हुआ है। वास्तव में भार्गवीयम् महाकाव्य की कथा एक पौराणिक कथा वर्णन मात्र नहीं है, वरन् एक ऐसा कवि कर्म है, जिसने सम्पूर्ण भृगुवंश का मानवीय करण करके उनकी सत्ता की भावना, कला और कल्पना के सूत्रों में पिरो दिया है। अतः यह कहा जा सकता है कि महाकवि जगद्गुरू स्वामि रामभद्राचार्य द्वारा प्रणीत श्रीभार्गवराघवीयम् संस्कृत महाकाव्य और डॉ. मिथिला प्रसाद त्रिपाठी द्वारा रचित भार्गवीयम् महाकाव्य दोनों ही आधुनिक युग के महाकाव्यों में से प्रमुख हैं। इन महाकाव्यों की गाथा सम्पूर्ण भारत वर्ष में फैलकर भारत की भूमि को सदैव पवित्र करने में सहायक सिद्ध होगी। अर्थात् धन्य है यह भारत भूमि जहाँ देवता भी जन्म लेने के लिए लालायित रहते हैं। युगों–युगों से अनेक ऋषियों, महर्षियों, संतों, विचारकों एवं विद्वानों ने इस भारत–भूमि पर जन्म लेकर अपनो प्रतिभा से भारत वर्ष को विश्वगुरू के पद पर प्रतिष्ठित किया है। इसी आर्शप्रसू विद्वत्प्रसू भारत भूमि पर धर्मचक्रवर्ती महामहोपाध्याय श्री चित्रकूट तुलसीपीठाधीश्वर जगद्गुरू रामानन्दाचार्य महाकवि स्वामि श्रीरामभद्राचार्य नामक एक युग पुरूष एवं डॉ. मिथिला प्रसाद त्रिपाठी जी प्रकट होकर आद्यावधि अपनी आर्शप्रभा एवं सारस्वत प्रतिभा से विष्व इतिहास में न केवल अपने अपितु भारत वर्ष को भी शीर्षांकित एवं स्वर्णांकित किया है। इस प्रकार श्रीभार्गवराघवीयम् एवं भार्गवीयम् इन दोनों महाकाव्यों में मानव मूल्य परक सभी पक्षों का वर्णन किया गया है तथा एक भव्य विषय को भव्य शैली में प्रस्तुत करने में सफल हुआ हैं। अतः निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि यह अमर भारत वर्ष भावी कवियों के लिए उसी प्रकार आश्रय है, जैसे प्राणियों के लिए मेघ.

''सर्वेशां कविमुख्यानामुपजीव्यो भविश्यति।

पर्जन्य इव भूतानामक्षयो भारतद्रुमः।।

''सं.सा.का इति. पृ.सं.63।।

संदर्भ–ग्रंथ :

1. रघुवंषम् महाकाव्य, महाकवि कालिदास, गीता प्रेस गोरखपुर
2. श्रीभार्गवराघवीयम् महाकाव्य, स्वामि रामभद्राचार्य, जगद्गुरू रामभद्राचार्य विकलांग विश्वविद्यालय चित्रकूट (उ0प्र0)
3. भार्गवीयम् महाकाव्य, डॉ. मिथिला प्रसाद त्रिपाठी, मॉ अन्नपूर्णा प्रकाषन 85बीं सुदामा नगर, इन्दौर (म.प्र.)
4. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा प्रकाशन वाराणसी
5. संस्कृत साहित्य का इतिहास, अनु–मायाराम शर्मा, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकदमी,पटना

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

कबीर का निष्काम कर्मयोग की अवधारणा

डॉ. मनीष कुमार झारिया
डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर, (म.प्र.)

कबीर का निष्काम कर्मयोग की अवधारणा :–

फल प्राप्ति की आशा से निरपेक्ष होकर बिना किसी आसक्ति–भाव के कर्म करना निष्काम कर्म है। 'गीता' में निष्काम कर्मयोगी को जल में अवस्थित होते हुए भी उससे निर्लिप्त रहने वाले पद्मपत्र की तरह बताया गया है।[1] 'साथ ही यह भी कहा गया है कि निष्काम कर्मयोगी कर्मों के फल को परमेश्वर को अर्पित करके भगवत्प्राप्ति रूप शान्ति के फल को प्राप्त करता है।[2]

कबीर सच्चे अर्थों में एक निष्काम कर्मयोगी थे। वे गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए जगत् के नाना रूपात्मक विषयों में कभी आसक्त नहीं हुए। उनका कहना है कि सच्चा संत वही है जो सम्पूर्ण विषयों में अनासक्त होकर निर्वेद भाव से मानव मात्र के कल्याण में तत्पर रहता है तथा ईश्वर के प्रति अनन्य निष्ठा रखता है।[3] उन्होंने निः स्पृहता एवं निष्काम भावना के साथ कर्म करने को जीवन की लक्ष्य साधना का सच्चा मार्ग बताया है। जो व्यक्ति मोह, माया और आसक्तियों से पूर्ण भौतिकता के मार्ग पर चलता है, उसका जीवन नष्ट हो जाता है, तथा जो जगत गति के विपरीत चलकर अनासक्ति भावना के साथ अध्यात्म मार्ग का अनुसरण करता है, वह अपने चरम लक्ष्य तक पहुँच सकता है।[4]

कबीर ने अपनी जीवन–साधना में निष्काम कर्मयोग को स्वीकार किया है। एक सच्चे कर्मयोग के समस्त गुण उन में विद्यमान थे। उन्होंने निः स्पृहता की कर्मवृत्ति धारण करने वाले योगी की भूरि–भूरि प्रशंसा की है। निष्काम भावना के अनुसार अनारसक्त रहते हुए एक कच्चा कर्मयोगी साधना के लिए कभी बाहर नहीं जाता। वह घर में ही रहकर निष्काम भाव से कर्म करते हुए योग–साधना में प्रवृत्त होता है। इतना ही नहीं, वह घर का त्याग करने वाले भ्रमित हुए साधक को घर में रहकर साधना के लिए प्रेरित करता है। वास्तव में साधना बाहर में प्राप्त होने वाली कोई वस्तु नहीं, वह तो मन की पवित्रता और दृढ़ आस्था के द्वारा घर में ही प्राप्त हो सकती।[5]

कबीर का मानना है कि निष्काम कर्म व्यक्ति की जगत के मिथ्या व्यवहार तथा सांसारिक आपदाओं एवं परिस्थितियों के बीच रहते हुए भी उसमें निर्विकार भाव से संघर्ष करने की प्रेरणा देता है। निष्काम कर्म का आचरण करने वाला साधक ही भगवद् भक्ति में सच्चे मन से तल्लीन रहता है।[6] वह समस्त प्राणियों में सदैव एक ही आत्मसत्ता के दर्शन करता है। उसमें परोपकार और सेवा के भाव इस प्रकार जाग उठते हैं कि वह तन, मन, धन से लोक –कल्याण में संलग्न हो जाता है।[7]

कबीर ने अपना यह मत बार–बार दुहराया है कि निष्काम कर्मयोग की साधना करने वाले संत का चित्त शांत एवं निश्छल हो जाता है। वह किसी भी प्राणी में भेदबुद्धि नहीं रखता। वह सबको समास दृष्टि से देखता है। सत्य, संतोष एवं धैर्य का अवलंबन ग्रहण करते हुए वह ईश्वर का निरंतर गुणमान करता है। तथा काम, क्रोध, तृष्णा इत्यादि मनोविकारों की आसक्तियों से सदैव असंपृक्त रहता है। वह कभी असत्य भाषण नहीं करता और न ही दूसरों की निंदा करता है। कबीर ने ऐसे सम्यक् दृष्टि वाले साधक को एक सच्चा आध्यात्मिक पुरूष माना है।[8] एक सच्चा कर्मयोगी कभी भी अपने मन में दूसरों के प्रति भेदभाव का संशय नहीं रखता। वह मानव धर्म का पालन करते हुए भौतिक भोगों के प्रति सदैव उदासीन रहता है। वह स्वकीयत्व एवं परकीयत्व में कोई अंतर नहीं देखता तथा कुवचन, अहंकार और आडम्बर की मिथ्या भूल–भुलैया में कभी नहीं पड़ता।[9]

इस प्रकार, कबीर एक निष्काम कर्मयोगी की भाँति संसार में रहते हुए भी संसारी नहीं बने। उनके मन में किसी भी प्राणी के प्रति कोई

भेद–भाव नहीं था। इसलिए वे सबको सृष्टि के कण–कण में व्याप्त आत्मसत्ता को पहचानने एवं समस्त प्राणियों के प्रति समत्व को भाव रखने की शिक्षा देते थे।

कबीर का कर्मयोग किसी संकुचित दृष्टि अथवा बाद विशेष की धारणा पर आधारित नहीं है। उन्होंने प्राणिमात्र के कल्याण के लिए निष्काम कर्मयोग की साधना करने पर बल दिया है। सच्चा कर्मयोगी परहित–साधना को अपना कर्त्तव्य समझकर सेवाभाव में सदैव अनुरक्त रहता है तथा दूसरे सुख को ही अपना सुख मानता है। उसे अपने व्यक्तिगत सुख–दुःख की कोई चिन्ता नहीं रहती।[10] वह भले–बुरे की परवाह किये बिना लोक–सेवा के कार्य में सदैव संलग्न रहता है तथा पवित्र मन से हरि की भक्ति करता है।[11]

कबीर का कर्मयोग समज में व्याप्त ऊँच–नीच, जाँति–पाँति तथा छुआछूत के विरोधी भावों पर आधारित है। उन्होंने परस्पर सद्भावनापूर्वक जीवन बिताने की युक्ति बताई है। उनका कहना है कि सबमें एक ही आत्म तत्व विद्यमान होने के कारण राजा अथवा प्रजा में कोई अंतर नहीं है। सभी प्राणियों में एक ही रक्त प्रवाहित होता है। तथा जन्म लेने के पूर्व सभी एक ही समान माता के गर्भ में रहते हैं[12] कबीर ने अपने कर्मयोग के द्वारा सारे समाज में फैली विषमताओं एवं धार्मिक आडम्बरों का खण्डन करके मानवमात्र को प्रेम, एकता एवं सद्भावना का पाठ पढ़ाया है। उन्होंने धर्म के तथाकथित ठेकेदारों को फटकारते हुए उन्हें धर्म के वास्तविक रास्ते पर चलने के लिए बाध्य कर दिया उनका स्पष्ट मत था–

''सो मुलना जो मनस् लरै।

काजी सो जे काया विचारै, अस निसि ब्रह्म अगनि प्रजारै।
जोगी गोरख गोरख करै, हिन्दू राम नाम उच्चरै।।
मुसलमान कहै एक खुदाइ, कबीरा को स्वामी घटि–घटि रहयौ समाई।।[13]

इस प्रकार कबीर का निष्काम कर्मयोग मानवमात्र को आसक्ति–रहित होकर जीवन में निर्विकार भाव से कर्मशील रहने की प्रेरणा प्रदान करता है। उनका कर्मयोग निश्चित रूप से 'गीता' के कर्मयोग का दी प्रतिरूप है, जिसमें निः स्पृह होकर कार्य में प्रवृत्त रहने एवं शांति प्राप्त करने का रहस्य उद्घाटित किया गया है।[14]

कबीर की कर्मयोग साधना की समस्त विशेषताएँ उनके काव्य मं अभिव्यक्त है, इसमें ज्ञान, भक्ति एवं कर्म का तात्विक समावेश है। उन्होंने योगसाधनों के दुर्गमसोपानों पर कदम रखते हुए विभिन्न योगमार्गों का अनुसरण किया तथा अपनी साधना की अनुभूतियों के द्वारा उनका परीक्षण करके भारतीय धर्म के साधनात्मक पक्ष को एक दृष्टि प्रदान किया।

कबीर ने अपने काव्य में कर्मयोग की साधना का प्रतिपादन करते हुए उसके स्वरूप और महत्व का जो निरूपण किया है, वह निश्चित रूप से योग–पद्धति की एक तात्विक दृष्टि का गहन अर्थ देती है। कर्मयोग भक्तियोग से जुड़ी हुई है। कबीर ने भक्ति –साधनों के अंतर्गत शरीर रक्षा, गुरू एवं साधुजन, की सेवा, ईश्वर नाम स्मरण, सत्संगति, दुर्गणों का त्याग एवं सद्गुणों का ग्रहण, त्याग एवं आत्म–समर्पण की भावना तथा परोपकार एवं समदर्शिता के पवित्र मूल्यों को ग्रहण किया है, जो साधना की दृष्टि से नितांत उपयोगी है। इनके द्वारा जीवन के आध्यात्मिक अभ्युत्थान का एक सशक्त आधार है, जिसमें निर्गुण अहैतुकी भक्ति तथा प्रेमलक्षणा भक्ति की मूल्यवत्ता को विशेष स्थान दिया गया है। कबीर के इन उभय भक्तिरूपों के द्वारा उनकी अनासक्ति और प्रेम–भावना की सात्विकता का पता चलता है।

कबीर की समस्त योग–पद्धतियों का केन्द्र बिन्दु उनकी हठयोग–साधना है। हठयोग भी कर्मयोग का अंग है। उन्होंने इस साधना के अंतर्गत यम, नियम, आसन, प्राणायाम, बंध तथा मुद्राओं का सूक्ष्म निरूपण किया है, जो योगदर्शन के सिद्धांतों एवं मान्यताओं के अनुरूप होने के साथ–साथ हठयोग–परम्परा का एक महत्वपूर्ण कड़ी है। उनकी हठयोग–साधना के मूल उद्देश्य कुंडलिनी–उत्थापन एवं सच्चे आत्मज्ञान की प्राप्ति रही है। कुडलिनी–शान्ति जाग्रत हो जाने पर साधक मुक्ति पद को प्राप्त कर लेता है। कबीर ने कुंडलिनी–उत्थापन–प्रक्रिया एवं आत्मा की

सिद्धावस्था की अनुभूतियों का जो वर्णन किया है, वह पूर्णतया सार्थक एवं तर्कसम्मत है।

कबीर ने शब्दसुरति योग तथा ध्यान–योग के विविध पहलुओं एवं साधना की जिन प्रक्रियाओं को अपने काव्य में रूपायित किया है, वह अति विशिष्ट है। शब्दसुरति योग के द्वारा नाद का प्राक्टय होता है, तथा साधक को अलौकिक आनंद की प्राप्ति होती है। इस प्रकार, ध्यान– योग की ब्रह्मसत्ता की वास्तविक अनुभूति कराता है और साधक प्रत्यक्ष रूप से उस परमसत्ता में एककारित हो जाता है।

कबीर ने अपनी कर्मयोग–साधना को आध्यात्मिक एवं व्यावहारिक दोनों दृष्टियों से उपयोगी सिद्ध किया है। उन्होंने कर्म का स्वरूप–विश्लेषण करते हुए उसका जन्मांतर व्यवस्था के साथ व्यवस्था के साथ जो संबंध निर्धारित किया है, वह भारतीय आध्यात्म–साधना की मान्यता और आस्था की पुष्टि करता है।

उनके द्वारा निर्दिष्ट शुभ कर्मों के संपादन में नैतिक संयम की अनिवार्यता पूर्णतया वस्तुसंगत है, क्योंकि नैतिक आचरण के बिना शुभ कर्मों का सम्पादन संभव नहीं है।

इस प्रकार कबीर की योग–साधना विविध योग– मार्गों का अनुगमन करती हुई आत्म–दृष्टि के ऐसे बिन्दु पर केन्द्रीभूत होती है, जहाँ पहुँचकर मन का हर संशय मिट जाता है तथा तत्वबोध का अनंत दीप प्रज्वलित हो उठता है।

संदर्भ–ग्रंथ :

1. ''ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सिडंग त्यक्तवा करोति यः। लिप्तये न स पापेन पद्मयत्रभिवाम्भसा।। ''श्री.भा.गी. 5/10
2. ''युक्तः कर्मफलं त्यक्तवा शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम्। अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबिध्यते।। ''वही'' पृ. 5/52
3. ''निरबैरी निहककामता, सांई सेती नेह। विषिया सूंन्यारा रहे, संतनि का अंग एह।। '' क.ग्र.', पृ.50
4. ''ऊघट चलै सु नगरी पहुंचे, बाट चले ते लूटे। एक सेवडी सब लपटाने, के बांध के छूटे।। ''वही– पृष्ठ–147
5. ''अवूध भूले को घर लावै, सो जन हम कूं भावै। घर मं जोग भोग घर ही में, घर तजि वन नहीं जावै। बन के गये कलपना उपजै, तब धौ कहाँ समावै। घर में मुक्ति मुक्ति घर ही में जो गुरू अललखावै। सहज सुंन्नि में रहै समांना, सहज समाधि लगावै। घर में वस्तु वस्तु में घर है, घर की वस्तु मिलावै। '' 'कबीर बचनावली', प.–214
6. ''कबीर जो धंधै तो धूलि, बिन धंधै– धलै नहीं। ते नर विनठे मूलि, जिनि धंधै में ध्याया नहीं।। '' ' क. ग्र.' पृ.–23
7. ''कहै कबीर बिचारि करि, जिनि को लखै न भंग। सेवा तन मन लाई करि, राम रह्या सरवंग।। '' 'वही', पृ–242
8. ''राम भजै सो जानिय, जांके आतुर नांही, सत संताषलीयै रहे, धीरज मन मांही । जन को काम क्रोध व्यायै नहीं, त्रिष्णां न जरावै। प्रफुलित आनंद में, गोव्यदं गुण गावै। जन को पर निदां भावै नहीं, अस असतिन भाषै। काल कलपना मेटि करि, चरनू चित राखै। जन सम द्रिष्टी सीतल सदा, दुबिधा नहों आनै। है कबीर का दास सूत मेरा मन मानै। ' क.ग्र.' पृ–209
9. ''दया राखि धरम को पालै, जग सौ रहे उदासी। अपना साजिव सबको जानै, ताहि मिलै अविनासी। सहै कुशब्द बाद को त्यागै, छांडे गर्व गुमानां। सत नाम ताही को मिहिलै, कहै कबीर सुजाना। '' 'कबीर परिशिष्ट 2 कबोर वाणी', पृ–209
10. ''सेवा करतां सो सुख पावा, तिन्ह सुख दुख दोऊ विसरावा'' ' क.ग्र.' पृ–241
11. ''ओंकार आदि है मूला, राजा परजा एकहिं सूला। हम तुमह मांहै एकै लाहू, एकै प्रान जीवन है मोहू।। एक ही वास रहै दस मासा, सूतग पातग एकै आसा। एक ही जननी जन्यां ससारा, कौन म्यांन थै भय निनारा।। '' 'वही', पृ. –224
12. 'वही' पृ–200
13. ''विहाय कामान्य' सर्वान्युमांश्चरति निः स्पहः। निर्भयो निरहंकारः स शान्तिमधिगच्छति।'' ' श्री मा.गी.', 2/71

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Precipitation Arithmetical and Statistical Study of Shivna River Basin, Madhya Pradesh, India

Shyam Lal Bamniya[1], Pramendra Dev[2],Vinita Kulshreshtha[3]

1. School of Studies in Earth Science, Vikram University, Ujjain, M. P., India
2. 9 Adarsh Vikram Nagar, Sheti Nagar, Ujjain, 456010, M. P. India.
3. Department of Geology, Govt. R. G. P. G. College, Mandsaur, M. P., India.

Abstract :- The precipitation arithmetical and statistical Study is vitally important for any river basin like Shivna River Basin, Madhya Pradesh, India. In this paper, monthly and annual Precipitation arithmetical and statistical study have been studied using monthly data series of 41 years (1974–2014). Shivna River Basin showed an increasing trend in annual precipitation. In Shivna River Basin the monsoon months of June to September account for more than 80% of the annual precipitation. The arithmetical analysis determines a variation trend of precipitation data. The precipitation departure from the average precipitation was of higher value during the years of 1976 - 1978, 1981, 1983, 1986, 1987, 1990, 1991, 1993-97, 1999, 2004, 2006, 2007, 2009 and 2011-2014. The years indicating higher values of departure from the average precipitation revealed favorable period for recharge of rainwater to the ground water storage. The statistical analysis for precipitation data points out determination of Mean, Median, Standard Deviation, Coefficient of Dispersion, Coefficient of Variation and Coefficient of Skewness. This parameter indicate that the amount of precipitation ranges upto 35.99, co-efficient of dispersion value 0.359 reveals the nature of scatterness of precipitation distribution.

Key words :- Precipitation, Arithmetical, Statistical, Shivna River Basin, Madhya Pradesh, India.

Introduction :- Precipitation is one of the most important factors of climate. The precipitation distribution throughout time and space would impact human life. Rain is liquid form of precipitation. The term “Precipitation” has been described by Wiesner (1970) as “The deposition of water from the atmosphere on to a surface” It occurs in different forms such as dew, fog, cloud and forest. The liquid form of natural precipitation is usually known as the “precipitation” The rain drops range in size from oblate, pancake-like shapes for larger drops, to small spheres for smaller drops. Rains can presence by many ways such as: Frontal activity, convection, and orographic effects. On global scale, the precipitations also influenced by global monsoon system. Monsoon is usually defined as a seasonal reversing wind accompanied by seasonal changes in precipitation. Rain requires the presence of a thick layer of the atmosphere to have temperatures above the melting point of water near and above the Earth's surface. On Earth, it is the condensation of atmospheric water vapours into drops of water heavy enough to fall, often making it to the surface (Falahah and Suprapto, 2010).

Changing precipitation pattern, and its impact on surface water resources, is an important climatic problem facing society today. Associated with global warming, there are strong indications that precipitation changes are already taking place on both the global and regional scales (India receives about 80% of its total precipitation during the summer monsoon season, from June to September (Sahai et al., 2003). Goswami et al. (2006) using a high resolution daily gridded precipitation data set showed that there are significant rising trends in the frequency and the

magnitude of extreme rain events over central India during the monsoon season. The study also showed that significant decreasing trend in the frequency of moderate events during the same period, thus leading to no significant trend in the mean precipitation. Variation in the monsoon precipitation has both social and political impact as in India agriculture largely depends on rain. For observed data that exhibit high seasonality, methods to analyze trends should be those that incorporate the seasonal component. Spatial differences in trends can occur as a result of spatial differences in the changes in precipitation and temperature and spatial differences in the catchment characteristics that translate meteorological inputs into hydrological response (Burn and Elnur, 2002).

Trend is present when a time series exhibits steady upward growth or a downward decline, at least over successive time periods. Trend may be loosely defined as "long-term change in the mean level", but there is no fully satisfactory mathematical definition. But trend analysis helps in finding 'forecasting'. The base of scientific forecasting is statistics. Trend analysis was carried out to examine the long term trends in precipitation over different subdivisions. The precipitation trend is very crucial for the economic development and hydrological planning for the country. Long term trends of Indian Monsoon precipitation for the country as a whole as well as for smaller regions have been studied by several researchers. (Maraghatham, 2012).

Study Area :- The present study area is located in the Shivna River Basin within the Latitudes 23º 32' to 24º 15' N and Longitudes 74º 47' E to 75º 22' E (Survey of India, Toposheet No 46 I/13 and 14, 46 M/ 1, 2 and 5, 45 L/ 16, 45 P/4, 7 and 8 on the scale of 1: 50,000, Figure -1). Shivna River originates from the Sevna village, (23^0 42'30.6" N: 74^0 48' 91.4" E) at an elevation of about 524 m. in Pratapgarh District of Rajasthan, Shivna River is a main tributary of Chambal River, which extends over 103.4 km covering parts of Madhya Pradesh and Rajasthan, Shivna River Basin covers a total area of 3361.52 sq. km.The present study area constitutes a part of Malwa Plateau of the Deccan Volcanic Province (Upper Cretaceous to Lower Eocene). It is characterized by the development of different basaltic lava flows and alluvium mainly along the river course. The study area is approachable both by road and rail throughout the year. The temperature ranges from 4.1^0c to 45^0 C with an average of 24.3 ^{0} C. The minimum precipitation has been recorded as 227.30 mm and the maximum precipitation has been noted as 1441.80 mm.Annual average precipitation has been computed as 734.00 mm.

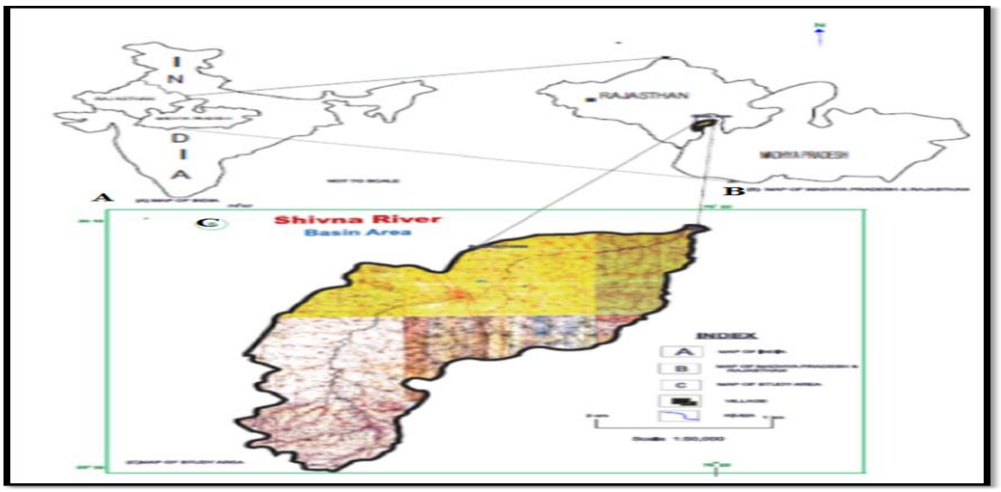

Figure 1. Location Map of Shivna River Basin, Madhya Pradesh, India

The data analysis involved computation of average value of precipitation for duration of months and years. The calculated total annual precipitation for a period from 1974 -2014 and departure from the average annual precipitation, departure and cumulative departure average precipitation are recorded (**T**able- **2)** On the basis of annual precipitation data for 41 years, the average annual precipitation has been computed 734.01 mm.

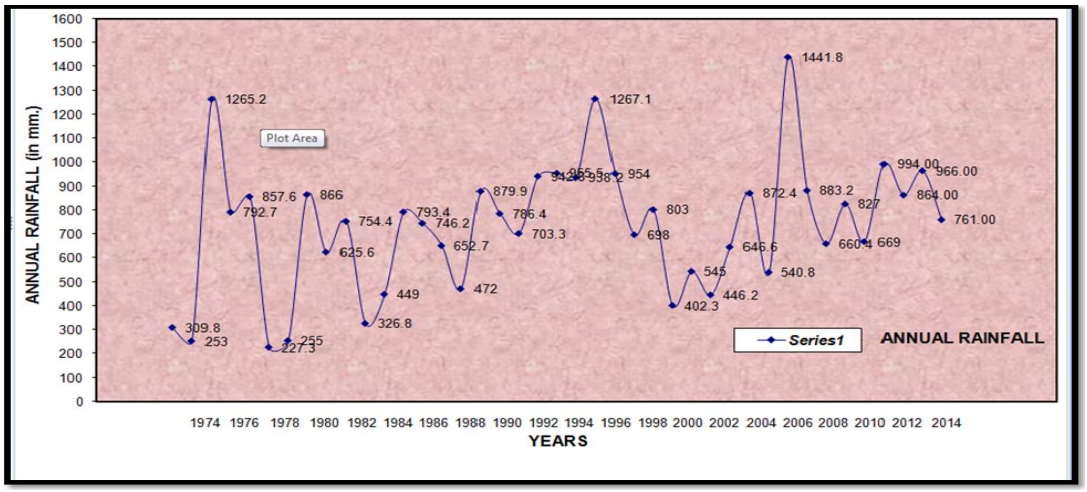

Figure 2. Total Annual Rainfall (in mm) of Shivna Basin for the Period of 1974-2014

The average monthly annual precipitation of Mandsaur area for the period of 1974 – 2014 has been displayed by graphical representation method (Figure -3). It has been observed that maximum precipitation was recorded during area, June to September, with a peak value of 248.71 mm. during month of July (Table -2).

Table 2. Average Monthly Precipitation of Shivna River Basin Area Period for 1974-2014

Sr. No.	Month	Average Precipitation	Cumulative Average Precipitation
1	January	25.29	25.29
2	February	11.37	36.66
3	March	11.57	48.23
4	April	11.57	59.80
5	May	12.34	72.14
6	June	88.81	160.95
7	July	248.71	409.66
8	August	227.75	637.41
9	September	120.86	758.27

10	October	32.60	790.87
11	November	49.84	840.71
12	December	19.89	860.60

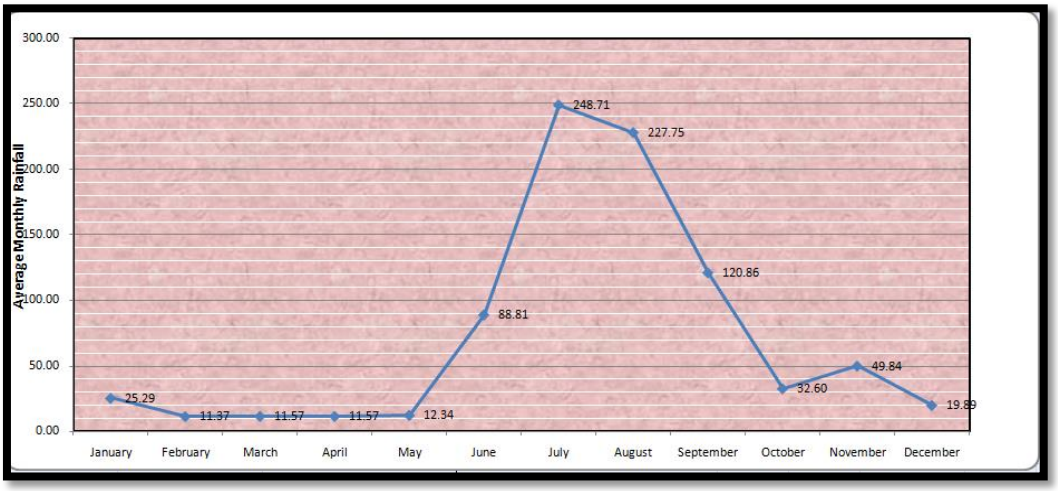

Figure 3 Average Monthly Precipitation of Shivna River Basin Area Period or 1974-2014

Table 3. Departure from Average Precipitation and Cumulative Departure from Precipitation Shivna Basin Area for the Period of 1974-2014.

Sr. No.	Years	Total Precipitation	Departure from Average Precipitation	Cumulative Departure from Precipitation
1	1974	309.8	-424.21	-424.21
2	1975	253	-481.01	-905.22
3	1976	1265.2	531.19	-374.03
4	1977	792.7	58.69	-315.34
5	1978	857.6	123.59	-191.75
6	1979	227.3	-506.71	-698.46
7	1980	255	-479.01	-1177.5
8	1981	866	131.99	-1045.5
9	1982	625.6	-108.41	-1153.9

10	1983	754.4	20.39	-1133.5
11	1984	326.8	-407.21	-1540.7
12	1985	449	-285.01	-1825.7
13	1986	793.4	59.39	-1766.3
14	1987	746.2	12.19	-1754.1
15	1988	652.7	-81.31	-1835.5
16	1989	472	-262.01	-2097.5
17	1990	879.9	145.89	-1951.6
18	1991	786.4	52.39	-1899.2
19	1992	703.3	-30.71	-1929.9
20	1993	942.8	208.79	-1721.1
21	1994	955.5	221.49	-1499.6
22	1995	938.2	204.19	-1295.4
23	1996	1267.1	533.09	-762.33
24	1997	954	219.99	-542.34
25	1998	698	-36.01	-578.35
26	1999	803	68.99	-509.36
27	2000	402.3	-331.71	-841.07
28	2001	545	-189.01	-1030.1
29	2002	446.2	-287.81	-1317.9
30	2003	646.6	-87.41	-1405.3
31	2004	872.4	138.39	-1266.9
32	2005	540.8	-193.21	-1460.1
33	2006	1441.8	707.79	-752.33
34	2007	883.2	149.19	-603.14

35	2008	660.4	-73.61	-676.75
36	2009	827	92.99	-583.76
37	2010	669	-65.01	-648.77
38	2011	994	259.99	-388.78
39	2012	864	129.99	-258.79
40	2013	966	231.99	-26.8
41	2014	761	26.99	0.19

The plots of annual precipitation data (Figure-2) indicate two peaks of maximum annual precipitation during the year of 1976, 1996 and 2006. The trend of that there have been variations in the precipitation amount at a regular interval during 1976-2006, since 2006 the recent past period from 2007-2014. It has been observed that the maximum precipitation of 1441.80 mm was recorded during 2006 whereas the minimum precipitation of 227.30 mm was noted during year 1979. The plots of data have indicated a considerable variation in the amount of precipitation. The precipitation more than the current average has been recorded during the year 1976-1978, 1981, 1983, 1986,1987, 1990,1991,1993-1997,1999,2004,2006-2007,2009 and 2011-2014. The declining trend of precipitation below the calculated average value has been observed during the period 1974, 1975, 1979, 1980, 1982, 1984, 1985, , 1988, 1989,1992,1998, 2000-2003,, 2005, 2008, and 2010.

The analysis indicates that precipitation amount during the period from 2014 has been upper the computed average annual precipitation value of 734.01mm. The current trend is revealing that precipitation is increasing at alternate years.

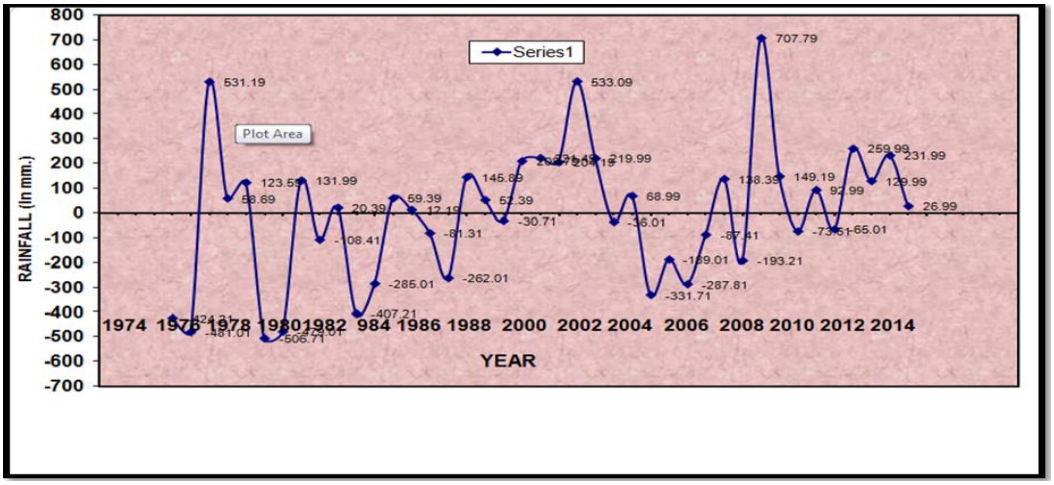

Figure 4. Departure of Average Precipitation for the Period of 1974-2014.

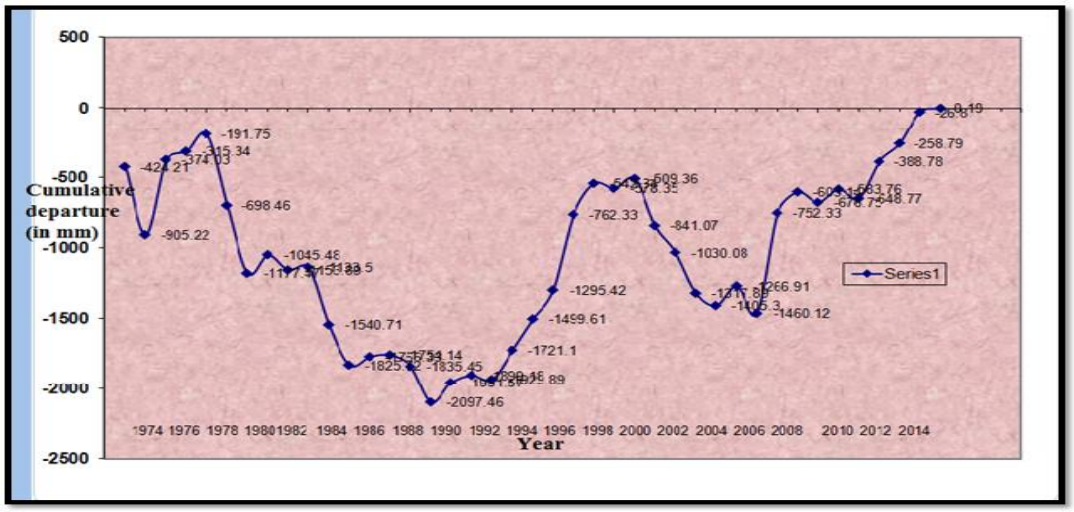

Figure 5.Cumulative departure of the Shivna Basin for the Period of 1974-2014.

The departure and cumulative departure for precipitation from the average precipitation during the period from the 1974 to 2014 has been recorded in **Table -3** the graphical representation has been shown in figure 4 and 5. It has been observed that the precipitation departure from the average precipitation was of higher value during the years of 1976 - 1978, 1981, 1983, 1986, 1987, 1990, 1991, 1993-97, 1999, 2004, 2006, 2007, 2009 and 2011-2014. The years indicating higher values of departure from the average precipitation revealed favorable period for recharge of rainwater to the ground water storage. Whereas the periods of 1974, 1975, 1979, 1980, 1982, 1984, 1985, 1988, 1989,1992,1998, 2000 -2003, 2005, 2008 and 2010 reveal precipitation amount below the average annual precipitation. The years of low precipitation, indicate that there has been decline in the recharge of the water to the ground water reservoir.

Statistical Method :- The statistical method for precipitation data analysis involves the computation of central tendencies (mean, mode, median, skewness, dispersions, standard deviation kurtosis, and time series analysis.

The precipitation data of the study area have been classified into different class intervals for the determination of mean, mode, median and other statistical parameters (**Table-4**). The methodology of computation of different statistical parameters of precipitation data is described as below-

Table 4. Statistical Analysis of Precipitation data of Shivna Basin Showing.

Class Interval	Mid Value (X)	Frequency (f)	u=X-900/200	fxu	u^2	Fxu^2	Cumulative
200-400	300	5	300-900/200= -3	-15	9	45	5
400-600	500	6	500-900/200=-2	-12	4	24	11
600-800	700	13	700-900/200=-1	-13	1	13	24

800-1000	900	14	900-900/200=0	0	0	0	38
1000-1200	1100	0	1100-900/200=1	0	1	0	38
1200-1400	1300	2	1300-900/200=2	4	4	8	40
1400-1600	1500	1	1500-900/200=3	3	9	9	41
Total	**6300**	**f = n = 41**	**6300**	**-33**	**28**	**99**	**197**

Mean :- Mean, for a set of observations is the sum divided by the expression as

Mean =A+ (I x $\sum$ fu) / N

Where - A = Assumed mean =900

I = Class interval = 200

F = frequency = fu = -33

N = Total frequency = 41

Mean = 900+ [200x (- 33)] / 41

= 900+ (- 6600) / 41

= 900- 160.97

Mean = 739.03 mm

Median :- For a set of observation, Median is the variables, which divides it in to two equal parts. It is determined by the following formula-

Median- I + i / f (N/2 –c)

Where I = lowest limits of median class

(800 – 1000) = 800

F = frequency of Median class = 14

I = magnitude of median class = 200

c = cumulative frequency of the class

Preceding the median class = 24

Median = 800 + 200 / 14 (41 / 2 – 24)

= 800 + 14.28(20.5 – 24)

= 800 + 14.28 (-3.5)

= 800 + (-49.98)

= 800-49.98

Median = 750.02

Mode :- Mode has been defined as the value, which occurs most frequently in a given set of observations. It is determined by the following expression

Mode = I + [i (f1 -f0)] / [2 f1-f0-f2]

Where- I= lowest limit of model class

(800 – 1000) = 800

i = class interval =200

f_0 = frequency of class preceding of model class = 13

f_1 = frequency of model class = 14

f_2 = frequency of class searching the model class = 0

Mode = 800 + [200 (14 - 13] / [2 (14) – 13 -0]

= 800 + [200/ 28 – 13 – 0]

= 800 + [200 / 15]

= 800 +13.33

Mode = 813.33

Standard deviation :- Standard deviation is a measure of the positive square root of arithmetic mean of the square of the deviation of the given values from their arithmetic mean. It is calculated by following formula –

$$\sigma = I/N \sqrt{\sum fu^2 - (\sum fu)^2}$$

Where

σ = 200/41 √ 99 - (-33)] ^{2} σ = standard deviation

σ = 200 /41√ 41x99 – 1089 N = Total frequency = 41

σ = 200/41 √ 4059-1089 i = Class interval = 200

σ = 200/41 √2970 fu^2 = 99, fu = -33

σ = 4.87 x 54.49

σ = 266

Co – Efficient Dispersion :- It is defined as measure of scatteredness and is determined by following expression -

CD = Standard Deviation / Mean
Where,

Co-Efficient=Standard Deviation/Mean
Standard Deviation (SD) = 266 CD =
266 /**739.03**
Mean= 739.03

CD = 0.359

Co – Efficient of Variation :- It is considered as the percentage variation in the mean. The standard variation is considered as the total variation in the mean. It is determined by the following formula –

CV= 100 x SD/Mean

Where-

CV= 100x.266 \739.03 Standerd Deviation (SD) = 266

CV= 35.99
Mean = **739.03**

Co – Efficient of Skewness :- It represents lack of symmetry in the given distribution. It is calculated by application of following

Co – efficient of skewness = (Mean – Mode) / Standard Devation.

Where Mean =739.03

Mode = 813.33

Standerd Deviation (SD) = 266

Skewness = 739.03 – 813.33/ 266

= - 74.3 / 266

= - 0.279

The statistical analysis of precipitation data of Basin area reveals that mean precipitation has been observed as 739.03 mm. The median and mode value of precipitation data have been determined as 750.02 and 813.33 respectively. The computed value of mode indicates the ideal precipitation of the area. The determination of Standard deviation reveals that deviation of precipitation is of 266 mm over a period of 41 years.

The variation in amount of precipitation varies from years to years, is expressed by co-efficient of variability. It has been observed that this parameter indicate that the amount of precipitation ranges upto 35.99, co- efficient of dispersion value 0.359 reveals the nature of scatterness of precipitation distribution. The determined value of co-efficient of skewness – 0.279 indicates a lack of symmetry in the precipitation amount during the period of last 41 years.

Time Series Analysis :- The time series analysis provides significant information regarding the trend of a series of observation. It helps to measure the deviation from the trend and also reveals the nature of trend. Time series analysis is used as a tool to forecast the behavior of the future trend .The method of least square fit of straight line has been followed for per forming the trend analysis of the behavior annual precipitation. A time series determines a tendency to increase or decrease, over a specified period. 'This series provides an interesting illustration because the trend is usually predominant, virtually no other movement is discernable' (Croxton etal, 1988).

The straight-line equation can be expressed as –

$Y_c = a + bx$

Where Y_c = Trends value of dependent variables

X = Independent variables

To establish a best fit straight line, the value of a and b must be determined from the observed data. This is done by simultaneous solving of two normal equations -

$\sum y =$ **Na +b Σx.....(1)**

$\sum x y = a\sum x + b\sum x^2$ .....(2)

The value of different elements in the above equation has been determined by Considering y as variables (annual precipitation) and x as constant (year), (Table 5.5)

The determination are made as per the following procedure

$\sum y = 30094.6, \sum x = 0$

$\sum x y = 42192.6, \sum x^2 = 5740$

N = 41

Substituting these values in normal equation (1) and (2) two equations in term of A and B are developed--

30094.6 =41a + b 0 ..... (3)

42192.6= a (0) + b (5740) ..... (4)

Solving equation (3) and (4), the values of (1) and (2) are obtained as and respectively. The future forecast of precipitation amount of Ten year 2015 to 2024 has been made and it can reveal ± 50 mm variations in the expected amount.

a=734.014 **b = 7.350**

Σy = Na +b Σx **$\Sigma xy = a\Sigma x + b\Sigma x^2$**

30094.6 = 41 (a) + (b) 0 **42192.6 = a (0) + b (5740)**

30094.6 = 41 a **42192.6 = b (5740)**

a= 30094.6/41 **b = 42192.6/5740**

a = 734.014 **b = 7.350**

Table 5. Time Series analysis of Precipitation data of the Study Area.

Sr. No.	Years	Total Precipitation Y	X	XY	X^2
1	1974	309.8	-20	-6196	400
2	1975	253	-19	-4807	361
3	1976	1265.2	-18	-22774	324
4	1977	792.7	-17	-13476	289
5	1978	857.6	-16	-13722	256

6	1979	227.3	-15	-3409.5	225
7	1980	255	-14	-3570	196
8	1981	866	-13	-11258	169
9	1982	625.6	-12	-7507.2	144
10	1983	754.4	-11	-8298.4	121
11	1984	326.8	-10	-3268	100
12	1985	449	-9	-4041	81
13	1986	793.4	-8	-6347.2	64
14	1987	746.2	-7	-5223.4	49
15	1988	652.7	-6	-3916.2	36
16	1989	472	-5	-2360	25
17	1990	879.9	-4	-3519.6	16
18	1991	786.4	-3	-2359.2	9
19	1992	703.3	-2	-1406.6	4
20	1993	942.8	-1	-942.8	1
21	1994	955.5	0	0	0
22	1995	938.2	1	938.2	1
23	1996	1267.1	2	2534.2	4
24	1997	954	3	2862	9
25	1998	698	4	2792	16
26	1999	803	5	4015	25
27	2000	402.3	6	2413.8	36
28	2001	545	7	3815	49
29	2002	446.2	8	3569.6	64
30	2003	646.6	9	5819.4	81

31	2004	872.4	10	8724	100
32	2005	540.8	11	5948.8	121
33	2006	1441.8	12	17301.6	144
34	2007	883.2	13	11481.6	169
35	2008	660.4	14	9245.6	196
36	2009	827	15	12405	225
37	2010	669	16	10704	256
38	2011	994	17	16898	289
39	2012	864	18	15552	324
40	2013	966	19	18354	361
41	2014	761	20	15220	400
TOTAL		**ΣY=30094.6**	**ΣX=0**	**ΣXY=42192.6**	**ΣX^2=5740**

Table 6. Computation of expected Precipitation of the Study Area.

Sr. No.	Years	Expected Precipitation
1	**2015**	**888.364**
2	**2016**	**895.714**
3	**2017**	**903.064**
4	**2018**	**910.414**
5	**2019**	**917.764**
6	**2020**	**925.114**
7	**2021**	**932.464**
8	**2022**	**939.814**
9	**2023**	**947.164**
10	**2024**	**954.514**

Future trend of expected precipitation up to period of 2024 in the Study Area. The expected precipitation trend is positive.

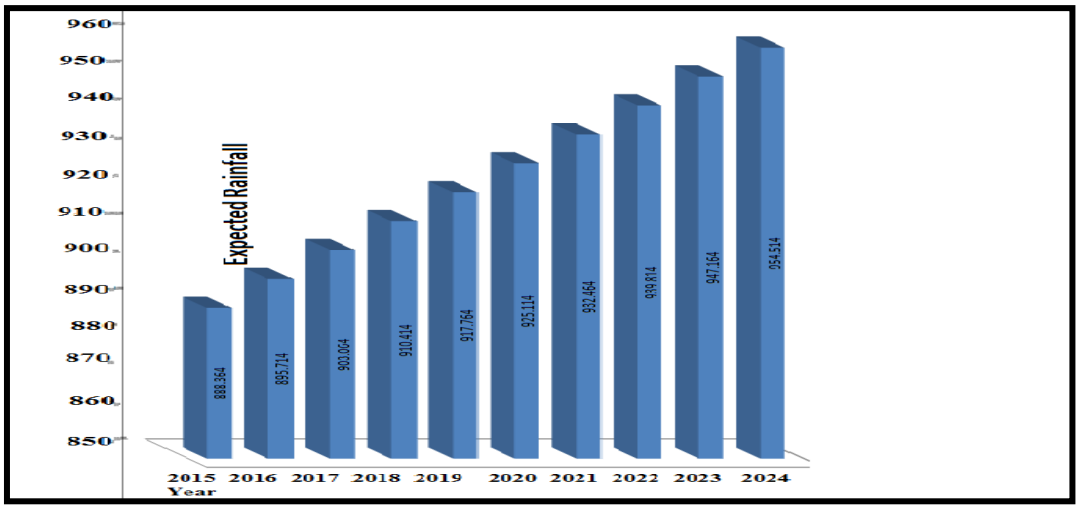

Figure 6. Future trend of expected precipitation up to period of 2024 in the Study Area.

Conclusion :- The precipitation data have been subjected to arithmetical and statistical analysis. The arithmetical analysis determines a variation trend of precipitation data that indicates range from 227.30 mm. to 1441.80 mm. and annual average value of precipitation as 734.01 mm. The analysis indicates that precipitation amount during the period from 2014 has been upper the computed average annual precipitation value of 734.01mm.

It has been observed that the precipitation departure from the average precipitation was of higher value during the years of 1976 - 1978, 1981, 1983, 1986, 1987, 1990, 1991, 1993-97, 1999, 2004, 2006, 2007, 2009 and 2011-2014. The years indicating higher values of departure from the average precipitation revealed favorable period for recharge of rainwater to the ground water storage. Whereas the periods of 1974, 1975, 1979, 1980, 1982, 1984, 1985, 1988, 1989,1992,1998, 2000 -2003, 2005, 2008 and 2010 reveal precipitation amount below the average annual precipitation. The years of low precipitation, indicate that there has been decline in the recharge of the water to the ground water reservoir.

The statistical analysis for precipitation data points out determination of Mean - 739.03 mm, Median - 750.02 mm, Mode - 813.33 mm.,Standard Deviation -266.00 mm, Coefficient of Dispersion - 0.359, Coefficient of Variation -35.99 and Coefficient of Sleekness -(- 0.279**)**.

Acknowledgements :- Sincere appreciation is recorded to Prof K.N. Singh, Professor and Head, School of Studies in Earth Science, Vikram University, Ujjain, M.P. for encouragement. Sincere thanks are due to, Dr. Eshwar lal Dangi for very generous assistance.

References :-

1. Burn, D.H. and Elnur, M.A. Hag (2002). Detection of Hydrologic Trends and Variability. Journal of Hydrology, 255, p.107-122.

2. Croxton, F. E., Cowden, D.J. and Klein, S. (1988): Applied General Statistics, Prentice-Hall, India, Pvt. Ltd., New Delhi, 754 p.

3. Davis, J. C. (1986). Statistics and data analysis in geology. John Wiley and Sons, New York, 646 p.

4. Davis, J. C. (2002). Statistics and data analysis in geology. John Wiley and Sons, New York, 638 p.

5. Falahah and Suprapto, S. (2010). Interpretation of Precipitation data using analysis factor method. Proc.Third International Conference on Mathematics and Natural Sciences (ICMNS 2010), 1288 p.

6. Goswami, B. N., V. Venugopal, D. Sengupta, M. S. Madhusoodanan, and Xavier, P.K (2006) .Increasing trend of extreme rain events over India in a warming environment Research, 20: 127- 136, Science, 314, 1442 – 1444.

7. Gupta, S. C. and Kapoor, V. K. (2003): Fundamental of mathematical statistics, Shultan Chand & Sons, New Delhi, 1100 p.

8. Maragatham, R.S. (2012).Trend Analysis of Precipitation Data-A Comparative Study of Existing Methods International Journal of Physics and Mathematical Sciences ISSN: 2277-2111 (Online) 2012 Vol. 2 (1) January-March, p.13.

9. Sahai AK, Grimn AM, Satyan V, Pant G.B, (2003) Long lead prediction of Indian summer monsoon precipitation from global SST Evolution.- Climate Dynamics 20 p. 855-863.

10. Todd, D .K.(1980): Ground water hydrology, john wiley and Sons .New York, 520 p.

11. Weisner, C .J. (1970). Hydrometeorology. Champman and Hail Ltd, London, 232 p.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. - 4 Dec. 2017
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Contribution of Bamboo in Green Management

Shivangi Dwivedi
MBA, Research Scholar, GS College Jabalpur

Abstract :- Bamboo is a naturally occurring composite material which grows abundantly in most of the part of the world. It is treated as a composite material because it has cellulose fibers imbedded in a lignin matrix. As a cheap and fast-grown resource, with superior physical and mechanical properties, bamboo offers great potential as an alternative to wood. Bamboo can widely substitute not only wood, but also the plastics & other materials in structural and product applications through improvements in processing technologies, product innovation with the application of scientific and engineering skills. Bamboo based industry has vast potential for generating income and employment, especially in the rural areas. A number of agencies are already working towards promoting the usage of bamboo into value-added products. The paper brings out technology overview of the products and associated business opportunities with a focus on sustainable development. Applications have been outlined, briefing the chemical and mechanical characteristics of different species of bamboo. A number of government initiatives have been highlighted with their contribution in bamboo promotion and hence the sustainable development.

Keywords :- Sustainable Development, SME Opportunities, Bamboo Products.

Introduction :- These days everyone is talking about bamboo. From walls to flooring, bamboo is regaled as the environmental answer to wood. Bamboo flooring is commonplace from showrooms to homes, and the building community expects that it will be used in plywood next. Just think, tomorrow your garage doors could be constructed with the renewable source.

Environmentalists love it for its quick growth and for the fact that it can be harvested without harming the environment. However, the downsides of bamboo are now being scrutinized as its popularity grows and expands throughout the world of home construction. Some of those concerns include biodiversity, soil erosion, and chemical use.

Bamboo is technically a grass and is native to South America, all parts of Asia, as well as northern Australia and areas of the southeast United States. It's touted for its strength, hardness, and fast growth rate. For builders, bamboo has more compressive strength than concrete and the same strength-to-weight ratio as steel in tension. Also, it grows much faster than trees.

Almost all of the bamboo used in the United States is grown in China. Some of the bamboo plantations there date back hundreds of years, and most of the world's population uses the grass in some form. Bamboo is common in housing for flooring, in construction as support poles, and in household implements like chopsticks or cutting boards. The fact of the matter is that bamboo is flourishing.

A positive aspect of bamboo is that it can be harvested without killing the plant. A decade ago farmers cleared virgin forest in order to plant their bamboo farms. The profitability of bamboo surpassed the profit of rice and other kinds of farming. This hasn't been the case in recent years, but a bamboo plantation doesn't have the biodiversity of a natural forest. Given its invasive nature, bamboo can also quickly take over a nearby forest.

The clearing of forest also incited concerns over soil erosion as did newly planted fields, especially on steep slopes. Researchers found, though, that planting bamboo along river banks helped decrease erosion. Once the grass was established on farms, erosion decreased there as well.

The downside to bamboo lies in its construction. Instead of being cut and used whole, like wood, bamboo is sliced into pieces and glued together. There are serious questions regarding health and safety surrounding how the bamboo is handled and the chemical components used to glue and seal it. Currently there are no standardized requirements for its construction or the glue holding it together. In fact, rates of strength and hardness vary from one end of the spectrum to the other depending on supplier, and the glue can contain formaldehyde and be harmful to the environment.

Although planting and harvesting bamboo may not impact the environment negatively, the handling of it certainly can. In six years there has been little done to ensure that it's safe for handlers or the people that manufacture it. There is still lots of room for improvement and debate of bamboo.

Sustainable development :- Sustainable development (Carlos J. Castro, 2004) is widely acknowledged as a key concept for humanities future. Sustainability calls for balancing short term business interest and long term development of both the society and company itself. It involves the simultaneous pursuit of economic, social and environmental objectives (Markus will, 2005). After more than 200 years of industrialization in the Western world and more than 50 years of 'development' in the Third World, the benefits delivered by the grand design of progress and modernity are, at best, ambiguous. Despite phenomenal advances in science, technology, medicine and agricultural production, the promise that 'development' would eradicate world poverty remains unfulfilled in several parts of the globe, especially in the Third World (Subhabrata Bobby Banerjee, 2003). Even the biggest economies shiver with small up and down in the industry. Reason behind this ambiguity is that the sustainability aspect is not being addressed properly in fast moving development efforts (Brian Kermath, 2007). Sustainable development refers to the equity, in particular concerning the todays's and future generations as defined by Brundtland Commission (WCED, 1987).This true for the resources as well as for any business. If we consider the sustainability of wood resource around the globe, availability of industrial wood from natural forests has been on decline for many years. This has raised a growing concern to save forests. Consequently the wood based industry as well as the opportunities in this area have also affected to a large extent. Wood is largely being replaced by plastics, wherever possible. However the Environmental hazards of the plastics always keep a hanging sword. On the other hand the strength properties of the plastics can never be compared with the industrial wood. Even the timbers available from fast growing plantation species generally have lower strength properties, dimensional stability and service life. Bamboo is renewable, abundantly available, low cost and environment friendly (Azmy H.J. Mohamed et al., 2007) wood resource that creates an eye of hope for the struggling wood based industry with its excellent strength (A.C. Sekhar et al, 1962; Limaye, V.D., 1952). It has tremendous economic potential with its significant applications and innovative products. Since the bamboo is widely available across the different parts of India, it offers great opportunities to the micro, small and medium scale enterprises (Markus Will, 2008). Since the bamboo resource is widely available across the rural domains and industrial effort requires a lot of labour, bamboo has a great potential to offer job opportunity and income source to the rural masses. This can ultimately lead to the sustainable development of rural folks (V. Sorna Gowri, 2003;

Suresh Moktan, 2007) and hence contributing significantly to the economy.

Mechanical and Physio-chemical Properties of Bamboos :- Bamboo offers a vast variety of commercial and domestic products due to its Excellent mechanical, physical and chemical properties (Li Xiaobo, 2004). Bamboo is a natural lingo-cellulosic composite in which cellulose fibers are embedded in the lignin and hemi cellulose matrix. Bamboo contains 44.5% cellulose, .5% lignin, 32% soluble matter, 0.3% nitrogen and 2% ash. Average length is 2 mm and average diameter is between 10-20m (Adamson, W.C, 1978). The geometry of bamboo's longitudinal profile has macroscopically functionally graded structure, which can withstand extreme wind loads. Fiber distribution is transverse cross-section at any particular height of bamboo, is dense in outer periphery and sparse in inner periphery. Bamboos mainly consist of the roots, culm and leaves. The culms are the most useful part in a bamboo. They are hollow and vary in sizes, diameters, colors and textures. The culm consists of the strands of cellulose fibers and the lignin matrix. Spaces between adjacent strands of fibers are filled with lignin, a type of resin. The number of fibrous strands increases toward the outer surface of the culm. Cellulose fiber is stronger than the lignin matrix. Also the cross-sectional area of the culm changes from location to location. Hence, the cellulose strand distribution would be different at different sections plant species. Bamboo has different mechanical properties in the three dimensions: axial, radial and tangential. However, bamboo is a biological material and it is subjected to great variability and complexity due to various conditions such as years of growth, soil and environmental conditions and the location of bamboo culm within the bamboo. Hence, it is observed that the mechanical properties of bamboos vary enormously (A. K. Ray et al., 2005). Bamboos are available in the form of different species and the mechanical and physio-chemical properties vary from one species to other species.

Conclusion :– Bamboo is a kind of fast- growing and renewable resource, which is cheap and widely available. It has unique characteristics and advantages in bringing ecological and social benefits. Bamboo based panels have similar properties to wood based panels. Since the utilization of bamboo will be well consistent with the sustainable development, bamboo based panels will become very competitive construction materials when an extensive factors are taken account of. At present, there is a large gap in the supply of pre-fabricated construction materials, and it is a very good opportunity for bamboo based panels to occupy the market, since they have so many merits compared with other building materials. However, a wide popularization of the utilization of bamboo needs to be done to make bamboo based panels better accepted by people around the world. If bamboo based panels can be well utilized in the construction industry, they will contribute a lot to the sustainable development of the prefabrication industry and the protection of environment. On the other hand, Bamboo has multiple applications in social growth and it has been utilized by the people for their cultural growth from ancient times. Most of the bamboo plantations in India are in Kerala and North-East states. In fact, the bamboo has a potential of sustainable development along with the cultural and social growth. Central government and state government have taken good initiatives for bamboo plantations and pushing the bamboo industry. The initiatives will certainly go a long way in truly evolving value-added application avenues for bamboo for catering to domestic and overseas markets through an indigenous technology route as well as entrepreneurial actions in MSMEs. Carlos J. Castro (2004), Sustainable Development: Mainstream and Critical Perspectives, Organization & Environment.

References : –

1. A.K. Ray, S. Mondal, S.K. Das and P. Ramachandrarao (2005), Bamboo-A functionally graded composite-- correlataion

between microstructure and mechanical strength, Journal of Material Science, Vol. 40, pp. 5249-5253

2. A.C. Sekhar, B.S Rawat, and R. K Bhartari (1962), Strength of bamboo (Bambusanutans). Indian Forester, Vol. 88(1), pp. 67-73.
3. Adamson, W.C., G.A. White, H.T. Derigo and W.O. Hawley (1978) Bamboo Production Research at 12. Savannah, Georgia, 1956-77. USDA-ARS-S-176. U.S. Department of Agriculture, Agricultural Research Service, Savannah, Georgia., pp. 17
4. Azmy H.J. Mohamed, J.B. Hall, Othman Sulaiman, Razak Wahab, Wan **Rashidah Wan A.B. Kadir (2007)**, Quality management of the bamboo resource and its contribution to environmental conservation in Malaysia, Management of Environmental Quality: An International Journal ,Vol. 18(6), pp. 643-656
5. Brian Kermath (2007), Why go native? Landscaping for biodiversity and sustainability education, International Journal of Sustainability in Higher Education, Vol. 8 (2), pp. 210-223
6. Chauhan, L., S. Dhawan, and S. Gupta. (2000), "Effect of age on anatomical and physicomechanical properties of three Indian bamboo species", Journal of the T.D.A., Vol. 46, pp. 11-17.
7. El Bassam, N. (1998), Energy Plant Species: their use and impact on environment and development, James and James Science Publishers, London.